लोक-प्रिय साहित्य सामग्री की व्यवस्था

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
१७-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग,
नई दिल्ली

लोक-प्रिय साहित्य सामग्री की व्यवस्था

पूर्वीय अफ्रीका साहित्य ब्यूरो के निर्देशक,
चार्ल्स ग्रैन्सटन रिचर्ड्स द्वारा संग्रहीत
तथा सम्पादित अध्ययन तथा
प्राविधिक कार्यों का संग्रह

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
१८-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली

आभार प्रदर्शन

साक्षरता समाज-शिक्षा का एक अंग है। परन्तु इसका प्रसार इतना सरल नहीं जितना कि आम आदमी सोचता है। इसके प्रसार में नवसाक्षर साहित्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नवसाक्षर साहित्य लेखन और वितरण का अपना तकनीक है। इस तकनीक के ऊपर अच्छी तरह ध्यान न देने के कारण साक्षरता प्रसार में बहुत बाधा पहुँच रही है और साक्षरता पर सरकार के इतने अधिक व्यय और परिश्रम करने के उपरान्त भी अपेक्षित परिणाम नहीं मिल रहा है।

अतः भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ ने यूनेस्को और इंडियन नेशनल कमीशन फार यूनेस्को की सहायता से प्रस्तुत अनुवाद प्रकाशित किया है ताकि समाज शिक्षा कार्य-कर्त्ताओं और साक्षरता-शिक्षकों को भिन्न भिन्न देशों में अपनाए गए नवसाक्षर साहित्य लेखन, प्रकाशन और वितरण के तकनीक की जानकारी हो सके।

हम यूनेस्को और इंडियन नेशनल कमीशन फार यूनेस्को के अत्यन्त आभारी हैं कि उन्होंने इस प्रकाशन की अनुमति दी और साथ ही आर्थिक सहयोग भी दिया।

शफ़ीक स्मारक,
१७-बी, इंद्रप्रस्थ मार्ग,
नई दिल्ली—१
१२-१२-१९६२

एस० सी० दत्ता
प्रधान मन्त्री
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

विषय-सूची

पृष्ठ

आभार प्रदर्शन

आमुख

भूमिका

भाग—१ कुछ राष्ट्रीय अध्ययन

अध्याय— १. भारत में नवसाक्षर सामग्री की व्यवस्था १

अध्याय— २. पाकिस्तान की समस्याएँ और साधन २७

अध्याय— ३. लंका में पठन सामग्री का उत्पादन ४९

अध्याय— ४. ब्रिटेन में लोकप्रिय पुस्तक मालाओं का प्रकाशन ५९

भाग—२ साहित्य कार्यालय

अध्याय— ५. साहित्य कार्यालय का संगठन और प्रबन्ध ८३

परिशिष्ट—१. सारांश तथा टिप्पणियां १५६

परिशिष्ट—२. पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय की परिव्यय सूचियां १६२

भाग—३ वास्तविक साहित्य संगठनों का कार्य

अध्याय— ६. बर्मा अनुवाद सोसाइटी १६७

परिशिष्ट—१. मूल्यांकन तथा टिप्पणी की विधि १९८

परिशिष्ट—२. सारांश तथा टिप्पणियाँ २०४

अध्याय— ७. लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस २०८

परिशिष्ट—सारांश तथा टिप्पणियां २२८

भाग—४ टैक्नीकल अध्ययन लेख

अध्याय— ८. मुद्रित सामग्री द्वारा विचार संचरण पर अनुसंधान २३३

अध्याय— ९. मूल शिक्षा पठन सामग्री की उपयोगिता पर प्रभाव डालने वाले तत्व २५०

अध्याय—१०. पुस्तकों के चित्र समझने की क्षमता आंकने का एक प्रयोग २६०
अध्याय—११. शब्दावृत्ति गणना के बारे में कुछ विचार २६७
भाग—५ कुछ निष्कर्ष तथा सिफारिशें
अध्याय—१२. विशेषज्ञों के यूनेस्को प्रादेशिक सम्मेलन की रिपोर्ट २७५
परिशिष्ट—अनुसंधान सम्बन्धी समस्याओं की सूची जिनका स्थानीय, राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक स्तरों पर अध्ययन किया जा सकता है। २८७

आमुख

यूनेस्को सचिवालय की जानकारी में यह पुस्तक अपने क्षेत्र में अपूर्व कृति है। इसकी अपूर्वता इस बात में नहीं कि यह इतने सारे विषयों की व्याख्या करती है इन पर तो पहले भी व्याख्या हो चुकी है, परन्तु इसकी अपूर्वता तो इस बात में है कि यह एक ही पुस्तक में साहित्य उत्पादन के समस्त पहलुओं पर जानकारी देती है।

अतः इसका प्रकाशन उचित ही है, यह पुस्तक जिस आवश्यकता की पूर्ति करेगी उसके हिसाब से तो इसका प्रकाशन और भी न्यायपूर्ण हो जाता है। ख़ास तौर पर पिछले दस सालों में, प्रौढ़ों को लिखना पढ़ना सिखाने की समस्याओं से सम्बन्धित बहुत सी चीज़ें प्रकाशित हुई हैं। फिर भी यह शीघ्र अनुभव हो गया कि साक्षरता प्राप्ति के बाद उचित कार्यक्रम उचित उत्तर (Follow up) कार्य-क्रम और नवसाक्षर पाठ्य-सामग्री के उत्पादन के बिना साक्षरता पर लगाया हुआ समय परिश्रम तथा धन व्यर्थ ही जाएगा। ऐसी पाठ्य-सामग्री जिसको पढ़ने में व्यक्ति बड़े परिश्रम से प्राप्त की हुई योग्यता का उपयोग कर सके। यह न हो सकने के कारण ही साक्षरता आन्दोलन ने कुछ कर दिखाने की बजाय बदनामी ही पाई है। वर्तमान लेखकों में से एक ने कहा है कि "बिना साहित्य के साक्षरता एक विरोधात्मक तथ्य है।"

पाठ्य-सामग्री के भावी लेखकों को सामान्य परामर्श देने, संस्थाओं द्वारा अपने काम की रिपोर्ट, प्रविधिक समस्याओं पर अनुसन्धान, क्रमिक शब्दावलि इत्यादि के अतिरिक्त कोई व्यवस्थित प्रयास नहीं किया गया जिससे प्रौढ़ और स्कूल से निकलने वाले नव पाठकों के लिए उनकी मातृ भाषा में, सस्ते मूल्य पर पुस्तक और पत्रिका प्रकाशित करने की समस्त समस्याओं पर विचार-विमर्श कर सकें।

१९५५ में यूनेस्को ने ऐसी समस्याओं से सम्बद्ध राष्ट्रीय संस्थाओं को अध्ययन और क्षेत्रीय कार्य में सहायता देने का कार्यक्रम आरम्भ किया। उस वर्ष में संस्था ने दक्षिण पूर्व एशिया में एक दीर्घ कालीन योजना चलाई, यह एक ऐसा क्षेत्र है जहां ऐसे पाठ्य-सामग्री की बहुत बड़ी आवश्यकता है और

जहां समस्या के समस्त पहलू विद्यमान हुए थे जैसे कि भाषीय, आर्थिक, प्रशासनीय, सम्पादकीय, उत्पादनीय इत्यादि यूनेस्को का काम परम्परागत तरीक़ों के आधार पर विकसित किया गया है, अर्थात् समस्या के विभिन्न पहलुओं के अनुसन्धान के लिए सहायता देकर; प्रशिक्षण के लिए सुविधाएं देकर; विशेषज्ञ उपकरण और प्रमाणिक पुस्तकें भेजकर; पुस्तक माला प्रकाशित करने के लिए प्रकाशकों को सहायता देकर, सेमीनार और सभाएं आयोजित करके। १९५६ में बर्मा, लंका, भारत और पाकिस्तान के विशेषज्ञों की सभा हुई थी। यह सभा यूनेस्को के तत्वावधान में, पश्चिमी पाकिस्तान में, हुई थी। इन विशेषज्ञों से प्रार्थना की गई थी कि वे विकास के राष्ट्रीय कार्यक्रम के लिए योजना बनाएं और यूनेस्को के भावी कार्यक्रम पर परामर्श दें। इस सभा के लिए बहुत सी रिपोर्ट और प्राविधिक लेख माला तैयार की गई थी, और ये ही इस पुस्तक का आधार है। प्रकाशन के लिए इस सामग्री को तैयार करते हुए यूनेस्को को सौभाग्य से श्री चार्ल्स रीचर्ड की सेवाएं प्राप्त हुईं। पूर्वी अफ्रीका में साहित्य उत्पादन और वितरण में इनका अनेक वर्षों का अनुभव है और इस अनुभव ने उन्हें इस विषय में एक विख्यात अधिकारी बना दिया। यद्यपि यह पुस्तक उस समय संकलित की गई थी जब वे पूर्वी अफ्रीका की साहित्य संस्था (East African Literature Bureau) के संचालक थे, तथापि उनके सम्पादकीय में से कोई भी बात पूर्वी अफ्रीकी सरकार की नीति के रूप में नहीं लेनी चाहिए।

यद्यपि हम विश्वास करते है कि साहित्य उत्पादन क्षेत्र में बहुत अनुभवी लोगों के मत और बहुत महत्वपूर्ण संस्थाओं के कार्य यहां प्रस्तुत किए गए हैं, तथापि, जैसे ही, इसकी व्यापकता का दावा किया जाता है। बहुत से पाठक यह कहेंगे कि कुछ ख़ास बातों पर बहुत अधिक ज़ोर दिया गया है, जैसे, क्षेत्रीय बोली का उपयोग, सस्ती मुद्रण प्रणाली का उपयोग। जो लोग नवसाक्षर-पत्रिकाओं के विषयों में बारीकी से जानना चाहते हैं, वे यूनेस्को के दो और प्रकाशन देखें: "नवसाक्षर पत्रिकाएं: सम्पादकीय प्रणालियां (जन-संचार पर लेख-माला, नं० २२)", और "नवसाक्षर पत्रिका: सात किस्सों का इतिहास (जन-संचार पर लेख-माला, नं०-२४)।" इन दो अध्ययनों में नवसाक्षर समाचार पत्र पर विवेचना की गई है। "नवसाक्षर-पत्रिका" विषय पर प्रस्तुत पुस्तक में कोई उल्लेख नहीं है। फिर, यह स्पष्ट है कि यह पुस्तक इस बात की व्याख्या नहीं करती कि "इसे कैसे किया जाए।" यह तो राष्ट्रीय रिपोर्टों, मामलों का अध्ययन तथा विशिष्ठ विषयों पर सामान्य लेखों से प्राप्त अनुभवों का रिकार्ड है।

यूनेस्को यह आशा करता है कि यह प्रारम्भिक प्रयास राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य उत्पादन के विशिष्ठ अध्ययन का आधार होगा । जब तक ये प्रकाशित नहीं होते, तब तक सचिवालय की आशा है कि प्रस्तुत पुस्तक में सभी के लिए मूल्यवान वस्तु होगी—चाहे वे प्रशासक, लेखक, प्रकाशक, ग्रामीण कार्य कर्त्ता हों ।

अन्त में हम बताना चाहते हैं कि सम्पादक के सुझाव पर डा० रूपर्ट ईस्ट की कुछेक रिपोर्ट की समालोचना भी सम्मिलत कर ली है । डा० रूपर्ट ईस्ट जिन्होंने पश्चिमी अफ्रीका, पाकिस्तान तथा वैनेजुएला में साहित्य उत्पादन पर अध्ययन किया है मेरी में विशेषज्ञों की उपर्युक्त सभा के लिये इन रिपोर्टों को तैयार किया गया । ये समालोचनाएं डा० ईस्ट के नाम से दी गई हैं । श्री रिचर्ड द्वारा की गई सभालोचना सी० जी० आर० के नाम से दी गई है और यूनेस्को सचिवालय द्वारा दी गई ई० डी० से ।

भूमिका

इस युग के मध्य काल में निरक्षता निवारण कई सरकारों का सिर-दर्द रही है, और ऐच्छिक और सरकारी दोनों तरह के व्यक्ति-विशेष तथा संस्थाओं को विचारशील तथा एकनिष्ठ प्रयास की प्रेरणा देती रही है। गत १०० वर्षों में, पहली बार बहुत सी भाषाओं की लिपी बनाने तथा पढ़ाना सिखाने की चेष्टा की गई है। परन्तु यह प्रायः धर्म पढ़ाने तथा अन्य प्रकार का ज्ञान देने के लिए ही किया गया, विशेषतः स्वयं सेवी के द्वारा।

शुरू के दिनों में साक्षरता उस क्रमिक प्रक्रिया में एक कड़ी थी जिसके दौरान नवीन कौशल का विकास हुआ। 'नवसाक्षर' पद जो कि प्रौढ़-पुरुष या स्त्री को एक विशेष कुशलता से सम्बन्धित श्रेणी में रखता है—आविष्कृत नहीं था। जिन व्यक्तियों को पढ़ाना सिखाया गया वे ऐसे व्यक्ति थे जिनके, नवीन ज्ञान से सम्बधित होने के कारण नई चुनौतियाँ सामने आईं। इस नवीन ज्ञान के लिए साक्षरता एक खुला हुआ द्वार था। बीसवीं सदी के मध्य काल के आरम्भ में साक्षरता पर ज़ोर दिया जाने लगा। ऐसा प्रतीत होता है कि सबसे पहले, साक्षरता के प्रचारकों ने यह अनुभव किया कि पढ़ने की कला सिखाना ही काफ़ी था। यह मान लिया गया था कि नवसाक्षरों की बड़ी संख्या अपनी इच्छा से लोगों को पढ़ाएगी और साक्षरता की प्रथम पुस्तक से बड़ी पुस्तकों तक स्वाभाविक उन्नति होगी। इस तथ्य की कि 'आवश्यकता स्वतः ही माँग में परिणत नहीं होती', उपेक्षा की गई। और नव पाठकों के लिए प्रकाशन की व्यावहारिक समस्याओं को मुख्य रूप से उपेक्षित छोड़ दिया गया।

मध्य काल के अन्त में, साक्षरता शिक्षण ही काफ़ी नही पाया गया है, अपितु निरक्षर व्यक्ति की समस्या तक पहुँचने के लिए उसकी सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना चाहिए। साक्षरता शिक्षण तो निरक्षर व्यक्ति को अपने समुदाय तथा अपने देश के मामलों में पूर्ण सहभाग लेने के लिए सहायता देने की प्रक्रिया में एक चरण समझा जाता है। वितरण की समस्याएं अब अपने सच्चे महत्व में दिखाई पड़ती हैं। ये समस्याएं हैं माँग, आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन, वितरण तथा बिक्री।

इन्हीं समस्याओं के उपर ग़ौर करने के लिए जून १९५६ में, पाकिस्तान में, यूनेस्को ने नवसाक्षर पाठ्य-सांमग्री उत्पादन पर विशेषज्ञों की क्षेत्रीय सभा की यूनेस्को सचिवालय द्वारा प्रस्तुत अन्तरिम प्रतिवेदन (Interim report) की प्रस्तावना में साहित्य संभरण के प्राविधिक पहलू का सारांश है और नवसाक्षर की परिभाषा भी है।

'अनेक देशों का अनुभव बताता है कि उत्तर (follow up). पाठ्य-सामग्री के अभाव में साक्षरता-अभियान असफ़ल हो गए हैं, ऐसी उत्तर पाठ्य-सामग्री जो नवसाक्षर को साक्षरता कक्षा से ऐसे स्तर पर ले जाती है जहाँ वह आनन्द और लाभ के लिए ठीक ठीक पढ़ सके। प्रौढ़ जिसने साक्षरता कक्षा पास कर ली है, वह केवल शब्दों को पहचानने में ही कुशल हो पाया है, और अगर, जैसा कि अक्सर होता है, उसे कठिन साहित्य ही उपलब्ध हो, जो कि उसने अभी तक नहीं पढ़ा, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि वह शीघ्र ही न केवल पढ़ने में अपनी रूचि खो बैठेगा, बल्कि पढ़ना भी भूल जाएगा, वो पढ़ना जो कि उसने इतनी शक्ति और उत्साह से सीखा है। यही बात स्कूल से निकलने वाले बच्चों के साथ होती है। इन्हें समाज में अपने उपयुक्त स्तर पर पढ़ने योग्य सामग्री नहीं मिलती, और पढ़ने की आदत बनाए रखने और उसके विकास के लिए काफ़ी रोचक सामग्री तो मिलती ही नहीं। यदि आसानी से पढ़ना और समझ कर पढ़ना बहुत देर में आता है तो जानकारी के लिए या मनोरंजन के लिए पढ़ने का अभ्यास तो स्कूल के कुछ वर्षों में मुश्किल से ही आता है, और प्रौढ़ साक्षरता काक्षओं में कुछ महीनों में तो असम्भव ही है।

नवसाक्षर शब्द का अर्थ बहुत छोटा नहीं लगाना चाहिए। इसमें शब्द से गलत फ़हमी होती है क्योंकि यह शब्द समय को बताता है जो कि लग भी सकता है और नहीं भी। नवसाक्षर शब्द की सब से अधिक उपयोगी परिभाषा है—नवसाक्षर उस प्रौढ़ या वयस्क को कहते हैं जिसने कभी पढ़ने की आधारभूत प्रविधि तो सीखी थी, परन्तु जो जल्दी जल्दी, ठीक ठीक और समझ कर नहीं पढ़ सकता। चाहे उसने आधारभूत प्रविधि तो बहुत साल पहले सीखी हो, चाहे वह पिछले महीने ही साक्षरता कक्षा से निकला हो, किसी भी तरह उसकी पढ़ने की योग्यता अब भी बहुत सीमित है। परिभाषा को और भी विस्तृत किया जा सकता है। 'नवसाक्षर' की परिभाषा में सभी पाठक आ जाते हैं जो प्राविधिक कौशल के अभाव में उतना नहीं अटकते, जितना पढ़ने के अनुभव की कमी के कारण जो कि उपयुक्त पाठ्य-सामग्री के अभाव में सम्भव नहीं।

स्शष्टतः, अदक्षता और अनुभवहीनता के बहुत स्तर हैं, अतः ऐसे पाठकों की श्रेणी में, जिन्हें नवसाक्षर माना जा सकता है, सब तरह के पढ़ने वाले से लेकर पढ़ने में सबसे अधिक दक्ष भी आ जाते हैं।

इस पुस्तक में क्षेत्रीय सभा में प्रस्तुत अध्ययनों के रूप में उन सभी उपायों का विवरण आ जाता है जो कि विश्व के विभिन्न भागों में पूर्णतः भिन्नः परिस्थितियों में कई सरकारों ने किए थे, ताकि अक्षर बोध से लेकर प्रकाशन गृहों के सामान्य प्रकाशनों का अन्तर मिट सके।

लेखों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इस समस्या तक पहुँचने के लिए कोई आदर्श तरीका नहीं है। यह होना ही था, क्योंकि नवसाक्षर कोई आदर्श व्यक्ति नहीं होता : जिस वातावरण में निरक्षरता बहुत अधिक सीमा तक पहुँची हुई है, उसका साहित्य संभरण (supply) की योजना पर बहुत गहरा प्रभाव होगा। लेखों में वातावरण के इन अन्तरों पर प्रकाश डाला गया है। जिस भाषा में व्यक्ति साक्षर हुआ है, उसमें व्यापक और विभिन्न साहित्य के अस्तित्व तथा अभाव के कारण अन्तर है, दूसरा अन्तर उन सरकारों के रूप में है जिनके अधीन प्रकाशन कार्य चलाए जाते हैं। इस पुस्तक का उद्देश्य विभिन्न प्रणालियों पर सामग्री प्रस्तुत करना है जो कि भिन्न भिन्न परिस्थितियों में अपनाई गई हैं। ताकि नवसाक्षरों के लिए साहित्य उपलब्ध कराने का अवश्य प्रबन्ध हो जाए कुछ सीमा तक यह पुस्तक उत्पादन तथा वितरण की समस्याओं के हल पर भी प्रकाश डालती है।

भाग–१

कुछ राष्ट्रीय अध्ययन

अध्याय १

भारत में नव-साक्षर सामग्री की व्यवस्था

मुश्ताक़ अहमद[1]

इस रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि सारे भारतवर्ष में नव-साक्षरों के लिए अच्छी और काफ़ी पाठ्य सामग्री की भारी आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है।

लेखक ने यह भी सुझाव दिया है कि किसी ऐसी केन्द्रीय संस्था की आवश्यकता है जो साहित्य उत्पादन का कार्य करने वाली अनेक संस्थाओं के साथ मिलकर काम कर सके, ताकि : (क) वर्तमान साहित्य का मूल्यांकन हो सके और इसके अध्ययन के परिणामों से संस्थाओं को अवगत कराया जा सके, और (ख) पठन सामग्री की तैयारी, छपाई की विधियों तथा पुस्तकालय प्रबन्ध के प्रशिक्षण का आयोजन किया जा सके। (सम्पादक)

भूमिका

भारत के नव साक्षर प्रौढ़ों के लिए पाठ्य सामग्री के उत्पादन में किए गए काम का यह प्रारम्भिक सर्वेक्षण है। इसका सम्बन्ध इन बातों से है : साहित्य उत्पादन की महत्वपूर्ण संस्थाएँ, प्रयुक्त प्रणालियाँ, उत्पादित सामग्री, पुस्तकालय तथा पुस्तक वितरण सेवाएँ, और इन कार्यों में पेश आने वाली कठिनाइयाँ। अन्ततः इसमें बताया गया है कि किन आवश्यकताओं को जल्द पूरी करना ज़रूरी है और साथ ही उस कार्य की संक्षिप्त रूप रेखा भी दी गई है जो पाठ्य सामग्री के उत्पादन के लिए तुरन्त किया जाना चाहिए।

सूचना कार्य विधि

सही जानकारी प्राप्त करने के लिए मैंने भारत के सभी ऐसे राज्यों की यात्रा की जो इस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। हर राज्य में मैंने सामग्री तैयार

१. सन् १९५६ में जामिया मिलिया के अनुसंधान, प्रशिक्षण तथा उत्पादन केन्द्र और भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, दिल्ली, द्वारा की गई पड़ताल पर आधारित।

करने वाली और उसे उपयोग में लाने वाली सभी मुख्य सरकारी और ग़ैर-सरकारी संस्थाओं के साथ सम्पर्क स्थापित करने की कोशिश की। मैंने साक्षरता आन्दोलनों के व्यवस्थापकों, उत्पादन एकांशों के अध्यक्षों, समाज शिक्षा केन्द्रों के निरीक्षकों और पुस्तकालयाध्यक्षों, सहायताशिक्षकों, शहरी और ग्रामीण दोनों प्रकार के उन नव साक्षर प्रौढ़ों के साथ समस्या पर विचार विमर्श किया जिन पर कुछ सामग्री का प्रयोग किया गया।

एक ऐसी प्रश्नावली बनाई जिसमें उत्पादन के सभी मुख्य पहलू आ गए थे। इस प्रश्नावली को हर राज्य के पाठकों और उत्पादकों के साथ विचार-विमर्श करने के बाद भरा गया।

सीमाएँ

भारत की सभी भाषाओं में पठन सामग्री के उत्पादन और उपयोग की समस्याएँ बहुत बड़ी और पेचीदा हैं। इसके पूरे विश्लेषण के लिए ग्रामीण और शहरी पुस्तकालयों साक्षरता अध्यापकों तथा निरीक्षकों के चुनाव और प्रशिक्षण, उन्हें वेतन देने के तरीकों के ब्यौरेवार अध्ययन और सामग्री के वैज्ञानिक मूल्यांकन की आवश्यकता है। अतएव प्रस्तुत सर्वेक्षण की सामग्री को उत्पादन के क्षेत्र में सभी समस्याओं का गहन और पूर्ण अध्ययन न समझा जाये, बल्कि एक ऐसा प्रारम्भिक सर्वेक्षण मात्र माना जाए जिसमें बहुत बड़ी और तुरन्त पूरी की जाने वाली आवश्यकताओं और पढ़ने वालों की रुचियों की मोटे तौर पर जांच की गई है।

पठन सामग्री के उत्पादन में लगी संस्थायें—संगठन के रूप

भारत में लगभग ७२ साहित्य उत्पादन करने वाली सरकारी अथवा ग़ैर-सरकारी संस्थाएँ हैं, जो अपने संगठन के रूप के आधार पर निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त की जा सकती हैं—

प्रथक उत्पादन विभाग वाली संस्थाएँ, जैसे (क) समाज कल्याण निर्देशनालय, नागपुर। इसमें एक उत्पादन और प्रचार अधिकारी, दो उप-सम्पादक, दो लेखक, एक चित्रकार, और क्लर्क आदि हैं।

(ख) इदारा तालीम-ओ-तरक्की, ज़ामिया मिलिया, दिल्ली। इसमें एक उत्पादन निर्देशक, दो सम्पादक, दो चित्रकार और क्लर्क आदि हैं।

(ग) लिट्रेसी हाऊस, इलाहाबाद। इसमें एक प्रशासन अधिकारी (परामर्शदाता) एक मुख्य सम्पादक, एक चित्रकार, और क्लर्क आदि हैं।

परामर्श दात्री समिति वाली संस्थाएँ, जिनमें प्रशासन कर्मचारी उत्पादन के लिए उत्तरदायी होते हैं। जैसे–(क) बम्बई नगर समाज शिक्षा समिति,

बम्बई। इसकी एक साहित्य उप-समिति है जिसके सदस्य समाज शिक्षा क्षत्र के अनुभवी सार्वजनिक कार्यकर्ता है। इसके अतिरिक्त इसकी चार भाषा उप-समितियां हिन्दी, गुजराती, मराठी और उर्दू भाषाओं के लिए हैं।

(ख) शिक्षा विभाग (प्रौढ़-शिक्षा अनुभाग) मद्रास।

ऐसी संस्थाएँ जिनमें एक समिति भी है और एक उत्पादन विभाग भी। जैसे (क) आयोजन अनुसंधान तथा कार्य केन्द्र, लखनऊ। इसमें एक साहित्य उत्पादन समिति है, जिसमें अनुसंधान केन्द्र, शिक्षा विभाग, सूचना विभाग, आकाशवाणी ग्रामीण विभाग और समाज शिक्षा विभाग के प्रतिनिधि हैं। उत्पादन शाखा में एक सम्पादक और दो चित्रकार हैं। सारी पाण्डूलिपियाँ विभाग द्वारा तैयार की जाती हैं। आरम्भ में उत्पादन शाखा ही छपाई का काम भी करती थी परन्तु अब उसने बनारस के एक व्यावसायिक प्रकाशक से अनुबन्ध कर रखा है।

(ख) बिहार समाज शिक्षा बोर्ड पटना। इसमें एक प्रौढ़ साहित्य समिति है, जिसमें प्रौढ़ शिक्षा बोर्ड के सैक्रेटरी और प्रकाशन अधिकारी हैं। सारी पाण्डुलिपियाँ प्रकाशन से पूर्व जांच के लिए समिति के पास जाती हैं। उत्पादन शाखा में एक प्रकाशन अधिकारी, एक भाषा विशेषज्ञ, एक साहित्य अधिकारी, एक कलाकार, और एक क्लर्क आदि हैं।

(ग) मैसूर राज्य प्रौढ़ शिक्षा समिति, मैसूर। इसमें एक प्रकाशन समिति है, जिसमें मैसूर विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि, शिक्षा विभाग का एक प्रतिनिधि, एक चिकित्सक, एक राजनीतिज्ञ, व 'ब्लाकू' का भूतपूर्व सम्पादक है। उत्पादन शाखा में एक मुख्य सम्पादक, एक उप-सम्पादक, एक शोध सहायक (अस्थाई), एक चित्रकार और क्लर्क आदि हैं। लेखकों से पाण्डुलिपियाँ लिखाई जाती हैं, समिति द्वारा उनकी जांच की जाती है और फिर उत्पादन शाखा उनका सम्पादन और प्रकाशन करती है।

ऐसी संस्थाएँ जहाँ एक ही व्यक्ति (मैनेजर या मालिक) पूर्ण अधिकारी होता है। सारे व्यावसायिक प्रकाशन और व्यक्ति इस श्रेणी में रखे जा सकते हैं। वे लेखकों से पाण्डुलिपियाँ मंगाते हैं यदि जरूरी समझें तो उन्हें पढ़ लेते हैं और फिर प्रकाशन करते हैं।

प्रशिक्षण

परामर्श समितियों के सदस्यों, उत्पादन विभाग के कर्मचारियों, निजी फ़र्मों के मैनेजरों या मालिकों में बहुत कम ऐसे हैं जिन्होंने उत्पादन प्रणाली का विशेष प्रशिक्षण लिया है। लेकिन सरकारी अथवा सरकार से सहायता प्राप्त

करने वाली संस्थाओं तथा ग़ैर-सरकारी संगठनों के अधिकतर व्यक्तियों ने इन तकनीकों का व्यापक अध्ययन किया है और वे ऊँची शिक्षा पाए हुए हैं। परन्तु अधिकतर निजी प्रकाशकों के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता। वे विषय का चुनाव सरकारी अधिसूचनाओं के आधार पर करते हैं और पुस्तकों की भाषा और बनावट उन पुस्तकों के अनुसार निर्धारित करते हैं जो सरकार ने ग्राम पुस्तकालयों के लिए स्वीकार की हों। ऐसे ज़्यादा प्रकाशक पठनीयता का अर्थ यह समझते हैं कि मोटे अक्षरों में छपाई की जाये और भाषा सरल हो। परन्तु इनके बारे में उन्हें वैज्ञानिक ज्ञान बहुत कम होता है।

लोगों में जाकर काम करने का अनुभव

जहाँ उत्पादन शाखा समाज शिक्षा विभाग का ही एक अंग होती है, वहाँ कर्मचारियों को इस बात का अवसर मिलता है कि वे लोगों में जाकर उन के जीवन का बहुत निकट से अध्ययन कर सकें, उनकी आवश्यकताओं और रुचियों का अन्दाज़ा लगा सकें और यह देख सकें कि उनकी सामग्री का क्या और कैसे उपयोग हो रहा है। परन्तु दुर्भाग्य से इस अवसर का बहुत कम लाभ उठाया जाता है। उत्पादन कर्मचारी ग्रामों में बहुत कम जाते हैं और बैठे बिठाये ही यह समझ लेते हैं कि उनकी उत्पादित सामग्री अपना काम कर रही है। कुछ स्थानों में लोगों में जाकर काम करने वाले कर्मचारियों (निरीक्षकों, इन्सपैक्टरों, कल्याण अधिकारियों आदि) के माध्यम से सामग्री की उपयोगिता और प्रभाव को जांचने की अप्रत्यक्ष चेष्टाएँ की जाती हैं। पर यह भी किसी वैज्ञानिक पद्धति से नहीं, बल्कि साधारण आपसी बातचीत से ही किया जाता है।

परामर्श समितियों के अधिकतर सदस्य उच्च शिक्षा पाये होते हैं, परन्तु उन्हें सामग्री के उत्पादन अथवा प्रौढ़ों को लिखना पढ़ना सिखाने का कोई अनुभव नहीं होता। वे अत्यन्त व्यस्त लोग होते हैं। उनके पास इतना समय नहीं होता कि वे लोगों में जाकर पुस्तक पढ़वाएं या किसी अध्यापक को प्रौढ़ कक्षा पढ़ाते, अथवा किसी प्रौढ़ को पुस्तक पढ़ते देखें, ताकि वे उसकी कठिनाइयों के समझ सकें। यह ठीक है कि ऐसे टैक्नीकल ज्ञान की उनसे आशा नहीं की जा सकती, क्योंकि उनका कार्य केवल विषय की उपयोगिता, लेखक के चुनाव और पारिश्रमिक तथा छपाई की व्यवस्था के बारे में परामर्श मात्र देना है।

निजी प्रकाशकों ने अभी हाल में ही इस क्षेत्र में प्रवेश किया है। उनमें से अधिकांश को नव साक्षरों की योग्यता और कठिनाइयों और रूचियों की सम्यक् ज्ञान नहीं है। परन्तु उनके लिए यह प्रशंसनीय बात है कि वे अपनी सीमाओं से अवगत हैं और अपने प्रकाशनों को सुधारने के लिए तैयार हैं, बशर्ते कि ये

प्रकाशन बिक जाएं । अभी हाल में ही समाज शिक्षण प्रकाशन दिल्ली ने साक्षरता प्राप्ति के बाद के पाठकों के लिए सहायक पुस्तकों की एक आकर्षक पुस्तक-माला प्रकाशित की है । इस फ़र्म ने पुस्तकों के अस्तुतीकरण को आकर्षक बनाने में विशेषज्ञता प्राप्त कर ली है और कुछ बढ़िया किताबें निकाली हैं ।

लेखकों के लिए कुछ निर्देश

उर्पयुक्त संस्थाएं, विशेषत: सरकारी और अर्ध-सरकारी अभिकरण, जिन लेखकों से पाण्डुलिपी लिख कर देने को कहते हैं उन्हें वे पुस्तक के विषय में निर्देश देते हैं । कभी-कभी यह निर्देश बिलकुल स्पष्ट होते हैं, जैसे :—

सार्वजनिक शिक्षा निर्देशक मद्रास द्वारा प्रसारित निर्देशनों से :—

"साहित्य मुख्यत: ग्रामीण लोगों के लिए है, अत: यह सरल और बोल-चाल की भाषा में हो ।

लेखक को इन बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

(क) पुस्तक की सामग्री प्रौढ़ पाठक के लिए रोचक हो,

(ख) लेखन शैली सरल हो और भाषा मुहावरेदार हो,

(ग) वाक्य छोटे और प्रभावपूर्ण हों,

(घ) जहाँ तक हो सके पारिभाषिक शब्द न लिखे जाएं,

(ङ) पुस्तकें—वर्णन, वार्तालाप, कहानी तथा नाटक आदि—किसी भी रूप में हो ।"

दूसरा उदाहरण बम्बई नगर समाज शिक्षा समिति की नव साक्षरों के लिए सस्ता और उपयोगी समाज-शिक्षा-साहित्य उपलब्ध कराने की योजना में से है । "समिति ने प्रस्तावित समाज-शिक्षा-साहित्य के लिए विषयों की एक रूपरेखा तैयार की है । सूची बनाने का उद्देश्य यह है कि सामान्य व्यक्ति के जीवन के हर पहलू में उचित प्रवृत्तियों और भावनाओं के विकास में प्रोत्साहन दिया जाये ।

"प्रौढ़ों के लिए पाठ्य सामग्री तैयार करने के लिए आम तौर पर ये सिद्धान्त सामने रहने चाहिएं :

प्रस्तुत करने का ढंग स्पष्ट, सरल भाषा, कठिन शब्दों का त्याग, सरल व छोटे-छोटे वाक्य, व्यर्थ की बातों से बचना, तुलना परिचित वस्तुओं से की जाए, जहाँ तक हो सके वर्तमान काल का प्रयोग, लोक कथाओं और ग्राम जनता के रीति-रिवाजों का उपयोग, लय तथा हास्य रस का उपयोग, केवल एक व्यक्ति को सम्बोधित कीजिए सारी दुनिया को नहीं, अपने आप को पाठक के स्थान पर रखो, जहां तक सम्भव हो सके पशु-पक्षियों की कहानी या शिक्षाप्रद

कहानी बनाकर अपना विषय प्रस्तुत करो, तथ्य प्रस्तुत करते समय विश्वस्त, प्रामाणिक तथा अद्यतन सूचना दो।

"शैली बहुत सरल होनी चाहिए ताकि नव साक्षर उसे आसानी से और रुचि के साथ पढ़ सकें।"

ये सुझाव ऐसे लेखकों के लिए सहायक सिद्ध होते हैं जो पहले से प्रशिक्षित हों, सरल सामग्री लिखने की कला में अनुभवी हों और लोगों में जाकर काम करने वालों के अनुभव को कुछ जानकारी रखते हों। पर एक नये लेखक के लिए इन पर चलने में कठिनाई पैदा हो सकती है। अधिकतर लेखकों को प्रौढ़ों को पढ़ाने का बहुत कम अनुभव होता है। वे शायद ही कभी किसी साक्षरता कक्षा में जाते हैं। उन्होंने नव साक्षरों के निकट बैठ कर उन्हें पुस्तक पढ़ते नहीं देखा होता है। प्रौढ़ों के लिए पुस्तकें या लेख लिखने वाले अधिकतर लेखक शहरी होते हैं। यद्यपि उन्हें ग्रामीण प्रौढ़ों की समस्याओं का साधारण ज्ञान हो सकता है, तथापि उनसे यह आशा नहीं की जा सकती है कि वे प्रौढ़ों की दैनिक कठिनाइयों और समस्याओं को भी भली-भाँति जान सकें वे जो परामर्श और सुझाव देते हैं वे सामान्य होते हैं जिनमें लोगों को तुरन्त दिलचस्पी नहीं होती।

इस रिपोर्ट के लिए सूचना इकठ्ठी करने के लिए भारतवर्ष की यात्रा करते समय मैं इलाहाबाद से तीन मील दूर कुछ नव-साक्षरों से मिलने के लिए गया। मेरे पास नव-साक्षरों के योग्य भिन्न-भिन्न विषयों पर पाँच पुस्तकें थीं। इन के सब के आवरण पृष्ठ एक जैसे थे। मैं सात हरिजनों से मिला। इन सबको लिट्रेसी हाऊस इलाहबाद से साक्षरता प्रमाण पत्र मिल चुके थे। वे किताबें पढ़ने और रखने के लिए बहुत उत्सुक थे। मैंने पुस्तकें उनके सामने रख दीं और उनसे पूछा कि वे कौनसी पुस्तक पढ़ना पसन्द करेंगे। उनमें से पांच ने 'हमारा घर' नाम की पुस्तक चुनी। उन्होंने उसे पसन्द करने के ये कारण बताये :

"इस पुस्तक से हमें कम लागत पर अच्छा घर बनाने के तरीके ज्ञात होंगे। मेरे पास थोड़ी सी भूमि और थोड़ा सा पैसा भी है।"

"हमने सुना है कि घर में खिड़कियां होनी चाहिए और अलग-अलग कामों के लिए अलग-अलग स्थान होने चाहिएं। शायद यह पुस्तक मुझे ऐसा घर बनाने का कोई तरीक़ा बतावे।"

"मुझे सबसे ज्यादा चिन्ता अपने बैलों के बारे में है। अगर मैं उन्हें बाहर बाँधूं तो शायद कोई उन्हें चुरा ले जाये। मैं एक ऐसा घर बनाना चाहता हूँ जिसमें हम सबके लिए काफ़ी जगह हो। शायद इससे कुछ नये तरीकों का पता चले।"

परन्तु मैंने जो पुस्तक दी थी उसमें ऐसे घरों का वर्णन था जो एक हज़ार साल पहले बनाये जाते थे !

ऐसे भी पाठक हो सकते जिन्हें इस तरह के सामान्य ज्ञान में रुचि हो, परन्तु उचित तो यह होगा कि हमें अपने पाठकों के बारे में स्पष्ट जानकारी हो। हमें स्पष्ट रूप से यह मालूम होना चाहिए कि हम किसके लिए लिख रहे हैं ? और किस उद्देश्य से ?

तथ्यों की प्रामाणिता की जाँच

विशेषज्ञ कार्य करने वाली अधिकतर संस्थाएँ इस बात की बहुत सावधानी बरतती हैं कि तथ्यों के बारे में सारी सूचना बिलकुल ठीक हो। वे अपनी पाण्डुलिपियाँ छपवाने से पहले जाँच के लिए तकनीकी विशेषज्ञों के पास भेजती हैं। परन्तु हो सकता है निजी प्रकाशक केवल लेखक पर निर्भर करें और अक्सर तथ्यों की जाँच करवाने की कोशिश न करें।

संस्थाओं के लिए उपलब्ध साधन तथा उनकी कठिनाइयाँ

उत्पादन लक्ष्य अपूर्ण रह जाने के कारणों की जानकारी के लिए २५ संस्थाओं से भेंट की गई। अधिकतर संस्थाओं ने एक से अधिक कारण बताये। उनके उत्तरों के निम्नलिखित विश्लेषण से पता चलता है कि कितनी संस्थाओं को क्या-क्या कठिनाई पेश आई : धन का अभाव—६,प्रशिक्षित उत्पादन कर्मचारियों का अभाव—३, प्रशिक्षित लेखकों का अभाव—७, चित्रकारों का अभाव—११, मुद्रण सुविधाओं का अभाव—५, काग़ज़ का अभाव—१, माँग का अभाव—४।

सरकारी, अर्ध सरकारी संस्थाओं तथा निजी प्रकाशकों के पास आवश्यक धन होता है, परन्तु ग़ैर सरकारी संस्थाओं तथा निजी रूप से काम करने वालों के पास धन का अभाव होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि उन्हें आर्थिक सहायता, विशेषकर खास योजनाओं के लिए सहायता, प्राप्त हो जाए तो वे कहीं अधिक उत्पादन कर सकते हैं। विशेषतः विशिष्ठ योजना में कुछ ऐसे व्यक्तियों से मिला जिन्होंने निस्वार्थ होकर समाज शिक्षा क्षेत्र में लगन से काम किया है। उनमें से कुछ तो अपने ही ढंग से प्रौढ़ों को पढ़ना-लिखना सिखाने के छोटे-छोटे प्रयोग भी कर रहे हैं। यदि उन्हें थोड़ी सी आर्थिक सहायता प्राप्त हो जाए और उनकी सेवाओं को मान्यता दी जाए तो वे लोकप्रिय साहित्य की वृद्धि में अधिक लाभप्रद योगदान दे सकते हैं।

अधिकतर निजी प्रकाशकों ने ऊँची डाक-दरों की शिकायत की है। १२ आने कीमत की पुस्तक का डाक खर्च भी उतना ही आ जाता है। इससे निजी

रूप से खरीदने वाले हतोत्साहित होते हैं। रेल पार्सल भेजने में भी कठिनाई होती है, और रेल भाड़े बहुत अधिक हैं। डाक की दरों को घटाने के लिये शिक्षा मन्त्रालय को सम्बद्ध सरकारी विभाग से बातचीत करनी चाहिए।

केवल एक संस्था ने कागज के अभाव की चर्चा की है। अधिकतर संस्थाओं का मत यह था कि सारे भारत में हर तरह का और हर साइज़ का कागज़ काफी उपलब्ध है। लेकिन तथ्य यह है कि छपाई का अच्छा कागज इतना नहीं है कि बढ़ती हुई माँग की पूर्ति हो सके। ऐसे अवसर भी आते हैं जब महत्वपूर्ण सामग्री की छपाई केवल अच्छे कागज के अभाव में काफी समय तक रुकी रहती है।

मुद्रण सुविधाओं में निरन्तर वृद्धि हो रही हैं और कारखानों में हर साइज और हर आकृति के टाइप के कलात्मक नमूने बन रहे हैं। हर बड़े शहर में ऐसे मुद्रक हैं जो अभिन्यास (ले आऊट), पुस्तक के डिजाइन तथा सामान्य बनावट की कला में निपुण हैं पर कुल मिला कर दशा वहुत संतोषजनक नहीं हैं। अधिकतर प्रकाशकों को आकर्षक अभिन्यास और डिजाइन की विधियों का कोई ज्ञान नहीं है और वे यह भी नहीं समझते कि पुस्तक को पठनीय बनाने में इन सबका कितना महत्वपूर्ण स्थान है। पर खराब छपाई में हमेशा मुद्रक का दोष नहीं होता। बहुधा प्रकाशक मुद्रक को पर्याप्त समय नहीं देते और उसे काफी दाम भी नहीं मिलते।

जिन संस्थाओं से भेंट की गई उनमें से अधिकतर यह महसूस करती हैं कि तकनीकी योग्यता रखने वाले लेखकों और उत्पादन करने वालों का कोई अभाव नहीं है। यद्यपि जो पठन सामग्री वे उत्पादित करती हैं, उसका मूल्यांकन अभी तक नहीं हुआ है, फिर भी सामुदायिक योजनाओं, पंचायतों व पुस्तकालयों में काफी मात्रा में पुस्तकें खरीदी जाती हैं, और इसके आम तौर पर यह मान लिया जाता है कि अच्छा होने के कारण ही उनकी इतनी अधिक बिक्री होती है। ऐसी संस्थायें जो लोगों में जाकर जांच करने का आयोजन करती हैं और जिनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक है, (जैसे साक्षरता निकेतन, लखनऊ और इलाहाबाद कृषि संस्था), वे अपनी उत्पादित सामग्री की उपयोगिता के बारे में जानकारी रखती हैं। कुछ संस्थायें अपना काम सुधारने की निरन्तर चेष्टा भी करती हैं। परन्तु जो संस्थायें क्षेत्रीय कार्य नहीं करतीं उनका बिक्री के अतिरिक्त और कोई माप दंड नहीं है।

वस्तुतः ऐसे प्रशिक्षित लेखकों का बहुत अभाव है जिनकी लिखी हुई पुस्तकों को नव साक्षर समझ सकें और उनका आनन्द प्राप्त कर सकें, तथा जो अपनी कृतियों का निम्नलिखित माप दंड से मूल्यांकन कर सकते हैं। वे किसके

लिए लिख रहे हैं ? वे क्यों लिख रहे हैं ? वे क्या लिख रहे हैं ? इस विषय का पाठकों का पूर्वज्ञान कितना है ? क्या वे पुस्तक में लिखी बातें जानना चाहते हैं ? उससे कितना ज्ञान प्राप्त करते हैं ? क्या यह पुस्तक अपने उद्देश्य को पूरा करती है ? क्या यह पठनीय है ?

११ संस्थायें चित्रकारों का अभाव प्रकट करती हैं। शायद वे प्रशिक्षित पुस्तक चित्रकारों के अभाव को नहीं बल्कि नव साक्षरों के लिए उपयोगी चित्र बनाने वालों की कमी को अनुभव करती हैं। ऐसा जान पड़ता है ऐसे बहुत कम चित्रकार हैं जो सरल, स्पष्ट और प्रभावशाली चित्र बना सकें। उत्पादित सामग्री के विशाल सागर से ऐसी पुस्तक पाना सचमुच ही बहुत कठिन है जिसमें ऐसे सरल और प्रभावपूर्ण चित्र हों, जैसे अखिल अमरीकी संघ वाशिंगटन के स्पैनीश प्रकाशन, विशेषतः ला विरूएला। शायद ऐसे कुछ चित्रकार हैं जो हमारे सीधे सादे ग्रामीण लोगों के लिए चित्र बना सकें, पर ऐसा जाहिर होता है कि इन संस्थाओं में से कोई भी उनकी सेवाओं का उपयोग नहीं कर रही हैं।

पठन सामग्री : सहायक पुस्तकें

हिन्दी में प्रथम चरण की नमूने की पूरक पुस्तकों के एक सूची सारिणी १ में है।

भारत में साक्षर बनने की पूर्ण अवधि को तीन चरणों में विभक्त कर दिया गया है।

साक्षरता चरण—इस चरण में ऐसी सामग्री उपयोग में लाई जाती है जिससे पढ़ना और लिखना आ जाये। यह कार्य ढाई-तीन महीने या ५०-६० घन्टे की पढ़ाई में किया जाता है, जो महीने में २० घन्टे होती है।

साक्षरोत्तर चरण—इस चरण में कक्षा में विभिन्न विषयों पर सरल पुस्तकों का उपयोग किया जाता है, जिससे शिक्षार्थी पढ़ने और लिखने में और कुशलता प्राप्त कर सके। इस कार्य में औसतन तीन महीने या ६० घन्टे पढ़ाई का समय लगता ये। इस तरह कक्षा में कुल पढ़ाई के ५½, ६ महीने या ११० से १२० घन्टे लग जाते हैं। कहीं-कहीं यह समय कम या ज्यादा भी होता है, जैसे मध्यप्रदेश में कक्षा की पढ़ाई का समय १२ महीने है।

उत्तरोत्तर चरण—शिक्षार्थी अब कक्षा की पढ़ाई से मुक्त हो जाता है। उसके लिए ऐसे पुस्तकालय के दरवाजे खुल जाते हैं, जहाँ नव पाठकों के लिए भिन्न-भिन्न विषयों की पुस्तकें बहुत सरल भाषा में उपलब्ध हैं। विद्यार्थी से यह आशा की जाती है कि वह मनोरंजन, सामान्य ज्ञान, जानकारी और अपनी पढ़ने की योग्यता बढ़ाने के लिए इन पुस्तकों को पढ़ेगा।

साक्षरोत्तर चरण के उत्तरार्ध के लिए उपयुक्त पुस्तकें काफी संख्या में उपलब्ध हैं, परन्तु पूर्वार्ध के लिए बहुत थोड़ा लिखा गया है। साक्षरोत्तर चरण के पूर्वार्ध के लिए हमें प्रथम चरण सहायक पुस्तकों की आवश्यकता है। ऐसी पुस्तकों के चुनाव के लिए कोई निश्चित माप दंड निर्धारित करना कठिन है, क्योंकि इस प्रकार की सामग्री के उत्पादकों ने कोई सामान्य माप दंड नहीं अपनाया है।

फिर भी हमने प्रथम चरण सहायक पुस्तकों के चुनाव के लिए मोटे तौर पर निम्नलिखित मानकों पर जोर दिया है।

१—लिखित सामग्री कुल स्थान का आधे से अधिक न घेरे। शेष स्थान में सरल, आर्कषक, और प्रभावपूर्ण चित्र होने चाहियें।

२—विचार बहुत सरल होने चाहिए।

३—विषय लोगों की दैनिक समस्याओं से निकट सम्बन्ध रखता हो।

४—यदि पुस्तक लम्बी है तो उसे छोटे-छोटे कई ऐसे भागों में बाँट दिया जावें जो स्वयं में परिपूर्ण हों।

५—वाक्य छोटे होने चाहिए।

६—अत्यन्त साधारण शब्दों का ही प्रयोग होना चाहिए।

७—सम्बन्ध सूचक व्यंजनों का अधिक प्रयोग नहीं होना चाहिए।

८—टाइप २४ प्वाइन्ट से छोटा नहीं होना चाहिए। नव साक्षरों की समस्त सामग्री के लिए आकर्षक मुखपृष्ठ और अच्छी छपाई अनिवार्य समझी गई है।

उपरोक्त मानकों के आधार पर बनी साक्षरोत्तर चरण के पूर्वार्ध के लिए प्रथम चरण सहायक पुस्तकों की संख्या निःसन्देह बहुत कम है। हिन्दी में उत्पादित कुछ पुस्तकों में केवल १४ प्रथम चरण सहायक पुस्तकों की श्रेणी के उपयुक्त पाई गई हैं। हालांकि पढ़ने की योग्यता का विकास करने और अधिक सीखने की इच्छा पैदा करने के लिए यह चरण बहुत महत्वपूर्ण है। यदि साक्षरता प्राप्ति के बाद की पुस्तकों के लिए यह सिद्धाँत सही है कि विविधता का जीवन है तो यह सहायक पुस्तकों के लिए भी उतना ही सत्य होगा। इसलिए यह निश्चित है कि साक्षरता के इस चरण में प्रौढ़ों के लिए और बहुत सी पठनीय पुस्तकों की आवश्यकता है।

साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई की पुस्तकें

भारत में नव साक्षर प्रौढ़ों के लिए साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई के लिए पठन सामग्री बहुत मात्रा में उत्पादित की गई है, विशेषकर हिन्दी में। शायद सर्वप्रथम आयोजित प्रयास १९३७ में बिहार के शिक्षा मन्त्री डा० सैयद

महमूद ने किया था (जब कांग्रेस मन्त्रिमण्डल सर्वप्रथम बना था)। उनके निर्देशन में लगभग १०० पुस्तिकाएं छापी गई थी। हर पुस्तिका १०-१२ पृष्ठों की क्राउन ऑक्टेवो साइज की थी। उसकी कीमत एक आना थी। भाषा हिन्दुस्तानी थी। हर पुस्तक के विषय भिन्न-भिन्न थे। लेकिन काँग्रेस सरकार के त्याग पत्र दे देने पर यह योजना शीघ्र ही छोड़ दी गई। १९५० में केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय ने इस विषय में सबसे अधिक प्रेरणा दी। उसी साल मन्त्रालय ने इदारा तालीम-ओ-तरक्क़ी, जामिया मिलिया, के साथ उत्तरोत्तर चरण के पठन सामग्री निकालने और बाँटने की व्यवस्था की। यह सामग्री जामिया मिलिया गत १० वर्षों से तैयार कर रही थी। यह पुस्तिकाएं शहरी और ग्रामीण लोगों की रुचि के भिन्न-भिन्न विषयों पर थी। वे सब एक ही आकार की थीं (डेमीओक्टेवो, पृष्ठ १६) और इन सबके मुखपृष्ठ बहुत आकर्षक थे।

प्रौढ़ शिक्षा शृंखला

मन्त्रालय ने भिन्न-भिन्न संस्थाओं को 'समाज शिक्षा साहित्य' उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करने और सहायता देने की नीति को जारी रखा। पर यह अनुभव किया गया कि सरल पुस्तकों के लेखन में प्रशिक्षित लेखकों को कमी ऐसी सामग्री के उत्पादन में बाधक हो सकती है। अतः मन्त्रालय ने साक्षरता वर्कशापों का एक सिलसिला क़ायम किया। ये वर्कशाप भारत के विभिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों में चलाये गए और इनका उद्देश्य लेखकों को नव साक्षरों के लिए पाठ्य सामग्री तैयार करने के तरीकों में प्रशिक्षित करना था। यद्यपि प्रशिक्षण की अवधि बहुत थोड़ी थी (४-६ सप्ताह) पर फिर भी लेखकों को नव-साक्षरों के लिए सामग्री तैयार करने के तरीकों का थोड़ा बहुत ज्ञान हो जाता था। इन वर्कशापों में काम सीखने वालों ने सिखलाई के दौरान कई पाण्डुलिपियां भी तैयार कीं।

मन्त्रालय ने एक लोक साहित्य समिति की भी स्थापना की ताकि लेखकों को नव साक्षरों के लिए सरल पुस्तकें लिखने का प्रोत्साहन मिल सके। समिति भारत की सब भाषाओं में पाण्डुलिपियों और मुद्रित पुस्तकें आमन्त्रित करती हैं और सर्वोत्तम पुस्तकों को बहुत अच्छे पुरस्कार देती है। १९५४-५५ में समिति ने ३५ पुरस्कार दिए, एक-एक हजार के पाँच और पाँच सौ के तीस। १९५६ में उसने ४२ पुस्तकों के लिए पुरस्कार दिये। इसके अतिरिक्त समिति हर पुरस्कृत पुस्तक की एक हजार प्रतियां खरीदती हैं और राज्य सरकारों को भी उसे ख़रीदने का परामर्श देती है।

मंत्रालय के तत्वावधान में एक अन्य सराहनीय योजना शुरू की गई है जिसके अधीन भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे अधिक प्रचलित शब्दों की सूची

तैयार की जाती है। दिल्ली राज्य की सूची तैयार की गई है और पश्चिमी बंगाल, आन्ध्र और केरल में हो रही है।

केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय की इन योजनाओं ने नव साक्षरों के लिए पाठ्य सामग्री तैयार कराने में काफ़ी प्रोत्साहन और सहायता दी।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ के पश्चात् सामुदायिक खंडों और ग्रामीण पुस्तकालयों ने ऐसी समाग्री काफ़ी अधिक मात्रा में खरीदी। राज्य सरकारों, स्वयं सेवी संस्थाओं और निजी प्रकाशकों ने इस नवीन क्षेत्र में प्रवेश किया और अब कम से कम हिन्दी में ही साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई के लिए छापी गई पुस्तकें हजारों की संख्या में हैं। कन्नड़ और मराठी भाषा में भी ऐसी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

पश्चिम बंगाल, मद्रास, केरल, हैदराबाद और बम्बई की सरकारों और स्वयंसेवी संस्थाएं बंगला, तामिल, तेलगू और गुजराती भाषाओं में उपयुक्त पठन सामग्री प्रकाशित करने की कोशिश कर रही है। इन पुस्तकों में ग्रामीण जीवन की समस्याओं का वर्णन है। पुस्तकों के विषय हैं, स्वास्थ्य शिक्षा, पारिवारिक शिक्षा, प्राथमिक नागरिकता, सामान्य कला, सामान्य संस्कृति और सामान्य ज्ञान।

इसके अतिरिक्त सस्ता साहित्य मंडल जैसी स्वयंसेवी संस्थाएं और केशव विखाजी घावरे जैसे निजी प्रकाशक काफी पुस्तकें निकाल रहे हैं। इनमें से एक ने तो लोक साहित्य समिति से पुरस्कार भी प्राप्त किया है। मसीही साहित्य सोसाइटी भी दक्षिण भारतीय भाषाओं में मसीह के जीवन और सिद्धाँतों पर सरल और सचित्र पुस्तकें काफ़ी संख्या में निकाल रही है। बंगाल जन शिक्षा समिति ने बंगला में विभिन्न विषयों पर काफ़ी पुस्तकें निकाली हैं। इन पुस्तकों को अध्यापक कक्षा में पढ़ता है, ताकि शिक्षार्थियों में पढ़ने की रुचि जागृत हो बाद में जब वे साक्षर हो जाते हैं तो वे स्वयं उन्हें पढ़ते हैं।

विभिन्न भाषाओं में उत्पादित ऐसी पुस्तकों को संग्रह करना और उपयुक्त पाठ्य सामग्री की पूर्ण सूची बनाना अपने आप मैं एक बहुत बड़ी योजना है। विभिन्न संस्थाओं द्वारा उत्पादित पाठ्य सामग्री में गामीण और शहरी रुचि के बहुत से विषय आ गए हैं। ऐसे साहित्य का कोई अभाव नहीं है, कम से कम हिन्दी, कन्नड़ और मराठी में तो नहीं।

निस्सन्देह, विषय प्रस्तुत करने के आम ढंग, विषय के चुनाव, भाषा तथा शैली की दृष्टि से उत्पादित पाठ्य सामग्री में बहुत अन्तर रहता है। ऐसी पुस्तकें भी हैं जिनके गत्ते के बहुरंगी पृष्ठ हैं, मूलपाठ आर्ट और एन्टीक कागज पर छपा है और रंगीन आकर्षक चित्र है। पर साथ ही ऐसी भी पुस्तकें मिलती

है जिसमें साधारण कागज और आकर्षणहीन एकरंगी मुखपृष्ठ हैं, अन्दर कोई चित्र नहीं है और मूलपाठ हल्के सफेद काग़ज पर छपा है। विषयों में भी ग्राम्य जीवन से सम्बन्धित मामलों से लेकर दूर देशों की असम्बद्ध बातें तक शामिल हैं। वाक्यों की लम्बाई चार शब्दों से लेकर सैंतीस शब्दों तक मिलती है, (जैसे नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित मानव के विकास की कहानी)। अधिकतर पुस्तकों की भाषा सरल है, परन्तु कुछ ऐसी भी हैं जो कठिन भाषा में है, (जैसे प्रौढ़ शिक्षा बोर्ड, बिहार द्वारा प्रकाशित "स्वतन्त्र भारत की एक कहानी" और "अर्थशास्त्र और उसकें सिद्धाँत।")

पुस्तक की उपयोगिता सम्बन्धी कुछ प्रश्न फिर भी रह ही जाते हैं। उदाहरणार्थ उत्तर साक्षरता चरण पूर्ण करने वाले विद्यार्थियों के लिए इनमें से कौन-कौन सी पुस्तकें पाठनीय हैं? कौन सी पुस्तकें सुगमता से दक्षता से पढ़ सकते हैं? इनमें से कितनी ग्रामीण और शहरी प्रौढ़ों की विशिष्ट समस्याओं और उनके समाधान से सम्बद्ध होती हैं? पाठकों में जाकर पुस्तकों का मूल्यांकन किए बिना उपरोक्त प्रश्नों और बहुत से अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर नहीं दिया जा सकता।

पत्रिकाएं

प्रौढ़ों को पढ़ने में रुचि बनाए रखने में पत्रिका बहुत प्रभावशील होती है क्योंकि वह ताजी खबरें लाती हैं। यदि उचित तरीके से प्रोत्साहन दिया तो नव साक्षर स्वयं इसमें लेख भेजने लगेंगे। सभी को अपनी लिखी हुई चीज पढ़ने में बहुत आनन्द आता है। लगभग हर राज्य अपनी पत्रिका निकालता है। सारिणी २ भारत में नव साक्षर प्रौढ़ों के लिए प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं की सूची है।

दृश्य साधन

भारत में अब तक सीधी शिक्षा के लिए जो दृश्य साधन प्रयोग में लाए गए हैं वे कुछ प्रवेशिकाओं के साथ के वर्णमाला चार्ट हैं (जैसे लौबाक और पथिक की प्रवेशिकाएं) अनेक संस्थाओं (जैसे इलाहाबाद कृषि संस्था तथा सूचना और प्रसार मंत्रालय) ने बहुत से पोस्टर भी छापे हैं। ये सब अधिकांशतः विकास कार्यक्रम से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे चेचक, अच्छे बीज, सूखे मौसम में हल चलाना, रानीखेत (कुकुट क्षेत्र) और पंचवर्षीय योजना के विभिन्न पहलू।

भारतीय ग्राम सेवा, मोरहरा उत्तरप्रदेश ने कई फ्लेस कार्ड छापे हैं। इन फ्लेश कार्डों पर काले और सफ़ेद रंगों में आकृतियां छपी हुई हैं। उन्हें

प्रायः जैट-माला कहते हैं। फ्लेश कार्ड मलेरिया, खुजली, सुरक्षित ग्रामीण कुएं, टीटनस रोग आदि विषयों पर तैयार किये गये हैं।

हर विषय के फ्लेश कार्डस की एक पूरी माला का मूल्य १ रुपये से ढाई तक है। ये दृश्य-साधन साक्षरता प्रसार में प्रत्यक्ष माध्यम के रूप में और सारे कार्यक्रम के लिए अप्रत्यक्ष साधनों के रूप में भली भाँति उपयोग में लाये जा सकते हैं।

आवश्यकताओं और रुचियों के बारे में शोधपूर्ण परीक्षण

भाषा और शैली का चुनाव या तो समिति अथवा प्रकाशक वा लेखक करते हैं। जहां संस्था प्रकाशन के साथ-साथ क्षेत्रीय कार्य भी करती है, (जैसे समाज कल्याण विभाग कानपुर, लिट्रेसी हाउस इलाहाबाद और मैसूर प्रौढ़ शिक्षा समिति), वहाँ चुने हुए विषयों की उपयोगिता के बारे में लोगों में जाकर काम करने वाले कर्मचारियों से भी परामर्श लिया जाता है और कभी-कभी उन्हीं से विषयों का सुझाव मांगा जाता है। पर अभी तक नव-साक्षर-प्रौढ़ों की पठन रुचियों और आदतों के बारे में कोई नियमित अध्ययन नहीं किया गया है।

लोगों में जाकर काम करने वालों (साक्षरता शिक्षकों, निरीक्षकों, ग्रामीण पुस्तकालयाध्यक्षों) के मतानुसार ग्रामीण प्रौढ़ों के पढ़ने के लिए रोचक विषयों को निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

(क) धार्मिक रुचि की और पौराणिक गाथाओं की पुस्तकें, (ख) धार्मिक नेताओं, समाज सुधारकों तथा राष्ट्रीय नेताओं की जीवन कथाएं, (ग) कहानियाँ और मौसमी गीत जैसे (पूर्वीप्रदेश में कजरी), (घ) कृषि की पुस्तकें।

एक प्रसिद्ध कार्यकर्ता का कहना है कि मद्रास में लोग महात्मा गांधी की जीवनी और ज्योतिष और विज्ञान पर पुस्तकें पढ़ना पसन्द करते हैं।

कुछ संस्थायें अपनी प्रवेशिकाएं बहुत बड़ी संख्या में छपाने से पहले कुछ समय तक कक्षाओं में पढ़ाकर उनकी जांच कर लेते हैं। कुछ सुव्यवस्थित संस्थाएं (जैसे लिट्रेसी हाउस, इलाहाबाद) अनेक कक्षाओं में प्रयोग के लिए शिक्षकों को प्रवेशिकाओं की साइक्लोस्टाल की हुई प्रतियां दे देती हैं। इन कक्षाओं का निरीक्षकों द्वारा और कभी-कभी संस्था या शाखा के अध्यक्ष द्वारा निरीक्षण किया जाता है और जो शब्द वाक्य या चित्र उपयुक्त न हों उन्हें बदल दिया जाता है। कभी-कभी तो अक्षरों और शब्दों का क्रम भी बदल दिया जाता है। फिर भी यह परीक्षण प्रणाली पूर्णतः सन्तोषजनक नहीं है।

सहायक और साक्षरता प्राप्ति के बाद की पुस्तकों को बड़े पैमाने पर छपवाने से पहले इतना अधिक परीक्षण नहीं किया जाता। मद्रास के एक पुराने अनुभवी कार्यकर्ता से मैं ने एक बार पूछा, 'क्या आप अपनी सामग्री बड़े पैमाने

पर छ वाने से पहले उसका प्रयोग करके देख लेते हैं ? यदि हाँ, तो किस प्रकार ? उसने एक बहुत ही दिलचस्प प्रणाली की रूपरेखा बताई। उसने कहा—हां, मैं अपने कार्यकर्ता को पाण्डुलिपि पढ़ कर सुनाता हूँ। कार्यकर्ता उसे अपने विद्यार्थियों को पढ़ कर सुनाता है और तब वह एक विद्यार्थी से उसे पढ़ने को कहता है। तो यह हुआ उसका पूर्व परीक्षण।

एक नया दौर

कुछ स्वयंसेवी संस्थाओं ने अपने उत्पादन कार्यक्रम को वैज्ञानिक आधार पर ढालने तथा लोगों में जाकर काम करने वालों के सही निर्देशन के लिए शोध शाखाएं खोलीं। इस प्रकार की इन संस्थाओं का हम संक्षेप में उल्लेख करते हैं:—

(क) बम्बई नगर समाज शिक्षा समिति, (ख) जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली, (ग) मैसूर राज्य प्रौढ़ शिक्षा परिषद्, (घ) लिट्रेसी हाऊस, इलाहाबाद।

बम्बई नगर समाज शिक्षा समिति

इस समिति ने जो शोध विभाग खोला है उसमें अभी केवल एक ही व्यक्ति है (कुमारी एस० डी० सामन्त)। उसके साथ केवल एक ही अवैतनिक परामर्शदाता है (डा० माधुरी शाह) यह शाखा हाल में ही केवल एक वर्ष के लिए खोली गई है। यद्यपि समिति इसे स्थाई बनाने की आवश्यकता का अनुभव करती है, पर इसके पास इस कार्य के लिए न अपना पर्याप्त धन है, और न बाहरी दान देने वालों को इस प्रकार के कार्य के लिए आकृष्ट करने में सफल हो सकी है।

जामिया मिलिया इस्लामिया

जामिया ने सितम्बर १९५५ में एक शोध शाखा खोली (शोध, प्रशिक्षण और उत्पादन। इसके कार्य हैं लोगों में जाकर काम करने वालों की समस्याओं के बारे में शोध और वैज्ञानिक पड़ताल करना, जानकारी के फलस्वरूप नमूने की शैक्षणिक सामग्री तैयार करना, एक समय में थोड़े से लोगों को परीक्षण, मूल्यांकन और उत्पादन के तरीक़ों में प्रशिक्षित करना।

शाखा ने यूनेस्कों के तत्वावधान में दो योजनाएं शुरू की हैं:—(क) भारत में नव-साक्षरों की पठन सामग्री का सर्वेक्षण, (ख) सामग्री का मूल्यांकन और भारत की स्थिति के अनुसार सामग्री के उत्पादन के लिए कुछ निर्देशक सिद्धांत सुझाना। दूसरी योजना में इन सिद्धान्तों के आधार पर नमूने की छः पुस्तकें तैयार करना और नव-साक्षर प्रौढ़ों की पढ़ने की रुचियों का अध्ययन करना भी शामिल है।

सारणी १—हिन्दी की पूरक

नाम और अन्तर्वस्तु	पृष्ठ	साईज़	कागज़	चित्र मुखपृष्ठ पर	चित्र मूलपाठ में	मूल्य	प्रकाशक
महाभारत कौरवों और पाण्डवों की कहानी	१६	क्राउन क्वार्टो	सफ़ेद प्रिंटिंग	बहुरंगी	दोरंगी	१५ आने	समाज शिक्षण प्रकाशन, दिल्ली
नेताजी (सुभाषचन्द्र बोस) सुभाषचन्द्र बोस की जीवनी	१६	"	"	दोरंगी	दोरंगी	१५ "	समाज शिक्षण प्रकाशन, दिल्ली
वीरांगनियां कुछ प्रसिद्ध स्त्रियों की जीवनी	१६	"	"	दोरंगी	——	१२ आने	समाज शिक्षण प्रकाशन, दिल्ली
तीन महापुरुष महात्मा बुद्ध, स्वामी दयानन्द और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की जीवनी							
हमारे राम		"	"	"	——	१२ आने	समाज शिक्षण प्रकाशन, दिल्ली
राम सीता की कहानी	२८	फुल स्केप क्वार्टो	"	——	एकरंगी (२६)	१२ आने	सरस्वती सदन, दिल्ली
कहानियां भाग—१ नैतिक कहानियां	१६	डैमीओक्टेवो	"	दोरंगी	दोरंगी (७)	५ आने	इदारा तालीमओ तरक़्क़ी, दिल्ली
कहानियां भाग—२ नैतिक कहानियां	१६	"	"	"	" (७)	५ आने	इदारा तालीमओ तरक़्क़ी, दिल्ली
पूरन भक्त नैतिक कहानी	३६	"	"	एकरंगी	एकरंगी (३०)	६ आने	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली

नाम और अन्तर्वस्तु	पृष्ठ	साईज़	कागज़	चित्र मुखपृष्ठ पर	चित्र मूल पाठ में	मूल्य	प्रकाशक
रामलाल की कहानी अच्छी खाद के लाभ और भूमि के कटाव की रोकथाम	५०	रायल औक्टेवो	सुपरकेलेंडर्ड	बहुरंगी	एकरंगी (२३)	——	शिक्षा निर्देशालय, दिल्ली राज्य
ग्राम सेवा ग्राम साफ़ रखने के लिए हमें एक दूसरे के हाथ बटाना चाहिए।	१६	”	सफ़ेद प्रिंटिंग	दोरंगी	एकरंगी (६)	३ आने	मिश्र बन्धु कार्यालय, जबलपुर
अली बाबा और चालीस चोर	२४	फुल स्केप क्वार्टो	”	एकरंगी-४	दोरंगी (४)	८ आने	पुस्तक भंडार, पटना
एक कहानी चिकित्सा साधनों का महत्व	३२	क्राउन औक्टेवो	सुपर कलेंडर्ड	——	एकरंगी (४)	६ आने	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली
प्रान्त के गांव सारे गांव सब ग्रामवासियों की सम्पत्ति है। गांव के सब आदमी भाई-बहिन हैं।	१६	”	सफ़ेद प्रिंटिंग	दोरंगी	एकरंगी (७)	३ आने	मिश्रबन्धु कार्यालय, जबलपुर
सरल पत्र लेखन	३२		”	”	——	१२ आने	सरस्वती भवन, दिल्ली

सारिणी २—नव साक्षर प्रौढ़ों के लिए छपने वाली पत्रिकायें

विषय	समय	भाषा	शुल्क (रुपयों में)	प्रकाशक
दीपक	मासिक	हिन्दी	निशुल्क	समाज कल्याण विभाग नागपुर
रहबर	पाक्षिक	"	३	बम्बई नगर समाज शिक्षा समिति, बम्बई
उजाला	"	"	२	लिट्रेसी हाऊस, इलाहाबाद (उ.प्र.)
गांव की बात	"	"	६	शालीग्राम पथिक, गोंडा
परमहंस	साप्ताहिक	"	६·४	शालीग्राम पथिक, गोंडा
नई शिक्षा	मासिक	"	४·८	तहवीलदारों का रास्ता, जयपुर
मन्दिर से	पाक्षिक	"	—	इटावा विकास योजना
हमारा गांव	"	"	२·४	दिल्ली राज्य समाज शिक्षा विभाग, दिल्ली
हमारा शहर	"	"	२·४	दिल्ली राज्य समाज शिक्षा विभाग, दिल्ली
दीपक	मासिक	मरा .	निशुल्क	समाज कल्याण विभाग, नागपुर
लोक शिक्षण	"	"	३	महाराष्ट्र प्रादेशिक समाज शिक्षा समिति, पूना
रहबर	पाक्षिक	उर्दू	३	बम्बई शहर समाज शिक्षा समिति, बम्बई
बैलाकू (प्रकाश)	साप्ताहिक	कन्नड़	२	मैसूर राज्य प्रौढ़-शिक्षा परिषद्, मैसूर
प्रकाश	मासिक	"	३	करनाटक प्रादेशिक समाज शिक्षा समिति, बलगांव
लोकजीवन	पाक्षिक	गुजराती	३	गुजरात प्रादेशिक समाज शिक्षा समिति, अहमदाबाद
जनजीवन	साप्ताहिक	हिन्दी	१·८	समाज शिक्षा बोर्ड, पटना (बिहार)
जीवन	मासिक	"	१·८	मंगलमय जीवन कार्यक्रम, बिलासपुर (मध्य प्रदेश)
आनन्दम्	साप्ताहिक	तामिल		

मैसूर प्रौढ़ शिक्षा परिषद

परिषद् ने यूनेस्को-समूह-प्रशिक्षण-प्रयोजना (यूनेस्को ग्रुप ट्रेनिंग स्कीम) मैसूर में प्रशिक्षित एक शोध सहायक को अस्थायी रूप से नियुक्त किया है। परिषद् ने अभी तक शोध के लिए कोई निश्चित योजना नहीं बनाई है परन्तु सम्भव है कि वह यूनेस्को-समूह-प्रशिक्षण-प्रयोजना के साक्षरता दल द्वारा तैयार की गई प्रवेशिका और परिषद् द्वारा प्रारम्भिक प्रणाली के आधार पर बनाई गई प्रवेशिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन करे।

लिट्रेसी हाउस इलाहाबाद

इस संस्थाने अभी तक कोई शोध शाखा तो नहीं बनाई, परन्तु यह समय-समय पर छोटी-छोटी शोध योजनायें चलाती रहती हैं। इसने ग्रामीण चल पुस्तकालय के लिए पुस्तकें चुनने के कुछ सिद्धान्त तै किए हैं, जो निम्नलिखित बातों पर आधारित हैं :—

अन्तर्वस्तु की उपयोगिता। क्या विषय ऐसा है जो ग्रामीण को जानना चाहिए, या वह जानना चाहेगा ?

सूचना का बिल्कुल ठीक होना।

शब्दावली का उपयुक्त होना। क्या पुस्तक के शब्द नव साक्षरों के जाने हुए शब्दों में से हैं ?

रुचि ! क्या पुस्तक में पाठक की दिलचस्पी बनी रहेगी ?

उपरोक्त आधार पर ४६० पुस्तकों का परीक्षण किया गया, उन्हें भिन्न-भिन्न स्तरों में बाँटा गया और उनसे एक ग्रामीण चल पुस्तकालय बनाया गया। यह पुस्तकालय २५ रुपये में बिकता है। इसमें पचास पुस्तकें एक टीन के बक्स में होती है। हाल ही में जब डाक्टर रूडौल्फ पलेश यहाँ आये तो लिट्रेसी हाऊस ने उनके द्वारा बनाये हुए कठिनाई मांपने के सूत्र के आधार पर हिन्दी में पुस्तकों को स्तरबद्ध करने के सिद्धान्त बनाने की योजना भी शुरू कर दी है।

इस प्रगति को भारत में पाठ्य सामग्री के उत्पादन में एक नया युग कह सकते हैं। अब और संस्थायें भी ऐसे वैज्ञानिक अध्ययन के महत्व और आवश्यकता को अनुभव करने लगी हैं। परन्तु उनके पास ऐसे वैज्ञानिक आधारों का अभाव है। तथापि वे परीक्षण और मूल्यांकन की प्रणाली सीखने की बहुत इच्छुक हैं। इन शोध शाखाओं को प्रोत्साहन और सहायता मिलनी चाहिए ताकि वे ऐसे अध्ययन और खोज जारी रख सकें जिससे वर्तमान पाठ्य सामग्री का वैज्ञानिक परीक्षण और मूल्यांकन कार्यक्रम चल सके और बड़े पैमाने पर

पाठ्य सामग्री उत्पादन करने का आयोजन किया जा सके तथा दूसरी संस्थाओं को भी पूर्व परीक्षण और मूल्यांकन की प्रणालियों की जानकारी उपलब्ध कराई जा सके।

पुस्तकालय तथा वितरण सेवायें

पाठ्य सामग्री वितरण की मुख्य संस्थायें ये हैं—सामुदायिक योजनाएँ, समाज शिक्षा विभाग, सरकारी और ग़ैरसरकारी पुस्तकालय, स्वयंसेवी संस्थायें, प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता।

इनमें से पहली चार संस्थायें प्रत्यक्ष वितरण करती हैं, और वे अपने कार्य कर्ताओं द्वारा ग्रामों में पुस्तकें भेजती हैं। अंतिम संस्था प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार से वितरण करती हैं, परन्तु मुख्यतः उसका तरीका अप्रत्यक्ष है। प्रकाशक द्वारा पुस्तकों का वितरण समस्त भारत में उसके अपने मुख्य केन्द्र से अपने छोटे केन्द्रों (परचून पुस्तक विक्रेताओं, शाखाओं और अभिकरणों) द्वारा वितरण करने का है। प्रकाशक व उसके छोटे केन्द्र (परचून विक्रेता, शाखायें आदि) दोनों ही प्रत्यक्ष पुस्तक वितरण संस्थाओं के सीधे सम्पर्क में रहते हैं और उन्हें पुस्तक भेजते हैं। कुछ ग्रामीण एवं दूकानों पर जाकर पुस्तक देखते हैं और खरीदते हैं अथवा प्रकाशकों से सीधे पुस्तक मंगाते हैं, परन्तु ऐसे ग्राहक बहुत कम होते हैं।

ग्रामीण पुस्तकालय स्थापन के तरीके विभिन्न स्थानों में अलग-अलग होते हैं। मैसूर प्रौढ़-शिक्षा परिषद् इस शर्त पर पुस्तकालय स्थापित करती है कि ग्राम पंचायत प्रथम वर्ष के लिए तीस रुपये सहायता देना स्वीकार करे। पुस्तकालय की कुल लागत सौ रुपये होती है जिसमें से सत्तर रुपये परिषद् देती है। पुस्तकालय में परिषद् द्वारा प्रकाशित साक्षरता प्राप्ति के बाद काम आने वाली सौ पुस्तकें तो हैं ही साथ ही उसमें अन्य पुस्तकें, एक समाचार पत्र, एक पत्रिका, और एक आलमारी भी होती है। पुस्तकालय प्रबन्धक को प्रति मास दो रुपए दिये जाते हैं। इन पुस्तकालयों में यदि ग्राम अपने हिस्से की रक़म दे देता है तो प्रति वर्ष नई पुस्तकें आ जाती हैं, अन्यथाः वही पुरानी पुस्तकें चलती रहती हैं।

मद्रास में पुस्तकालय व्यवस्था बहुत व्यापक है। इसमें राज्य केन्द्रीय पुस्तकालय, ज़िला केन्द्रीय पुस्तकालय, शाखा पुस्तकालय और वितरण केन्द्र शामिल हैं। राजधानी में स्थिति राज्य केन्द्रीय पुस्तकालय की एक राज्य पुस्तकालय समिति है और इस समिति के अध्यक्ष शिक्षा मन्त्री हुआ करते हैं। शिक्षा विभाग का निर्देशक ही पुस्तकालयों का भी निर्देशक होता है। ज़िला

केन्द्रीय पुस्तकालय, स्थानीय पुस्तकालय समिति के अधीन होते हैं। इस समिति के सदस्य सरकारी और ग़ैरसरकारी दोनों होते हैं। स्थानीय पुस्तकालय समिति ही यह निर्णय करती है कि कौन सी पुस्तकें खरीदी जायें। शाखा पुस्तकालय, ऐसे क़स्बों में स्थित हैं जिनकी आबादी पांच हजार से पचास हजार तक है। हर शाखा पुस्तकालय के लिए स्थानीय पुस्तकालय समिति की एक उप-समिति होती है। समिति प्रतिवर्ष दो हज़ार रुपये तक के मूल्य की पुस्तकें खरीद सकती है। वितरण केन्द्र ऐसे ग्रामों में हैं जहाँ आबादी पाँच हज़ार से कम है। उद्देश्य यह है कि हर ग्राम में एक पुस्तकालय हो। ग्राम पाठशाला के शिक्षक को पुस्तकालय की देखभाल के लिए नियुक्त किया जाता है और उसे इस काम के लिए प्रतिमास १५ रुपये दिये जाते हैं। शाखा पुस्तकालय से वितरण केन्द्र तक पुस्तकें लाने का काम या तो इस काम के लिए लगाया चपरासी करता है या पाठशाला का शिक्षक शहर आने पर पुस्तकालय के लिए स्वयं पुस्तकें ले आता है।

केरल में सम्भवतः सबसे अधिक संख्या में कार्यशील पुस्तकालय हैं। भारत में साक्षरता की औसत वस्तुतः ट्रावनकोर में सबसे अधिक (कोई ५६ प्रतिशत है। वहां के लोगों ने समाज शिक्षा विभाग की स्थापना से बहुत पहले त्रिकोची ग्रन्थशाला संघम के तत्त्वावधान में अपने पुस्तकालय स्वयं बनाए। राज्य सरकार त्रिकोची ग्रन्थ शाला संघम को मान्यता देती है। संघम पुस्तकालयों का निरीक्षण करता है और उसी के माध्यम से सरकारी अनुदान दिए जाते हैं। ट्रावनकोर के कुछ ग्रामीण पुस्तकालयों में रेडियो और सार्वजनिक पठन कक्ष हैं। इनमें दैनिक समाचार पत्र और बहुत सी पत्र-पत्रिकाएँ आती है। स्त्रियों और बच्चों के लिए प्रथम पठन कक्ष हैं।

कोष

प्रत्येक स्थानीय पुस्तकालय का एक कोष होता है जिसमें निम्नलिखित राशियां जमा की जाती हैं: (क) मद्रास सार्वजनिक पुस्तकालय अधिनियम १९४८ के अन्तर्गत संग्रहित कर, यह प्रस्तावित सम्पत्ति कर पर रुपये पर छः पाई सरचार्ज के रूप में है। (ख) चन्दा, दान और सार्वजनिक पुस्तकालयों के लाभ के लिए दिए गए दान से आमदनी। (ग) विशेष अनुदान जो सरकार पुस्तकालयों से सम्बन्ध किसी विशेष उद्देश्य के लिए दे। (घ) शुल्क, जुर्माना और अन्य राशि, जो स्थानीय पुस्तकालय समिति अधिनियम के आधीन बनाये गए नियमों के अनुसार एकत्रित करें।

राज्य सरकार, मद्रास नगर को छोड़ अन्य हर स्थानीय पुस्तकालय समिति द्वारा संचालित पुस्तकालय कोष को धन देती है। यह धन संग्रहित कर से कम नहीं होता।

ऐसे गांवों में, जहाँ सामुदायिक योजना अथवा राज्य समाज शिक्षा विभाग कार्य कर रहे हैं, लोगों को अपने पुस्तकालय चलाने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। प्रायः अनुदान दिया जाता है और समाज शिक्षा व्यवस्थापक ग्राम को पुस्तकें चुनने और खरीदने में भी सहायता देता है। साधारणतः विभागीय अध्यक्ष, निरीक्षक और साक्षरता अध्यापक के परामर्श से ये पुस्तक चुनते हैं और तब स्वीकृत पुस्तकों की सूची तैयार की जाती है। इस सूची की पुस्तकें खरीदी जाती हैं और ग्रामीणों को दी जाती हैं।

ग्रामीण पुस्तकालय

भारत में यह आम तरीक़ा है कि जहाँ साक्षरता कक्षा शुरू की जाती है वहाँ एक पुस्तकालय भी साथ ही खोल दिया जाता है। यदि कक्षा किसी ऐसी संस्था द्वारा शुरू की जाती है जो स्वयं पाठ्य सामग्री उत्पादित करती हो तो यह सामग्री मुफ्त दी जाती है। अन्य सामग्री के लिए ग्राम आंशिक योगदान देती है।

इस प्रकार ग्राम पुस्तकालय में ऐसी पुस्तकें होती हैं जो विशेषतः नव साक्षर प्रौढ़ों के लिए तैयार की जाती हैं और या वे साधारण पुस्तकों में से चुनी हुई होती हैं। उनमें से कुछ में नव साक्षरों के लिए प्रकाशित पत्रिकाएँ और दैनिक समाचार पत्र भी जाते हैं। पुस्तकालय में छोटे-छोटे शेल्फ या टीन या लकड़ी के बक्से होते हैं, जिसमें सौ से पाँच सौ या इससे भी अधिक पुस्तकें आ जाती हैं।

प्रायः साक्षरता शिक्षक को ही पुस्तकालय का कार्य भार सौंप दिया जाता है। वह बहुधा प्राथमिक पाठशाला का शिक्षक होता है या वह उसी ग्राम का निवासी होता है या किसी पास के गांव से आता है। या फिर वह गांव का ही कोई युवा होता है। ऐसा बहुत कम होता है कि वह विभाग का पूर्ण कालीन कर्मचारी हो (जैसे दिल्ली राज्य में)। जब वह पूर्ण कालीन कर्मचारी नहीं होता तो उसे कभी-कभी सम्मानार्थ दो रुपये से १५ रुपये तक पारिश्रमिक दिया जाता है यद्यपि आशा उससे यही की जाती है कि वह अपनी सेवायें निःशुल्क दे। वह एक स्टाक रजिस्टर और एक वितरण रजिस्टर रखता है। इन दो रजिस्टरों की खानापुरी के सिवा उसे पुस्तकालय की कार्य में कोई प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है।

इनमें से अधिकांश पुस्तकालय प्रबन्धक अपने कार्य में कोई दिलचस्पी नहीं लेते, शायद इसलिए कि उन्हें पारिश्रमिक बहुत कम मिलता है और न उनसे किताबें लेने वालों को ही कोई लाभ होता है। उनका मुख्य कर्तव्य यही

जान पड़ता है कि वह पुस्तकों को रजिस्टर पर चढ़ायें और जो उससे पढ़ने के लिए पुस्तक माँगे तो उसे दे दें। दुर्भाग्यवश नव साक्षर पुस्तक लेने वाले बहुत कम होते हैं। भारत में प्रतिदिन पढ़ने के लिए ली जाने वाली पुस्तकों की औसत संख्या देना कठिन है, परन्तु यह बहुत कम होगी। पढ़ने के लिए ली गई पुस्तकों की संख्या के आधार पर यह निर्णय करना भी संभव नहीं कि लोग सचमुच उन्हें पढ़ते और समझते हैं। कभी-कभी पुस्तकें बिना पढ़े भी वापस कर दी जाती हैं, क्योंकि या तो वे बहुत कठिन थीं या फिर उन्हें पढ़ने के लिए समय ही नहीं मिला। दूसरी ओर ऐसा भी होता है कि परिवार के एक सदस्य को दी हुई पुस्तक न केवल उस परिवार के अन्य शिक्षित सदस्यों द्वारा बल्कि पास-पड़ौस के दूसरे शिक्षित लोगों द्वारा भी पढ़ी जाती हैं। विशेषतः ऐसा स्त्रियों के मामले में होता है, क्योंकि वे स्वयं तो पुस्तकालय में बहुत कम आती हैं परंतु किसी और के द्वारा पुस्तक मंगवा लेती हैं।

ग्रामों में पुस्तक लेने वाले अधिकाँश व्यक्ति या तो पहले से शिक्षित होते हैं या पाठशाला के विद्यार्थी होते हैं। एक बार कक्षा से निकलने के बाद बहुत कम नव साक्षर पुस्तकें पढ़ते हैं, जब तक कि ऐसा करने के लिए उन्हें विशेष रूप से प्रेरित न किया जाय। यूनेस्को समूह-प्रशिक्षिण-योजना मैसूर के सदस्यों ने अपने प्रशिक्षण की अवधि में १९५५ में साक्षरता प्राप्ति के बाद पढ़ी जाने वाली कुछ पुस्तकों के मूल्यांकन का कार्यक्रम बनाया। उन्होंने मैसूर तालुक के ६ गांव में लोगों से भेंट की। भेंट किए गए व्यक्ति किसी प्रकार से अपनी साक्षरता का लाभ उठाते हैं या नहीं, यह जानने के लिए एक प्रश्नावली तैयार की गई। एक ने तो दो पुस्तकें पढ़ीं थीं, एक ने बेलाकू (नव साक्षरों के लिए प्रकाशित निःशुल्क साप्ताहिक) पर दो तीन बार नजर डाली थी, शेष ने पढ़ना लिखना सीखे हुए एक वर्ष बीत जाने पर भी न तो कोई पुस्तक छुई थीं और न कोई लाईन लिखी थी।

पर यह कहना ठीक नहीं होगा कि सारे भारत में स्थिति इतनी निराशा-जनक है अथवा वह सुधर ही नहीं सकती। उत्तर-साक्षरता-चरण के पश्चात भी नवसाक्षरों को बहुत समय तक निर्देशन अथवा प्रोत्साहन मिलना चाहिए। पुस्तकालय प्रबन्धकों को इस बात के लिए प्रशिक्षण मिलना चाहिए कि वह किसी व्यक्ति को पुस्तक देने से पहले उसकी पढ़ाई की योग्यता और रुचि को अच्छी तरह आंक लें। उन्हें यह भी सीखना चाहिए कि किसी स्थिति का लाभ कैसे उठाया जाता है। जैसे, एक बार एक ग्राम में जहां इलाहाबाद कृषि संस्था काम कर रही थी नेत्र का एक रोग फैल गया। एक गाँव साथी ने इस बात का लाभ उठाया कि कृषि संस्था ने इससे पूर्व नेत्र रोगों पर एक छोटी-सी पुस्तिका छापी

थी। इसका मुखपृष्ठ बड़ा आकर्षक था और मूल्य केवल एक आना था। गाँव साथी ने पहले लोगों से रोग के कारणों पर बातचीत की और फिर वह किताब उन्हें दिखाई। किताब खूब बिकी। मैंने दिल्ली-राज्य-समाज शिक्षा विभाग के कार्यकर्ताओं को भी नारायणा गांव में इसी पद्धति को अपनाते हुए देखा। वहां ५ अगस्त, १९५५ को १४ नव साक्षरों ने "हमारा झंडा" नाम की पुस्तक और ३ सितम्बर को सहकारिता पर पुस्तक पढ़ने के लिए उधार ली। शिक्षक ने कक्षा में स्वतंत्रता दिवस (१५ अगस्त) के महत्व पर बातचीत की और यह भी बताया था कि सारे देश में और दिल्ली में यह उत्सव किस प्रकार मनाया जाएगा। दिन बहुत निकट था। उनकी रुचि जागृत हो जाने पर उसने इन्हें "हमारा झंडा" पढ़ने के लिए दी। इसी प्रकार एक बार सहकार समिति के निरीक्षक के वहां जाने पर उसने समय का लाभ उठा कर इसी विषय पर पढ़ने की रूचि जागृत करके सहकारिता विषयक पुस्तक बाँटी।

स्पष्ट है कि ग्राम में पुस्तकालय और पुस्तकालय प्रबन्धक हमारे साक्षरता अभियान में बहुत महत्व रखते हैं।

भावी आवश्यकताएं

साक्षरता-प्रसार क्षेत्र में तथा पाठ्य सामग्री के उत्पादन और उपयोग में भारत की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भावी आवश्यकताएँ सम्भवतः ये हैं :

१. डाक्टर ग्रे द्वारा सुझाई गई पद्धति के आधार पर वाच्छनीय तथा मापने योग्य व्यावहारिक साक्षरता की एक परिभाषा तैयार करना तथा इस उद्देश्य के उपयुक्त व्यवस्था स्थापित करना। यह ठीक है कि अधिकांश राज्य सरकारों ने प्रौढ़ साक्षरता के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किया है। परन्तु अधिकांश स्थानों में अभी तक कोई निश्चित और आंकने योग्य मानक निर्धारित नहीं किए गए हैं। हैदराबाद सरकार द्वारा प्रकाशित समाज शिक्षा पाठ्यक्रम का निम्नलिखित वाक्य उदाहरणीय है : "सामान्यतः एक निरक्षक प्रौढ़ को यदि एक या डेढ़ घन्टे प्रतिदिन पढ़ाया जाय तो वह चार महीने में साक्षर बन सकता है।" परन्तु कुछ पद्धतियां ऐसी हैं जिनके द्वारा दस दिन में या १५ दिन में ही एक निरक्षर को साक्षर बनने का दावा किया जाता है।

इन पाठ्यक्रमों को देखकर यह ख्याल हो सकता है कि स्तर बहुत ऊँचा है। परन्तु उसको सिखाने की व्यवस्था दोषयुक्त है। प्राथमिक पाठशाला का एक अध्यापक जिसने सात साल स्कूल शिक्षा पाई हो पर जो समाज शिक्षा के सिद्धान्तों और व्यवहार की केवल थोड़ी सी जानकारी रखता हो इस पाठ्यक्रम को अच्छी तरह पूरा कराने के योग्य नहीं है। निर्देशक पुस्तकों या बात-

चीत के बारे में आवश्यक बातें सुझा कर उसको यथेष्ठ सहायता नहीं की जाती और न उसे निरीक्षकों से कोई कारगर व्यावसायिक दिग्दर्शन मिलता है। उसका पारिश्रमिक भी बहुत कम होता है और पारिश्रमिक की अदायगी के तरीके और भी अधिक असन्तोषजनक हैं।

२. भारत में निरक्षरों को पढ़ना और लिखना सिखाने की प्रचलित प्राणालियों का प्रायोगिक कक्षाओं में पड़ताल करके उनका मूल्यांकन करना ग्रौर उसके परिणामस्वरूप : (क) वर्तमान प्रणाली सुधार के उपाय सुझाये जाएँ : (ख) यदि आवश्यकता पड़े तो प्रयोग के आधार पर मूल पठन सामग्री तैयार की जाए, (ग) शिक्षण के प्रभावशील प्रणाली और तकनीक का विकास किया जाए और साक्षरता को अन्य विकास कार्यक्रमों से सम्बद्ध किया जाये। प्रायः यह कहा जाता है कि साक्षरता का कार्य कभी अकेला शुरू नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इसे हमेशा अन्य विकास कार्यक्रमों के साथ सम्बद्ध कर दिया जाना चाहिए। परन्तु यह किस प्रकार किया जाए और शिक्षण की कुल अवधि पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा ? यदि अवधि लम्बी हो तो क्या वयस्क कक्षा में जाएँगे ? इन प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर ढूँढना होगा।

३. साक्षरता के विभिन्न स्तरों पर वयस्क विद्यार्थियों की योग्यता का अध्ययन।

४. नव साक्षरों के पढ़ने की रुचियों का अध्ययन।

५. भारत में उत्पादित पूरक तथा साक्षरता प्राप्ति के बाद के काम आने वाली पुस्तकों का मूल्यांकन (विशेषतः हिन्दी में), निर्देशक सिद्धान्त निर्धारित करना और उन सिद्धान्तों के आधार पर नमूने की सामग्री उत्पादन करना।

६. पाठ्य सामग्री के परीक्षण और मूल्यांकन की सरल प्रणालियों का विकास।

७. पुस्तकालयों तथा अन्य वितरण संस्थाओं का मूल्यांकन।

८. उपयुक्त मूल पठन सामग्री तथा पठ्नीय पूरक तथा साक्षरता प्राप्ति के बाद के काम आने वाली पुस्तकों की सूची तैयार करना।

९. साक्षरता आन्दोलनों की वर्तमान व्यवस्था का मूल्यांकनः संस्था का प्रशासनीय ढांचा, शिक्षकों का चुनाव, प्रशिक्षण तथा निरीक्षण, निरीक्षकों का चुनाव, और प्रशिक्षण, अन्य विकास कार्यक्रमों के साथ साक्षरता प्रसार सम्बन्ध।

१०. साक्षरता वर्कशापों का आयोजन उन व्यक्तियों के लिए ही किया जाय जो वास्तव में नव साक्षरों के लिए पुस्तकें तैयार कर रहे हों। उदा-

हरणस्वरूप जो लेखक उत्पादन यूनिटों अथवा निजी प्रकाशकों के साथ काम कर रहे हों। वर्कशाप की अवधि तीन महीने से कम नहीं होनी चाहिए। वर्कशाप में भाग लेने वाले सदस्यों को सरल लेखन के अतिरिक्त उत्पादन के सारे पहलुओं में प्रशिक्षित किया जाये। परीक्षण और मूल्यांकन तथा लेखक, चित्रकार और मुद्रक के सहयोग पर महत्व दिया जाये। वर्कशाप में कुछ चित्रकारों तथा मुद्रकों को भी भाग लेना चाहिए।

११. भारत के प्रायः सभी बड़े-बड़े शहरों में कम से कम एक या दो अच्छे छापाखाने हैं, परन्तु वे निरन्तर व्यस्त रहते हैं और उनकी छपाई की दरें बहुत अधिक होती है। इसलिए छोटे-छोटे प्रकाशक उनसे सामग्री नहीं छपवा सकते। अतः छोटे छापाखानों से काम लेते हैं। जिन्हें अभिन्यास तथा अच्छे मुद्रक के तरीकों का कोई ज्ञान नहीं होता। यदि विशेषकर छोटे मुद्रकों के लिए भी तीन-चार सप्ताह के वर्कशाप प्रशिक्षण का आयोजन कर दिया जावे तो मुद्रण का भी सामान्य स्तर ऊंचा हो जाने की सम्भावना है।

१२. समाज शिक्षा-सूचना-प्रसार सेवा की स्थापना। इसके कार्य :— (क) समाज शिक्षा संस्थाओं को परस्पर एक दूसरे के कार्यक्रमों के सम्पर्क में रखना तथा प्रयोगकर्ताओं की आवश्यकताओं और शिक्षण सामग्री के उत्पादन में समन्वय स्थापित करना। (ख) देश में स्थापित विभिन्न शोध यूनिटों को अन्य स्थानों में किये गए शोध कार्य के परिणामों और उससे सीखे गए तरीकों की जानकारी कराना और उन्हें एक दूसरे की गतिविधियों के बारे में सूचित करना। (ग) समाज शिक्षा कार्यकर्ताओं की समस्याओं से शोध यूनिटों को अवगत कराना। (घ) सूचना केन्द्र के रूप में कार्य करना, जहां प्रत्येक कार्यकर्ता अपने कार्य के लिए आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सके।

१३. ग्राम्य पुस्तकालय प्रबन्धों की उनके काम सम्बन्धी न्यूनतम शिक्षा की व्यवस्था की जाए। उन्हें व्यस्कों की आवश्यकताओं और रुचियों और पढ़ने की योग्यता जांचने के काम में प्रशिक्षित होना चाहिए और साथ ही उन्हें समाज शिक्षा में पुस्तकालय के स्थान और महत्व का भी ज्ञान होना चाहिए।

यदि पहले से स्थापित कोई प्रामाणिक योग्य संस्था एक से नौ तक कार्य अपने हाथ में ले ले तो सारा अध्ययन सम्भवतः पाँच साल में भी समाप्त किया जा सकता है।

अध्याय २

पाकिस्तान की समस्याएं और साधन

इमदाद हुसैन और सैमुअल इफ्तिख़ार, शिक्षा मंत्रालय, पाकिस्तान सरकार की ओर से

इस रिपोर्ट में भी उन्हीं समस्याओं का उल्लेख किया गया है जिन का भारत सरकार को सामना करना पड़ रहा है। और यही जाहिर होता है कि पाकिस्तान में भी साहित्य उत्पादन के लिए ज़ोरों से काम हो रहा है। यदि कोई ऐसा समन्वय संगठन हो जिसमें मुसव्विदों की तैयारी छपाई और वितरण के तरीक़ों का अनुभव रखने वाले लोग हों तो उत्पादन कार्य में बहुत सुधार हो सकता है।

सौभाग्य से भारत और पाकिस्तान दोनों ही देशों में एक सुसमृद्ध तथा विविधतापूर्ण साहित्य है जिसका विषय, विशेषकर धार्मिक और ऐतिहासिक विषय, वयस्क नव साक्षर के लिए न अपरिचित है और न ही उसकी समझ से परे है। ऐसी स्थितियों में नव साक्षरों के लिए पाठ्य सामग्री की तैयारी का समारम्भ करने में आसानी होती है। प्राचीन प्रतिष्ठित साहित्य का संक्षिप्त और सरल रूपान्तर वयस्क पाठक की धार्मिक और साँस्कृतिक रुचि को सन्तुष्ट करता है और उस पर उसे साक्षरता का महत्व प्रकट करता है। रिपोर्ट से यह स्पष्ट है कि अन्य विषयों की पुस्तकों में उत्पादन के लिए भी योजना बनाई जा रही है, जो वयस्कों को उनकी भूमि और उसके उपयोग, स्वास्थ्य और ग्राम्य जीवन के अन्य पहलुओं और उसके सुधार के बारे में नवीन ज्ञान दे सकती हैं।

(सम्पादक)

पाकिस्तान में वयस्क साक्षरता

पाकिस्तान में वयस्क साक्षरता आन्दोलन से कई पेचीदा समस्याएं सामने आती हैं।

निरक्षर वयस्कों में उत्साह और रुचि जागृत करने की आवश्यकता।

साक्षरता आन्दोलन के लिए जन साधारण में उत्साह और दिलचस्पी पैदा करने की ज़रूरत।

नव साक्षरों के लिए पाठ्य सामग्री की कमी (प्रायः कई लोगों को एक ही पुस्तक में से साझा करना पड़ता है) और साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई के लिए उपयुक्त सामग्री का अभाव।

बहुत सी स्थानीय भाषाओं और बोलियों का होना जिनमें से कुछ तो कभी लिखी ही नहीं गई। यह बड़ी उलझन में डालने वाली बात है। पाकिस्तान में स्थानीय भाषाओं और बोलियों के अतिरिक्त दो राज भाषाएं उर्दू और बंगाली हैं, जिनका सीखना बहुत आवश्यक है।

प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी

दिन के समय कक्षाएं लगाने में कठिनाई, विशेषकर कृषि क्षेत्रों में जहाँ सारे स्वस्थ व्यक्ति खेतों में काम करते हैं।

जब कक्षायें खुले में लगती हैं तो वयस्कों को ज़मीन पर बैठना पड़ता है। ग्रीष्म ऋतु में गरमी के मारे पढ़ने लिखने में कठिनाई होती है। ग्रामों में बिजली नहीं होती और साधारण लैम्प और लालटेनों से ठीक काम नहीं होता।

ग्रामीण जनता के लिए मनोरंजक साधनों का अभाव

भावुक वयस्कों को पढ़ाने में पेश आने वाली मनोवैज्ञानिक कठिनाइयां जैसे किसी विद्यार्थी से भूल हो जाने पर उसके साथियों के हंसने के कारण वह कक्षा में आना ही बन्द कर देता है।

उन्नत देशों में मूल शिक्षा तथा सामुदायिक संगठन के कार्य समुदाय स्वयं आरम्भ कर सकते हैं परन्तु अनुन्नत देशों, विशेषकर एशिया के, ग्रामों, नगरों और शहरों के स्थानीय समुदायों से यह आशा नहीं की जा सकती। पाकिस्तान में ग्रामीण वयस्क अपनी आदतों के परिवर्तन की आवश्यकता को प्रायः महसूस ही नहीं करते। अक्सर वे नए विचारों का विरोध करते हैं और नए ज्ञान के बारे में अपने में अविश्वास की भावना का परिचय देते हैं। वास्तव में वयस्क-शिक्षा-कार्यकर्ताओं के सामने यह एक बहुत कठिन काम है कि वे वयस्कों में यह भावना जागृत करें कि वे अपने बौद्धिक प्रयासों के द्वारा सुखी और स्वस्थ जीवन बिता सकते हैं।

पढ़ने में रुचि पैदाकरने के लिए पाकिस्तान में अतीत में अनेक तर्क दिए गये हैं : उदाहरण के लिए यह है कि सफल विद्यार्थी धार्मिक पुस्तकें पढ़

सकेंगे, पत्र लिख पढ़ सकेंगे, उन्हें ऋण दाता धोखा नहीं दे सकेंगे, तथा वे अपनी समस्याओं को ज़्यादा अच्छी तरह से समझ सकेंगे।

पर इनमें से एक भी तर्क ऐसा नहीं है जो सदा के लिए दिलचस्पी कायम रख सके। पाकिस्तान में उत्साह पैदा करने के लिए धार्मिक प्रेरणा महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है। लेकिन ऐसा कहा गया है कि "आदमी अधिक तेजी से तभी सीख सकता है। जब उसकी रुचि प्रबल हो और रुचि की प्रबलता उसकी तात्कालिक आवश्यकताओं पर आधारित होती है।"

अतः वयस्क शिक्षा कार्यक्रम की सर्वप्रथम आवश्यकता शिक्षा का व्यावहारिक मूल्य प्रदर्शित करना और आगे पढ़ने के लिए इच्छा उत्पन्न करना है। लोगों में अविश्वास और उदासीनता को भी ख़त्म करने की आवश्यकता है। इसका सबसे अच्छा उपाय साक्षरता कार्य को अन्य कार्यक्रमों के साथ मिला देना है। पाकिस्तान सरकार इस तथ्य से पूर्णतः अभिज्ञ है कि केवल साक्षरता अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकेगी और इसीलिए उसने साक्षरता कार्यक्रम को ग्राम-कृषि-उद्योग विकास कार्यक्रम के साथ (जो वित् मन्त्रालय चलाता है) सम्बद्ध कर दिया है। ग्रामकृषि उद्योग विकास प्रशासन यह प्रयास कर रहा है कि गांवों के लोगों में अपनी यूनिट के विकास के काम में साझी बनने की भावना जगाई जाये। उद्देश्य यह है कि विकास का एक ऐसा सिलसिला चल पड़े जो लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठा दे और अधिक समृद्ध और वैविद्यपूर्ण जीवन के नए अवसर उनके सामने लाये। यह ग्रामीण लोगों के केवल अपनी समस्याएं समझने और उनके हल करने के तरीके ही नहीं सिखाता बल्कि उन्हें खुद क्रियाशील होने के लिए भी प्रोत्साहित करता है।

इस सम्बन्ध में यूनेस्को ने निम्नलिखित सुझाव दिये : "प्रारम्भिक अवस्था में कुछ बहुत आवश्यक सामुदायिक समस्याओं के हल पर ज़ोर देना सबसे अच्छा हो सकता है, उदाहरण-स्वरूप स्वास्थ्य अभियान के द्वारा किसी संक्रामक रोग का निवारण करना अथवा कृषि के नए तरीके सिखाकर अनाज के उत्पादन में विशेष वृद्धि करना।" ऐसे काम के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है ताकि वे लोगों को संगठित कर सकें और उन्हें ऐसे ढंग से सहायता दें जिससे वे अपनी सहायता आप करने योग्य हो सकें। लोगों में उच्च रुचियां जागृत करने के लिए ऐसे कार्यकर्ताओं को अनेक कार्यकर्ताओं को अनेक शिक्षात्मक कार्य करने होंगे। उन्हें सारा कार्यक्रम समझाना पड़ेगा और यह स्पष्ट करना होगा कि उसमें स्थानीय लोगों का क्या हिस्सा होना चाहिए।

एक अन्य महत्वपूर्ण बात शिक्षकों का प्रशिक्षण है। प्रयोग से पता चला है कि कुछ प्रणालियों से वयस्कों को आम लिखना पढ़ना सिखाने में अपेक्षाकृत

काफ़ी कम समय लगता है । इसके लिए 'मूल शब्द विधि' या डा: लौबाक का 'सम्बन्ध-चित्र पद्धति', जिसमें 'ग्लोबल' तथा संयोजन विधियों को मिला दिया गया है, श्राम तौर पर पसन्द की जाती है । इस काम के लिए शिक्षकों को वयस्क शिक्षा की प्रणाली, मनोविज्ञान श्रौर संगठन में प्रशिक्षित करना श्रावश्यक है । इस देश में साक्षरता श्रान्दोलन की श्रसफलता का एक मुख्य कारण यह था कि जो लोग वयस्कों को पढ़ाते थे वे प्राथमिक पाठशालीय शिक्षक थे । मनोवैज्ञानिक कारणों से, वयस्कों को पढ़ाने के लिए बिल्कुल भिन्न दृष्टिकोण की जरूरत है । इस कार्य के लिए ऐसे शिक्षकों की श्रावश्यकता है जो उत्साह श्रौर लगन के साथ काम करें । ऐसे लोग जो स्वयं गाँवों के रहने वाले हों, इस मामले में विशेष लाभदायक हो सकते हैं ।

ऊपर कही गई बातों की रोशनी में यह बताना उचित होगा कि ग्राम कृषि उद्योग विकास प्रशासन द्वारा प्रस्तावित पंचवर्षीय योजनाश्रों में वयस्क साक्षरता, शिक्षकों के प्रशिक्षण श्रौर उपयुक्त साहित्य के उत्पादन को उचित स्थान मिला है । इस कार्यक्रम के श्राधीन श्रन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्रशासन तथा फोर्ड फ़ाउन्डेशन की सहायता से श्रब तक नौ प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए हैं । साक्षरता कार्यक्रम के सुधार के लिए शिक्षा मंत्रालय ने यूनेस्को से टेक्नीकल सहायता ली है श्रौर दो यूनेस्को विशेषज्ञ पाकिस्तान श्राये हैं । दो मुख्य केन्द्र एक पूर्व पाकिस्तान में तेजगाँव श्रौर दूसरा पश्चिमी पाकिस्तान में लालामूसा में, साक्षरता शिक्षकों को प्रशिक्षण देंगे श्रौर उपयुक्त साहित्य का उत्पादन करेंगे ।[१] यह सब कार्य इन विशेषज्ञों की देखभाल श्रौर निर्देशन में होगा । श्राशा की जाती है कि पाँच वर्षों में देश का एक चौथा भाग ग्राम कृषि उद्योग विकास कार्यक्रम से लाभ उठाएगा ।

प्रशिक्षिण की सुविधाएं श्रौर बढ़ानी होंगी । यह जानकर सन्तोष होता है कि श्रखिल पाकिस्तान महिला एसोशिएशन, समाज कल्याण योजना, श्रखिल पाकिस्तान साक्षरता एसोशिएशन श्रौर मसीही युवक एसोशिएशन (वाई० एम० सी० ए०) जैसी संस्थाएं भी साक्षरता के तरीक़ों में थोड़े समय के शिक्षा पाठ्यक्रम चला रही हैं ।

बोलियों की समस्या

श्रनेक बोलियों की समस्या प्रभाव पूर्ण साक्षरता श्रान्दोलन में बाधक होती है, विशेषकर तब जबकि इन बोलियों की कोई लिपि न हो । ऐसी स्थिति

१. लालामूसा में यह प्रशिक्षण कार्य यूनेस्को विशेषज्ञों की सहायता से १९५७ में श्रारम्भ हो गया ।

में शिक्षा कार्य ऐसे तरीकों से शुरू करने की आवश्यकता हो सकती है जिनमें साक्षरता की आवश्यकता न हो, जैसे—वाद विवाद या प्रदर्शन अथवा फ़िल्मों तथा रेडियो का उपयोग। परन्तु जिन बोलियों की लिपि हो, (जैसे पंजाबी या सिन्धी) वहां यह निर्णय करना, कि पहले प्रशासनीय भाषा पढ़ाई जाए या स्थानीय भाषा, परिस्थितियों पर निर्भर करता है, परन्तु इसमें भी सरकारी नीति का प्रश्न उठ सकता है। ऐसी हालत में निर्णय करने से पहले निम्नलिखित शिक्षा सिद्धान्तों को ध्यान में रखना होता है :

बच्चे और बड़े दोनों ही अपनी मातृभाषा में सबसे अच्छी तरह शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। यदि मातृभाषा इतनी विकसित न हो कि आधुनिक जीवन में शिक्षा का भार संभालने के योग्य हो सके तो कोई अधिक उन्नत भाषा (संस्कृति की स्थानीय भाषा अथवा कोई प्रादेशिक सहायक भाषा) जल्दी से जल्दी व्यवहार में लायी जानी चाहिये।

मूल शिक्षा को मौलिक या दृश्य साधनों से शुरू करना आवश्यक हो सकता है। ऐसी हालत में साक्षरता की शिक्षा तब तक रोकी जा सकती है जब तक मातृ भाषा नियमबद्ध न हो जाए या कोई उपयुक्त सहायक भाषा काम में न लाई जा सके।

चाहे साक्षरता के माध्यम के रूप में हो या पड़ोसी राष्ट्रों के साथ संपर्क स्थापित करने के लिए, प्रादेशिक सहायक भाषा का चुनाव न केवल स्थानीय सुविधा के आधार पर होना चाहिए बल्कि यह उद्देश्य ही सामने रहना चाहिए कि मूल शिक्षा के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव बढ़े और मानवीय एकता को बढ़ावा मिले। इसलिए ऐसी भाषा का चुना जाना जिसकी उपयोगिता का क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत हो (जो केवल स्थानीय भाषा की बजाय विश्व भाषा हो) ज्यादा स्वाभाविक होगा।

साहित्य उत्पादन का वयस्कों की आवश्यकताओं से सम्बन्ध

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वयस्कों के लिए ऐसी पाठ्य सामग्री के उत्पादन की आवश्यकता हैं जो उनकी कुछ समस्याओं का हल पेश कर सके और उनकी कुछ बड़ी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके पाकिस्तान में उपलब्ध अधिकांश साक्षरता-साहित्य में इस दृष्टिकोण का अभाव है। यह वयस्क पाठक की दैनिक आवश्यकता से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। इसमें ऐसी कोई उपयोगी व्यवहारिक जानकारी नहीं होती जिससे वह अपने व्यवसायिक कौशल में वृद्धि कर सके और अपनी आमदनी बढ़ा सके। वयस्क

पाठक को इसमें अपनी दैनिक समस्याओं का कोई हल नहीं मिलता और न उसे अपनी कोशिशों का तुरन्त कोई फल मिलता है। इससे उसकी रुचि मर जाती हैं और उसे साक्षर बनने की कोशिश करते रहने के लिए कोई चाह नहीं रहती।

साक्षरता कार्यक्रम में क्या-क्या सम्मिलित होना चाहिए, इस प्रश्न के लिए शोध की आवश्यकता है। वयस्क शिक्षा के किसी सम्पूर्ण कार्यक्रम में निम्न-लिखित चीज़ें होनी चाहिए : "सुधार शिक्षा, विशेषकर साक्षरता की योग्यता का सुधार; व्यावसायिक शिक्षा जिसका उत्पादन क्षमता और जीवन-स्तर से सीधा सम्बन्ध हो; व्यक्तिगत और सार्वजनिक स्वास्थ्य के बारे में शिक्षा; अवकाश का पूर्ण उपयोग करने के लिए मनोरंजनात्मक शिक्षा; भाषा, कला, विज्ञान और इतिहास जैसे विषयों की, जो ग्रामीण वयस्क के जीवन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रखते, जानकारी और ज्ञान प्राप्ति में सहायता देना।

लोग क्या चाहते हैं और उनकी क्या आवश्यकताएं हैं, यह पडताल अध्ययन और निरीक्षण का विषय है। अगर मूल धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रवृत्तियों से सम्बद्ध सूचना का अभाव है तो कोई साहित्य कभी उपयुक्त, उपयोगी और प्रभावशाली नहीं हो सकता। साहित्य की उपयोगिता के बारे में स्थानीय मत भी उसके मूल्यांकन का एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है। ग्रामीणों का विश्वास बहुत कठिनाई से प्राप्त होता है। पर उसे खोने में कोई देर नहीं लगती। अतः यह महत्वपूर्ण है कि आरम्भ में ऐसा विषय चुना जाए जिसका ग्रामीणों की आमदनी बढ़ाने में उपयोगी होना निश्चित हो।

मूल समस्या है नव साक्षरों के लिए उपयुक्त साहित्य का अभाव।

वर्तमान सामग्री

नीचे हम पाकिस्तान में उपलब्ध कुछ साक्षरता सामग्री का विश्लेषण और आलोचनात्मक अवलोकन करते हैं :

दाना इकबाल : मूल पुस्तक 'आनन्द दि वाईज़ मैन', लेखक—डाक्टर लौबाक, रूपान्तर और अनुवादकर्ता—सैमुअल इफ्तिख़ार, प्रकाशक—पंजाब रिलीजियस बुक सोसाइटी, १९५४, पृष्ठ-संख्या ४०, मूल्य २ आना, साईज़ ८ × ६·८ इंच, पंक्ति की लम्बाई ५·४ इंच, १ इंच में २ पंक्तियां, पूरे पृष्ठ में १५ पंक्तियां। मोटे कागज़ का मुख पृष्ठ, तार की सिलाई। लिथो प्रणाली द्वारा मुद्रित। १२ रंगीन रेखा चित्र, हर चित्र २ × २ इंच का।

यह पुस्तक डाक्टर लौबाक के नवीन इलेक्टिक प्रणाली पर आधारित प्रवेशिका (इल्म की ऐनिक) की उत्तर पुस्तक है। इसमें स्वास्थ्य और कृषि

पर छोटी-छोटी कहानियां हैं। इसके मूल पाठ और चित्रों का उत्पादन काल में परीक्षण नहीं किया गया।

अनुवादकर्ता ने आधारभूत शब्दों की एक सूची बनाई थी, उसी के शब्द इसमें प्रयुक्त किए गये हैं। पुस्तक को बड़ी सावधानी से क्रमवत्त किया गया है। हर अध्याय में १० या १२ शब्दों का उपयोग किया गया है और हर शब्द ४ या ५ बार दोहराया गया है। हर अध्याय के अन्त में नवीन शब्दों की एक सूची और कथा का सारांश एक लम्बे वाक्य में दिया गया है। इस वाक्य में सारे नवीन शब्दों का प्रयोग किया गया है। प्रौढ़ों को इस प्रकार की अधिक पुस्तकों की आवश्यकता है।

चित्र बहुत अच्छे बनाये गए हैं और मुखपृष्ठ का चित्र पुस्तक के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। पुस्तक में उपयोगकर्ताओं के सुझावों के अनुसार संशोधन किये गए हैं। ग्राम्य कृषि उद्योग विकास कार्यकर्ता इस पुस्तक को ग्राम की आवश्यकताओं के बहुत अनुरूप पाते हैं।

अन्धे की कहानी : लेखक—मुफ्ती इक़बाल अहमद, भाषा उर्दू, प्रकाशक—पंजाब शिक्षा विभाग, १९६१ पृष्ठ संख्या ५०, साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई के लिए निःशुल्क दी जाती है। पृष्ठ साईज़ ८·२ × ६·९ इंच, पंक्ति की लम्बाई ५ इंच, १ इंच में ३ पंक्तियां, पूरे पृष्ठ में १६ पंक्तियां। भारी काग़ज़ का मुखपृष्ठ, तार की सिलाई। लिथो प्रणाली द्वारा मुद्रित।

इस पुस्तक में एक अन्धे आदमी की कथा है। यह वार्तालाप के रूप में है। इसका उद्देश्य वयस्कों को पढ़ने और दूसरों को पढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करना है। इसमें ऐसी बहुत सी बुरी प्रथाओं के बारे में भी बताया है जिनका कारण अज्ञान और निरक्षरता है। पढ़ाने की विधि है छोटी-छोटी कहानियां और अन्त में निष्कर्ष के रूप में नैतिकता की बात कह देना।

उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था परन्तु यह प्रयास अवश्य किया गया है कि कठिनशब्द न आयें। पुस्तक बहुत रोचक है और बहुत अच्छी छपी हुई है। नव-साक्षरों के लिए बहुत उत्तम प्रकाशन समझी गई है।

भाई की रवादारी : डाइमंड बुक डिपो पब्लिशर्स द्वारा रचित तथा प्रकाशित। पृष्ठ संख्या १५३, मूल्य ४ आना। पृष्ठ का साईज़ ६·८ × ४·८ इंच, पंक्ति की लम्बाई ३-८ इंच, १ इंच में तीन पंक्तियां, १ पृष्ठ में १५ पंक्तियां। काग़ज़ का मुखपृष्ठ और तार की सिलाई। लिथो प्रणाली द्वारा मुद्रित।

यह एक अच्छी काल्पनिक कथा है। पुस्तक का उद्देश्य मनोरंजन करना है, परन्तु इसकी कहानी नैतिक गुणों की भी शिक्षा देती है, जैसे—माता-पिता

की भक्ति, दूसरों की सहायता करना इत्यादि। उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था, परन्तु यह सरल भाषा में लिखी गई है। पुस्तक रोचक और पठनीय है। वयस्क इसे पसन्द करते हैं, परन्तु यह बच्चों के अधिक उपयुक्त है। यह नव-साक्षरों के लिए बहुत लम्बी है। किसी भी नव-साक्षर में इसे खत्म करने का धैर्य शायद ही होगा।

सुनहरी ज़िन्दगी : लेखक—मिस पी० टी० राम, संशोधनकर्ता सैमुअल इफ्तिख़ार, भाषा उर्दू, प्रकाशक—पंजाब रिलीजियस बुक सोसाइटी। पृष्ठ संख्या ४०, मूल्य ३ आना। पृष्ठ का साइज़ ९·४ × ७·२ इंच, पंक्ति की लंबाई ६ इंच, १ इंच में २ पंक्तियां, पूरे पृष्ठ में १७ पंक्तियां। भारी काग़ज़ का मुख पृष्ठ, तार की सिलाई। चित्रहीन।

यह पुस्तक साक्षरता प्राप्ति के बाद पढ़ने के लिए है। इसमें दी गई छोटी-छोटी कहानियों से वयस्क पाठक आत्मनिर्भरता और ग्राम जीवन में सुधार के लिए सहकार का महत्व सीखता है। प्रत्येक कहानी छोटी और सरल है और एक महत्वपूर्ण बात बताती है। दैनिक जीवन से सम्बद्ध एक समस्या का उल्लेख किया जाता है और फिर उसका समाधान सुझाया जाता है। कहानी के पात्र स्थानीय हैं।

उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था परन्तु सारी पुस्तक में सरल और प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया गया है। उसमें लगभग २०० शब्द हैं और हर शब्द कम से कम पाँच बार प्रयुक्त किया गया है। पुस्तक वयस्कों में बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुई है।

मिरजा साहिबां—स्थानीय लोक कथा पर आधारित, रूपान्तरकर्ता डाक्टर ए वाहिद। भाषा—उर्दू, प्रकाशक-फ़ीरोज़ सन्ज़, १९४१, मूल्य-१ आना १० पाई, पृष्ठ का साईज़ ८.३ × ६.१ इंच, पंक्ति की लम्बाई ४.१ इन्च, पूरे पृष्ठ में १५ पंक्तियाँ। भारी काग़ज़ का मुखपृष्ठ और तार की सिलाई।

यह पुस्तक इस बात का अच्छा उदाहरण है कि कैसे लोकप्रिय कहानियां (यह एक प्रेम कथा है) वयस्कों को पढ़ने के लिए प्रेरित करती है। उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था पर वह सरल उर्दू में है। मुद्रण बहुत स्पष्ट है। शब्दों की दूरी बहुत उपयुक्त है और काग़ज़ भी अच्छा है।

इस्लाम के मुजाहिद—(इस्लाम धर्म के लिए लड़ने वाले) रूपान्तर कर्ता असग़ार हुसैन खां, भाषा—उर्दू, प्रकाशक—पंजाब बुक एजेंसी १९५३, पृष्ठ संख्या ५६, पृष्ठ को साईज़—७ × ५ इंच, पंक्ति की लम्बाई—३.६ इन्च, १ इन्च में ४ पंक्तियाँ, पूरे पृष्ठ में १९ पंक्तियां। इमीटेशन आर्ट पेपर का मुख

पृष्ठ, तार की सिलाई। इसमें १२ चुने हुए मुस्लिम वीरों की जीवनियाँ हैं। ये दो भागों में है। शब्दावली की दृष्टि से यह पुस्तक नव साक्षरों के लिए उपयुक्त नहीं है, परन्तु इसकी अन्तर्वस्तु को वयस्क आमतौर पर पसन्द करते हैं। उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था।

इल्म की चाबी—रूपान्तरकर्ता—जलालुद्दीन और हंसराज, १९३८, पृष्ठ संख्या—४०, मूल्य २ आना ३ पाई। पृष्ठ का साईज़ १०.८ × ८.१३ इंच, पंक्ति की लम्बाई ५ से ६ इन्च, पंक्तियां एक-एक इन्च की दूरी पर हैं और पूरे पृष्ठ में ८ पंक्तियां हैं। मुखपृष्ठ का काग़ज़ भारी है, और तार से सिली है, २३ चित्र हैं (अधिकांश काले और सफेद रेखा चित्र हैं, साईज़ २ × ४ इन्च)।

इस प्रथम पाठमाला में छोटी-छोटी कहानियाँ और लोक कथायें हैं। सबका आपस में सम्बन्ध है। जिसके कारण पाठकों का ध्यान लगा रहता है। उत्पादन के समय पुस्तक की अन्तर्वस्तु का तो परीक्षण किया गया था परन्तु चित्रों का नहीं। हर पाठ में नए शब्दों को सिखाया गया है और हर नए शब्दों को कम से कम चार बार दोहराया गया है। इसके अतिरिक्त प्रश्न भी दिए गए हैं जिनका उद्देश्य यह परीक्षण करना है कि पाठक ने पुस्तक को कहाँ तक समझा है। इसके साथ व्याख्या भी की गई है। हर पाठ के अन्त में शब्दों का अभ्यास और लिखने का अभ्यास है।

काग़ज़ निम्नकोटि का है। चित्र भी अच्छे नहीं हैं, परन्तु मुद्रण साफ़ है। शब्दों की दूरी अच्छी है और पुस्तक की सिलाई भी बहुत अच्छी है।

पूरन भगत—रूपान्तरकर्ता—क़ाज़ी इकराम हुसैन, भाषा-उर्दू, स्थानीय लोक कथा पर आधारित, प्रकाशक—पंजाब शिक्षा विभाग १९४७। पृष्ठ संख्या-४८, मुफ्त। पृष्ठ का साईज़—७.२ × ४.१४ इंच पंक्ति की लम्बाई-३.८ इंच, १ इंच में दो पंक्तियां, पूरे पृष्ठ में १२ पंक्तियाँ। मुखपृष्ठ भारी काग़ज़ का है और तार से सिली है।

यह स्वाध्याय के लिए लिखी गई है। कहानी एक प्राचीन स्थानीय लोककथा है। वह पुस्तक इस बात का उदाहरण है कि लोकप्रिय धार्मिक कहानियां नव साक्षरों के लिए कैसे पाठ्य सामग्री प्रदान करती हैं। प्रौढ़ इसे पसन्द करते हैं क्योंकि वे कहानी से परिचित हैं। पुस्तक में नैतिक शिक्षा मिलती है। इसमें पूरन भगत और उसके प्रसिद्ध कुएं से सम्बद्ध कुछ अन्ध विश्वासों की व्याख्या की गई है। उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया था। इसमें कठिन शब्द नहीं हैं। भाषा सरल है और प्रस्तुत करने का ढंग सहज है। इसमें कोई चित्र नहीं है।

बोड़ो देर लेखा पढ़ा—(बड़ों का लिखना पढ़ना) लेखक-सैयद अमीरुल-इस्लाम, भाषा-बंगला, पृष्ठ संख्या, ४६ मूल्य, ८ आना। पृष्ठ का साईज़,७.२ ×४.३ इंच, पंक्ति की लम्बाई ३.८ इंच, पूरे पृष्ठ में १९ पंक्तियां। कागज़ साधारण सफेद प्रिंटिंग पेपर, धागे से सिली हुई। सचित्र है। नव साक्षरों के लिए यह प्रथम पाठमाला २२ अध्यायों में विभक्त है। आरम्भ के ९ अध्यायों में से हर एक में पाँच अक्षर सिखाये गए हैं। केवल इन्हीं अक्षरों से दो या तीन अक्षरों से शब्द बनाए गए हैं। फिर कुछ मोटे और सरल वाक्य दिए गए हैं, ये वाक्य चित्रों की व्याख्या करते हैं। हर अक्षर की आवाज़ पहिचानना सिखाने के लिए अच्छा प्रयास किया गया है।

पुस्तक के दूसरे भाग में राष्ट्रीय और धार्मिक नेताओं की जीवन गाथा तथा कृषि, मातृभूमि, ग्राम के सौंदर्य जैसे विषयों पर कविताएँ दी गई हैं। अंत के कुछ पृष्ठों में दिन, महीने, और मौसम के नाम, और पहाड़ों की सारणी दी गई है।

पुस्तक बहुत मोटी है इसलिए प्रवेशिका के रूप में अच्छी नहीं। लेखक छोटे और सरल शब्दों से आरम्भ करता है, परन्तु बाद के अध्यायों में कठिन शब्द आ गए हैं। इससे नव साक्षर पर ज़ोर पड़ता है। पुस्तक प्रौढ़ों की अपेक्षा बच्चों के लिए अधिक उपयुक्त पाई गई है।

उत्पादन के समय पुस्तक का परीक्षण नहीं किया गया। इसमें ८ चित्र हैं। जान पड़ता है कि इनका भी परीक्षण नहीं किया गया।

पर्चे आदि और अन्य सामग्री—उपरोक्त साहित्य के अतिरिक्त छोटे-छोटे पर्चे भी प्रौढ़ों के लिए लिखे गए हैं। इन पर्चों का उत्पादन एक टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल के शिक्षकों और विद्यार्थियों ने किया है। भाषा उर्दू है। उनका क्रमिक स्तर ठीक नहीं बनाया गया है परन्तु भाषा काफ़ी सरल है। हर पंक्ति की लम्बाई ५.३ इंच है और पूरे पृष्ठ में ११ पंक्तियाँ हैं। बड़ी हल्की फुल्की चीज़ है। इनकी भाषा सरल है इनमें दी हुई समस्याएँ जैसे-स्वच्छता, रोग निवारण, साक्षरता का महत्व, हवा व रोशनी की व्यवस्था, पीने का साफ़ पानी, प्रौढ़ मत दान बहुत उपयुक्त है और दूसरे देशों में जनशिक्षा के लिए पर्चे बहुत ही प्रभावशील माने गए हैं और इनके उत्पादन में बहुत ही कम लागत आती है। ग्रामीण कृषि उद्योग विकास प्रशासन ने अभी हाल में स्वास्थ्य, कृषि और शिक्षा पर कुछ आकर्षक पर्चे छापे हैं।

प्रायः साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई की सामग्री बहुत मोटी और भारी होती है। अतः वह कुछ निरुत्साह करने वाली होती है। अगर नव साक्षरों के हाथ में पतली सी प्रवेशिकाएँ दी जायें तो वे उन्हे जल्दी पढ़ लेते हैं

ग्रौर उनमें कुछ सफलता का भाव भी पैदा होता है । जैसे लम्बे-लम्बे वाक्य पाठकों को निरुत्साहित करते हैं उसी प्रकार मोटी-मोटी पुस्तकें उन्हें सहज ही निराश कर देती हैं । नव साक्षरों की पुस्तकें सरल ग्रौर क्रमबद्ध तो होनी ही चाहिए साथ ही उनकी पृष्ठ संख्या भी कम होनी चाहिए ।

यह बहुत ग्रावश्यक है कि मज़दूरों, किसानों, दुकानदारों ग्रौर सिपाहियों ग्रादि की भाषा का ग्रध्ययन किया जाए । प्रायः नव साक्षर साहित्य के लेखक बोलचाल की भाषा ग्रौर जन साधारण की दैनिक भाषा के प्रयोग में बहुत लज्जा महसूस करते हैं । ऊपर जिन पुस्तकों की ग्रालोचना की गई है उनमें से कुछ में भाषा को ज़रूरत से ज़्यादा मांझने संवारने की कोशिश की गई है ।

तकनीकल दृष्टि से भी ग्रधिकांश वर्तमान साहित्य दोषयुक्त है । प्रौढ़ नव साक्षर के लिए उपयुक्त टाईप काफ़ी मोटा नहीं है ग्रौर सामग्री छोटे-छोटे पैरों में विभक्त नहीं है ।

बंगला में श्री बिवार ग्रौर उनके साथियों जैसे कुछ लोग नई सामग्री तैयार कर रहे हैं । उसी प्रकार सिन्धी, ग्रौर पश्तों में चार्ट ग्रौर प्रवेशिकायें तैयार की गई हैं । इनमें चित्र ग्रौर ग्रक्षर में सम्बन्ध लगाकर ग्रक्षर ज्ञान करने की प्रणाली है । ग्राशा की जाती है कि यह सामग्री शीघ्र ही छप जायेगी ।

उपलब्ध सांस्कृतिक साधन

यद्यपि पाकिस्तान में मुद्रण यंत्र ग्रौर सामग्री का ग्रभाव है तथापि प्रतिभाशील, कलाकारों ग्रौर लेखकों का ग्रभाव नहीं । पाकिस्तान सरकार ने ग्राम कृषि उद्योग विकास कार्यक्रम में साक्षरता को महत्वपूर्ण स्थान देना निश्चित किया है ग्रौर इस ग्रत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य के लिए पर्याप्त धनराशि भी निर्धारित कर दी है । राष्ट्रीय साधनों के ग्रतिरिक्त यूनेस्को, एशिया फ़ाउन्डेशन ग्रौर ग्रन्तर्राष्ट्रीय सहकार प्रशासन (ग्राई० सी० ए०) जैसी विदेशी संस्थाएँ भी हैं जो साक्षरता योजनाग्रों में सहायता देने की बहुत इच्छुक हैं । उन्होंने ग्रपनी भौतिक साधन ग्रौर परामर्श सेवायें पाकिस्तान को उपलब्ध की हैं । ये विदेशी संस्थाएँ ग्रपने प्रयासों का समन्वय कर रही हैं ग्रौर देश की ग़ैर सरकारी संस्थाग्रों को भी सहायता दे रही हैं ।

पाकिस्तान को विरासत में समृद्ध साँस्कृतिक परम्परायें प्राप्त हुई हैं । इससे नव साक्षरों के लिए बहुत सामग्री मिल सकती है । उर्दू, बंगला, सिन्धी, पश्तों ग्रौर पंजाबी (फ़ारसी लिपि) में गीत ग्रौर लोक कथायें पहले से ही मौजूद हैं । यद्यपि लोग लिखना पढ़ना नहीं जानते तथापि इनका बहुत सा भाग उन्हें मुखाग्र है । सारी पाकिस्तानी भाषाग्रों में ग्राम्य जीवन ग्रौर जन साधारण

के जीवन से सम्बन्धित लोकोक्तियाँ हैं प्रौढ़ साहित्य के लिए उनका रूपान्तर किया जा सकता है।

पाकिस्तान के लोगों को धर्म में बहुत रुचि है। धार्मिक परम्पराओं, कहानियों, गीतों, प्रथाओं, और अन्य विषयों पर वहाँ अगाध सामग्री है, जिसे अनेक प्रकार से सरल साहित्य में परिवर्तित किया जा सकता है। पाकिस्तान में पहले से धार्मिक सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। इसका नव साक्षरों के प्रयोग के लिए रूपान्तर और संशोधन किया जा सकता है। ऐसी सामग्री के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:

बहिश्ती जेवर—(अलौकिक आभूषण) लेखक—मौलाना अशरफ़ अली थानवी। यह लोकप्रिय ग्रन्थ स्त्रियों के लिए है। इसके ११ भाग हैं। हर भाग धार्मिक पवित्रता, स्त्री शिक्षा, धार्मिक कर्मकाण्ड, विवाह-विच्छेद, घरेलू मामलों और अन्य समस्याओं की व्याख्या करता है। यह पुस्तक पाकिस्तान में मुस्लिम स्त्रियों की शिक्षा के लिए आवश्यक समझी जाती है।

तारीख़-ए-इस्लाम—(इस्लाम का इतिहास) लेखक—अब्दुल्ला कुरेशी, इसके दो भाग हैं। इसमें इस्लाम के इतिहास का वर्णन है, विशेषकर धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इसमें से बहुत सी सामग्री का नव साक्षरों के लिए रूपान्तर किया जा सकता है।

तज़करात-उल-औलिया—(मुस्लिम पैग़म्बरों की स्मृतियाँ) यह ईरानी लेखक शेख़ फ़रीदुद्दीन अत्तार की प्रसिद्ध पुस्तक का उर्दू अनुवाद है। यह बहुत सरल उर्दू में लिखी गई है। इसमें मुस्लिम सन्तों का बहुत आकर्षक वर्णन है और इसका मुद्रण बहुत सुन्दर हुआ है।

हीर वारिस शाह—मिया वारिस शाह द्वारा लिखित पंजाबी कविता की यह एक प्रसिद्ध पुस्तक है। यह एक प्रेम कथा है, तथापि इसमें मानवीय आकांक्षाओं, प्रेम असफलताओं, दुख-दर्द, आशाओं और भय की दार्शनिक व्याख्या की गई है। इसमें पंजाबी रीति-रिवाज और प्रथाएँ भी स्पष्ट झलकती हैं। हीर वारिस शाह सारे पंजाब (पूर्व और पश्चिम) में लोकप्रिय है। निरक्षर ग्रामीण इसके बहुत सारे छन्द ज़बानी जानते हैं और उन्हें बहुत आनन्द से गाते हैं। इस काव्य के श्रोता और पाठक दोनों इसकी कथा के पात्रों के साथ एकात्म्य का अनुभव करते हैं। हर पंजाबी ग्रामीण युवा के मन में वारिस शाह रचित हीर पढ़ने की इच्छा होती है।

हमारा क़ायद—(हमारा नेता) इसके लेखक ज़ैड० ए० सुलेरी हैं। यह पुस्तक सारे पाकिस्तान में बहुत लोकप्रिय है, क्योंकि यह देश के संस्थापक

मोहम्मद अली जिनाह की जीवनी है। अन्य पुस्तकों की भाँति इसका भी नव साक्षरों के लिए रूपान्तर किया जा सकता है।

पोथियाँ—सरल बंगला भाषा और मोटे टाईप में लगभग एक हज़ार पोथियाँ हैं। इन पोथियों में अधिकांश संज्ञाएँ और विशेषण अरबी या फ़ारसी भाषाओं के हैं। इन पोथियों में मुस्लिम धर्म कथाएँ, मुस्लिम वीरों की जीवनियाँ, इस्लाम की ऐतिहासिक घटनाएँ, तथा मिसरी ईरानी और अरबी जैसी विविध इस्लामी संस्कृतियों की प्रेम कथाएँ हैं।

अन्य अनेक पुस्तकें भी हैं जिनका रूपान्तर करके या जिन्हें संक्षेप और सरल बनाकर नव-साक्षरों के लिए उपयुक्त बनाया जा सकता है।

मुद्रण समस्यायें

कागज़

कागज़ और छपाई तथा जिल्द की सामग्री के अभाव के कारण प्रकाशक आदर्श, सस्ती और लोकप्रिय पुस्तकें प्रकाशित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। देश में कागज़ उद्योग अभी नया-नया है और यहाँ बना हुआ कागज़ आवश्यक ऊँचे स्तर का नहीं होता। उसका मूल्य भी अधिक होता है। आशा की जाती है कि स्थिति सुधर जायेगी और मुद्रण की अच्छी सुविधायें शीघ्र ही उपलब्ध हो सकेंगी।

इसी प्रकार आशा है अखबारी कागज़ भी जिसका इस समय अभाव है निकट भविष्य में अधिक मात्रा में और कम मूल्य पर उपलब्ध हो सकेगा।

मशीन और प्रशिक्षण

इसी प्रकार विदेशी मुद्रा के साधन सीमित होने के कारण छापे की मशीनों और पुर्ज़ों की कमी है।

मुद्रण और चित्र चार्ट बनाने की कला के विकास और लेखकों, कलाकारों, मुद्रकों और सम्पादकों को विदेशों में प्रशिक्षण दिलाने के लिए वजीफे प्रदान करने की और सरकार द्वारा ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। यह बात उत्साहवर्धक है कि कुछ बड़े-बड़े प्रकाशकों ने अपने कर्मचारियों के लिए विदेशों में प्रशिक्षण दिलाने के लिए कदम उठाये हैं।

मुद्रण संस्थाओं में काम करने वाले अधिकांश कर्मचारी निरक्षर हैं। इस निरक्षरता के कारण प्रूफ़ ठीक करने और टैक्नीकल तथा दूसरी बातों में बहुत समय नष्ट हो जाता है। बहुत से प्रकाशक भी काफ़ी पढ़े लिखे नहीं हैं।

लिथो मुद्रण में, जो बहुत प्रचलित है, बहुत समय नष्ट होता है। क्योंकि यह मानवीय श्रम पर निर्भर करता है। इस युग में जबकि राष्ट्रीय उन्नति और

विकास के लिए बौद्धिक वस्तुओं का बहुत शीघ्र वितरण होना चाहिए, लिथो मुद्रण पर बहुत अधिक निर्भर करना लाभदायक नहीं है।

स्याही और ब्लाक निर्माण

लिथो और हाथ की लिखाई के लिए पाकिस्तान में अच्छी स्याही उपलब्ध नहीं है। पहले स्याही का विदेशों से आयात किया जाता था। विदेशों से आने वाली रंगीन स्याही की मात्रा बहुत कम और वह सारे प्रकाशकों के लिए पर्याप्त नहीं होती और फिर मूल्य भी अधिक है।

उत्तम कोटि के चित्रकारों, हाथ की लिखाई करने वालों और ब्लाक निर्माताओं के अभाव के कारण उनकी सेवायें बहुत मंहगी होती हैं और बहुत अच्छे मुद्रक और फ़र्में ही उन्हें नियुक्त कर सकती हैं। इससे पुस्तकों का मूल्य भी बढ़ जाता है।

हाथ की लिखाई

पाकिस्तान में भेजे हुए यूनेस्को के मूल शिक्षा मिशन का कहना हैं कि लिथो ब्लाकों पर हर चीज़ हाथ से लिखने की पद्धति बहुत दक़यानूसी है। इसमें हर पुस्तक पूरी की पूरी एक ही आदमी द्वारा लिखी जानी जरूरी है जिससे कि हस्थलेख में कोई अन्तर न पड़े। यदि वह बीमार पड़ जाता है तो कार्य में देर हो जाती है। प्रूफ़ में सुधार भी उसी आदमी द्वारा होने चाहिए। इस कठिनाई को हम नस्तालीक़ लिपि की जगह नस्ख़ लिपि अपना कर दूर कर सकते हैं। अधिकारियों का मत भी इस परिवर्तन के पक्ष में प्रतीत होता है और अधिकाधिक सरकारी प्रकाशन और पाठ्य पुस्तकें नस्ख़ में मुद्रित होने लगी हैं। मूल शिक्षा कार्यक्रम नस्ख़ लिपि को लोकप्रिय बनाने में सरकारी और अन्य संस्थाओं को आदर्श अवसर प्रदान करेगा।

वितरण तथा पुस्तकालय सेवाएं

पाकिस्तान की पुस्तकालय सेवाएं अभी प्रारम्भिक दशा में ही हैं। अतः प्रौढ़ साक्षरता आन्दोलन में उनका योग न के बराबर है। इसलिए वितरण के प्रश्न की गहरी जाँच आवश्यक है। जब तक नव साक्षरों को साक्षरता सामग्री निरन्तर उपलब्ध रहने का प्रबन्ध न हो तब तक इसका उत्पादन व्यर्थ है। नव साक्षर की रुचि बनाये रखने के लिए उन्हें प्रति दिन नई-नई बौद्धिक सामग्री उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। पाकिस्तान में प्रायः गांव एक दूसरे से काफ़ी दूरी पर स्थित हैं और संचार के साधन बहुत सीमित हैं। गाँवों में पुस्तकालय बहुत कम हैं, कभी कभी एक गांव पास के दूसरे गाँवों की आवश्यकता पूर्ति करता है। और आम तौर पर यह आशा शहरों से की जाती है कि वे अपने

आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकता की पूर्ति करें। दूसरी समस्या है कर्मचारियों का अभाव। नव साक्षरों में उनको पाठ्य सामग्री और साहित्य वितरित करने के लिए पर्याप्त कर्मचारी नहीं हैं। प्रायः एक ही आदमी से यह आशा की जाती है कि यह बहुत बड़े क्षेत्र में सामग्री का वितरण करे। ज़रूरत इतने अधिक वितरण कर्ताओं की है कि वे दूर २ क्षेत्रों के निवासियों के पास पहुँच सके। पाकिस्तान में चलते-फिरते पुस्तकालय नहीं हैं और वितरण के लिए डाक व्यवस्था भी सन्तोषजनक साधन नहीं है, अतः गाँवों में जाकर व्यक्तिगत प्रयास पर ही निर्भर रहना पड़ता है।

सामान्यतः वितरण का अधिकाँस कार्य प्रकाशक स्वयं ही करते हैं। ये पुस्तक विक्रेताओं को पुस्तकें देते हैं, और विकेता उन्हें ग्राहकों के हाथ बेच देते हैं। अक्सर कुछ कमीशन एजंट प्रकाशकों से पुस्तकें खरीद लेते हैं और फिर उन्हें आगे बेच देते हैं। कहीं कहीं तो वे ग्रामीणों के पास ही पुस्तकें छोड़ देते हैं। ये ग्रामीण फ़सल की कटाई पर जिन्स अथवा पैसे के रूप में उनकी क़ीमत चुका देते हैं।

नव साक्षरों के साहित्य का वितरण पाठशालाओं के निरीक्षकों द्वारा भी किया गया है। शिक्षा विभाग प्रकाशकों से पुस्तकें लेता है (ये प्रौढ़ों के लिए विशेष रूप से नहीं लिखी होतीं) और ग्रामीण पाठशालाओं के निरीक्षकों को दे देता है। पहले प्रकाशकों से सीधे ही निरीक्षकों के पास पुस्तकें भेजने को कहा गया था। निरीक्षकों से यह आशा की जाती थी, कि वे ग्रामों का दौरा करते समय उन्हें बाँट दें। निरीक्षक पुस्तकों को मुख्याध्यापकों को दे देते हैं जो उन्हें साक्षरता कार्य के उत्तरदायी शिक्षकों को दे देते थे। बहुत से ऐसे ग्रामों में जहाँ कोई प्राथमिक पाठशालाएं नही थीं, किसी मस्ज़िद को साक्षरता केन्द्र और किसी मुल्ला को साक्षरता शिक्षक के रूप में उपयोग किया गया। मुल्ला निकट के पाठशाला के मुख्याध्यापक के पास जाकर पुस्तकें ले लेता था। अब भी पाकिस्तान के कुछ भागों में यह विधि प्रचलित हैं।

शिक्षा विभाग द्वारा किए जा रहे वितरण कार्य के अतिरित निजी संस्थाओं के साक्षरता कार्यकर्ता भी इन किताबों को बेचने के लिए ले जाते हैं। कभी-कभी ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास कार्यकर्ता इन संस्थाओं के मुख्य कार्यालयों से पुस्तकें प्राप्त कर लेते हैं। पंजाब तथा उत्तर पश्चिमी सीमा क्षेत्रों जैसे पाकिस्तान के कुछ इलाकों में साक्षरता विस्तार तथा सामग्री वितरण कार्य पुलिस ने अपने हाथ में ले लिया था। यह व्यवस्था काफ़ी सन्तोषजनक रही।

इन सबसे यह प्रतीत होता है कि अतीत में प्रौढ़ों के लिए साक्षरता सामग्री के वितरण का कार्य बहुत सन्तोषजनक नहीं रहा। परन्तु पाकिस्तान

के ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास अधिकारी अधिक और अच्छे प्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा इस समस्या को सुलझाने की योजना बना रहे हैं। ग्राम-कृषि-उद्योग विकास कर्मचारीगण के पास यातायात के अच्छे साधन हैं—चलते-फिरते यूनिट भी साक्षरता और अन्य सामग्री लेकर अधिकाधिक व्यक्तियों के पास पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं। आशा की जाती है कि ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास की योजनाओं से अन्य संस्थाओं जैसे अखिल पाकिस्तान महिला एसोसिएशन, अखिल पाकिस्तान व्यस्क साक्षरता एसोसिएशन, समाज कल्याण योजना, समाज सेवी एसोसिएशन को भी प्रेरणा मिलेगी।

ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास-प्रशासन ने ग्रामों के लिए "बक्सा पुस्तकालय" की पद्धति को अपनाने का निश्चय किया है। यह पद्धति अन्य देशों में लाभदायक सिद्ध हुई है।

नव साक्षारों की रुचियाँ और पसंद के विषय शोध की आवश्यकता

पाकिस्तान में नव साक्षर की रुचियों और उनके पसन्द के विषयों पर कोई वैज्ञानिक और सुव्यवस्थित शोध कार्य नहीं हुआ है। लेकिन जो प्रौढ़ साक्षरता और उससे सम्बन्घित क्षेत्रों में काम करते हैं वे इस विषय पर काफ़ी लाभदायक सूचना दे सकते हैं।

पाकिस्तान की ग्रामीण जनता शहरी जनता से भिन्न विषयों को पसन्द करती हैं। इसलिए शहरी लोगों के लिए उत्पादित सामग्री ग्रामीण जनता की आवश्यकता को पूरा नहीं करती। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि विभिन्न क्षेत्रों की भाषा, रीति-रिवाजों और संस्कृति की दृष्टि से सामग्री उत्पादन कार्य को स्थानीय बना देना चाहिए। लम्बे अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि जब तक सामग्री स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप न हो तब तक वह लाभदायक नहीं होती।

आवश्यक सामग्री की श्रेणियां

ग्रामीण जनता द्वारा पसन्द किए जाने वाले विषय अनेक वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं।

कृषि-सम्बन्धी—पाकिस्तान की ९० प्रतिशत जनता ग्रामीण है। इसलिए भूमि संरक्षण, पेड़-पौधे लगाना, सिंचाई, भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के साधन, घरेलू दक्षता, पशु-पालन, कृषि उत्पादन बढ़ाने की वैज्ञानिक प्रणालियां, खाद, पौधे और पशुओं के रोग, औजार जैसी कृषि समस्याओं से सम्बद्ध पाठ्य सामग्री अधिक पसन्द की जाती है। मौसम, जंगल, कीड़े मकोड़े, बाजार के

भावों में उतार चढ़ाव और कृषि अर्थ व्यवस्था की सामान्य समस्यायें जैसे विषय भीप सन्द किए जाते हैं।

पाकिस्तान में ७४० मील लम्बा समुद्रतट है और यहां मछली पकड़ना एक महत्वपूर्ण धन्धा है। अतएव यह स्वाभाविक ही है कि मछली पालने, और मछली वाले स्थानों की सुरक्षा की जानकारी देने वाली सामग्री में लोगों की रुचि होगी।

धार्मिक और नैतिक—पाकिस्तान मुस्लिम देश है और वहां अधिकांश आबादी के लिए धर्म बहुत महत्वपूर्ण चीज़ है। पैगम्बरों, धार्मिक विचारों, और सन्तों की कहानियाँ यदि रोचक ढंग से प्रस्तुत की गई हों तो प्रौढ़ों को बहुत पसन्द आती हैं। नैतिक और धार्मिक विषय भी उनके लिए रोचक हैं। प्रौढ़ शिक्षा और ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास के कार्यकर्ताओं ने साक्षरता सामग्रीं प्रस्तुत करने के लिए जनता को धार्मिक रुचि का उपयोग करना आरम्भ कर दिया है।

सांस्कृतिक—पाकिस्तान की सांस्कृतिक परम्परा बहुत समृद्ध है। इसकी जनता अपने इतिहास, संस्कृति और जीवन प्रणाली पर गर्व करती है। ग्रामों में, लोकगीत और लोक कथाएं, परम्पराएं, रीति-रिवाज और प्रथाएं दृढ़ सामुदायिक जीवन के आधार हैं। ये लोकगीत, लोक कथाएं और परम्पराएं कई पीड़ियों से चली आ रही हैं। निरक्षर लोगों को भी धार्मिक कथाएं, कविताएं, लोकगीत और लोक कथाएं खूब याद हैं और वे तुरन्त उन्हें सुना सकते हैं। इस प्रकार की कोई भी सामग्री लोगों की बहुत रोचक लगेगी। ग्रामीण पाठकों के लिए उत्पादित सामग्री यदि देश की साँस्कृतिक स्थिति मे सम्बन्धित नहीं होगी तो वह पाठकों को रोचक प्रतीत नहीं होगी।

स्वास्थ्य और स्वच्छता—पाकिस्तान में दुर्बल स्वास्थ्य एक जटिल समस्या है। पीने के लिए सड़ा-गला पानी, विकार युक्त तालाब, आसपास मल-मूत्र और पशुओं के गोबर इत्यादि का होना, रोगों के कीड़े, पौष्टिक और पर्याप्त भोजन का अभाव, घरों में वायु तथा प्रकाश की अपर्याप्त व्यवस्था इसके मुख्य कारण हैं। आबादी की बहुत बड़ी संख्या किसी न किसी रोग से पीड़ित रहती है। और वही गन्दगी जो रोगों का कारण है खाद बनाने के काम में लाई जा सकती है, जिससे बीमारियों में कमी होगी और साथ ही पैदावार बढ़ेगी। जनता ग़रीबी और बीमारी से छुटकारा पाना चाहती है और स्वाभाविक रूप से इसके उपाय जानने की इच्छुक है। उसे मार्गदर्शन की आवश्यकता है। यदि लोगों को मुद्रित सामग्री के माध्यम से जानकारी और सहायता पहुँचाई जाए तो वे स्वयं ही बहुत हद तक बीमारी और दरिद्रता दूर कर सकते हैं। पीने का साफ़ पानी, मच्छर, खुजली आंखों का दुखना, घरों में वायु और प्रकाश की व्यवस्था, गांव

की सफ़ाई, छूत रोग, घरेलू विज्ञान, पौष्टिक भोजन जैसे विषय वयस्कों के लिए बहुत रोचक पाए गए हैं।

मनोरंजन—पाकिस्तान के लोग हंसी-मज़ाक के बहुत शौकीन हैं। देश में बहुत से चुटकुले व हंसी-मज़ाक की कहानियाँ और विनोद प्रधान कविताएं प्रचलित है। त्यौहारों पर व्यवसायी लोग सामुदायिक गान, नाटक, और मनोरंजक कार्यक्रम और गाना-बजाना करते हैं।

उर्दू का साहित्य मनोरंजक सामग्री से भरा पड़ा है। परन्तु दुर्भाग्यवश उसका प्रयोग उच्च शिक्षित लोगों तक ही सीमित है। उसे जनसाधारण के विनोद के लिए नवसाक्षर सामग्री के रूप में प्रस्तुत करने की बहुत गुजायश है। यह सामग्री लघु-कथा, कविता, पहेली, एकांकी, इत्यादि के रूप में प्रकाशित की जा सकती है।

सामाजिक, सूचनात्मक, और व्यवसायिक—गांव वालों में बहुत जिज्ञासा होती है। कहीं रेडियो, टेलीफ़ोन, चलचित्र जैसे आधुनिक यंत्रों को बहुत आश्चर्य के साथ देखा जाता है। कृषि और चिकित्सा के आधुनिक ढंग भी लोगों को आकृष्ट करते हैं। इन सब नवीन चीज़ों ने लोगों के जीवन को प्रभावित करना आरम्भ कर दिया है। अब समय आ गया है कि ग्रामवासियों की उत्सुकता का लाभ उठाकर उन्हें जानकारी और शिक्षा दी जाए। व्यावहारिक विज्ञान सरल और आकर्षक पाठ्य सामग्री द्वारा सिखाया जा सकता है। निम्नलिखित सामाजिक और सामान्य सूचनात्मक विषय प्रौढ़ों को रोचक लगते हैं: विवाह की समस्याएं, अन्धविश्वास, पारिवारिक अर्थ व्यवस्था, नागरिकता, मत दान और उसका महत्व, सरकार, सब राष्ट्रों के महापुरुषों की जीवनियां, वैज्ञानिक प्रगति।

स्त्रियों की आवश्यकताएं—अलग-अलग आयु के लोगों की तथा स्त्रियों और पुरुषों की रुचियां अलग-अलग होती हैं। व्यस्क पुरुषों के काम की सभी पाठ्य सामग्री स्त्रियों की आवश्यकताओं की पूर्ण नहीं करती। स्त्रियों की रुचि के कुछ विषय ये हैं: घर की सफ़ाई, नए नए खाद्य व्यंजन बनाना, कपड़े सीना धोना और ठीक करना, घरेलू विज्ञान, मितव्ययता, महान स्त्रियों की कहानियां बच्चों की देखभाल और उनका मनोविज्ञान, गर्भवती स्त्री की खुराक, रोगी की सेवा, धार्मिक शिक्षा, कुटीर उद्योग, पारिवारिक सम्बन्ध, अचार मुरब्बे और चटनियां बनाना इत्यादि।

कुछ स्त्री लेखकों ने उपरोक्त विषयों पर स्त्रियों के योग्य पठन सामग्री तैयार करनी आरम्भ भी कर दी है।

सारांश

उपरोक्त बातें प्रौढ़ साक्षरता क्षेत्र में स्थानीय कार्यकर्ताओं के लम्बे और विस्तृत अनुभव पर आधारित हैं। वे कोई व्यवस्थित और वैज्ञानिक खोज के परिणाम नहीं हैं। ऐसे शोध की बहुत आवश्यकता है। अब समय आ गया है कि पाकिस्तान के शिक्षा शास्त्रियों की इस प्रकार की शोध करनी चाहिए। वयस्कों की रुचियों और उनकी पसन्द के विषयों के बारे में काफ़ी जानकारी के बिना पाठ्य सामग्री उत्पादन करना कठिन है। यह आशा की जाती है कि ग्राम कृषि -उद्योग-विकास के अधिकारी इस आधार पर शोध की अपने कार्यक्रम का आवश्यक अंग बना लेंगे।

सामग्री उत्पादन अभिकरण

नवसाक्षरों के लिए साहित्य उत्पादन करने वाली पांच संस्थाएं हैं: शिक्षा विभाग, पश्चिमी पाकिस्तान; शिक्षा विभाग, पूर्वी पाकिस्तान; पंजाब रिलीजियस बुक सोसाइटी, मेसर्स फिरोज़ सन्स, तथा अन्सार संस्था। इनके प्रयास सराहनीय हैं परन्तु वे नवसाक्षरों के लिए साहित्य उत्पादन करने की इतनी बड़ी समस्या को हल करने के लिए काफ़ी नहीं हैं।

यह आशा की जाती है कि ग्राम-कृषि-उद्योग-विकास-प्रशासन शिक्षा मन्त्रालय की सहायता से कुछ हद तक इस समस्या से निपट सकेगा। पाकिस्तान के दोनों भागों में कृषि-उद्योग-विकास संगठन का एक-एक केन्द्र है। उनके पास अपने छापाख़ाने हैं और उनके अपने टैक्नीकल विशेषज्ञ हैं। आशा की जाती है कि वे प्रौढ़ पाठकों के लिए उपयुक्त विषयों पर पर्याप्त मात्रा में सामग्री उत्पादित करेंगे। स्वास्थ्य, खाद्य और कृषि मंत्रालय ने भी विभिन्न प्रकार की पुस्तिकाएँ और पर्चे और ब्रोश्च्र्स और सचित्र पोस्टर छापे हैं। यद्यपि वे नवसाक्षरों के लिए उत्पादित नहीं किए गए तथापि उनका प्रयोग इस उद्देश्य से किया जा सकता है।

अपव्यय और दोहरे काम को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे साहित्य का उत्पादन करने वाली संस्थाओं के कार्य में समन्वय हो। हर विभाग द्वारा अलग और जगह-जगह बिखरा हुआ कार्य करने की अपेक्षा समन्वित कार्य कहीं अधिक प्रभावशील होगा। इस बात की भी ज़रूरत है कि विभागीय लेखक नई-नई विधियाँ सीखें।

सिफारिशें

वयस्कों की रुचियों और पसन्द के विषयों के बारे में व्यवस्थित सर्वेक्षण की आवश्यकता है। इस प्रकार का सर्वेक्षण अकेले सरकारी संस्थाओं द्वारा

नहीं किया जा सकता । अतः लोगों की आवश्यकताओं, रुचियों और पसन्द के विषय की जानकारी के लिए पाकिस्तान के विश्वविद्यालयों और स्वयंसेवी संस्थाओं का उपयोग किया जाना चाहिए । ग्राम कृषि उद्योग विकास अधिकारियों के लिए ऐसी प्रायोजना चलाना ठीक रहेगा । यह शोध कार्य सब भाषा-भाषी क्षेत्रों में अलग-अलग किया जाना चाहिए । पुरुषों-स्त्रियों की और अलग अलग आयु के लोगों की रुचियाँ अलग-अलग होती हैं । अतः स्त्री पाठकों के लिए अलग पुस्तकें लिखी जानी चाहिएँ । पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिये विषयों के ऊपर दी गई सूची सहायक सिद्ध हो सकती है ।

सरकार और सामाजिक संस्थाओं को चाहिए कि वे अपव्यय और दोहरा कार्य रोकने के लिये नवसाक्षर साहित्य उत्पादन के कार्यों में समन्वय करें । एक ऐसा बोर्ड बनाया जा सकता है जिसमें सरकारी अभिकरणों सहित साक्षरता और पाठ्य सामग्री से सम्बन्ध रखने वाली सभी संस्थाओं के प्रतिनिधि हों । सम्भवतः यूनेस्को और विश्व साक्षरता संगठन (वर्ल्ड लिट्रेसी इन्कारपोरेटिव) इस राष्ट्र संस्था को परामर्श, सामान और अन्य सेवायें दे सकेंगे ।

इस समस्या के महत्व को देखते हुए अधिक प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था होनी चाहिए । यह संभव है कि इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए लालामूसा और तेजगांव में स्थित दोनों मुख्य ग्राम कृषि उद्योग विकास केन्द्रों का विकास किया जाए । दोनों केन्द्रों में ऐसे छापेखाने लगाए जा सकते हैं जहां छपाई का सब काम हो सके । इससे वहां वयस्कों के उपयोग की पठन सामग्री वांछित रूप में तैयार हो सकेगी । इन छापाखानों में ऐसा सारा सामान होना चाहिए जिससे वयस्कों के लिए उपयुक्त, आकर्षक, मोटे टाइप में सही और सचित्र छपाई हो सके । साहित्य के उत्पादन, मूल्यांकन और साक्षरता की प्रविधियों में प्रशिक्षित करने के लिए पर्याप्त कर्मचारीगण भी होने चाहिए ।

हर भाषा-भाषी क्षेत्र के लिए एक आकर्षक साप्ताहिक समाचार पत्र के प्रकाशन का प्रबन्ध किया जाये । इन समाचार पत्रों में नियन्त्रित शब्दावली होनी चाहिए । उसमें धर्म, व्यवसाय, स्वास्थ्य और स्वच्छता, समाज कल्याण, सामान्य जानकारी और मनोरंजन के विषयों पर लेख होने चाहिएँ । इन पत्रों की जिम्मेदारी दोनों केन्द्रों के कर्मचारियों पर हो । आरम्भ में प्रत्येक समाचार पत्र के अलग-अलग क्रमिक खंड हो सकते हैं ।

वर्तमान पाठ्य सामग्री का बड़ी सावधानी से चुनाव होना चाहिए और उसे इन केन्द्रों में वयस्कों के उपयोग के लिए आवश्यक परिवर्तन करके छापा जाना चाहिए ।

पाकिस्तान में डा० लौबाक की नई "इकलेक्टिक" प्रणाली बहुत प्रसिद्ध है और उसकी सफलता की आशा है। यह तरीक़ा कहानी और उच्चारण पद्धतियों के मिश्रण से बना है। इस पद्धति का और प्रयोग किया जाना चाहिए पर अन्य पद्धतियों का प्रयोग करने के भी अवसर होने चाहिएँ। हमारा यह भी सुझाव है कि 'इल्म की ऐनक' प्रवेशिका के संशोधित रूप को बड़ी संख्या में प्रकाशित किया जाए।

नव साक्षर वयस्कों की आवश्यकता और भाषा की जानकारी रखने वाले योग्य लेखकों को पाठ्य सामग्री लेखन के लिए नियुक्त किया जाये। इन लेखकों से अपनी पाण्डुलिपियां विशेषज्ञों को भेजने के लिए कहा जा सकता है। प्रोत्साहन देने के लिए पुरस्कारों का भी आयोजन किया जाये।

दोनों केन्द्रों को अधिक से अधिक इश्तिहारों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इश्तिहार बनाने में शिक्षक प्रशिक्षण संस्था सहायता दे सकती है।

कागज, गत्ता, स्याही और अन्य साधन सामग्री की सुविधा देकर नव-साक्षरों की पठन सामग्री के उत्पादन कार्य को प्रोत्साहन दिया जाये। शायद सरकार के लिए यह संभव होगा कि वह सस्ते कागज़ की सप्लाई पर नव-साक्षरों की पठन सामग्री के उत्पादन के लिए प्रतिबन्ध हटा ले।

प्रवेशिकायें और साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई की पुस्तकें मुफ्त नहीं बाँटी जानी चाहियें बल्कि बेची जानी चाहियें ताकि वयस्क पाठक उनकी क़द्र करे और उन्हें अपनी सम्पत्ति समझे। हाँ, यह अच्छा होगा कि ऐसे साहित्य के उत्पादन के लिए कुछ अनुदान दिया जाये जिससे उसका मूल्य कम हो सके और उसे सब ख़रीद सकें। नव साक्षर साहित्य के अनुदान के लिये विदेशी संस्थाओं से सहायता की माँग की जा सकती है।

सरकार और अन्य संस्थाओं के लिए नस्ख लिपि को लोकप्रिय बनाने के लिए मूल शिक्षा कार्यक्रम आदर्श अवसर प्रस्तुत करता है और इस लिपि को अपनाने और लोकप्रिय बनाने से बहुत सी टैक्नीकल समस्याये हल हो सकेंगी। नवसाक्षरों के लिए सारी पाठ्य सामग्री (नस्ख) लिपि में उत्पादित करना संभव है। नस्तालीक से नस्ख लिपि में परिवर्तन करने की आवश्यकता पर ऊपर प्रकाश डाला जा चुका है।

साक्षरता पाठ्य सामग्री को निरन्तर उपलब्धि और वितरण को एक़ व्यवस्थित और अधिक सन्तोषजनक प्रणाली की आवश्यकता है। यह अनेक स्थानों में, जैसे बाजारों, गाँव और मस्जिदों में कम-से-कम मूल्य पर उपलब्ध होनी चाहिए। ग्राम-कृषि-उद्योग विकास-प्रशासन और समाज कल्याण प्रायोजना

अखिल पाकिस्तान महिला एसोसिएशन और सामाजिक कार्यकर्ताओं का पाकिस्तान सम्मेलन जैसी समाज कल्याण संस्थाओं को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि नवसाक्षरों के लिए उत्पादित साहित्य का ठीक उपयोग होता रहे। संभव है कि बाद में बोर्ड को (जिसकी स्थापना के विषय में सुझाव दिया गया है) साक्षरता सामग्री के उचित वितरण की जिम्मेदारी दी जाय ।

लेखकों, मुद्रकों, चित्रकारों और प्रकाशनों के प्रशिक्षण के लिए सुविधायें दी जानी चाहिए । अच्छा होगा कि पाकिस्तान के दोनों भागों से कम-से कम एक-एक व्यक्ति को किसी अच्छे विदेशी पत्रकारिता स्कूल में एक वर्ष के विशेष प्रशिक्षण के लिए भेजा जाए ।

अधिक से अधिक ग्रामों में छोटे-छोटे पुस्तकालय खोले जाने चाहियें । मस्जिद या पंचायत घर के किसी कमरे में पुस्तकालय बनाया जा सकता है । पाठशाला के किसी कमरे में भी पुस्तकालय खोला जा सकता है । चलते फिरते पुस्तकालय बनाने के भी प्रयत्न किए जाने चाहियें ।

चल चित्र, चार्ट इत्यादि दृश्य-श्रव्य साधनों के उपयोग को प्रोत्साहन मिलना चाहिए । प्रत्येक ग्रामीण साक्षरता केन्द्र में एक बैट्री रेडियो सेट और फिल्म दिखाने वाला एक प्रोजैक्टर होना चाहिए । साक्षरता विद्यार्थियों के लिए रेडियो पर कम-से-कम आध घन्टे का कार्यक्रम होना वांछनीय है ।

अनुभव बताता है कि जो बच्चे चार साल के पश्चात् पाठशाला छोड़ देते हैं, वे बड़े होने तक प्रायः पढ़ना भूल जाते हैं । अतः निरक्षरता निवारण का एकमात्र कारगर उपाय है प्रौढ़ों के लिए स्कूल खोलना । यदि हमारे लक्ष्य बहुत ऊंचे न हों, तो भी इतना तो अवश्य किया जा सकता है कि वयस्क जनता को कुछ उपयोगी व्यावहारिक पाठ पढ़ाए जायें और यह कोशिश की जाये कि उन्हें वे ग्रहण करें । विशेष बात यह है कि जब प्रौढ़ यह समझ लेगा कि पढ़ना कितना लाभप्रद है, तो कम-से-कम यह मांग करने के लिए प्रेरित होगा कि बच्चे सुशिक्षित हों ।

परिपक्व साहित्य केवल उन्हीं प्रौढ़ों के लिए आवश्यक नहीं है जो साक्षर बनाए गए हैं, बल्कि उन सैकड़ों लड़के-लड़कियों के लिए भी इसकी जरूरत है जिन्होंने प्राथमिक शिक्षा तो प्राप्त की होती है परन्तु स्कूल छोड़ने के कुछ समय बाद पढ़ने के अवसर प्राप्त न होने के कारण निरक्षर हो जाते हैं ।

अध्याय ३

लंका में पठन सामग्री का उत्पादन

(भरी में विशेषज्ञ सम्मेलन में लंका के प्रतिनिधियों द्वारा दी गई रिपोर्ट)

इस रिपोर्ट से पता चला है कि लंका सरकार ने नवसाक्षर वयस्कों के लिए शिक्षा सामग्री का उत्पादन शुरू किया है। देश में लोकप्रिय 'गाथा साहित्य' के फेरी लगाकर बेचने वालों के माध्यम से विक्रय की व्यवस्था है। इस 'गाथा साहित्य' की इतनी माँग है कि एक व्यापारिक फर्म इसके प्रकाशन में दिलचस्पी ले रही है।

रिपोर्ट में सस्ते दामों की पुस्तकों की जो सार्वजनिक माँग और जो वितरण व्यवस्था मौजूद होने का पता चलता हैं उससे यही जान पड़ता है कि लंका सरकार को एक छोटी-सी सम्पादकीय तथा पांडूलिपि उत्पादन शाखा खोलनी चाहिए। यह शाखा वयस्क शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षा-सामग्री की पांडूलिपियां तैयार करें। तदुपरान्त यह पांडूलिपियाँ उत्थान के लिए मुद्रण तथा प्रकाशन फर्मों को दी जा सकती हैं और वर्तमान साधनों से उनका वितरण हो सकता है। (सम्पादक)

साक्षरता अध्यापन, वयस्क शिक्षा और विकास कार्यक्रम

लंका में वयस्क शिक्षा का लक्ष्य केवल निरक्षरता निवारण नहीं है। जनगणना विभाग के आंकड़ों से ज्ञात होता है कि १९४६ में लंका में ७०.१ प्रतिशत साक्षर पुरुष और ४३.७ प्रतिशत साक्षर स्त्रियां थीं (औसत ५६.९ प्रतिशत)। अब १० साल पश्चात स्थिति और भी अच्छी होनी चाहिए। यद्यपि १९५२ की जनगणना के आंकड़े अभी तक उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी हम ७५ प्रतिशत साक्षरता होने का अनुमान कर सकते हैं। एशिया के दूसरे अनुन्नत क्षेत्रों की तुलना में यह आंकड़े बहुत हैं।

लंका में प्रौढ़ शिक्षा का मुख्य लक्ष्य यह है कि ग्रामीण जनता खाद्य उत्पादन की समस्याओं पर ज्यादा ध्यान दे, अवकाश का सदुपयोग करे, उसका स्वास्थ्य अच्छा हो, और वह उपयोगी नागरिक के कर्तव्य निभाने के योग्य हों। वह वास्तविक साक्षरता स्तर को भी ऊँचा उठाती है, क्योंकि उल्लिखित आंकड़े प्रायः साक्षरता की बहुत प्रारम्भिक अवस्था के बारे में हैं। यद्यपि आंकड़ों से ज्ञात होता है कि आबादी की एक बड़ी संस्था सरल संदेश पढ़ सकती है और सरल पत्र लिख भी सकती है, पर साक्षरता का जो सामान्य अर्थ हम लगाते है उस अर्थ में वे पूरी तरह साक्षर नहीं हैं।

साक्षरता आन्दोलन का इतिहास

बहुत पुराने काल से इस देश के सब बड़े-बड़े बौद्ध विहारों में शिक्षा-संस्थायें चलायी जाती थीं। इन संस्थाओं को पिरीवेना कहते हैं। लंका में ये संस्थायें सस्कृति और ज्ञान के गढ़ थे और उन्हीं के माध्यम से भिक्षुगण ग्रामीण क्षेत्रों के वयस्कों को धर्म-दर्शन और पूर्वीय भाषाओं की शिक्षा देने का प्रयास करते थे। विदेशी राज्य होने और प्रशासन में विदेशी भाषा के प्रयोग के कारण ये संस्थायें वह महत्व प्राप्त न कर सकीं जो वे अन्यथा प्राप्त कर लेतीं। फ़िर भी उन्होंने देश के गौरवमय अतीत की परम्परायें, संस्कृति, और ज्ञान के प्रसार और संरक्षण का सराहनीय प्रयास किया है।

लगभग ५० वर्ष पहले शिक्षा विभाग ने, अनुदान के आधार पर, और शिक्षा के लिए रात्रि पाठशाला आन्दोलन चलाया। परन्तु उस समय सामान्य इच्छा अंग्रेजी पढ़ने की थी। अतः ये पाठशालायें ग्रामीण निरक्षरता की समस्या को हल करने में असमर्थ रहीं, क्योंकि वहां केवल वही लोग जाते थे जो शहरों में नौकरी करने के उद्देश्य से अंग्रेजी सीखना चाहते थे।

१९४४ में शिक्षा विभाग ने ग्रामीण पाठशालाओं में प्रौढ़ साक्षरता कक्षायें स्थापित करनी आरम्भ कीं। ये कक्षायें सन्ध्या समय दिवा पाठशाला के शिक्षकों द्वारा, निरीक्षकों की देखरेख में चलाई जाती थीं। १९४५ में, श्रव्य दृश्य साधनों के समावेश से इन कक्षाओं का क्षेत्र विस्तृत हो गया है। कुछ दूरस्थ क्षेत्रों में रेडियो सेट लगाए गए और प्रौढ़ों की रुचि की फिल्में दिखाने वाली गाड़ियाँ भेजी गईं।

१९४८ में एक पूर्णतः नवीन प्रकार का प्रौढ़ केन्द्र खोला गया। इसमें साक्षरता कक्षाओं के अतिरिक्त खेल-कूद, वाचन, संगीत तथा नाटक आदि मनोरंजन की सुविधायें उपलब्ध थीं। उसी वर्ष ग्रामों में विविध सरकारी विभागों

द्वारा संचालित गतिविधियों के समन्वय के उद्देश्य से तथा ग्रामीण प्रौढ़ों के सामान्य कल्याण के लिए ग्राम विकास विभाग खोला गया ।

आज की स्थिति

पिरीवेना : अब देश के विविध भागों में बौद्ध विहारों में ७४ बड़े और ६६ छोटे पिरीवेना चलाए जाते हैं। बड़े पिरीवेना हिन्द-आर्य भाषाओं तथा धर्म और दर्शन की शिक्षा देते हैं। छोटे पिरीवेना १५ से २० वर्ष के अल्पायु वयस्कों के लिए हैं। ये इतिहास, भूगोल तथा गणित जैसे सामान्य विषयों की शिक्षा देते हैं। इन पिरीवेनाओं के कार्यों की नियमित पड़ताल शिक्षा विभाग द्वारा नियुक्त विशिष्ठ निरीक्षकों द्वारा की जाती है और विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति के आधार पर उन्हें वार्षिक अनुदान दिया जाता है। लगभग ३००० वयस्क पिरीवेनाओं में जाते हैं और अधिक ग्रामीण वयस्क ज्ञान और संस्कृति के इन ऐतिहासिक केन्द्रों की ओर आकृष्ट हो रहे हैं।

रात्रि पाठशालायें : २७ पंजीकृत रात्रि पाठशालायें अनुदान पद्धति के आधार पर चलती है। अनुदान औसत उपस्थिति के आधार पर दिया जाता है। ये पाठशालायें ऐसे वयस्क श्रमिकों की आवश्यकता पूरी करती हैं जिन्हें अपनी पाठशालीय शिक्षा एक उपयुक्त स्तर तक जारी रखने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इन रात्रि पाठशालाओं में आने वाले वयस्कों की संख्या अनुमानतः १३०० हैं।

वयस्क साक्षरता कक्षायें और शिक्षा केन्द्र : १९४८ में ग्राम विकास आन्दोलन शुरू होने से गाँवों की विकास समितियों द्वारा प्रौढ़ साक्षरता कक्षाओं की मांग निरन्तर बढ़ रही है। इन कक्षाओं में उपस्थिति लगभग १५०० है और इसके लिए बहुत उत्सुकता और उत्साह दिखाया जाता है। इन कक्षाओं के अतिरिक्त शिक्षा विभाग ने ग्रामीण क्षेत्रों में प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापित किए हैं। इन केन्द्रों में साक्षरता तथा शिक्षा कक्षाओं के अतिरिक्त निश्चित पाठ्य-क्रम के अनुसार नागरिकता और नागरिकता शास्त्र की शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि तथा ग्रामीण के सामान्य रुचि के अन्य विषयों पर व्याख्यान और प्रदर्शन सहित भाषण, पुस्तकालय तथा वाचनालय सुविधाएँ, विभिन्न प्रकार के खेल, संगीत तथा नाटक, रेडियो संगीत और वार्ताएँ, फ़िल्म प्रदर्शन इत्यादि भी शामिल हैं। इन केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण वयस्क को नागरिकता की कला में प्रशिक्षित करना और अवकाश के समय में मनोरंजक और लाभप्रद कार्यों में व्यस्त रखने के तरीक़े सिखाना है। आशा की जाती है कि इन साधनों से गाँवो में न केवल बेकार बैठने और अपराध करने की प्रवृत्ति को कम किया जा सकेगा बल्कि

ऐसे नागरिक पैदा किए जा सकेंगे जो समुदाय के साथ बढ़ें और उसकी उन्नति में योग दें। कोटलावालापुरा में श्रमिकों की बस्ती में अभी हाल में जो केन्द्र खोला गया था वह सफल और लोकप्रिय हुआ है। देश के भिन्न-भिन्न भागों की विविध बस्तियों की परियोजना में भी केन्द्र खोले गये हैं। शिक्षा विभाग के साथ समझौते द्वारा यूनेस्को ने मिनेरिया में मूल शिक्षा की एक प्रायोगिक योजना के लिए सहायता दी है।

श्रव्य दृश्य साधन : इन साधनों की सफलता बहुत सन्तोषजनक रही है। सरकार ने ग्रामीण पाठशालाओं तथा सामुदायिक केन्द्रों में ६०० से अधिक रेडियो सैट वितरित किए हैं। ग्रामीण जनता शाम को संगीत, नाटक, समाचार और सामान्य रुचि की वार्ताएँ सुनने के लिए रेडियो के प्रयोग की अभ्यस्त हो चली है। लंका के रेडियो अधिकारी ग्रामीण वयस्कों के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित करते हैं। शिक्षा विभाग के पास छः सिनेमा गाड़ियाँ हैं। ये गाड़ियाँ निरन्तर ग्रामीण क्षेत्रों में घूम फिर कर सिनेमा दिखाती हैं।

ग्राम विकास समितियाँ : ग्राम विकास विभाग १९४८ में स्थापित किया गया था। इसने बहुत शीघ्र उन्नति की है। देश के लगभग हर ग्राम में समितियाँ बनाई गई हैं। इन समितियों का लक्ष्य है ग्रामीणों को आत्म-सहायता तथा सरकार के मूल्यवान पाठ सिखाना, और उन्हें खाद्य तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं में आत्मनिर्भर बनाने में सहायक होना सिखाना। अब ऐसी लगभग ६००० समितियाँ हैं और उनमें से बहुतों ने सहकारिता के आधार पर सड़क निर्माण, खेती बाड़ी के सुधार, तथा अपराध निरोध के लिए बहुत उपयोगी कार्य किया है।

सामुदायिक केन्द्र : स्वायत्त शासन विभाग ने ग्राम समिति क्षेत्रों में कई ग्रामीण सामुदायिक केन्द्र स्थापित किए हैं। इन केन्द्रों में वाचनालयों, पुस्तकालयों खेलों तथा वयस्क साक्षरता कक्षाओं की व्यवस्था की गई है। ऐसे एक हज़ार से अधिक केन्द्रों का पंजीकरण किया गया है और वे लाभप्रद कार्य कर रही हैं।

महिला समितियाँ : सरकार ने जिन स्वयंसेवी संस्थाओं को मान्यता और प्रोत्साहन दिया है उनमें लंका महिला समिति प्राचीनतम और सबसे अधिक क्रियाशील है। इसका उद्घाटन १९३१ में हुआ। तब से यह निरन्तर उन्नति कर रही है। इसका कार्य द्वीप के नौ के नौ प्रान्तों में फैल गया है। इसके १००० शाखा केन्द्र हैं और सदस्यों की संख्या ६६,००० से ऊपर है। इन शाखा केन्द्रों के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों की स्त्रियां भरपूर और सुखी जीवन व्यतीत करने की कला में प्रशिक्षित की जाती हैं तथा नारी के कार्य के सभी आवश्यक पहलुओं में पूरी शिक्षा प्राप्त करती हैं। उन्हें साक्षरता शिक्षण के अतिरिक्त स्वास्थ्य,

कृषि तथा ग्रामीण हस्तकलाओं में भी शिक्षा दी जाती है। स्त्रियाँ अपने हाथों से काम करती हैं और अपनी जीविका उपार्जन करती हैं। उनका समय लाभ-प्रद और रचनात्मक कार्य में व्यतीत होता है। इससे उन्हें इतना ज्ञान प्राप्त होता है जितना वे साधारण कक्षाओं के नीरस वातावरण में कदापि ग्रहण नहीं कर सकती थीं।

प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था : प्रौढ़ शिक्षा आन्दोलन १९५३ तक खासी सन्तोषजनक उन्नति करता रहा। परन्तु १९५४ और १९५५ में सरकार द्वारा दिये जाने वाले धन में कमी होने के कारण पिछड़ गया। १९५६ से फिर इस कार्य में दिलचस्पी ली जा रही है और शिक्षा विभाग को नये केन्द्र खोलने के लिए आदेश दिये गए हैं। विभाग में ४ क्षेत्रीय संगठनकर्ता हैं। इनके कार्य का निर्देशन तथा नियन्त्रण मुख्य कार्यालय द्वारा किया जाता है।

वयस्क शिक्षा संस्थाएँ दो प्रकार की हैं : वयस्क कक्षा तथा वयस्क केन्द्र। किसी स्थान में सबसे पहले कक्षा आरम्भ की जाती है और यदि वह लोकप्रिय सिद्ध हो तो उसमें प्रदेश के लोगों के लिए अन्य विविध मामलों में प्रशिक्षण तथा मनोरंजन की अन्य गतिविधियों की व्यवस्था करके उसे केन्द्र में बदल दिया जाता है। उस इलाक़े में रहने वाला कोई स्कूल अध्यापक कक्षा का संचालन करता है। यह कक्षा या तो स्कूल में ही या किसी सुविधा वाले स्थान जैसे सामुदायिक केन्द्र या मन्दिर के उपदेश कक्ष में लगाई जाती है। अध्यापक को १० रुपये मासिक भत्ता दिया जाता है। यदि उसके साथ कोई सहायक है। तो उसे साढ़े सात रुपया प्रतिमास दिया जाता है। यदि एक बार कक्षा केन्द्र में परिवर्तित हो जाए तो गतिविधियों में वृद्धि हो जाती है। साक्षरता कक्षाएँ सप्ताह में कम से कम तीन दिन दो-दो घन्टे की होती हैं। इनके अतिरिक्त लोक-संगीत, लोक-नाटक, लोकनृत्य तथा खेल-कूद जैसी सामाजिक तथा साँस्कृतिक गतिविधियां भी सम्मिलित कर दी जाती हैं। जहां कहीं भी शिक्षक मिल जाते हैं वहाँ पुरुषों को नारियल के रेशे और ताड़ आदि के पत्तों से चीज़ें बनाने की और स्त्रियों को बुनाई और टोकरी बनाने के काम सिखाये जाते हैं। यह कार्य प्रदेश में उपलब्ध कच्चे माल पर निर्भर करते हैं। हर केन्द्र से सम्बद्ध एक पुस्तकालय होता है। केन्द्र के संचालक को ३० रुपये और उसके सहायक को २० रुपये प्रति मास भत्ता दिया जाता है। यहाँ भी ये निरीक्षक किसी पास के स्कूल के सरकारी शिक्षक होते हैं।

इस समय २१३ कक्षाएँ और १२८ केन्द्र चल रहे हैं : इनमें से सात केन्द्र जेलों में आयोजित किए गए है। शिक्षा का उद्येश्य पूर्णतः निरक्षर को साक्षर बनाने से लेकर काफ़ी उन्नत अध्यापन के लिए साहित्य देना तक है।

केन्द्रों और कक्षाओं में कुल उपस्थिति अनुमानतः ८५८७ है और औसत लगभग २५ पड़ती हैं। छः महीने में एक बार परीक्षा ली जाती है ताकि शिक्षार्थियों के स्तर का ज्ञान हो सके। परन्तु यह सही मानों में परीक्षाएं नहीं कहीं जा सकतीं हर केन्द्र से सम्बद्ध पठन कक्षा में साक्षरोत्तर पाठ्य सामग्री रहती है। प्रत्येक केन्द्र को प्रतिवर्ष २०० रुपये की पुस्तकें दी जाती हैं। सरकारी विभागों तथा सूचना विभाग द्वारा भेजी जाने वाली पुस्तकों समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं के अतिरिक्त स्वास्थ्य, कृषि और सहकार विभागों की प्रचार शाखाओं द्वारा प्रकाशित पुस्तिकाएं भी केन्द्रों को निःशुल्क दी जाती हैं। साक्षरता कक्षाओं के बाहर जिन आकर्षक कार्यों का आयोजन किया जाता है, उनके कारण केन्द्र एक प्रकार के सामुदायिक केन्द्र बन जाते हैं। और प्रदेश में नव साक्षरों के ही नहीं सभी वयस्कों के मनोरंजन का साधन बन जाते हैं। कुछ केन्द्रों को तो प्रोजेक्टर भी दे दिये गये हैं। इसके लिए शिक्षा विभाग का श्रव्य दृष्य विभाग निःशुल्क फ़िल्में देता है और समय-समय पर पुरानी सामग्री वापस लेकर नई सामग्री देता है।

वर्तमान सामग्री का सर्वेक्षण

४६४० में शिक्षा विभाग ने वयस्क शिक्षा के अध्यापकों के प्रशिक्षण की एक योजना आरम्भ की। इस योजना के अन्तर्गत कुछ सिंहली अध्यापक वयस्क शिक्षा कक्षाएं चलाने के लिए प्रशिक्षित किए गए, और इस कार्य के लिए उन्हें कुछ अतिरिक्त भत्ता भी दिया गया। उस समय कोई विशेष पाठ्य सामग्री उत्पादन करने के लिए प्रयास किया गया। १८४५ में, एक पुस्तक माला की आवश्यकता का अनुभव किया गया और "प्रौढ़ माला: भाग—१" प्रकाशित की गई। यह कुछ शिक्षा प्रणालियों के बारे में खोज पर आधारित थी और उसे सरकारी अध्यापक प्रशिक्षण कालेज के प्रधान अध्यापक की देख रेख में तैयार किया गया था। यह ३२ पृष्ठों की छोटी सी पुस्तक है। इसका टाइप भी छोटा है और काग़ज़ भी निम्न कोटि का है। पुस्तक को सस्ते दामों में बेचने के लिए शायद यह आवश्यक था। इसका विक्रय मूल्य ३० सैंट है। इस माला का 'भाग—१' ही प्रकाशित किया गया और फिर जब तक मिनेरिया में यूनेस्कों के तत्वाधान में स्थापित मूल शिक्षा योजना द्वारा नवसाक्षरों के लिए विशेष पाठ्य सामग्री का उत्पादन आरम्भ किया गया तब तक और कोई भाग प्रकाशित नहीं हुआ। योजना से सम्बद्ध साक्षरता विशेषज्ञ के निर्देशों के अनुसार 'राज राता पोथा' (राज़ाओं के देश की पुस्तक) नाम की प्रथम पुस्तक उत्पादित की गई। जिस क्षेत्र में यह योजना चलाई जा रही थी उससे सम्बद्ध

ऐतिहासिक पहलुओं का वर्णन इस पुस्तक में किया गया था। आशय यह था कि पाठकों के सामने कुछ ऐसी बातें रखी जायें जिससे वे पहले ही परिचित थे ताकि आरम्भ से ही उनकी रुचि आकृष्ट हो सके। जिन राष्ट्रीय वीरों और नेताओं की कहानियां उन्होंने बचपन से सुन रखी थीं उन्हीं का उल्लेख इस पुस्तक में किया गया था।'

इस केन्द्र में साक्षरोत्तर पठन की कुछ पुस्तकें भी उत्पादित की गईं। ये हैं: जन का वे (लोकगीत), 'लंकामाता,' 'आये आहाराया' (हमारा आहार) आदि। ये पुस्तकें सरकारी खर्च पर मुद्रित की गई और प्रायः प्रौढ़ों को निःशुल्क दी गईं। वे प्रौढ़ों की विशेष रुचियों और पसन्द के विषयों पर किसी व्यवस्थित अथवा वैज्ञानिक सर्वेक्षण के बिना उत्पादित की गई थीं।

सरकारी मुद्रण द्वारा दो और पुस्तकें प्रकाशित की जाएंगी : 'बोधु कथा माला' तथा 'लंका कथा'

केवल मात्र निरक्षरता निवारण के अतिरिक्त अन्य चीजों को प्रोत्साहन देने के लिए शिक्षा विभाग ने कुछ 'चर्चा पोस्टर' प्रकाशित किए हैं। ये महत्व-पूर्ण सामाजिक विषयों पर हैं। कक्षा में शिक्षक चर्चा का नेता होता है और चार्ट में दी गई बातों से बहस को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है। इन चर्चा पोस्टरों में एक लंका की बढ़ती हुई आबादी पर, और दूसरा चावल उत्पादन पर है। चर्चा का आधार बनाने के लिए शिक्षकों को साइक्लोस्टाइल किए हुए नोट दिये जाते हैं।

विभाग ने प्रौढ़ शिक्षा पुस्तिकाएं भी निकालनी आरम्भ कीं। ये पुस्ति-काएँ मोटे कागज पर छपी हुई हैं और बन्द और खोली जा सकती हैं। इनमें कई भाग हैं जिनमें से प्रत्येक ग्रामीण के दैनिक रुचि के किसी विषय के सम्बन्ध रखता है। पहली पुस्तिका के विषय हैं:—स्वच्छता, भूमि संरक्षण, मदिरापान, कठिन परिश्रम, शिक्षा, लिखने पढ़ने का लाभ, लोकनृत्य, जुआ खेलना, कुटीर उद्योग, घर के चारों ओर फूल लगाना ओर पौधें रोपना। इन मुड़ने वाली पुस्तिकाओं में बहुत आकर्षक चित्र बने है और उन चित्रों के नीचे पाठ्य सामग्री है।

गाथा साहित्य : लंका में गाथा काव्य की बहुत बड़ी सामग्री है। यह गाथा पुस्तकें ग्रामीणों को १० सैन्ट से एक रुपये तक में उपलब्ध हैं। इस साहित्य में अज्ञात लेखकों द्वारा लिखित धार्मिक कथाएं, लोक कहानियां, ग्राम देवताओं की धार्मिक कहानियां इत्यादि कविता के रूप में हैं और ये गत ३-४ सौ वर्षों से सिंहलियों के साहित्य में वृद्धि कर ही हैं। ये पुस्तिकाएं छोटी २ मुद्रण

संस्थाओं द्वारा बहुत सस्ते कागज़ पर छापी जाती हैं और इन्हें देश भर में घूम फिर कर बेचने वाले लोग मेलों ठेलों के अवसर पर बेचते हैं। वे धार्मिक त्योहारों पर हर मेले की जगह पर मिलती हैं। आज भी उनकी अच्छी बिक्री होती है और यह सामग्री दूर दूर के घरों में पहुँच जाती है।

यह गाथा साहित्य पीढ़ियों से ग्रामीण जनता के लिए पाठ्य सामग्री उपलब्ध करता आ रहा है और यह कार्य इसे करते रहना चाहिए। इस प्रकार की आज दो सौ से अधिक पुस्तकें मिलती हैं। इनकी भाषा बहुत सरल और आम तौर पर बोल चाल की होती है और ये सब छन्दोबद्ध कविता के रूप में हैं। मुद्रण बहुत मोटे टाइप में है जिससे वर्णमाला जानने वाला हर व्यक्ति शब्दों कों पहचान कर पढ़ सकता है। ग्रामों में बहुत से लोगों को ये कंठस्थ हैं और तीर्थ यात्रा पर जाते समय जिसका लंका में बहुत रिवाज़ है, लोग उन्हें गाते हैं। यात्रियों का नेता हमेशा ऐसी कई पुस्तकें साथ रखता है और यात्रा के समय इन्हें सब गाते हैं।

लंका में 'कविकौल' के नाम से एक विचित्र प्रथा चालू है। किसी गांव में जब कोई विशेष घटना घटती है तो कविता में उसका वर्णन पुस्तिका के रूप में छपता है। ग्रामीण कवि घटना पर दस-बीस पंक्तियां या छंद रचता है। यह घटना चाहे कोई धार्मिक उत्सव की हो या किसी की हत्या, जिस इलाक़े में लोगों को इसकी जानकारी हो, वहां ये पुस्तिकायें खूब बिकती हैं। यह प्रथा अतीत में बहुत लोकप्रिय रही है। सरकार ने जब शिक्षा कार्य अपने हाथ में लिया, उससे पहले लंका में मंदिर शिक्षा प्रणाली चालू थी। इसके अधीन इस बात की पक्की व्यवस्था थी कि प्रायः हरेक ग्रामीण बौद्ध विहार में पुजारी से वर्णमाला अवश्य पढ़ ले। इस ज्ञान से वह इन पुस्तिकाओं की कविताओं को पढ़ सकता था और उसका आनन्द उठाता था। इनमें स्त्रियां इतनी दिलचस्पी नहीं लेती थीं, क्योंकि वे विहारों में पढ़ने नहीं जाती थीं।

इस सामग्री के मूल्यांकन के लिए कोई सर्वेक्षण नहीं किया गया, न ग्रामीण लोगों के रुचि के विषय जानने के लिए कोई खोज की गई है। गाथा साहित्य केवल मनोरंजन करता है या यदि किसी धार्मिक विषय पर हो तो थोड़ी बहुत नैतिक शिक्षा देता है। परन्तु ग्रामीण जनता को आज ऐसी सामग्री की आवश्यकता है जो उन्हें सच्चे अर्थों में शिक्षित कर सके, और कृषि, स्वच्छता परिवार कल्याण जैसे आधुनिक विषयों पर आधुनिक विधियों की जानकारी उपलब्ध कर सके, जिन्हें लंका में तेज़ी के साथ अपनाया जा रहा है।

उत्पादन तथा वितरण संस्थाएं

जो कुछ कहा गया उससे स्पष्ट है कि बहुत कम अच्छी पुस्तकें उपलब्ध हैं। वयस्क केन्द्रों के पुस्तकालय जो कुछ भी निजी प्रकाशकों के पास पाते हैं खरीद लेते हैं। ऐसी सामग्री में कथा-कहानी की किताबों से लेकर लोकप्रिय वैज्ञानिक पुस्तकें तक होती हैं। यह नव-साक्षरों के लिए प्रकाशित नहीं की जातीं बल्कि सामान्य पाठक और पाठशाला के उपयोग के लिए होती हैं। जो कुछ भी अब तक किया गया है वह सब सरकार ने किया है और ख्याल यही है कि अभी और कुछ समय तक सरकार को ही यह उत्तरदायित्व निभाना होगा। शायद स्वभाषा (राष्ट्र भाषा) विभाग प्रकाशन का कार्य संभाल ले। यह विभाग १९५५ में स्थापित किया गया था, इस उद्देश्य से कि स्कूलों के लिए सिंहली और तमिल भाषाओं में गणित, वनस्पति-विज्ञान, जीव-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, भौतिक-शास्त्र, कृषि जैसे विषयों पर पुस्तकें उपलब्ध कराई जा सकें। इस समय यह स्कूल की ऊँची क्लासों के लिए इन पुस्तकों के उत्पादन में व्यस्त है, परन्तु आगे चलकर अधिक कर्मचारियों को रख कर नवसाक्षरों के लिए पाठ्य सामग्री का उत्पादन का कार्य भी अपने हाथों में ले सकता है। कम से कम एक मुद्रण संस्था उपरोक्त गाथा साहित्य के अधिक अच्छे उत्पादन की कोशिश कर रही है। अगर यह अच्छे काग़ज़ पर छपाया जाए तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह और भी अधिक लोकप्रिय हो जाएगा, और नवसाक्षरों और पाठशालाओं के बच्चों दोनों के लिए पाठ्य-सामग्री उपलब्ध कर सकेगी।

एक बार पुस्तकें उत्पादित हो जाएं तो वितरण में कोई विशेष कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि शिक्षा और ग्राम विकास विभाग के द्वारा सारे द्वीप में व्यापक व्यस्वथा स्थापित की जा चुकी है। विक्रय संगठन और अन्य वितरण प्रणालियों के अतिरिक्त एक चल-पुस्तकालय सेवा की बहुत आवश्यकता है। यदि आरम्भ में कोई नौ ऐसे यूनिट बना दिए जाएं जिनमें गाड़ियां भी हों, तो सामग्री को विभिन्न केन्द्रों में जगह-जगह ले जाया जा सकता है और आवश्यकतानुसार उसका विक्रय या विनिमय किया जा सकता है। जहां तक पुस्कालयों का सम्बन्ध है इस समय लंका में स्थिति अच्छी नहीं। ग्रामों में तो उन्हें कोई जानता ही नहीं। हर बौद्ध विहार में, जो हर बड़े ग्राम में कम से कम एक ज़रूर होता है, एक छोटा सा पुस्तकालय होता है। परन्तु यहां केवल बौद्ध साहित्य होता है, और यह सामान्य पाठक के लिए उपयुक्त नहीं। इन विहारों को देशव्यापी पुस्तकालय सेवा केन्द्र बनाया जा सकता है, कम से कम सिंहली भाषा-भाषी क्षेत्रों में तो ऐसा हो ही सकता है। ख़ासे बड़े विहारों में एक पुजारी, उसके शिष्य

और एक व्याख्यान कक्ष अवश्य होता है। इस कक्ष का कुछ भाग वाचनालय तथा पुस्तकालय के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। इसके लिए सोच-विचार कर बनाये गए संगठन की आवश्यकता है। यदि विहार को सारे गांव के लिए एक सभा केन्द्र बना दिया जाए, जैसा कि धार्मिक उत्सवों पर होता है, तो पुजारियों की सहायता से अधिक लोगों की रुचि पढ़ने-लिखने की ओर आकृष्ट की जा सकती है।

अध्याय ४

ब्रिटेन में लोकप्रिय पुस्तक मालाओं का प्रकाशन

जे० ई० मोरपर्गो, निर्देशक नेशनल बुक लीग, लन्दन

यह अध्ययन लेख इस पुस्तक में यह दिखाने के लिए शामिल किया गया है कि एक ऐसे देश में भी जहाँ लगभग १०० प्रतिशत लोग साक्षर हैं, कई पीढ़ियों से सारी आबादी के लिए शिक्षा की व्यवस्था चली आ रही है और बहुत लम्बे समय से पुस्तक उत्पादन का कार्य जारी है, एक प्रकार का 'लोकप्रिय' साहित्य पढ़ने वाले लोग हैं और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। ब्रिटेन में पुस्तक प्रकाशन का कार्य स्वच्छन्द रूप से चलता है, सरकार की ओर से उस पर किसी तरह के प्रतिबन्ध नहीं हैं। वहां कुछ प्रकाशन फ़र्में इन आवश्यकताओं की पूर्ति आपसी व्यापारिक होड़ द्वारा करती हैं और सरकार को कोई क़दम उठाने की ज़रूरत नहीं है। सरकार का प्रकाशन कार्य सूचना पुस्तकें या पुस्तिकाएं प्रकाशित करने तक सीमित है, जिन्हें जनता को आकृष्ट करने के लिए व्यापारिक प्रकाशनों से होड़ करनी पड़ती है। शिक्षा व्यवस्था वयस्क साक्षरता के लिए सरकारी और अन्य संस्थाओं के कार्य, सार्वजनिक पुस्तकालय संगठन (जिसका संचालन करों द्वारा किया जाता है) और नेशनल बुक लीग, ये सब पठन सामग्री के लिए मांग उत्पन्न करने और बढ़ाने में सहायक हैं। (सम्पादक)

भूमिका

पश्चिमी देशों विशेषकर ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमरीका के अनुभवों के आधार पर कोई तर्क देकर कुछ सिद्ध नहीं किया जा सकता। मिसाल के तौर पर ब्रिटेन में लोकप्रिय अथवा सस्ते संस्करण, चाहे वे अमर ग्रन्थों के होंया वैज्ञानिक पुस्तकों अथवा सरल मनोरंजक साहित्य के लगभग तभी से छप रहे हैं जबसे प्रकाशन का आरम्भ हुआ है। ब्रिटेन में सबके लिए शिक्षा १९वीं सदी

में चालू हुई, तथापि जब पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में मुद्रण का सर्वप्रथम विकास हुआ तब भी उच्च वर्गों के अतिरिक्त इतने काफ़ी लोग साक्षर थे कि उनके लिए उचित मूल्य पर पुस्तकें उपलब्ध करने का तथा ऐसे विषयों की जानकारी भी उन्हें पहुंचाने का कार्य आवश्यक था, जो आमतौर पर उनके लिए कठिन थे। यह बात केवल ऐतिहासिक दिलचस्पी की नहीं, बाद के वर्षों इस दिशा में जो प्रयास किए गए उनका महत्व समझने के लिए इसे ध्यान में रखना ज़रूरी है।

ब्रिटेन में सर्वव्यापी साक्षरता मुद्रण के तकनीक़ी विकास, वितरण पद्धति के विकास और दूसरे तकनीक़ी परिवर्तनों जैसे रेल यातायात विकास के साथ-साथ विकसित हुई है, इसलिए काफ़ी समय (कम से कम सौ वर्ष) से लोगों को सरल पाठ्य सामग्री उपलब्ध रही है, देश के लगभग हर भाग में पुस्तकें मिलती रही हैं और उन्हें पता रहा है कि पुस्तकें सरलता से कैसे उत्पादित की जा सकती हैं।

भारत पाकिस्तान, लंका और बर्मा जैसे देशों की सामाजिक और शैक्षिक परिस्थितियों से पता चलता है कि जिस विकास को इंगलैन्ड में सौ वर्ष लगे कुछ लोग ५०० वर्ष कहेंगे—वह इन देशों में थोड़े समय में करना होगा, और जो कुछ इंगलैंड में संयोगवश और थोड़ा-थोड़ा करके इतिहास के प्रवाह से प्राप्त हो गया वह निश्चित योजना द्वारा प्राप्त करना होगा। एक बहुत बड़ी आबादी जो पुस्तकों के बारे में सोचने की अभ्यस्त नहीं थी, उन्हें पढ़ना और इस्तेमाल करना सीख गई हैं। परन्तु वहां शायद यह अवसर प्राप्त नहीं कि हर आदमी उसकी ज़रूरत की पुस्तकें मिल सकें या वह चुन सके।

संभव है कि आवश्यकता की तीव्रता से ही कुछ लाभ हों। ब्रिटेन में प्रकाशन, चाहे वह लोक संस्करणों का हो या सामान्य पुस्तकों का, अव्यवस्थित है, और ऐसा स्वाभाविक ही है।

लोक पुस्तकों का लेखन

इस क्षेत्र में ब्रिटेन का अनुभव संसार के अन्य देशों के अनुभवों से सम्भवतः भिन्न हैं, परन्तु इस अन्तर के कारण पुस्तक उत्पादन की बजाय देश की शिक्षा से सम्बन्धित हैं। ब्रिटेन ने अपने विशिष्ट विद्वानों और वैज्ञानिको से अपने विषयों का ज्ञान स्वयं सामान्य जनता तक पहुँचाने का काम लिया है और इसमें सफलता प्राप्त की है। बात को सरल बना कर कहने की कला सिखाई नहीं जा सकती। इसमें ब्रिटेन की सफलता का कारण सम्भवतः यह है कि यहां अच्छे पढ़े लिखे लोगों को आमतौर पर शब्दों के प्रयोग की लगातार

शिक्षा दी गई होती है, भले ही वे अपनी टेक्नीकल शिक्षा के कारण साहित्य रचना का कभी प्रयास न करें। इस दृष्टि से ब्रिटेन की अपेक्षा अन्य देशों में यह और भी आवश्यक है कि सम्पादकीय नीति स्पष्ट हो, लेखक को मुसव्विदे की तैयारी के बारे में ठीक-ठीक और ब्योरेवार आदेश दिए जाएं और लेखन के दौरान लेखक और सम्पादक में बराबर सम्पर्क बना रहे।

उत्पादन और मूल्य पर नियन्त्रण

जो कोई भी ब्रिटेन में पुस्तक व्यवसाय की अर्थ व्यवस्था के विषय में गंभीरता पूर्वक विचार करे उसे यह स्पष्ट हो जायगा कि बहुत बड़ी कठिनाई देश में प्रकाशित पुस्तकों की संख्या के कारण हैं। १९५४-५५ वर्ष में २०,००० पुस्तकें प्रकाशित की गई। इतनी अधिक पुस्तकों के उत्पादन में जो अपव्यय हुआ वह स्पष्ट है, और जो पाण्डुलिपियां पुस्तक के रूप में कभी प्रकाशित न हो सकीं वे भी एक बड़ी हानि है। पर इन सबके अतिरिक्त इतने बड़े उत्पादन से वितरण व्यवस्था पर जो बोझ पड़ता है उसका अन्दाज़ा बखूबी लगाया जा सकता है। यद्यपि किसी पुस्तक बिक्रेता के लिए २०,००० शीर्षकों की पुस्तकें अपने दुकान में रखना आवश्यक नहीं तथापि उसे काफ़ी मात्रा में पुस्तकें रखनी होती हैं। वह निश्चित रूप से नहीं जानता, कि ये कभी बिकेंगी भी या नहीं और फिर उसे दूसरे हर शीर्षक की एक प्रति प्राप्त करने की सुविधा भी होनी चाहिए।

ये सब होते हुए भी ब्रिटेन का प्रकाशन व्यवसाय, पुस्तक बिक्रेता और जनता, सेन्सरशिप की अपेक्षा आर्थिक अपव्यय अधिक पसन्द करेंगे। जहां कहीं इतने अधिक प्रकाशक नहीं हैं और न इतने इच्छुक लेखक हैं वहां भले ही नियंत्रण रखना कुछ सम्भव हो जो सेन्सरशिप से कुछ कम हो।

मिसाल के तौर पर योजना स्तर के अतिरिक्त किसी भी स्तर पर सेंसर और सरकारी हस्तक्षेप के बिना ऐसे विषयों की सूची बनाना कठिन न होगा जिन पर पुस्तकें प्रकाशित की जानी चाहिये। इसके बाद इन विषयों को निजी प्रकाशकों में बांटा जा सकता हैं, और प्रकाशक उन्हें योग्य लेखकों में बांट सकते हैं। इस प्रकार अपेक्षाकृत थोड़े से समय में ही अंधाधुन्ध होड़ के बिना आवश्यक ज्ञान के सारे क्षेत्र में पुस्तकें उपलब्ध हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त लगातार नई-नई मुद्रण मशीनों और मुद्रण (विधियों को प्रयोग में लाते रहने से पश्चिमी प्रकाशन को बहुत भारी खर्च उठाना पड़ता है और इस हानि से बचना सम्भव है। पुरानी मशीनों को जब कि वे काम दे रही हों फेंक देना आम तौर पर कठिन होता है पर

लोक प्रकाशन के आरम्भ में ही नई मशीनें और नई विधियों का उपयोग किया जाना संभव है और स्वाभाविक भी।

आरम्भ से ही इस बात को मानकर चलना चाहिए कि सफल लोक प्रकाशन का काम पहले से सोच समझ कर अपनाई गई विधियों के आधार पर न पहले कभी चला है न आगे चलेगा। इस क्षेत्र में अब तक के मुख्य प्रयासों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि हर काम व्यक्तिगत प्रतिमा और साहस पर ही निर्भर करता है। किसी प्रकाशक को प्रशिक्षित करना सरल नहीं है और जो लोग प्रकाशन के नवीन मार्गों पर अग्रसर होंगे उन्हें प्रशिक्षित करना और भी कठिन है। इस ओर अधिक से अधिक केवल किसी को दूसरे के अनुभवों सफलताओं और भूलों का ज्ञान ही कराना सम्भव हो सकता है।

गत सौ वर्षों में ब्रिटेन में लोक प्रकाशन के क्षेत्र में जो नवीन बातें हुई हैं उनमें से किसी भी अनुभव को पूर्वी देशों में ज्यों का त्यों ग्रहण नहीं किया जा सकता। उदाहरणस्वरूप वर्ल्डस् क्लासिकस्, ऐव्रीमैन, होम यूनिवर्सिटी लायब्रेरी और पैलिकन के पाठकों को छठी कक्षा तक पढ़ा कहा जा सकता है, या कम से कम यह कि वे इस दर्जे पर पहुँच सकते होंगे। इनमें वो लोग हैं जिन्हें लगभग १८ वर्ष की आयु तक शिक्षा प्राप्त हुई है या जो किसी कारण नियमित शिक्षा तो प्राप्त नहीं कर सके पर किसी न किसी प्रकार अपने आपको इस हद तक शिक्षित कर चुके हैं कि वे अधिक भाग्यशाली शिक्षितों का साथ दे सक।

परन्तु स्तरों में जो अन्तर है उससे प्रकाशन-तकनीकों में अन्तर होना आवश्यक नहीं। शायद ब्रिटेन के अनुभव से जो कुछ सामने आया है उसे आवश्यकतानुसार अधिक सरल आधार पर प्रयोग में लाने की जरूरत है। मिसाल के तौर पर पैंग्विन बुक्स ने इसी विधि का उपयोग करके पश्चिमी अफ्रीका के लिए विशेष रूप से लिखी गई पैलिकन पुस्तक माला की पुस्तकें छापी हैं। अब कोई ७० प्रतिशत पैलिकन पुस्तकें विशेष रूप से लिखवाई जाती हैं और यह चीज उस धारणा के बहुत निकट है जो शायद एशिया में अपनाई जानी चाहिए।

लेकिन फिर भी कोई आंकड़े ब्रिटेन के अतिरिक्त अन्य किसी समाज पर प्रत्यक्ष रूप से लागू नहीं हो सकते। प्रकाशन, मुद्रण, पुस्तक विक्रय, सभी वितरण कार्यों में वेतन स्तरों का ख्याल रखना होगा। मुद्रण में, अभी हाल के अनुभव से पता चला है कि वेतन वृद्धि से उत्पादन मूल्य पर कितना अधिक प्रभाव पड़ता है। लेकिन फिर भी यह कहा जा सकता है कि सामाजिक परिस्थितियां चाहे कैसी भी हों, प्रतिशत आंकड़ों में उत्पादन मूल्य का अनुपात विक्रय मूल्य के साथ वही रहता है।

ब्रिटेन में लोक माला के उत्पादन के सम्बन्ध में कुछ सामान्य आंकड़े नीचे दिए जाते हैं :

आम पुस्तकों के लिए मुद्रण, जिल्द और काग़ज की लागत लगभग पुस्तक के प्रकाशित मूल्य का ३० प्रतिशत होती है।

यदि टाइप सैट करने की आरम्भिक लागत २०० पाऊंड हो, तो एक प्रति के लिए १०० प्रतियां छापने पर २ पाऊंड १००० प्रतियां छापने पर ४ शिलिंग, १०००० प्रतियां छापने पर ५ पैंस और १००००० प्रतियां छापने पर ½ पैंस होगी।

वितरण-कर्त्ताओं को प्रकाशन मूल्य का औसत से लगभग ४० प्रतिशत कमीशन दिया जाता है।

ऊपरी खर्च जिसमें विज्ञापन भी सम्मिलित हैं, प्रकाशन मूल्य का औसतन २० प्रतिशत पड़ता है।

इसमें सन्देह है कि लोक माला का प्रकाशक, लेखक को प्रकाशित मूल्य का साढ़े सात प्रतिशत से अधिक रोयल्टी दे सके। यद्यपि लेखक को अन्त में पूरा पैसा मिल ही जाता है क्योंकि बिक्री बहुत अधिक होना प्रायः निश्चित है।

किसी पैलिकन पुस्तक की औसतन बिक्री ४० से ५० हजार होती है और यह आवश्यक है कि इससे लगभग दो शिलिंग ६ पैंस के औसत मूल्य पर बेचा जाए। तभी प्रकाशक अपना खर्च पूरा कर सकता है।

वैज्ञानिक संगति करना

उत्पादन में

ब्रिटेन में बहुत ही कम व्यावसायिक प्रकाशकों के पास अपनी उत्पादन मशीनें हैं। उत्पादन की क्रिया कई भागों में होती है : सम्पादन और डिजाइन बनाना (प्रकाशक), टाइप सैट करना और छापना (मुद्रक), जिल्द बांधना (जिल्द साज) सचित्र पुस्तकों में एक चौथी क्रिया भी होती है, वह है ब्लाक बनाना। बहुधा चित्रों का उत्पादन एक अलग मुद्रक करता है।

ब्रिटेन में जब मुद्रकों में होड़ बहुत तीव्र थी तब से यह प्रथा चल पड़ी है कि मुद्रक अक्सर थोड़े से दामों पर प्रकाशकों की प्लेटें, कागज छपे हुए फर्मे और जिल्द बंधी पुस्तकें अपने गोदाम में रख लेते हैं। वे प्रकाशक को इसकी अनुमति भी दे देते हैं कि जितनी प्रतियों की आवश्यकता हो उनसे अधिक फर्मे छाप लिए जायें पर इन्हें जिल्दों में तभी बांधा जाता है और इनकी छपाई के दाम तभी लिए जाते हैं जब प्रकाशक को और प्रतियों की आवश्यकता हो।

श्रम, लागत और जोखम के इस विभाजन के लाभ हैं, पर अब शायद ब्रिटेन में भी इसका आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होना सन्देहास्पद होता जा रहा है। किसी नई प्रणाली में उद्यम को वैज्ञानिक संगति देने के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। हमारी पद्धति में प्रकाशन कार्यालय, मुद्रक और जिल्दसाज के बीच में किताबों की लाने ले जाने और इन तीनों के पास तथा पुस्तक विक्रेता और थोक व्यापारी के यहां गोदाम बनाने और लेखा रखने की आवश्यकता के कारण ऊपरी खर्च बहुत बढ़ जाता है और कार्यकुशलता में कमी आती है।

सम्पादन में

यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस लेख के लेखक के विचार में (और ब्रिटेन में आम तौर पर यही धारणा पाई जाती है) पूर्ण वैज्ञानिक संगीत करना वांछनीय नहीं है। सम्पादन और वितरण व्यवस्थाओं को अलग करने में लाभ है, और चाहे किन्हीं परिस्थितियों में नई व्यवस्था की जाए ऐसा करने में वह लाभ रहेगा ही। जहां तक ब्रिटेन का सम्बन्ध है लन्दन और उससे कुछ कम औक्सफ़ोर्ड, कैम्ब्रिज और एडिनबरा, बौद्धिक, कलात्मक और शैक्षिक केन्द्र रहे हैं और सम्भवतः रहेंगे। जो विद्वान लेखक इन केन्द्रों में से किसी में नहीं रहते, वे समय-समय पर वहाँ जाते रहते हैं और उनके लिए यह काफ़ी आसान है कि वे वहाँ किसी सम्पादक से मिलें, बजाय इसके कि केन्द्र से दूर स्थित कोई सम्पादक इधर-उधर विद्वानों और लेखकों की खोज में जाता रहे। एक ऐसे बड़े केन्द्र में विचारों, सूचनाओं और सुझाओं का अमूल्य विनिमय होता रहता है। अलग-अलग जगहों में यह सुविधा उपलब्ध नहीं होती।

अतः यह आवश्यक है कि सम्पादन कार्य ऐसी जगह केन्द्रित किया जाये जहाँ विचार विनिमय की सुविधाएँ निकट हों। परन्तु यह व्यावहारिक नहीं कि प्रकाशन की अन्य व्यवस्था भी उसी जगह पर हो। उदाहरण स्वरूप लन्दन में, जहाँ सम्पादकीय स्थान बहुत मंहगा पड़ता है, मुद्रण, जिल्द बांधने और गोदाम के लिए बहुत सी जगह का ख़र्च उठाना लगभग असम्भव होगा। यह संभव है कि जब भी कोई नई प्रणाली स्थापित की जाए तो सम्पादन को प्रथक करने की आवश्यकता बनी रहेगी, पर कुछ कम हद तक।

उत्पादन से सम्पादकीय कार्य को प्रथक करने के भी कुछ लाभ हैं, पर वे कम प्रत्यक्ष हैं। ब्रिटेन का अनुभव है कि किताबों का मानीकरण नहीं होना चाहिए। हमारे विचार से पुस्तकों से जो जानकारी प्राप्त होती है, वह उन्हें देखने और रखने के आनन्द से अलग नहीं की जा सकती और न ही की जानी चाहिए। यह ध्यान देने योग्य बात है कि ब्रिटेन में लोकप्रिय प्रकाशन के सभी

मुख्य प्रयोगों में अच्छी पुस्तक डिज़ाइन और अच्छे सम्पादन दोनों का साथ-साथ ख्याल रखा गया है ।

प्रकाशन विधियों की वैज्ञानिक संगति करने का यह मतलब लिया जा सकता है कि उत्पादन की शैली एक जैसी हो जाए । इससे पुस्तकों में सौन्दर्य का आकर्षण नहीं रहेगा । इससे भी बड़ी ख़राबी यह है कि पूर्ण वैज्ञानिक संगति से सम्भवतः सम्पादकीय विधियों में समानता हो जाएगी जिसका मतलब कुछ लोगों के विचारों को सब पर थोपना होगा । इस प्रकार की वैज्ञानिक संगति का अर्थ एक प्रकार का सेन्सरशिप लगाना ही होगा ।

वितरण

ग्रेट ब्रिटेन में लगभग ४००० पुस्तक वितरण अभिकरण हैं और पुस्तक विक्रेता एसोसिएशन के लगभग २७५० सदस्य हैं । परन्तु शायद ऐसी दुकानें जो केवल पुस्तकें ही बेचती हैं केवल तीन-चार सौ ही होंगी ।

उपलब्ध पुस्तकों की कुल संख्या की इन आंकड़ों से तुलना करने पर पता चलेगा कि हमारे इस आधार पर कुशलतापूर्वक और कम ख़र्च पर पुस्तक विक्रय करना संभव नहीं है । ब्रिटेन में भी शृङ्खलाबद्ध व्यवस्था द्वारा वैज्ञानिक संगति करने की प्रवृत्ति है । कम से कम प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता और प्रकाशक का काम एक ही जगह करने के पुराने तरीके या सीधे ग्राहक को डाक के द्वारा पुस्तक भेजने की आधुनिक प्रणाली की ओर झुकाव पाया जाता है ।

उत्पादन की तरह वितरण के कार्य में वैज्ञानिक संगति लाना भी एक न एक तरह के सेन्सरशिप की ओर ले जाता है । वैज्ञानिक संगति ऐसी सीमा तक व्यवहारिक है जिससे विविधता या स्वतन्त्रता ख़त्म न हो । ब्रिटिश प्रणाली को निम्नलिखित तरीके से सरल करके व्यावहारिक आधार बनाया जा सकता है :

प्रकाशन केन्द्रों में ऐसे कार्यालयों की स्थापना (अथवा वर्तमान कार्यालयों का विकास) जो इन कामों के लिए उत्तरदायी होंगे : (क) सभी सम्पादकीय निर्णय, (ख) विक्रय, जिसमें यात्रा और लेखा शामिल हो, (ग) एक सीमित उत्पादन नीति उस हद तक जहाँ तक उसका मुद्रकों के साथ कार्य समन्वय करने और डिज़ाइन पर सर्वोपरि निरीक्षण का सम्बन्ध है ।

'उत्पादकों' की स्थापना, बड़े केन्द्रों से दूर परन्तु ऐसे स्थानों में जो वितरण केन्द्र बन सकें । ये उत्पादक इन नामों के लिए उत्तरदायी होंगे : (क) डीजाईन, (ख) सारा उत्पदान, जिसमें मुद्रण, चित्रों का उत्पादन जिल्द बांधना और क़ाग़ज में लपेटना शामिल है, (ग) गोदामों की व्यवस्था, स्टाक रखना

ग्रौर उनका हिसाब-किताब, (घ) वितरण का सारा कार्य, चाहे वह बहुत मात्रा में माल भेजने का हो या थोड़ी संख्या में या चाहे एक-एक प्रति भेजने का ।

यदि पुस्तकों पर उत्पादक प्रकाशक दोनों के नाम हों तो उन्हें मंगाने में कोई गड़बड़ नहीं होती । तब प्रकाशक पुस्तक के ग्रनुसार उत्पादक के चुनाव का ग्रधिकार ग्रपने हाथ में रख सकता है ग्रौर टेंडर मंगा सकता है ।

यदि किसी देश में प्रकाशन प्रणाली को पुराने समय से चली ग्रा रही ब्रिटिश प्रथा के ग्रौर भी ग्रधिक निकट लाना हो तो उपरोक्त कार्य विधि में ऐसा परिवर्तन करना सरल होगा जिससे सारे ग्रार्डर प्रकाशक के कार्यालय के माध्यम से जाएँ । सांकेतिक पत्र-प्रणाली जिसे ब्रिटिश प्रकाशक काफ़ी प्रयोग में लाते हैं विस्तृत की जा सकती है । इससे प्रकाशन कार्यालय के माध्यम से जाने वाले ग्रार्डर से तत्काल उत्पादक ग्रौर वितरक का पता लग जाएगा । उदाहरण स्वरूप ब्रिटिश विधि के ग्रनुसार सी, डवल्यू, १६१, एच, डबल्यू, वी से मतलब चार्टो ग्रौर विंडस का उत्पादन हेज़िल, वाटसन ग्रौर विने के यहाँ प्राप्य होगा। यद्यपि इस संशोधन से पहले सुझाये गए तरीक़े से पूर्ण वैज्ञानिक संगति की ग्रपेक्षा ग्रधिक ख़र्च ग्राता है, फिर भी यह वर्तमान ब्रिटिश प्रणाली से सस्ता है।

वितरण का विस्तार : मान्यता प्राप्त पुस्तक वितरण कर्ताग्रों के ग्रतिरिक्त ग्रन्य साधनों से भी पुस्तक बेचने में मूल रूप से कोई बुराई नहीं । वास्तव में यह काफ़ी हद तक ठीक ही है । बहुत सी चीजें बेचने वाली बड़ी दुकानों, गाँवों की दुकानों यहाँ तक कि पाठशालाग्रों ग्रौर प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों को भी पुस्तक बेचने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए । यद्यपि इस माध्यम पर बहुत साव-धानी के साथ नियन्त्रण होना चाहिए (ग्रच्छा हो यदि यह नियन्त्रण उत्पादक वितरक द्वारा किया जाए) ताकि ग्रावश्यकता से ग्रधिक पुस्तकें इकट्ठी न हों ग्रौर उनकी किसी न किसी स्थापित सूचना संगठन के साथ सम्पर्क रहे । सर-कार ग्रथवा उत्पादक-वितरण कर्ता को पुस्तकों की चलती फिरती दुकानें रखनी चाहिएं, ये उपयुक्त पुस्तकें ऐसे ग्रामों में ले जा सकती हैं जहाँ कोई ग्रन्य दुकान न हो ।

ऐसे पुस्तक विक्रेताग्रों को, जिनका कारोबार सुव्यवस्थित हो, वर्ष में एक या दो बार राष्ट्रीय पुस्तक विक्रय द्वारा जमा हुई पुस्तकों का स्टाक निकालने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है (जैसा कि ग्राजकल ब्रिटेन में व्यवस्था है) । परन्तु विक्रय कार्य की यह व्यवस्था ग्रौर उस पर नियन्त्रण प्रकाशक तथा उत्पादक-वितरणकर्ता के साथ समझौते से होना चाहिए ।

मानक

एक और वैज्ञानिक संगति, जो बिना किसी झिझक के सुझाई जाती है, यह है कि पुस्तकों के साईज़ के बारे में विशेष मानक निर्धारित कर लिए जाएं। कोई भी जिसके पास अंग्रेज़ी, अमरीकी अथवा यूरोपियन पुस्तकों की थोड़ा बहुत संग्रह है यह अनुभव करेगा कि क्राउन, ऑक्टेवो, क्वारटो इत्यादि के बीच क्या क्या विभिन्न माप हो सकते हैं।

अमरीका में एक बड़ी पुस्तक उत्पादक फ़र्म कोलोनियल प्रेस की एक उत्पादन योजना है जिसे "ए प्लैन" कहते हैं। इसके आधीन निश्चित मानकों के आधार पर उत्पादन के किसी भी कार्य पर १० प्रतिशत तक छूट दी जाती है। सबसे पहले यह छूट ४४ × ६६ इंच के काग़ज़ पर मुद्रित पुस्तकों के लिए दी गई। बहुत से अन्य मानक भी निर्धारित किये पर इनमें किसी परिवर्तन की अनुमति नहीं दी जाती। इससे जो बचत होती है वह स्पष्ट है।

यदि सारी प्रकाशन व्यवस्था में सीमित मानकों—इनमें मशीनों तथा काग़ज़ों के मानक भी आ जाते हैं—को आधार बना लिया जाए तो क्रय कार्य में वैज्ञानिक संगति लाई जा सकती है और पुस्तक मुद्रण की सम्भावनाएं बहुत बढ़ सकती हैं।

टेक्नीकल प्रगति

पश्चिमी विश्व में उत्पादन मशीनों में जो भारी पूंजी लगी हुई है उसके कारण अलग अलग कार्यों में नवीन उत्पादन विधियाँ अपनाना कठिन है। इन प्रणालियों में जो प्रयोग हमने किए हैं—और जिनका अधिक ख़र्च के कारण और आगे उपयोग नहीं किया जाता--अन्य देशों में काम में लाए जा सकते हैं। पुस्तकों को सामान्य टाइपराइटर के जैसी कई नई मशीनों पर कम्पोज़ किया जा सकता है। और ख़र्च लाइनों टाइप और मोनो टाईप की अपेक्षा बहुत कम आता है। यदि पुस्तकों को इन मशीनों पर कम्पोज करने और फोटो आफ सैट द्वारा मुद्रित करने के बारे में पूर्वाग्रहों को दूर किया जा सके (और यह पूर्वाग्रह उन देशों में नहीं हैं जहां मुद्रण की प्रथा ही नहीं) तो शायद छोटे संस्करण छापने की समस्या को हल किया जा सकता हैं। उनका इससे भी अधिक महत्व यह होगा कि उनसे ऐसी पुस्तकों की परीक्षण के लिए थोड़ी-सी प्रतियां छापने में आसानी होगी जिनके बाद में व्यापक संस्करण छपने हों।

प्लेटें बनाने के लिए सीसे और ताँबे के पारस्परिक उपयोग के स्थान पर प्लास्टिक, रबड़, मैगनेशियम का उपयोग होने लगा है और ऐसा जान पड़ता है कि छापे में जो ख़राबी आ जाती है स्याही फैलाने में जो कमी पेशी हो जाती है

उसे शीघ्र ही दूर किया जा सकेगा और यह कठिनाई अधिक दिन नहीं रहेगी। अब भी बहुत से दोष ऐसे हैं जो केवल विशेषज्ञ को ही दिखाई देते हैं। विशेषतः रबड़ प्लेटों के कुछ लाभ स्पष्ट हैं। उनके उपयोग से कम स्याही खर्च होती है, और उनकी तैयारी में समय भी बहुत कम लगता है। जिस कार्य के लिए अन्य प्रकार की प्लेटें बनाने पर अठारह घंटे लगते हैं रबड़ प्लेटें बनाने पर केवल आधा घन्टा लगता है। यदि ऐसी रबड़ प्लेटें बनने लगें जिनमें कोई ख़राबी न हो तो उनका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा, विशेषतः बड़े लोकप्रिय संस्करण छापने में। वर्तमान प्रणाली के साथ यह आवश्यक है कि रोटरी प्रेस से ३०-४० हजार प्रतियां छापी जाय ताकि संस्करण आर्थिक दृष्टि से लाभकारी हो। परन्तु इगलैंड और अमेरिका में किये गये प्रयोगों से सिद्ध हुआ कि रोटरी प्रेस पर रबड़ प्लेटों का उपयोग करके १५ हज़ार प्रतियां मुद्रित करता और साथ ही प्रकाशन का मूल्य उचित सीमा के भीतर रखना सम्भव है।

सचित्र पुस्तक अनेक प्रकार से उत्पादित की जा सकती हैं, जैसे फोटो लिथोग्राफ़ी, जस्त अथवा प्लास्टिक की प्लेटों पर आटोलिथोग्राफ़ी, फोटोग्रावेयर विधियां रेखा तथा हाफटोन प्लेटों पर लेटर प्रैस द्वारा।

अन्तिम उल्लेखनीय टैक्नीकल विकास केस को सिगनेचर के साथ जोड़ने के लिए नये पदार्थों का उपयोग है। चिपकाने वाले जो पदार्थ अब प्रायः प्रयोग में लाए जाते हैं उन्हें सूखने में कम से कम चार घन्टे लगते हैं। प्रायोगिक पदार्थ लगभग फौरन ही सूख जाते हैं। यद्यपि वे अभी भुरभुरे हैं अभी उनके प्रयोग क लिए नई और मँहगी मशीनें लगानी पड़ती हैं। परन्तु जहां अभी तक कोई मशीनें नहीं लगी हैं वहां आरम्भ से ही ऐसी मशीनें लगाई जा सकती हैं।

लोकप्रिय पुस्तक माला का आरम्भ

ब्रिटेन में लोक पुस्तक माला का सक्षिप्त इतिहास बता देना उचित होगा क्योंकि उसमें भविष्य के लिए कई बातें मिल सकती हैं।

यूँ तो १७१७ और १७४२ के बीच जोन बैल की ब्रिटिश पोइटस् पुस्तक माला में १०९ पुस्तकें प्रकाशित हुई, जिनमें से प्रत्येक का मूल्य ८ शिलिंग था, परन्तु हमारे उद्देश्य से सम्बद्ध विभिन्न मालाए १८३० में प्रकाशित होनी आरम्भ हुई। कान्सटेबल की मिसलेनी (Miscellany) और जोन मूर की पारिवारिक पुस्तकालय (फेमिली लायब्रेरी) दोनों ही मालाएँ मनोरंजक पक्ष की अपेक्षा शिक्षा पक्ष पर अधिक महत्व देतीं थीं। दोनों पुस्तक मालाओं के प्रत्येक पुस्तक के दाम ६ शिलिंग थे (जब कि १९ वी शताब्दी में एक उपन्यास का सामान्य मूल्य ३१ शिलिंग ६ पेंस होता था) कौन्सटेबिल और मूर ने लकड़ी के गूदे से

मशीन पर बने कागज़ पर अपनी पुस्तक छापीं। इस कागज़ का तब नया आविष्कार हुआ था। उन्होंने अपनी अधिकांश पुस्तकें स्टेशनरी बेचने वालों और रेलवे स्टालों द्वारा विक्रय के लिए छपीं। १८५० के लगभग तीन नई मालाएं आइरिश पार्लर लायब्रेरी, स्टलैज की 'रेलवे लायब्रेरी" और बोन की शिलिंग सीरीज़" प्रकाशित हुईं। ये अधिकांशतः लोकप्रिय उपन्यासों आदि के सस्ते संस्करण थे। इन मालाओं की प्रत्येक पुस्तक मूल्य १ शिलिंग होता था। कुछ वर्ष के पश्चात् रूटलैज ने "यूनिवर्सल लायब्रेरी" माला शुरू की और १८८६ में कैसलस ने "नेशनल लायब्रेरी" आरम्भ की। इस माला में ४ वर्षों में २१४ पुस्तकें निकालीं गयीं। हर सप्ताह एक पुस्तक प्रकाशित होती थी। कागज़ की जिल्द वाली प्रति का मूल्य ३ पैन्स और कपड़े की जिल्द वाली पुस्तकों का मूल्य ६ पैन्स होता था। ये पुस्तकें अधिकांशतः कथा साहित्य की थीं। यहां जर्मनी की पुस्तक माला रिक्लेम द्वारा प्रकाशित यूनीवर्सल बिबलीयो-थैक का उल्लेख करना उपयुक्त जान पड़ता है। १८६७ और १९४२ के बीच इस माला में छपी इबसन की रचनाओं की ६० लाख प्रतियां और पेनहावर की कृतियों की लगभग १ लाख प्रतियां बिकीं। शौपेआवर ऐसा लेखक था जिसकी प्रथम पुस्तक की २० वर्षों में केवल १४० प्रतियां बिक सकी थीं।

नैशनल की "न्यू सैन्चुरी लायब्रेरी" १९०० में स्थापित हुई (१९०५ में इसका नाम बदल कर "नैशनल क्लासिक" रख दिया गया)। १९०१ में ग्रांट रिचर्डस् ने "वर्ल्डस् क्लासिक्स" पुस्तक माला शुरू की। जिसका प्रकाशन औक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस ने स्वयं संभाल लिया। १९०३ में कालिन की "पाकेट क्लासिक्स" और १९०६ में डेंट की "एवरी-मैन लायब्रेरी" का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इन सब मालाओं में काफ़ी समानता है परन्तु यह उल्लेखनीय है कि बाद में जो मालायें आरम्भ हुई उनमें जीवनियाँ तथा इतिहास धर्म और दर्शन आदि विषयों पर भी पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं 'एवरी मैन' के प्रकाशक डैंट के शब्दों में ये पुस्तकें सभी प्रकार के पाठकों जैसे श्रमिकों, विद्यार्थियों, सुसंस्कृत लोगों, बालकों, पुरुषों तथा स्त्रियों के लिए उत्तम थीं।

इस शताब्दी के प्रथम ३० वर्षों में देश में लोक शिक्षा में बहुत ही उन्नति हुई। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् पाठशालाओं और पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य अभिकरणों द्वारा भी जनता को सूचना देने का कार्य आरम्भ हुआ। रेडियो, सिनेमा लोकप्रिय पुस्तकों सबको इस आन्दोलन में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ, और इस प्रकार जब पेंग्विन माला की पहली पुस्तक निकली उस समय जनता उसका स्वागत करने के लिए भांति तैयार थीं।

एक उदाहरण : पेंग्विन बुक्स लिमिटेड

यह तो नहीं कहा जाता कि ग्रेट पेंग्विन बुक्स पुस्तकों के सस्ते संस्करण उत्पादन करने वाले प्रथम प्रकाशक थे। परन्तु चाहे पुरानी पुस्तकों के नए संस्करण हों या नई रचनाएं, पेंग्विन ने सब प्रकार की रुचियों के लिए पुस्तक छापीं। पेंग्विन माला ने जनता को ज्ञान, मनोरंजन, स्वामित्व का आनन्द सभी कुछ दिया। पाठक चाहे अपने दुख दर्द को भूलना चाहें या खराब मौसम के कारण बेवस हों वह अपने आपको इन पुस्तकों में खो सकता था।

यह एक आर्थिक तथ्य है कि मूल्यवान पुस्तकें, यहां तक कि सामान्य पुस्तकें भी, अधिकांश जनता की पहुँच के बाहर हैं। पेंग्विन की सफलता 'सस्ता' शब्द के दो अर्थों के अंतर को अनुभव करने पर आधारित है। क़ीमत की दृष्टि से पैंग्विन पुस्तकें सस्ती हैं परन्तु अन्तर्वस्तु की दृष्टि से उनमें सस्तापन नहीं हैं।

१९३५ में जब ऐलेन लेन (अब सर ऐलेन) ने, जो उस समय 'बौडले हैड' के प्रबन्ध निर्देशक थे, पेंग्विन की स्थापना का विचार किया, तो उनका निर्णय सभी विशेषज्ञों के परामर्श के विपरीत था। प्रकाशकों, पुस्तक विक्रेताओं, और सार्वजनिक मत का अध्ययन करने वालों सभी का यह कहना था कि ऐसा पुस्तक प्रकाशन जो पुरानी परम्परा के विपरीत हों निश्चय ही सफल रहेगा। उनका यह कथन पूर्व अनुभवों पर आधारित था। केवल ऐलेन लेन, इनके दो भाइयों, और कुछ उत्साही व्यक्तियों ने पेंग्विन को क्रांतिकारी परन्तु व्यवहारिक योजना के रूप में देखा।

ये आशावादी भी बहुत अधिक आशा नही करते थे। पहली १० पुस्तकों की केवल २०-२० हज़ार प्रतियां मुद्रित की गईं, और एहतियात के तौर पर केवल १० हज़ार को बंधाया गया। बिक्री के पहले आर्डरों से विशेषज्ञों की राय ठीक जान पड़ती थी और ऐसा प्रतीत होता था कि नई फर्म १७ हज़ार की बिक्री के नहीं कर सकेगी, जो आर्थिक दृष्टि से आवश्यक थी।

ब्रिटिश जनता ने विशेषज्ञों की आशंकाओं को ग़लत सिद्ध कर दिया। यही नहीं, पेंग्विन माला के उत्साही समर्थकों को भी विस्मित कर दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि ६ पेंस वाली अच्छी पुस्तकों की ही संसार को प्रतीक्षा थी आज तो पेंग्विन वाले २०,००० प्रतियों का कोई संस्करण छापना व्यापारिक दृष्टि से लाभकारी नहीं समझते, परन्तु १९३५ में २०,००० प्रतियां बिक जाने का अर्थ था एक बहुत ऊंची आकांक्षा की पूर्ति।

यह उल्लेखनीय है कि "पेंग्विन" की पहली ही पुस्तक कथा साहित्य की नहीं बल्कि यूरोप के एक विख्यात लेखक आन्द्रे मोरूवा द्वारा लिखित "एरि-

यल" थी। तभी से पेंग्विन माला अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर विकसित हुई हैं और ऐसी गम्भीर पुस्तकों पर जो पुस्तक खरीदने वाली जनता को आसानी से उपलब्ध नहीं होतीं अधिकाधिक महत्व दिया जा रहा है। एरियल पुनः मुद्रित हुई थी परन्तु १९३७ में पेंग्विन ने मौलिक रचनाओं के क्षेत्र में प्रवेश किया। पेंग्विन माला का आरम्भ बी० के० कृष्णामेनन, डबल्यू ई० विलियम्स और एच० एल० बील्स के सम्पादन में हुआ। इसका उद्घाटन बर्नर्ड शा के इन्टैलिजेन्ट वुमैन्स गाइड टू सोशलिज़्म, कैपीटलिज़्म, सोवियटिज़्म, एवं फ़ाशिज़्म के साथ हुआ। यह ठीक है कि इस पुस्तक में सोवियटिज़्म सौर फ़ाशिज़्म के खण्ड ही नए थे, परन्तु बाद में उसी वर्ष पेंग्विन स्पेशल्स की प्रथम पुस्तक प्रकाशित हुई और आज फ़र्म का ७० प्रतिशत उत्पादन नवीन पुस्तकों का होता है।

कुछ मौलिक पैलिकन अपने क्षेत्र में आदर्श पुस्तकें हो गई हैं। निकालस पैव्सवर की यूरोपियन वास्तुकला की रूप रेखा Qutline of Europian Architecture) को दो विशेषताएं प्राप्त हुईं। एक यह कि वह पाठशालीय पाठ्य पुस्तक के रूप में चुनी गई और दूसरे यह कि एक अन्य प्रकाशन फ़र्म ने इसका अधिक मूल्य वाला संस्करण छापा। प्रो० गार्डन चाईल्ड की "इतिहास में क्या हुआ" (What happend in history) पूर्व इतिहास की एक महान पुस्तक है और रोजर मैनवैल की पुस्तक 'फ़िल्म' प्रायः कठिन परन्तु सर्व रोचक समझे जाने वाले विषय पर सर्वोत्तम कृति मानी जाती हैं।

उचित मूल्य की पुस्तकों में मांग का होना सिद्ध हो चुका है और इस मांग की पूर्ति भी की गई है। परन्तु सफलता से उत्तरदायित्वों में भी वृद्धि हुई है। पैंग्विन के उच्च पदाधिकारियों के लिए विशाल पाठक जनता पर, जिसे उन्होंने ही बनाया, अपने मत को लादना अपेक्षाकृत आसान होगा। दूसरी ओर इस बात पर महत्व देना अधिक व्यावहारिक होगा कि सारे पैंग्विन प्रकाशन विवाद रहित हों। ऐसा व्यावहारिक तो होगा पर पुस्तकें नीरस हो जाएंगी। पेंग्विन का लक्ष्य यह है कि सूझ-बूझ के साथ इन दोनों के बीच का रास्ता अपनाया जाए।

यह ठीक है कि किसी भी जीवित अथवा मृत लेखक का चुनाव इसलिए किया जाता है कि वह पेंग्विन अधिकारियों तथा पेंग्विन पाठकों की राय में अच्छा लेखक है, जिसने कोई अच्छी पुस्तक लिखी है अथवा लिख सकता है। परन्तु उसके चुनाव का कारण यह नहीं है कि उसके मत पैंग्विन बुक्स से मेल खाते हैं, अथवा उसकी कला पैंग्विन के सम्पादकों द्वारा स्थापित किसी समन्वय के अनुरूप है।

यह विशेषज्ञों का स्वाभाव है कि वे पहले अपना मत प्रमाणित करते हैं और फिर स्वतः ही उसे "सिद्ध" (Q. E. D.) लिख देते हैं। पेंग्विन के अधिकारी विशेष आदेश देकर लिखाई गई पुस्तकों के लेखकों को और आगे देखने और समस्या के सभी पक्षों को प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, परन्तु वे विशेषज्ञ पर निष्पक्षता को ज़बरदस्ती लादने का प्रयास नहीं करते। यदि एक पक्षता दलबन्दी का रूप ले ले, जैसा कि प्रायः विषयों के वाद-विवाद में होना अनिवार्य बन जाता है, तो पैंग्विन बुक्स इसे अपना कर्त्तव्य समझती है कि एक ऐसा मंच उपलब्ध किया जाये जहां से विशेषज्ञ जनता के सामने खुले तौर पर बहस कर सकें।

आरम्भ में सारी पैंग्विन पुस्तकें जीवित लेखकों द्वारा लिखी गई थीं, परन्तु सैमुयल बटलर की Erewhon को शामिल करके पेंग्विन में अंग्रेज़ी की ऐसी प्रतिष्ठित पुस्तकों को, जो आमतौर पर उपलब्ध नहीं हैं, पुनः मुद्रित करने की नीति अपनाई गई और कुछ विदेशी प्रतिष्ठित पुस्तकों के अनुवाद की नई माला निकाल कर इस नीति को आगे बढ़ाया गया। अनुवाद माला में सबसे पहली पुस्तक 'ओड़ीसे' थी जिसकी दस वर्षों में लगभग दस लाख प्रतियां बिकीं। इसने भी निराशावादियों की आशंकाओं को निराधार सिद्ध कर दिया, जिनका कहना था कि 'होमर' में दिलचस्पी लेने वाले कुछ गिने-चुने पंडित लोग ही होंगे। अब पैंग्विन में होमर की 'इलियड' के अतिरिक्त सोफ़ोक्लीज़, ज़ेनोफ़ोन, प्लेटो, थियोक्राइटस, वर्गिल, टेसीटस, दांते, सर्वेन्तीस, वोल्टैयर, दे मांपसां, तुर्गेनीव, गोर्की, दोस्तोइएस्की और इबसन की रचनाओं के अनुवाद उपलब्ध हैं।

कई वर्षों तक सस्ते दामों की रंगीन पुस्तकें केवल जर्मनी की फर्म इंसल वर्लाग ही प्रकाशित करती थी। पर १९३९ में रंगीन पुस्तकों की 'किंग पेंग्विन' माला आरम्भ की गई।

अन्य मालाएं हैं : 'पेंग्विन साइंस न्यूज़', 'पैंग्विन न्यू बायोलोज़ी' (ये पत्रिका के ढंग की पुस्तक मालाएं हैं जिनमें विशेष जानकारी वाले विषयों पर विशेषज्ञ साधारण पाठकों को नवीन सूचना उपलब्ध करते हैं), पैलकिन माला में दर्शन, मनोविज्ञान, साहित्य, इतिहास की पुस्तकें, बच्चों की किताबों की पफ़िन पुस्तक माला, पैंग्विन शब्दकोष, पैलीकन हैण्डबुक्स (बाग़बानी, फल उगाना, लकड़ी का काम आदि विषयों पर)।

पैंग्विन के प्रयोग की सफलता से जो शिक्षाएं ली जा सकती हैं उनमें शायद सबसे महत्वपूर्ण है समयानुकूल काम करना। यह अनुमान करना कठिन है कि पैंग्विन प्रकाशन, जनता में रुचि उत्पन्न करते हैं या पहले से बनी रुचि की पूर्ति करते हैं। वास्तव में दोनों ही बातें हैं और बीच के एक रास्ते पर चल

कर दोनों अवसरों का लाभ उठाया जाता है—पैंग्विन संगठन किसी विषय में जनता की रुचि का थोड़ा सा संकेत मिलने पर इसका फ़ायदा उठाने के लिए तत्पर रहता है और उसे एक विस्तृत तथा प्रामाणिक विवरण के लिए तैयार करता है जिससे रुचि की पूर्ति भी हो और विकास भी। इससे पता चलता है कि चौकसी और बुद्धिमत्तापूर्ण सम्पादन का कितना महत्व है।

टिप्पणियां और सुझाव

कुछ अन्य टिप्पणियां दी जाती हैं जिनसे उपयोगी संकेत मिल सकते हैं :

पैंग्विन पुस्तकों के बहुत कम विज्ञापन दिए जाते हैं। ऐसा इसलिए नहीं कि फ़र्म को समाचार पत्रों में विज्ञापन देने पर कोई सैद्धान्तिक आपत्ति है बल्कि यह कारण है कि सस्ते प्रकाशन छापने वाली कोई संस्था विज्ञापन आदि का ख़र्च नहीं उठा सकती।

पैंग्विन फ़र्म कभी 'बेचो या लौटा दो' प्रणाली से वितरण नहीं करती। उसकी यह धारणा है कि ये पुस्तकें हैं पत्रिकाएं नहीं। इस प्रकार उसे वितरण-कर्ताओं के जान-बूझ कर आवश्यकता से अधिक स्टाक इकट्ठा करने के कारण जोखम नहीं उठानी पड़ती।

कई वर्षों से फ़र्म को औसत से ५ प्रतिशत शुद्ध लाभ हो रहा है पर इसमें कुछ भी लाभांश के रूप में नहीं दिया जाता। सारा नफ़ा पूंजी खाते में डाल दिया जाता है और आगे विकास के लिए ख़र्च किया जाता है।

विशेष जानकारी के विषयों के लिए फ़र्म ने बाहर के कई सम्पादकों और सलाहकारों की व्यवस्था की है, जो अपने-अपने क्षेत्र में सर्वमान्य विशेषज्ञ हैं। इस प्रकार उसने सही परामर्श प्राप्त करने, सूझ-बूझ के साथ और नवीन-तम ढंग से योजना बनाने तथा विशेष क्षेत्रों में काम करने वालों से निकट संपर्क रखने का निश्चित प्रबन्ध रखा है और इसके साथ ही उसे ऊपरी ख़र्च बहुत बढ़ाये बिना व्यापक विशेषज्ञ सम्पादन सेवाएं प्राप्त हैं।

ब्रिटेन के अनुभव से पता चलता है कि यदि साक्षर पाठक जनता मौजूद हो तो एक लोकप्रिय पुस्तकमाला आरम्भ करना सम्भव है और यदि अभिव्यक्ति स्पष्ट और ठोस हो तो जनता अनेक प्रकार के विषयों को ग्रहण करने को तैयार रहती है। प्रथम प्रयास, यदि उनमें निम्नांकित प्रकाशन शामिल हों, तो सम्भ-वतः सफल रहेंगे अगर ग्रन्थों और आधुनिक कथा-साहित्य की अच्छी रचनाओं के नये संस्करण, कोई काम सिखाने वाली किताबें, विश्व और राष्ट्रीय समस्याओं की समीक्षा, इतिहास, अर्थ-शास्त्र, कला, धर्म और लोकप्रिय विज्ञान की पुस्तकें,

बच्चों की अच्छी और रंग-विरंगी किताबें, विशेषकर यदि वे बड़ों की किताबों के विषयों का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करें।

पाठकों की रुचियों का अनुमान लगाने का एक ही तरीक़ा है :

ध्यान के साथ और व्यापक आधार पर की गई सम्पादकीय जांच, दूसरे शब्दों में ऐसे सम्पादक रखना जो अपने चारों ओर की गतिविधियों से लगातार अवगत रहें और प्रत्यक्ष रूप से या सलाहकारों द्वारा, ऐसे सम्पादकों से सलाह लेना जो लगभग किसी भी विषय के विशेषज्ञों से जानकारी प्राप्त करते रहें। आगे जिस केन्द्रीय सूचना संस्था का उल्लेख किया गया है उसका एक अन्य कार्य सारी प्रकाशन व्यवस्था के लिए मांग या आवश्यक के बारे में अनुसन्धान का एक संगठन बनाना भी हो सकता है।

बहुत ज़्यादा तैयारी के साथ बढ़िया उत्पादन करने की आवश्यकता नहीं। बल्कि सच बात तो यह है कि लोकप्रिय संस्करणों के लिए आर्थिक दृष्टि से यह सम्भव ही नहीं। पर अच्छे टाईप, साफ़ और स्पष्ट चित्रों और रंग-बिरंगे मुखपृष्ठों से पुस्तकमाला की सफलता की सम्भावना बढ़ जाती है और वितरणकर्ता और पाठक दोनों को उन्हें बेचने और ख़रीदने के लिए प्रोत्साहन मिलता है। इन चीज़ों पर विशेष ख़र्च नहीं आता। काग़ज़ के आवरणपत्रों का ऐसी जनता तिरस्कार नहीं करती जिसने उनके बीच की वस्तु की कीमत पहचान ली हो।

मूल्य का निर्धारण हर देश की अपनी परिस्थितियों के अनुसार किया जाता है। फिर भी ब्रिटेन के अनुभव के आधार पर प्रस्तुत लेख के लेखक का यह सुझाव है कि किसी लोक पुस्तकमाला की कीमत किसी अन्य 'विलास आवश्तकता' की चीज़ के मूल्य के अनुरूप होनी चाहिए। मिसाल के तौर पर इस समय ब्रिटेन में २० सिगरेटों के एक पैकट की कीमत ३ शिलिंग १० पैंस और एक पैलीकन पुस्तक की आम कीमत ३ शिलिंग ६ पैंस है।

सरकारी और सार्वजनिक अधिकारियों का योगदान

ब्रिटेन का अनुभव यह है कि आम तौर पर सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशन कार्य करना ठीक नहीं रहता। यद्यपि ब्रिटिश सरकार का स्टेशनरी आफ़िस देश के किसी भी प्रकाशक से अधिक कार्य कर रहा है। १६५५ में उसने १३८० पुस्तकें छापीं जबकि सबसे अधिक प्रकाशन करने वाली फर्म कौलिन्स ने ५१६ पुस्तकें प्रकाशित कीं। स्टेशनरी आफिस लोक मालाओं के सबसे बड़े प्रकाशकों में से है, विशेषकर ऐसी पुस्तकों के प्रकाशन में जो सार्वजनिक नीति को सामान्य रूप देती हैं या कोई काम करने की शिक्षा देती हैं और जिनका

विषय सार्वजनिक नीति से सम्बन्ध रखता है (जैसे खेती, स्वास्थ्य, सड़क पर यात्रा की सुरक्षा इत्यादि)।

केवल सरकारी या सार्वजनिक संस्था द्वारा प्रकाशन कार्य किए जाने में जो खतरे हैं वे स्पष्ट हैं। जनता को यह सन्देह हो सकता है कि सरकारी प्रकाशन एक प्रकार की सेन्सरशिप है। प्रकाशन नीतियों पर सत्ताधारी पार्टियों के हितों से असर पड़ना बहुत आसान है। और फ़िर सरकार बदलने पर इन्हीं प्रकाशनों का तर्क भी बदल जायेगा। ब्रिटेन में सरकार (राष्ट्रीय और स्थानीय) और ग़ैरसरकारी प्रकाशन उद्योग के बीच निकट सम्पर्क है और दोनों मिलकर काम करते हैं। किसी नई व्यवस्था में ऐसा और भी कारगर ढंग से किया जा सकता है।

एक मिसाल लीजिए। लोक संस्करण छापने वाले सभी प्रकाशकों के सामने एक मुख्य समस्या यह रहती है कि किसी एक पुस्तक के लिए इतनी विशाल पाठक जनता हो जिससे उसका खर्च पूरा हो सके। यदि किसी स्कूल के अधिकारी, कोई सरकारी विभाग या स्वास्थ्य संस्था कोई नया कार्य आरंभ कर रही हों जिसके लिए 'शिक्षा साहित्य' की आवश्यकता हो, तो उसे चाहिए कि वह प्रकाशक को काफ़ी पहले से और ब्यौरेवार सूचना दे ताकि वह उपयुक्त पुस्तकें छाप सके। वह विभाग या संस्था इससे आगे भी जा सकती है और आवश्यक पुस्तक की निश्चित संख्या में प्रतियों के क्रय और वितरण की पहले से गारंटी दे सकती है। प्रतिष्ठित सत्ता का समर्थन प्राप्त होने से पुस्तक और प्रकाशक की साख बढ़ती है और उसे इससे आर्थिक स्थिरता प्राप्त होती है। यहां इस बात का उल्लेख करना असंगत न होगा कि सभी अच्छे प्रकाशन संगठनों में, चाहे वे लोक संस्करण छापते हों या पारस्परिक, एक दिशा में सफलता मिलने से दूसरी जोखम उठाने में सहायता मिलती है। दूसरे शब्दों में यूं कहिए कि कोई भी अच्छा प्रकाशक अच्छी बिकने वाली पुस्तक का सारा नफा अपनी जेब में नहीं डाल लेता बल्कि उसे ऐसे प्रकाशनों में लगाता है जिनकी सफलता कम निश्चित हो।

सूचना और अनुसंधान

सरकार और अन्य सार्वजनिक अधिकारी केन्द्रीय संस्थायें स्थापित करके या उनकी स्थापना में सहायता देकर और मदद कर सकते हैं। ये संस्थायें निम्नलिखित कार्य संभाल सकती हैं:

(क) जनता को उपलब्ध पुस्तकों की सूचना देना, पठन और पुस्तकों के उपयोग में प्रोत्सादन देना, (ख) किसी विशेष विषय की पुस्तकों में रुचि

उत्पन्न करना और समाज के सम्बद्ध वर्ग का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट करना, (ग) आंकड़े रखना, (घ) जनता की रुचियों और आवश्यकताओं की पड़ताल करना।

ब्रिटेन में इनमें से बहुत से कार्य एक संस्था करती है जो सरकारी तो नहीं परन्तु केन्द्रीय अवश्य है। इसलिए इस संस्था—नेशनल बुक लीग —के कार्य का उल्लेख करना उपयुक्त जान पड़ता है।

नेशनल बुक लीग

अन्य देशों में एक केन्द्रीय पुस्तक संस्था होती है जिसकी स्थापना सरकार या पुस्तक व्यवसाव ने की होती है और वही उसके लिए धन की व्यवस्था करती है। नेशनल बुक लीग न तो सरकार से धन लेती है और न उसे विशेष मान्यता प्राप्त है, लेकिन फिर भी वह कई सरकारी संस्थाओं और स्थानीय अधिकारियों के साथ निकट सहयोग से काम करती है। अधिकतर देशों में, जिनमें ब्रिटेन भी शामिल है, लेखकों, प्रकाशकों, पुस्तक विक्रेताओं और पुस्तकालय प्रबन्धकों की संस्थाएं हैं। नेशनल बुक लीग इस तरह की संस्था नहीं पर इसके उद्देश्य और कार्यों को व्यावसायिक संगठनों की ओर से मान्यता दी जाती है और ऐसे बहुत से संगठनों के सदस्य लीग के भी सदस्य हैं। कुछ लोग जो इन व्यावसायिक संगठनों की परिषदों में भाग लेते हैं और लीग के मार्गदर्शन में सहायता भी देते हैं। वास्तव में पुस्तक व्यवसाय की किसी शाखा से सम्बन्ध रखने वाले बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो आवश्यकता पड़ने पर लीग की सहायता के लिए तत्पर न हों। नेशनल बुक लीग का लेखक, पुस्तक विक्रेता, मुद्रक, प्रकाशक, जिल्दसाज़ और पुस्तकालय प्रबन्धक सभी, समय, शक्ति और जानकारी के रूप में उदारता के साथ सहायता देते हैं, पर वे लीग के अपने सदस्यों से अधिक कोई विशेष लाभ या रियायत न मांगते हैं न लेते हैं। ये सदस्य हैं : स्कूल, औद्योगिक और व्यापारिक संस्थाएं और मज़दूर संगठन, जो लीग को चलाने का खर्च इसलिए उठाते हैं कि वे पुस्तक पठन से होने वाले अधिकाधिक लाभ स्वयं प्राप्त करना चाहते हैं और दूसरों को ये लाभ प्राप्त करने में मदद देने के लिए तैयार हैं।

लीग के सदस्ता प्रपत्र में कहा गया है कि वह एक सार्वजनिक संस्था है जिसका संचालन पूर्णतः सदस्यों से चन्दे से किया जाता है। लीग का उद्देश्य लोगों को पुस्तकों का पूरा उपयोग करने और उनसे पूरा आनन्द प्राप्त करने में प्रोत्साहन देना है। वह पूरी तरह से अव्यापारिक संस्था है और कोई नफ़ा नहीं कमाती।

लीग का पहला सिद्धान्त यह है कि सब प्रकार की अच्छी किताबें मौजूद हैं, और दूसरा यह है कि कोई विषय ऐसा नहीं जिस पर अच्छी किताब न हो। मिसाल के तौर पर यह हमारा काम है कि हम बच्चों को अंग्रेज़ी साहित्य की अमर पुस्तकों का पता लगाने में सहायता दें, पर इसी तरह से हमारा यह भी काम है कि हम उन्हें फुटबाल पर एक अच्छी किताब से परिचित करायें। वर्ष में एक बार नेशनल बुक लीग पुस्तकों का चुनाव करने वालों को ब्रिटेन में सबसे अच्छी छपी १०० पुस्तकें चुनने को कहती है और हर तीसरे साल वह इन्हें अन्य देशों की सर्वोत्तम पुस्तकों के साथ प्रदर्शित करती हैं। लीग पुस्तकों के डिज़ाइनों की जिस अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी का आयोजन करती है उससे ब्रिटेन में पुस्तक उत्पादन के स्तर को ऊँचा उठाने में निश्चय ही बहुत सहायता मिली है। पर लीग का यह उद्देश्य नहीं कि सभी पुस्तकें एक सी सुन्दर हों। हर पुस्तक की अपनी उपयोगिता है। जहां वह गूढ़ ज्ञान के किसी विषय पर रचना करने वाले विद्वान की सहायता करना चाहती है वहाँ उसे इस बात से भी दिलचस्पी है कि कारखाने मज़दूर को उसके काम से सम्बन्ध रखने वाली पुस्तकों से परिचित प्राप्त करने में मदद की जाए जिससे उसकी अपने कार्य में और अपनी क्षमता बढ़ाने में दिलचस्पी बढ़े।

लीग की स्थापना को अब तीस वर्ष से अधिक समय बीत चुका है। यह १९२४ में नेशनल बुक कौंसिल के नाम से संगठित की गई थी। इसकी स्थापना का कारण सोसाइटी आफ़ बुक मैन (पुस्तक व्यवसाय संस्था) के सदस्य का यह विचार था कि एक ऐसी संस्था होनी चाहिए जो 'जनता के सभी वर्गों में पुस्तकों के प्रति अधिक व्यापक रुचि उत्पन्न करे और अच्छी बुरी पुस्तकों की ज़्यादा पहचान पैदा करें। जैसे जैसे यह संस्था विकसित होती गई कई और सुविधाएं जो अब लीग के सामान्य कार्य का भाग बन चुकी हैं—इसमें शामिल की गईं और बढ़ाई गईं।

लीग ने शिक्षा समितियों की संस्था के सहयोग से स्कूलों की पुस्तकों से सम्बद्ध अलाऊंसों के बारे में अनुसन्धान किया है। उसने व्यापार बोर्ड की प्रार्थना पर उद्योग धन्धों में पुस्तकालयों के विषय पर हड़ताल की है। उसने परिषद् भवनों में पुस्तकों के लिए स्थान की व्यवस्था की जांच की है। लीग ने स्कूलों, सार्वजनिक पुस्तकालयों, सिनेमा घरों के बाहरी कक्षों, ग्रामों के सभा भवनों और मज़दूर संगठन सम्मेलनों तथा स्वयं अपनी इमारत में प्रचलित पुस्तकों के सम्बन्ध में सारा कार्य नेशनल बुक लीग में किया था। उसने देश और विदेश में दुर्लभ पुस्तकों की प्रदर्शनियां भी आयोजित की हैं।

अब तक लीग कई सौ पुस्तक सूचियां आदि छाप चुकी है। उसने कई दिशाओं में अपने कार्य का विस्तार किया है और अब भी कर रही है। 'एजूकेशन बुक गाईड' (शिक्षा पुस्तक दिग्दर्शन) का पहला संस्करण छप चुका है। इसमें स्कूलों के उपयोग के लिए १९५४-५५ में छपी सारी पुस्तकों की टिप्पणियों सहित सूची दी गई है। इसके अतिरिक्त विशषज्ञों की छोटी छोटी समितियां चुने हुए विषयों की सूचियां बना रही हैं जिनका उद्देश्य बच्चों और उनका मार्गदर्शन करने वालों की सहायता करना है। एक चलती फिरती प्रदर्शनी का आयोजन किया गया है जिसमें स्कूल पुस्तकालयों में रखी जाने योग्य तीन-चार हज़ार पुस्तकें प्रदर्शित करने की व्यवस्था है। इस प्रदर्शनी का स्थानीय अधिकारी जब चाहें उपयोग कर सकते हैं।

लोग ने साक्षरता की समस्या के बारे में कार्रवाई की है। उसने बोर्स्टल संस्थानों की एक प्रदर्शनी की है और इस समय सेना के लिए इस तरह की प्रदर्शनी का आयोजन कर रही है।

इन सब कार्यों और इनके अतिरिक्त लीग की पत्रिका 'बुक्स' उसके मुद्रण विभाग और उसके द्वारा लन्दन तया देश के अन्य स्थानों में आयोजित किये जाने वाले भाषणों और गोष्ठियों से उसकी इस दृढ़ धारणा का पता चलता है कि उसे पुस्तक सम्बन्धी समस्याओं का सामना करने वाले सभी लोगों को जानकारी, शिक्षा और सहायता में योग देना है। साथ ही उसे उन लोगों के जागरण में सहायता देनी है जिन्होंने अपने जीवन में पुस्तकों के महत्व को अभी नहीं समझा है। यह बात उल्लेखनीय है कि नेशनल बुक लीग ने प्रायः सबसे पहले अपना जो विभाग स्थापित किया वह पुस्तक सूचना का कार्यालय था। क्योंकि लीग के कार्य में सूचना का सबसे अधिक महत्व है। इसके पश्चात् पुस्तकों से सम्बद्ध पुस्तकों का पुस्तकालय खोला गया जिसमें अब पांच हज़ार किताबें हैं। यह सूचना कार्यालय और पुस्तकालय, एक एकाश के रूप में कार्य करते हुए, हर वर्ष सदस्यों की ओर से आये ३०-४० हज़ार प्रश्नों का उत्तर देते हैं, जो किसी पुस्तक के प्रकाशन की तारीख, प्रकाशक और लेखक से लेकर किसी संदर्भ के मूल स्रोत तक के बारे में होते हैं। इसके अतिरिक्त वे पुस्तकों की विस्तृत सूचियां बनाते हैं, जिनमें से बहुत सी सूचियों के आधार पर लीग और अन्य संस्थाओं द्वारा पुस्तक सूचियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

स्पष्ट है कि लीग नये पाठक बनाने की आवश्यकता को अनुभव करती है और इसलिए उसका बहुत सा कार्य नए पाठकों के सबसे बड़े स्रोत-बच्चों पर केन्द्रित रहता है। वह बाल पाठकों की रुचि पुस्तकों में लगातार बनाये रखने

के लिए माता-पिताओं और अध्यापकों के साथ मिल कर काम करती है। इस प्रकार वह उठती हुई पीढ़ी को "कॉमिक" पुस्तकों के आदी और हर अच्छे बुरे टैलीविज़न प्रोग्राम के शौक़ीन बनने से बचाने में सहायता देती हैं।

लेकिन इस सबके बावूजूद नेशनल बुक लीग सार्वजनिक मनोरंजन के विभिन्न आधुनिक साधनों के प्रति उदासीन नहीं है। उसका विश्वास है कि रेडियो और टैलीविज़न से पुस्तकों का भविष्य समाप्त हो जाना ज़रूरी नहीं है बल्कि ये साधन सब प्रकार की अच्छी पुस्तकी में दिलचस्पी पैदा करने में सहायक हो सकते हैं। उसने पुस्तकों के सम्बन्ध में रेडियो और टैलीविज़न के सफल कार्य-क्रम आयोजित किये हैं और उनमें स्वयं भी भाग लिया है।

लीग इस ओर अन्य दिशाओं में दूसरों को शिक्षा देने में किसी तरह की शर्म महसूस नहीं करती, जब तक कि वह शिक्षा के साथ साथ व्यावहारिक सहायता भी दे सके। मिसाल के तौर पर १९५५ में लीग ने देश के हर स्कूल और शिक्षा अधिकारी संस्था को "बूक्स इन युअर स्कूल" नाम की एक पुस्तिका भेज़ी। यह देश में बहुत सी पाठ्य पुस्तकों की ख़राबियों और स्कूल पुस्तकालयों से सम्बद्ध सुविधाओं की कमी के विरुद्ध जनमत तैयार करने के आन्दोलन का पहला क़दम था। पर यह केवल प्रचार पुस्तिका ही नहीं थी, प्रचार से अधिक इसका उद्देश्य अध्यापकों का अपने स्कूलों की पुस्तक सम्बन्धी नीतियों का निर्धा-रण करने में मार्गदर्शन करना था।

पुस्तकों से सम्बन्ध रखने वाला हर काम हमारा काम है। हमें देखना है कि पुस्तकों का क्या उपयोग किया जा सकता है।

किसी केन्द्रीय सूचना संस्था के सम्भावित कार्य का एक अन्य पहलू: किसी भी देश में ऐसे कई लोग या समूह होते हैं जिन्हें किसी एक पुस्तक से दिलचस्पी हो। प्रकाशक उन सब तक नहीं पहुँच पाते और न ऐसा करना उनके बस की बात है। एक केन्द्रीय संस्था जिसे नफ़ा कमाने से दिलचस्पी न हो, और विशेषकर जो अन्य केन्द्रीय तथा स्थानीय संस्थाओं से निकट सम्पर्क रखती हो प्रचार के लिए उपयुक्त सूचियां बनाने और रखने का काम संभाल सकती है पुस्तकों के बारे में सूचना देने वाली सामग्री के प्रकाशन का आयोजन कर सकती है, उपयुक्त स्थानों पर प्रदर्शनियों का प्रबन्ध कर सकती है और प्रकाशक-प्रका-शक, प्रकाशक-अधिकारी तथा प्रकाशक-अधिकारी-ज़नता के बीच सूचना के आदान प्रदान की व्यवस्था कर सकती है।

भाग २

साहित्य-कार्यालय

अध्याय ५

साहित्य कार्यालय का संगठन और प्रबन्ध

ब्रूस राबर्ट्स, दक्षिण प्रशान्त आयोग

(जो सरकार एक केन्द्रीय संस्था बनाना चाहे, उसके लिए यह लेख विशेष रूप से उपयोगी होगा। इसमें साहित्य कार्यालय के ढांचे और कर्मचारी संगठन से लेकर कार्यालय द्वारा प्रकाशित सामग्री के परिव्यय निर्धारण और वितरण तक सभी मामलों की व्यापक रूप से विवेचना की गई है। यह सारा विवरण तैयार करते समय लेखक ने मध्य अफ्रीका और दक्षिण प्रशान्त प्रदेश में अपने अनुभव का पूरा उपयोग किया है। पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय की भी चर्चा की गई है।)

भूमिका

फरवरी १९५४ में संयुक्त राष्ट्र की शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति संस्था ने "एजुकेशन एब्स्ट्रेक्ट्स" का एक पूरा अंक साहित्य कार्यालयों और प्रकाशन केन्द्रों के विषय पर छापा। इसमें कहा गया है : "साक्षरता आन्दोलनों के बारे में बहुत कुछ लिखा जाता है और उनके लिए बहुत सी सामग्री तैयार की जाती है। पर जब कोई साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई के लिए सामग्री तैयार करने के प्रबन्धों के बारे में जांच करना चाहे, तो उसे यह अनुभव होता है कि मुद्रित रूप में विश्वस्त और ठीक सूचना कितनी कम उपलब्ध है। क्या पढ़ना चाहिए और क्यों पढ़ना चाहिए, इन विषयों पर बहस अपने में बेशक महत्वपूर्ण है, पर इससे पठन सामग्री की तैयारी के प्रबन्धों के विषय पर कोई खास जानकारी नहीं मिलती। आवश्यक प्रश्न ये हैं :

किस ढंग का संगठन इस काम के लिए सबसे ज़्यादा उपयोगी होगा? परिव्यय व्यवस्था क्या हो? भाषा, लेखक, प्रकाशक, वितरण, इनके बारे में कठिनाइयों को दूर करने के सब से अच्छे उपाय क्या हैं?

प्रस्तुत अध्ययन में इन प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न किया गया है।

प्रस्तुत लेख का पाठक यह देखेगा, बहुत बार इस बात की चर्चा की गई है कि किसी साहित्य कार्यालय का संगठन और कार्यप्रणाली उसके प्रदेश की आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुकूल होनी चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि बहुत से साहित्य केन्द्रों के काम का अध्ययन करने से उद्देश्यों तथा कार्यक्षेत्र के बारे में बहुत हद तक सहमति दिखाई पड़ती है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जो विभिन्न तरीके अपनाये गए हैं, वे ज़रूर ही एक दूसरे से अच्छे या बुरे नही हैं। बहुत हद तक प्रश्न यह है कि किसी प्रदेश की वास्तविक परिस्थितियों को देखते हुए कौन से तरीक़े सबसे ज्यादा कारगर हैं? किन को दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपनाया जाए और विकसित किया जाये और किन्हें केवल थोड़े समय के लिए उपयोगी समझा जाये? यह अध्ययन इसलिए बहुत से साहित्य कार्यालयों और प्रकाशन केन्द्रों के काम और तरीक़ों का सुसंगठित विवरण प्रस्तुत करता है। इसमें इस बात का प्रयत्न किया गया है कि अलग-अलग तरीकों को सम्बद्ध परिस्थितियों को सामने रख कर आँका जाये और ऐसी शक्ल में पेश किया जाये कि पाठक स्वयं अपने क्षेत्र की परिस्थितियों में उनकी उपयोगिता का अन्दाज़ा लगा सकें।

लागत भी चाहे वह पूंजी के रूप में एक बार होने वाली (अनावर्तक) हो या लगातार होने वाली (आवर्तक) अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग होती है। लेखक का यह अनुभव है कि एक प्रदेश में ख़र्च के आंकड़ों का दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसलिये इस अध्ययन में वर्गीकृत व्यय और कर्मचारी संगठन दोनों पहलुओं से साहित्य कार्यालय की आवश्यकताओं को ऐसे रूप में रखा गया है कि पाठक अपने प्रदेश के लिए आरम्भिक आवश्यकताओं का आप अन्दाज़ा लगा सकें और स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार उनके ख़र्च का हिसाब कर सकें।

साहित्य कार्यालय क्यों ?

जिन प्रदेशों में साहित्य की आम कमी है, वहाँ इस समस्या का आसान हल क्या केवल यही नहीं है कि सरकार इस काम के लिए काफ़ी रुपये की स्वीकृति दे दे? क्यों न सरकार के विभिन्न विभागों के लिए रुपया निर्धारित कर दिया जाये और उन्हें पाठ्य पुस्तकें और अन्य आवश्यक सामग्री तैयार करने दी जाये, और शेष विषयों पर पुस्तक उत्पादन का काम व्यापारिक क्षेत्र में होता रहे? यदि ऐसा हो तो फिर साहित्य कार्यालय की ज़रूरत क्या है?

इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए कई बातों को सामने रखना होगा। पहली

बात यह है कि एक प्रगतिशील जन समाज की साहित्यिक आवश्यकताएं केवल कुछ लगी बंधी पाठ्य पुस्तकों या प्रशिक्षण की पुस्तकों तक ही सीमित नहीं की जा सकतीं। दूसरे कई प्रकार का ऐसा साहित्य है, जो लोगों को उपलब्ध होना चाहिए, पर जो सरकारी विभागों के सामान्य कार्यक्षेत्र में नहीं आता। फिर, साहित्य की साधारण से साधारण रचना की तैयारी, प्रकाशन और वितरण के लिए बहुत से लोगों को अलग-अलग तरह का काम करना पड़ता है, और उनमें से कुछ ही किसी एक विभाग से सम्बद्ध हो सकते है, सारे नहीं। बहुत से सरकारी विभागों के एक जैसा और दुहरा काम करने से खर्च भी बढ़ता है और कार्यकुशलता में भी कमी आती है।

इस सारे काम के लिए एक विशेष संस्था की जरुरत है, जिसके पास सभी आवश्यक सामान और संगठन हो और साहित्य कार्यालय वही संस्था है।

निरक्षरता की समस्या अपने में अलग नहीं

निरक्षरता, साहित्य का अभाव और किसी प्रदेश की आर्थिक उन्नति का सामान्य स्तर, तीनों एक दूसरे से सम्बद्ध हैं, अपने आप में अलग नहीं हैं। जैसा कि संयुक्त राष्ट्र की शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति संस्था के उपरोक्त प्रकाशन में कहा गया है : "जिस देश में शिक्षा और प्रकाशन का विकास साथ-साथ होता है, ऐसी गति से कि दोनों एक दूसरे पर अपना प्रभाव डाल सकें, वहाँ पठन सामग्री की समस्या कम ही सामने आ सकती है। यह अपने तीव्र रूप में उन्हीं प्रदेश में पेश आती है जहाँ भाषा की कठिनाइयों के साथ-साथ प्रकाशन का भी अभाव होता है और इस प्रकार छोटे-बड़े सब के लिए पठन सामग्री नहीं मिलती।

जिन देशों में शिक्षा और प्रकाशन का विकास साथ-साथ हुआ है, वहां साहित्य सम्बन्धी अधिकतर आवश्यकताएं मांग और उपलब्धि के सामान्य नियम के अनुसार व्यापारिक संस्थाओं द्वारा पूरी हो जाती हैं। वहां प्रकाशन का काम सरकार द्वारा नहीं किया जाता, केवल कभी-कभी, कुछ चुने हुए कार्यों के लिए और अप्रत्यक्ष रूप से सरकार इसमें सहायता देती है। व्यावसायिक प्रकाशकों में लोगों की साहित्यिक रुचियों और आवश्यकताओं को जांचने और इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामग्री उपलब्ध करने के कामों में आपसी होड़ चलती है। बिक्री ही सदा उनकी कसौटी रहती है, यद्यपि यह कसौटी कभी-कभी बहुत कड़ी सिद्ध होती है। लेकिन इन तरीक़ों से काफ़ी पठन सामग्री की व्यवस्था तभी सफलतापूर्वक और सन्तोषजनक रूप से की जा सकती है, जब काफ़ी संख्या में लोग पढ़ने के इच्छुक और योग्य हों, उनके पास यह सामग्री ख़री-

दने के साधन हों और इसके वितरण और बिक्री के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध हों।

साहित्य कार्यालय का उद्देश्य

कम उन्नत प्रदेशों में उपरोक्त सभी चीज़ें नहीं होतीं या अभी उनका विकास आरम्भिक रूप में ही हुआ होता है। ऐसे प्रदेशों में साहित्यिक सामग्री का अभाव केवल लेखकों के न होने या छापे की मशीनों की कमी जैसे सीधे कारणों से ही नहीं होता। अगर पक्का इरादा और क़ाफ़ी रुपया हो, तो इस तरह के प्रत्यक्ष कारणों से उत्पन्न अस्थायी अभाव या किसी विशेष प्रकार के साहित्य की कमी को काफ़ी आसानी के साथ और जल्दी दूर किया जा सकता है। पर अगर हम और आगे दृष्टि डालें—जहां सच्चे अर्थों में प्रकाशन सम्भव होता है, जहां प्रकाशक और पाठक एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं और साथ-साथ अपना विकास करते हैं, जहां सार्वजनिक कोष में से सहायता लेने की आवश्यकता लगातार कम की जा सकती है और वास्तविक स्थानीय साहित्य का फूलना-फलना शुरू हो सकता है। अतएव हमें साहित्य की कमी के सीधे और प्रत्यक्ष कारणों के साथ-साथ भूल और अप्रत्यक्ष कारणों को भी दूर करने के लिए कटिबद्ध होना पड़ेगा। इन सब बातों को देखते हुए साहित्य कार्यालय को कुछ विशेष प्रकार के साहित्य की उपलब्धि का संकुचित उद्देश्य ही नहीं अपनाना है, बल्कि और आगे बढ़ना है। जो भी तरीक़े अपनाये जाएं उन सब सम्बद्ध उद्देश्यों की भी पूर्ति होनी चाहिए जिनसे एक स्वतन्त्र और स्वावलम्बी साहित्य की रचना सम्भव होती है।

(यही वह पहलू है जिसे सामने रखकर किसी साहित्य कार्यालय के कार्यक्षेत्र, संगठन और तरीक़ों को निर्धारित किया जा सकता है और जो उसके काम को साहित्यिक आवश्यकताओं की पूर्ति के पहले के तरीकों से भिन्न बनता है।)

वर्तमान साहित्य व्यवस्था की विशेषताएं

जिन प्रदेशों में शिक्षा और प्रकाशन (तथा इनसे सम्बद्ध कलाएं और व्यवसाय) साथ-साथ विकसित हुए हैं, वहां वास्तव में साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, या कम से कम उसकी उपलब्धि के बारे में कोई ऐसी समस्या नहीं है जो काफ़ी आसानी के साथ और जल्द हल न हो सके। इसलिए ऐसे प्रदेशों की साहित्य व्यवस्था की विशेषताओं को अध्ययन करके साहित्य उपलब्धि के कुछ दीर्घकालीन उद्देश्यों का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। कुछ विशेषताएं ये हैं—

साहित्य बहुत बड़ी मात्रा में उपलब्ध है और विषय की विविधता और पूर्णता की दृष्टि से हर आयु के सभी पाठकों की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।

बदलती हुई आवश्यकताओं, रुचियों और आविष्कारों के अनुरूप और समय की धारा के अनुकूल साहित्य उपलब्ध रहता है।

दुकानों और पुस्तकालयों के माध्यम से सभी तरह के लोगों तक काफ़ी आसानी से पहुँच सकता है।

मांग और उपलब्धि के सामान्य आधार पर साहित्य मिलता रहता है और व्यक्तिगत या सामूहिक क्रम से इसके लिए धन प्राप्त होता है। प्रोत्साहन निर्देशन और वित्तीय सहायता के सम्बन्ध में सरकार का योग अप्रत्यक्ष होता है, कुछ विशेष क्षेत्रों और हालतों तक सीमायें चुनने की पूरी स्वतन्त्रता रहती है और अपनी मर्ज़ी का साहित्य प्राप्त करने का पूरा अवसर मिलता है।

नीति निर्धारण के आधारभूत तत्व

इन उद्देश्यों की कहाँ तक पूर्ति हो सकती है, वह बात अन्ततः किसी समाज की समृद्धि और सामान्य आर्थिक विकास पर निर्भर करती है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या (या उस प्रदेश के विभिन्न भाषाई वर्गों की जनसंख्या) और भौगोलिक तथा यातायात से सम्बद्ध अन्य परिस्थितियों का भी इस पर असर पड़ता है। अगर साहित्य कार्यालय जैसी कोई संस्था ख़र्च की परवाह किए बिना इन सब दीर्घकालीन उद्देश्यों को तुरन्त प्राप्त करना चाहे, तो यह वास्तविकता की ओर से आँखें मूँदना होगा। उसके दीर्घकालीन कार्यक्रम के भीतर ही कई अल्पकालीन उद्देश्य होंगे, जिनका उसके प्रदेश की विशेष स्थिति से सम्बन्ध होगा, और जिन्हें तुरन्त और सबसे पहले प्राप्त करने के लिए कार्रवाई करनी होगी। किसी साहित्य कार्यालय के काम के तरीक़ों का सार यह है, साहित्य उपलब्धि का कोई कार्यक्रम विकसित करते समय और उसे पूरा करने के उपाय अपनाने में सम्पादन, प्रकाशन तथा वितरण, काम के हर दौरे में, विभिन्न प्रकार के निर्णय होना सम्भव है। जब भी हो सके, विभिन्न सम्भव उपायों में से उन्हीं को चुना जाता है जिनसे पिछले पैरे में वर्णित परिस्थिति पैदा करने के लिए प्रयत्न बराबर जारी रहें।

इसके सिवा अन्य कोई नीति अपनाये जाने योग्य नहीं जान पड़ती ! क्योंकि या तो यह हो सकता है कि सरकार सदा के लिए अपने आपको एक विकासशील समाज की आवश्यकता के अनुरूप साहित्य के लिए, जिसका क्षेत्र बराबर बढ़ता रहता है, ज़िम्मेदारी बनाये-और यह नीति अवांछनीय भी है और

अव्यावहारिक भी—या फिर वह अपनी जिम्मेदारी अपने समाज सेवा विभागों की विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने तक सीमित कर दे। यह दूसरी नीति न केवल इस मूल समस्या को (साहित्य उपलब्धि क्यों बढ़ती हुई जरूरतों के अनुरूप नहीं है) अछूता छोड़ देतों है बल्कि उल्टे इससे इसके समाधान में बाधा पड़ सकती है।

साहित्य व्यवस्था के इन दीर्घकालीन उद्देश्यों पर बल देना आवश्यक है, क्योंकि तेज़ी से विकास करते हुए देशों में समाज सेवा विभागों द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि आदि विशेष तात्कालिक आवश्यकताओं पर अधिक बल दिये जाने के कारण ये उद्देश्य अक्सर आँखों से ओझल हो जाते हैं। एक मिसाल लीजिए, विकासोन्मुख प्रदेशों में साहित्य उपलब्धि की बहुत समय से असन्तोषजनक व्यवस्था होने के कई मुख्य और गौण कारण हैं। इन कारणों का कुल मिला कर असर यह पड़ता है कि माँग और उपलब्धि का सिलसिला अपना काम नहीं कर सकता, और केवल इसी सिलसिले के चलते रहने से प्रकाशन और शिक्षा एक दूसरे पर अपना प्रभाव डाल सकते हैं तथा परिणाम-स्वरूप साहित्य सामग्री की पर्याप्त व्वयस्था हो सकती है। होता यह है कि इन प्रदेशों में शुरू-शुरू में तात्कालिक आवश्यकताओं में सबसे बड़ी आवश्यकता "सरकारी साहित्य" (जैसे कि स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों और दूसरी सूचना तथा प्रशिक्षण सामग्री) के प्रकाशन और उपलब्धि की रहती है। इस ज़रूरत के लिए बहुत हद तक सार्वजनिक कोष में से रुपया खर्च करना होता है। पर अगर इस सारी सामग्री की तैयारी, प्रकाशन और वितरण पूरी तरह से सरकारी संस्थाओं के कार्यक्षेत्र में रहे और दीर्घकालीन उद्देश्यों की, जिनकी ऊपर व्याख्या की जा चुकी है, उपेक्षा की जाये तो इसका मतलब यह होगा कि हम उन परिस्थितियों के विकसित होने में, एक और अनुचित बाधा डाल रहे हैं, जिन में माँग और उपलब्धि का आम सिलसिला चल सकता है।

वितरण

वितरण के महत्वपूर्ण मामले के बारे में भी स्थिति वैसी ही है। वितरण की समुचित व्यवस्था के बिना साहित्य उपलब्धि का कोई सन्तोषजनक प्रबन्ध होना असंभव है। जैसे कि पहले कहा जा चुका है, विकासोन्मुख प्रदेशों में प्राय: काफी समय तक स्कूलों की किताबें और सरकारी प्रशिक्षण पुस्तकें ही सबसे ज्यादा तैयार होती और छपती हैं। अगर स्कूलों की सारी किताबों का वितरण सरकारी तौर पर ही हो तो इसका मतलब यह हुआ कि साहित्य वितरण के व्यापार का सबसे बड़ा और नफे वाला हिस्सा हमने अपने पास रख लिया।

फिर दूसरे लोगों को साहित्य की बिक्री के लिए लगभग कोई प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। इस तरह हम एक सन्तोषजनक वितरण व्यवस्था के विकास में बाधक होंगे। जब तक सरकार सदा के लिए सभी प्रकार के साहित्य के प्रकाशन और वितरण का खर्च आप उठाने को तैयार न हो, पुस्तकों के उत्पादन और प्रकाशन की लागत के लिए तभी धन मिल सकता है जब लोग पुस्तकें आदि खरीदें। और इस तरह की क्रय व्यवस्था के लिए वितरण का सन्तोषजनक प्रबन्ध होना ज़रूरी है।

इस प्रकार, साहित्य कार्यालय को सरकारी मुद्रण-शाला का ही एक स्थायी व्यापक रूप नहीं समझा जाना चाहिए। यह सरकारी और व्यावसायिक प्रकाशन के बीच एक ऐसी कड़ी है, जो बहुत लम्बे समय तक तो रह सकती है, पर सदा नहीं।

साहित्य सामग्री की कमी की जांच

अपने काम के शुरू में ही साहित्य कार्यालय को इस बात की जाँच करनी होगी कि उसके प्रदेश में साहित्य सामग्री का तात्कालिक तोड़ा किस प्रकार है? और क्यों है? साथ ही उसे ऐसे उपाय खोजने होंगे कि जिनसे इस तोड़े को भी जल्दी से जल्दी दूर किया जा सके और दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी आगे कदम बढ़ाया जा सके।

काम कितने बड़े पैमाने पर किया जाये, किस क्रम से किया जाये और किस चीज़ को कितना महत्व दिया जाए, इन प्रश्नों का निर्णय हर प्रदेश में अलग तरह से होगा। और ऐसा होना स्वाभाविक ही है। हाँ, अगर हम विभिन्न समस्याओं और आवश्यकताओं का वर्गीकरण कर लें तो इससे साहित्य कार्यक्रमों के लिए योजनाएँ बनाने और इन्हें कार्यान्वित करने के लिए समुचित संगठन स्थापित करने में सहायता मिलेगी। काम आरम्भ करने के लिए निम्नलिखित वर्गीकरण उपयोगी रहेगा—

कमी कैसी है

पाठक के वर्ग के अनुसार—(क) वयस्क, साधारण। (ख) वयस्क विशेष वर्गों के, जैसे गांवों की नर्सें, पुलिस कर्मचारी, नगर में रहने वाले नौकरी पेशा लोग, सहकारी समितियों के सदस्य आदि। (ग) बच्चे, (घ) स्कूलों के विद्यार्थी, (ङ) घरों में पढ़ने वाले। (क) और (ख) वर्गों की आवश्यकताओं को (उनके स्त्री या पुरुष होने के आधार पर) और आगे भी बढ़ाया जा सकता है।

पढ़ने की योग्यता के आधार पर—(क) वयस्क शिक्षार्थी पाठक, अर्थात्

जो अभी शिक्षा पा रहे हैं। (ख) नये साक्षरता प्राप्त पाठक, अर्थात् जो थोड़े समय की शिक्षा का क्रम समाप्त कर चुके हैं और अब पढ़ सकते हैं, पर इतना धीरे-धीरे और कठिनाई के साथ कि इससे उन्हें कोई वास्तविक आनन्द या लाभ प्राप्त नहीं होता। इस वर्ग के लोगों के लिए काफी मात्रा में सरल और आकर्षक साहित्य की आवश्यकता है, ताकि उन्हें पढ़ते रहने और अपनी पठन शक्ति स्थिर और विकसित करने में बढ़ावा मिले। यह अत्यावश्यक है कि उन्हें साहित्य आसानी से उपलब्ध हो सके, जिससे वे अपना अभ्यास जारी रखने के लिए प्रोत्साहित हों। (ग) पाठक साक्षर, अर्थात् वे लोग जिनकी पठन शक्ति स्थिर हो चुकी है और जिनका भविष्य में पढ़ाई से आनन्द तथा लाभ प्राप्त करना पढ़ने की कठिनाई पर विजय पाने की बजाय अपनी दिलचस्पी के साहित्य की उपलब्धि पर अधिक निर्भर करता है। (घ) उच्च कुशलता प्राप्त साक्षर, अर्थात् वे लोग जो आसानी से और रवानी के साथ पढ़ सकते हैं और जिनकी शिक्षा का स्तर साधारण जनता से इतना ऊँचा है कि उनकी आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिये जाने की ज़रूरत है।

यह वर्गीकरण इतना वैज्ञानिक नहीं है जितना कि व्यावहारिक, क्योंकि इसमें बहुत बारीकी में जाने से साहित्य उपलब्धि की व्यवस्था करने का काम बहुत धीमा पड़ जाने की सम्भावना है। स्पष्ट है कि एक वर्ग दूसरे में जा मिलता है और जैसे-जैसे किसी प्रदेश का विकास होता है, उपरोक्त वर्ग अलोप होते जाते हैं।

सामग्री की दृष्टि से :— (अ) तकनीकी, सूचना तथा प्रशिक्षण की सामग्री, जिसकी स्वास्थ्य, कृषि, अर्थ आदि सरकारी विभागों के काम तथा समाज कल्याण कार्यों के लिए ज़रूरत पड़ती है, इसमें स्कूलों की पाठ्य पुस्तकें भी शामिल हैं। (ब) अपेक्षाकृत सामान्य साहित्य जो समाज के मनोरंजन व संस्कृति की दृष्टि से लिखा गया हो।

भाषा पर आधारित—उपरोक्त तीनों वर्गों के अन्तर्गत कुछ सामग्री को (क) पाठक की मातृभाषा (ख) प्रादेशिक भाषा तथा (ग) अंग्रेजी, फ्रांसीसी स्पेनिश जैसी किसी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा में प्रकाशित करने की आवश्यकता हो सकती है।

कमी के कारण

आसानी के लिए, साहित्य की कमी के कारणों को दो भागों में बाँटा जा सकता है : प्राथमिक और माध्यमिक। माध्यमिक कारण ज़्यादा सीधे हैं, इसलिए इन पर पहले विचार करना अधिक उपयुक्त रहेगा।

माध्यमिक—यह अपेक्षाकृत सरल और सीधी समस्याएं हैं, अगर धन और दृढ़ निश्चय हो तो सैद्धान्तिक रूप से इनका समाधान स्पष्ट है। पर जब तक प्राथमिक कारणों को दूर न किया जाये तब तक इन्हें स्थायी रूप से हल नहीं किया जा सकता। माध्यमिक कारण हैं (यह क्रम उनके महत्व के अनुसार नहीं है):

१—पहले से ही, साहित्य उपलब्धि की समस्या के बारे में योजनाबद्ध और समन्वित कार्रवाई न होना, जिससे बहुत से विभाग, संगठन और व्यक्ति उत्पादन का काम करने के लिए अपने अलग-अलग मार्ग पर चलें और अपर्याप्त साधनों के लिए होड़ करें। अकसर इस समस्या का सम्बन्ध धन की कमी से होता है।

२—सम्पादन, प्रकाशन तथा वितरण, इनमें से किसी या सभी क्षेत्रों में योग्य सरकारी कर्मचारियों और ग़ैर सरकारी व्यक्तियों का अभाव।

३—प्रकाशन और वितरण के लिए छापे की मशीनों, प्रकाशन व्यवसाय, पुस्तकों की दुकानों आदि भौतिक साधनों का काफ़ी न होना।

४—दोषरहित बढ़िया काम पर इतना बल देना कि ऐसा काम होना व्यावहारिक दृष्टि से असम्भव बन जाय। शुरू-शुरू में जब लोगों के लिए पढ़ने की आदत एक नई चीज़ होती है तो बहुत ज़्यादा महत्व साहित्य की 'मात्रा' और उसके आसानी से उपलब्ध होने का रहता है। निःसन्देह कोई भी भोंडी और भद्दी चीज़ नहीं चाहता, और न कोई ग़लत चीज़ों के प्रकाशन को पसन्द करता है। पर कठिनाई यह है कि जिन देशों में प्रकाशन की लम्बी परम्परा चली आ रही है उनके मुकाबले में निरक्षरता के अंधकार से निकलते हुए प्रदेशों की नई पाठक जनता की आवश्यकताओं और रूचियों के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। इसलिए जो भी साहित्य तैयार किया जाये उसे प्रस्तुत करने का ढंग ऐसा होना चाहिए जिससे वह ज़्यादा से ज़्यादा पाठकों तक पहुँच सके। अगर किसी एक पहलू से बढ़िया से बढ़िया चीज़ बनाने पर ज़रूरत से ज़्यादा ज़ोर दिया जाये और दूसरी आवश्यकताओं का ध्यान न किया जाये तो हमें अपनी समस्या को सुलझाने के लिए लगातार प्रकाशन की जो ज़रूरत है उसे पूरा करने में बाधा पड़ेगी और प्रकाशन का काम धीमा पड़ जाएगा। जैसे भी हो, हमें पठन सामग्री की तात्कालिक आवश्यकताओं और विभिन्न दृष्टियों से बढ़िया से बढ़िया सामग्री प्रकाशित करने के प्रयत्नों में व्यावहारिक सन्तुलन स्थापित करना होगा।

प्राथमिक—ये कारण ज़्यादा जटिल हैं, इन समस्याओं का समाधान

केवल साहित्य कार्यालय के काम पर ही नहीं बल्कि अन्य सरकारी विभागों, केन्द्रीय सरकारी नीति और प्रदेश के आम विकास पर भी निर्भर करता है। समाधान दीर्घकालीन भी हैं और अप्रत्यक्ष भी।

१. भाषा की समस्याएं—अगर किसी भाषा के बोलने वालों की संख्या काफ़ी हो तो उस भाषा में पर्याप्त मात्रा में पठन सामग्री की व्यवस्था करना मूल रूप में कठिन नहीं है। मिसाल के तौर पर कुछ अफ्रीकी तथा भारतीय भाषाओं को बोलने वालों की संख्या लाखों करोड़ों में है और वहां यद्यपि भाषा समस्या के कारण पिछले ज़माने में साहित्य की बहुत कमी रही है, तथापि अब यह इसका इतना बड़ा कारण नहीं रहा जितने इस खंड में बताये गए कुछ अन्य कारण हैं। जिन इलाक़ों में बहुत सी भाषाएं बोली जाती हैं (जैसे न्यूगिनी में जिसकी आबादी बीस लाख से कम है पर कई सौ भाषाएं हैं) या जहाँ एक भाषा है पर आबादी बहुत कम है (जैसे फ़िजी या समौआ) वहाँ हमारे सामने प्राथमिक कारण और मूल समस्याएं हैं। इनके समाधान के लिए या तो कई वर्षों का समय चाहिए या समान भाषा अथवा सहायक भाषा के उपयोग के बारे में केन्द्रीय सरकार के नीति सम्बन्धी निर्णयों की आवश्यकता है। साहित्य कार्यालय, समस्या के विशेष पहलुओं पर सरकार को सलाह तो दे सकता है, पर इस प्रकार के नीति सम्बन्धी निर्णय करना उसके कार्यक्षेत्र से बाहर है। कार्यालय का काम तो यह है कि ऐसे मामलों के बारे में सरकार द्वारा निर्धारित की गई नीति के अनुसार साहित्य उपलब्ध कराने के लिए संगठन बनाये और कार्यविधि का विकास करे।

भाषा समस्या का एक पहलू सही हिज्जों (वर्ण-विवृत्ति) का मामला है। किसी एक भाषा में सामान्य हिज्जों का होना बहुत उपयोगी है। पर सही और व्यावहारिक हिज्जों के बीच सन्तुलन स्थापित करने के बारे में वास्तविक मतभेद की गुंजाइश है। यहां भी मन चाहे फ़ैसले करना साहित्य कार्यालय का काम नहीं है। उसका काम विशेष पहलुओं पर सलाह देना है, अन्तिम निर्णय सरकार ही करेगी।

२. साक्षरता और शिक्षा का तीव्र विकास—जिन प्रदेशों में शिक्षा की सुविधाओं का बहुत अधिक विकास हो रहा है और साथ ही साक्षर लोगों की संख्या भी बहुत बढ़ रही है, वहाँ बदलते हुए और विकासशील समाज की आवश्यकताओं को सम्मुख रखना है। वहाँ साहित्य की कमी केवल इसलिए नहीं कि अस्थायी आवश्यकताओं को पूरा करने के भौतिक साधन नहीं है। बदलती हुई पृष्ठभूमि के कारण जो भी सामग्री छपती है वह बहुत जल्द पुरानी पड़ती जाती है और नई परिस्थितियों तथा बदलते हुए दृष्टिकोणों और गतिविधियों

के कारण उतनी ही जल्दी नई आवश्यकताएं उत्पन्न होती जाती हैं। उपयुक्त साहित्य की कमी का ये बदलती हुई परिस्थितियां स्वयं एक मुख्य कारण हैं। धन या साहित्य प्रकाशन के भौतिक साधनों को जुटाने से ही यह कमी पूरी नहीं होगी। यह तो तभी होगा जब सम्बद्ध संगठन अपनी कार्यविधि का आधार तीन से पांच वर्ष के आगे तक की ज़रूरतों को ध्यान में रख कर बनाया जाय।

३. **ग्राम आर्थिक विकास की कमी**—शायद साहित्य सामग्री की कमी का यह प्रमुख कारण है। इसका उल्लेख इस लेख की भूमिका में किया जा चुका है।

साहित्य कार्यालय का दृष्टिकोण

पिछले कुछ वर्षों में साहित्य कार्यालयों का जो रवैया बना हुआ है वह बहुत हद तक एक मूलभूत बात को अधिक अच्छी तरह अनुभव करने से विकसित हुआ है। वह बात यह है कि पठन सामग्री की आवश्वकता का अनुमान लगाने से प्रारम्भ कर सामग्री को पाठकों के हाथों में पहुँचाने तक के कार्य में अनेकों क्रियायें आवश्यक होती हैं। जिनमें बहुत से लोगों का तथा बहुत से तरीकों का योगदान होता है।

यही वजह है कि साहित्य कार्यालय स्वयं अपने साधनों से ही सभी कुछ करना चाहे तो उसे एक बहुत बड़े संगठन और बहुत अधिक धन की ज़रूरत होगी। फिर इस सबसे उत्पन्न कठिनाइयों और समस्याओं का भी उसे सामना करना होगा। इससे भी अधिक खराबी की बात यह है कि उसके कार्य का क्षेत्र बड़ा और व्यापक होने के कारण अनेक महत्वपूर्ण तथा अछूते स्थानीय स्रोतों का योगदान रुक जायेगा और धीरे-धीरे ख़त्म हो जायेगा, और ऐसा योगदान उसके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनिवार्य है। वे स्रोत हैं: प्रतिभाशाली लेखक, छोटा पर कुशल छापाख़ाना, सहानुभूति रखनेवाला प्रकाशक, ग्रामीण दुकानदार-पुस्तक विक्रेता, समस्या को समझने वाला अधिकारी, सुयोग्य अध्यापक, स्थानीय कलाकार और इन सबसे भी अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति विनम्र परंतु समझदार पाठक है, जिसके लिए यह सब कुछ किया जा रहा है। ये सब सच्चे स्थानीय साहित्य की धाराओं के स्रोत हैं, जो स्वयं अपने आप ही साहित्य धारा में नवीनता लाते रहते हैं। साहित्य कार्यालय का काम इन स्रोतों को खोजना और विकसित करना और इनका रास्ता साफ़ करना है। सारे सम्बद्ध लोगों को कार्यालय का कर्मचारी नहीं बनाया जा सकता, पर इनके बिना काम चलाने की कोशिश करने या आर्डर पर साहित्य बनाने वाले अधिकारियों का वर्ग स्थापित करने का मतलब असफलता को बुलावा देना होगा।[1]

---

१. इन पैरों में जो विचार व्यक्त किए गए हैं वे राष्ट्रमंडल प्रदेशों के अनुभव पर आधारित हैं।

पर साथ ही किसी साहित्य कार्यालय के लिए अपनी दृष्टि को बहुत ज़्यादा संकुचित बनाना भी ख़तरनाक है। हर सरकार महसूस करती है कि उसे तात्कालिक आवश्यकता की कुछ निश्चित प्रशिक्षण सामग्री की ज़रूरत है। टैक्नीकल सरकारी विभागों को सदा इस प्रकार की सामग्री की आवश्यकता रहती है, जैसे छोटे दर्जे के कर्मचारियों की सहायता या उन लोगों की मदद के लिए, जिनके साथ उन्हें हर रोज़ वास्ता पड़ता है, प्रकाशित सामग्री चाहिए। फिर स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों और साक्षरता आन्दोलन की सामग्री जुटाने की भी ज़रूरत है। इस अनुभव को देखते हुए कुछ सन्देह होता है कि बर्मा अनुवाद संगठन जैसी बड़ी संस्थाओं का बहुत देर तक बने रहना कहाँ तक उचित है, यद्यपि यह महसूस किया जाता है कि बर्मा की वर्तमान परिस्थितियों में शायद इस समय और कोई चारा नहीं है। समस्या तो सदा हमारे सामने रहती ही है। ये महत्वपूर्ण मामले हैं जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। पर यदि प्रशासनिक अथवा वित्तीय मजबूरियों के कारण साहित्य कार्यालय को केवल इन्हीं ज़रूरतों को पूरा करने पर सारा ध्यान लगाना पड़ता है तो फिर अधिक दीर्घकालीन और मूल समस्याओं अर्थात् साहित्य उपलब्धि व्यवस्था का ऐसा स्थायी आधार बनाना जिससे प्रगतिशील समाज की लगातार बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके, इन समस्याओं के बारे में किसी की ज़िम्मेदारी नहीं रहेगी, और ये आँखों से ओझल हो जायेंगी। और सच पूछिए तो इन्हीं समस्याओं का समाधान अनिवार्य है, नहीं तो सदा ऐसी हालत बनी रहेगी कि ज़रूरत के अनुसार काफ़ी मात्रा में विविध प्रकार का साहित्य आसानी से उपलब्ध नहीं होगा।

इस तरह, यद्यपि साहित्य के क्षेत्र में कार्यालय की सरगर्मियाँ बहुमुखी होनी चाहिएं, तथापि जो भी लोग या व्यवस्था काम कर रही हों, उसके साथ सहयोग करते हुए उसे अपनी कर्मचारी संख्या कम रखनी चाहिए। पर उसके कर्मचारी अपने काम के विशेषज्ञ होने चाहिएं। उसे इस भावना के साथ काम करना चाहिए कि जो कोई भी समुचित योगदान कर सके उसे प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया जाये, और इस प्रोत्साहन के साथ कुशल परामर्श और टैक्नीकल तथा वित्तीय सहायता भी शामिल हों, यह नहीं कि निर्देशन, लेखन और प्रकाशन सभी काम अपने आप करने की कोशिश की जाए। कार्यालय की कार्याविधि ऐसी होनी चाहिए जिसमें एक तरह से सरकारी उद्यम और ग़ैर-सरकारी उद्योग के बीच का रास्ता अपनाया गया हो।

साहित्य उत्पादन कार्य के तीन पड़ाव

जिस सामग्री का ऊपर वर्गीकरण किया गया है, उसको उपलब्ध कराने की समस्या पर विभिन्न तरीक़ों से काम हो सकता है। वे हैं : (क) ऐसी वर्तमान तथा नई सामग्री के बारे में सूचना की जांच और प्रसार जो शुरू में अन्य प्रदेशों के लिए तैयार की गई हो पर बिना रूप परिवर्तन के उपयोग में लाई जा सके, (ख) इस (क) में वर्णित—सामग्री का अनुवाद और रूपान्तर करना, (ग) नई सामग्री की रचना।

जहाँ तक (क) और (ख) का सम्बन्ध है, काम को मोटे तौर पर तीन खण्डों में विभाजित किया जा सकता है : (१) सम्पादकीय, इसमें संतोषजनक मुसव्विदा तथा आवश्यक चित्रों, चार्टों आदि की तैयारी तक का सारा काम शामिल है, (२) उत्पादन, इसमें मुद्रण से सम्बद्ध सभी कार्य आ जाते हैं, और (३) वितरण, इसके अन्तर्गत सामग्री को गोदामों में रखना, बिक्री के स्थानों को भेजना और परचून बिक्री आदि कार्य आते हैं।

लागत और उत्पादन कार्यक्रम

इन मामलों पर आगे ब्योरेवार विचार किया जाएगा। पर यह बात बड़े महत्व की है कि उत्पादन कार्य के तीनों पड़ाव एक दूसरे से बहुत हद तक सम्बद्ध हैं। तीनों जगह अलग अलग फैसले और तरीक़े होना सम्भव है। यह ज़रूरी है कि शुरू में इन तीनों पड़ावों को ध्यान में रखा जाए और ऐसी व्यवस्था की जाए कि जो निर्णय किए जायें और तरीक़े अपनाये जायें वे एक दूसरे से मेल खाते हों। ऐसा करने और अकस्मात कठिनाइयों से बचने का शायद सबसे अच्छा उपाय यह है कि तैयार सामग्री के ख़र्च के आधार पर सोचा जाए। उत्पादन कार्य के प्रत्येक दौर में हमें अपने आपसे जो प्रश्न करने चाहिएँ वे तब कुछ इस प्रकार होंगे :

(१) हमें यह तै करना चाहिए कि कोई पठन सामग्री किस वर्ग के लिए है। सामग्री दूसरों के भी काम आ सकती है, पर इसके द्वारा किसी एक निश्चित वर्ग की आवश्यकतायें पूरी करने की ज़रूर कोशिश की जानी चाहिए।

(२) फिर हमें अनुमान लगाना चाहिए कि इस वर्ग के कितने पाठक एक निश्चित काल में इस पुस्तक को खरीदना चाहेंगे, और वे इसका कितना मूल्य दे सकते हैं या देने को तैयार होंगे। ख़रीदने वाला कोई सरकारी विभाग भी हो सकता है, जन साधारण भी, और दोनों भी। अगर ख़रीदने वाला सरकारी विभाग है तो हमें यह विचार करना चाहिए कि संस्करण का कितना अंश

यह विभाग मुफ़्त बाँटना चाहेगा और इसका जनता में अनुमानित आम बिक्री पर क्या असर पड़ेगा।

(३) इस प्रकार यह अन्दाजा लगा सकते हैं कि अधिक से अधिक कितनी संख्या में पुस्तक को छापना व्यावहारिक दृष्टि से ठीक रहेगा, और उसका क्या मूल्य रखा जा सकता है। अव्यावहारिक रूप से लागत कम करने के लिए उसे बहुत बड़ी संख्या में छापना बेकार होगा।

(४) संख्या निर्धारित करने के पश्चात् हमें मुसव्विदे की जाँच करनी चाहिए और यह तै करना चाहिए कि छपाई आदि कैसी हो और किस तरह से की जाए, चित्र चार्ट आदि कितने हों, जिल्द कैसी हो इत्यादि। यह सब निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि लागत प्रकाशित सामग्री की निश्चित संख्या के आधार पर प्रस्तावित क़ीमत से बढ़ने न पाये, ऊपरी ख़र्च और वितरण के ख़र्च का भी ख़याल रखा जाए।

(५) तब अगर यह जान पड़े कि प्रस्तावित मूल्य के अन्दर यह सब हो सकता है तो हम आगे बढ़ सकते हैं। अगर नहीं तो हमें यह सोचना होगा कि (क) क्या हमें, कुछ कम बढ़िया क़िस्म की छपाई या काग़ज़ आदि से काम चलाना चाहिये, और चार्टों के चित्रों की संख्या घटा देनी चाहिए ? (ख) क्या हम प्रति पुस्तक ख़र्च कम करने के लिए ज़्यादा संस्करण छापने की जोखम उठा सकते हैं ? (ग) क्या हमें सम्बद्ध सरकारी विभाग से अनुदान लेना चाहिए या कार्यालय के अपने वित्तीय साधनों का उपयोग कर लागत से कम कीमत पर बेचना चाहिए ?

इस तरह से सोच-विचार करने की आदत डाल कर साहित्य कार्यालय अपने कार्यों और दृष्टिकोण में यथार्थवादी रह सकेगा। जब घाटे (या दूसरे शब्दों में अनुदान) की नौबत आ जाये (जो अक्सर आएगी) तो यह घाटा नियंत्रित और योजना के अनुसार होगा, भाग्यवश या अकस्मात नहीं।

वर्तमान सामग्री को रूप परिवर्तन के बिना उपयोग में लाना

ऐसी सामग्री के बारे में, जो शुरू में अन्य प्रदेशों के लिए तैयार की गई हो, पर रूप परिवर्तन के बिना उपयोग में लाई जा सके, सूचना की जाँच और प्रसार के काम की मात्रा और महत्व अधिकतर सम्बद्ध प्रदेश की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। ऐसी अधिकांश सामग्री पाठक की मातृभाषा में नहीं होगी। इसलिए इस प्रकार के काम का महत्व मुख्य रूप से ऐसे इलाक़ों में है जहां एक समाज भाषा अथवा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा की सुविधा आवश्यक या वांछनीय हैं।

इस समस्या का रूप अफ्रीका, भारत और इन्डोनेशिया के मुकाबले में प्रशान्त द्वीपों जैसे प्रदेशों में बहुत भिन्न होगा।

जिस सामग्री की आवश्यकता पड़ेगी वह मुख्य रूप से पाठक साक्षरों और उच्च कुशलता प्राप्त साक्षरों के काम की होगी।

समस्या यह है कि प्रदेश के उन्नत न होने के कारण बहुत कम लोगों को, चाहे वे शिक्षक और अध्यापक हों या पाठक, उपलब्ध सामग्री की जानकारी रखने का अवसर मिलता है और सामग्री की बिक्री इतनी कम है कि पुस्तक विक्रेता विधिध प्रकार का काफ़ी साहित्य दुकानों पर नहीं रख सकते। परन्तु साहित्य विकास के प्रारम्भिक तौर में इस प्रकार की सामग्री का उपलब्ध होना या इसके बारे में सूचना मिलते रहना बहुत महत्वपूर्ण है। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए साहित्य कार्यालय बहुत लाभकारी कार्य कर सकते हैं।

सामग्री के साधन

साधारणतः जो व्यक्ति साहित्य उपलब्धि व्यवस्था से सम्बन्ध रखता है वह आम तौर पर दूसरे प्रदेशों में ऐसा काम करने वाले लोगों से निजी सम्पर्क भी रखता है। उसे वहां उपलब्ध और प्रकाशित उपयोगी साहित्य के बारे में कुछ जानकारी ज़रूर रहेगी। इस निजी सम्पर्क तथा प्रकाशकों की भेजी हुई नमूने की प्रतियों से और कार्यालय के अपने कोष से सीधा ख़रीद कर यह सामग्री प्राप्त की जा सकती है। अगर किसी प्रदेश में विभिन्न व्यक्तियों और संगठनों की आवश्यकताओं में कोई समन्वय न हो, तो यह डर रहता है कि कहीं एक ही पुस्तक की बहुत ज़्यादा प्रतियाँ न ख़रीद ली जाएं, इससे बेवजह धन नष्ट होगा। साहित्य कार्यालय इस सम्बन्ध में बहुत लाभकारी सिद्ध हो सकता है। वह एक केन्द्रीय संगठन के रूप में सामग्री एक ही स्थान पर मंगा सकता है और फिर उसके बारे में प्रदेश की सम्बद्ध संस्थाओं और व्यक्तियों को सूचना भेज सकता है। ज़रूरत पड़ने पर वहीं से नमूने की प्रतियां भी भेजी जा सकती हैं। ऐसा करने के लिए विभिन्न तरीक़ों का उपयोग किया गया है।

१—कार्यालय एक विशेष पुस्तकालय स्थापित करता है, जहां कोई भी आकर उपलब्ध सामग्री की जांच कर सकता है। बड़े प्रदेशों में सहायक पुस्तकालय खोले जा सकते हैं, जैसे प्रादेशिक साहित्य समितियों के कार्यालयों में।

२—कार्यालय सामग्री के बारे में एक सूचना सेवा स्थापित करता है। लोग इसे किसी भी विषय पर उपलब्ध सामग्री के बारे में सूचना के लिए लिख सकते हैं और इसके द्वारा सलाह और नमूने की प्रतियां भेजी जा सकती हैं।

३—इस मामले से दिलचस्पी रखने वाले लोगों को समय-समय पर

कार्यालय गश्ती चिटिठ्यां भेजता है और स्थानीय पत्रिकाओं में छापने के लिए परिचय लेख तैयार कराता है।

४—जहां स्थानीय साहित्य समितियाँ सन्तोषजनक रूप से स्थापित हो चुकी हों, वहाँ कार्यालय जांच के लिए सामग्री भिजवाने की व्यवस्था करता है।

५—महत्वपूर्ण स्थानों—जैसे कि ग्रामीण पुस्तकालयों, प्रशिक्षण केन्द्रों, विशेषज्ञों और खास-खास सरकारी विभागों (स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि आदि) को जाँच, टिप्पणी, परख और परीक्षण के लिए सामग्री भेजी जाती है।

६—इस कार्य के दौरान कार्यालय न केवल मूल्यवान सूचना भेजता है बल्कि प्राप्त भी करता है। सामग्री की जांच करने के बाद विभिन्न लोग अपनी टिप्पणियां कार्यालय को भेजते हैं, और इस तरह वह सबके लिए उपलब्ध सूचना का एक अद्वितीय भंडार बन जाता है। कुछ कार्यालय सूचना प्राप्ति के लिए पुस्तकों की उपयोगिता के बारे में लेखों अथवा टिप्पणियों की प्रतियोगिताओं का आयोजन करते हैं।

अनुवाद तथा रूपान्तर

अनुवाद की समस्या के कई पहलू परस्पर विरोधी हैं। जहां किसी तरह के साहित्य की भारी कमी होती है वहां कभी-कभी लोग यह सोचते हैं कि पुराने साहित्य की बहुत सी सर्वमान्य पुस्तकों के अनुवाद किए जाने चाहिएं। कुछ दूसरे लोग नए और मौलिक स्थानीय साहित्य के विकास पर ज़ोर देते हैं।

पर मौलिक सहित्य की खोज और विकास में समय लगता है। इसलिए बहुत भारी तात्कालिक कमी होने पर अनुवाद का बहुत फायदा रहता है। जिन प्रदेशों में छोटे-छोटे भाषा खण्ड हों, वहाँ अनुवाद की बहुत काफ़ी ज़रूरत पड़ सकती है।

अनुवाद का काम कार्यालय अपने कर्मचारियों द्वारा भी करवा सकता है और बाहर के संगठनों के साथ सहयोग करके भी। अधिकतर साहित्य कार्यालय दोनों तरीक़ों से काम लेते हैं। इन तरीक़ों का उपयोग किस अनुपात से किया जाये, यह बात विभिन्न परिस्थितियों जैसे काम की मात्रा, कार्यालय के अमले की संख्या और बाहर से योग्य व्यक्तियों की सहायता प्राप्त करने की सम्भावनाओं आदि पर निर्भर करती है। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि कार्यालय का एक महत्वपूर्ण दीर्घकालीन उद्देश्य प्रदेश भर में साहित्य को प्रोत्साहन देने के लिए सभी प्रकार की सुविधाओं का विकास और प्रसार करना है, न कि एक बड़ा केन्द्रीय संगठन बनाना जो सब कुछ ख़ुद ही करे। अतः यह बात भी कुछ महत्व रखती है कि कार्यालय को किस प्रकार अनुवाद और रूपान्तर के लिए अपने अमले से काम लेना चाहिए।

अनुवादकों की खोज और प्रशिक्षण

अच्छे अनुवाद, जिसकी भाषा भी अच्छी हो और जो सही भी हो, और भद्दे शब्दानुवाद में बहुत अन्तर है। पहली प्रकार का अनुवाद आसान काम नहीं है, और इसके लिए काफ़ी अभ्यास और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। इसलिए कुछ पुस्तकों आदि के अनुवाद की व्यवस्था करने के अतिरिक्त साहित्य कार्यालय का एक महत्वपूर्ण कार्य अन्य लोगों को अनुवाद के काम का प्रशिक्षण देना भी है। इस तरह, अनुवाद का काम करने वाले तीन प्रकार के लोग कार्यालय के साथ सम्बद्ध हो सकते हैं :

(क) एक उच्च कुशलता प्राप्त, सुयोग्य और अनुभवी विशेषज्ञ, जिसे इस मामले के सभी पहलुओं की पूरी जानकारी हो, ऐसा व्यक्ति अनुवाद कार्य पर सर्वोपरि नियन्त्रण रखे।

(ख) कार्यालय के स्थायी कर्मचारी जिन पर सामान्य अनुवाद का दायित्व हो और जो मुख्य अधिकारी के सामान्य निर्देशन में काम करें।

(ग) कार्यालय से सम्बन्ध कुछ अन्य लोग जिन्हें थोड़े समय (मिसाल के तौर पर दो साल) के कांट्रेक्ट पर रखा जाए और जो अनुवाद की कला में प्रशिक्षण ग्रहण करें। इन में से कुछ लोग शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि आदि समाज सेवी विभागों की ओर से स्थायी रूप से आ सकते हैं और प्रशिक्षण पाने के बाद अपने विभागों के अनुवाद के काम में सहायता देने के लिए वापस जा सकते हैं।

ऐसे प्रबन्ध से बहुत मूल्यवान अनुभव प्राप्त किया जा सकता है। इससे अनुवाद की कुशलता और उससे सम्बद्ध समस्याओं को समझने की क्षमता कार्यालय से बाहर के क्षेत्रों में भी पहुँचेगी। इस व्यवस्था से एक स्थान पर काम करने वाले व्यक्ति प्रदेश की विभिन्न भाषाओं की जानकारी अपने साथ लाएंगे और उनके आपसी विचार विनिमय से विभिन्न समस्याओं को ज़्यादा अच्छी तरह समझने में बहुत आसानी होगी। फिर, प्रशिक्षण पाने वाले व्यक्तियों के चारों ओर कई तरह का जो और कार्य हो रहा होगा, उससे वे साहित्य उपलब्धि की समस्या को ज़्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे और उसमें अधिक दिलचस्पी लेने लगेंगे, इससे उनके अपनी पक्की जगहों पर या अपने इलाक़ों में वापस जाने पर साहित्य उपलब्धि कार्य को और प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार प्रशिक्षण पाये हुए लोग बाद में स्थानीय साहित्य समितियों के सचिवों के रूप में भी बहुत लाभकारी काम कर सकते हैं।

इस क़िस्म के संगठन से साहित्य कार्यालय अपने काम के लिए भी आवश्यक अनुवाद की व्यवस्था कर सकता है और अन्य सरकारी विभागों के लिए

भी एक प्रकार की केन्द्रीय सेवा की स्थापना कर सकता है। इस तरह की सेवा केवल ऐसी सामग्री का बड़े ध्यान के साथ अनुवाद करने के लिए होनी चाहिए जो काफ़ी हद तक महत्वपूर्ण भी हो और स्थायी भी। रोज़ की स्थायी सामग्री जैसे समाचार बुलेटिनों अथवा प्रचार पुस्तिकाओं आदि का अनुवाद सूचना विभाग या ऐसी अन्य संस्था के अधीन रहना चाहिए। यह दूसरी तरह का काम ऐसा है जिसे तेजी के साथ और ठीक समय पर पूरा करना पड़ता है। अगर कार्यालय यह काम अपने ऊपर ले ले तो फिर वह प्रशिक्षण और कठिन समस्याओं के समाधान की ओर काफ़ी ध्यान नहीं दे सकता।

कार्यालय अपने कर्मचारियों द्वारा अनुवाद की व्यवस्था करने के अतिरिक्त ऐसे लोगों के नामों की एक सूची भी तैयार कर सकता है जो काम के हिसाब से पारिश्रमिक लेकर अनुवाद करने को तैयार हों, और योग्य भी हों। इनमें कुछ कार्यालय से प्रशिक्षण पाये हुए लोग भी हो सकते हैं।

साहित्य समितियां

बड़े और ज़्यादा आबादी वाले प्रदेशों में प्रादेशिक साहित्य समितियां बहुत लाभकारी काम कर सकती हैं। वे इस बारे में सिफ़ारिश कर सकती हैं कि उनके इलाक़े में किस प्रकार की पुस्तकों आदि के अनुवाद की आवश्यकता है और उनका संतोषजनक अनुवाद भी करवा सकती हैं। वे छोटे पैमाने पर काम करती हैं लेकिन उनके काम का ढंग वैसा ही है जैसा साहित्य कार्यालय का।

कुछ कार्यालयों ने एक और व्यवस्था को बहुत उपयोगी पाया है। वह यह है कि कुछ प्रकार की सामग्री का अनुवाद अध्यापक की निगरानी में प्राथमिक स्कूलों की ऊपर की कक्षाओं और माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों से कराया जाता है। यह इन विद्यार्थियों के स्थानीय भाषा के सम्बन्ध में वर्ष या कक्षा के काम का एक भाग होता है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत जो विचार विनिमय, दिग्दर्शन तथा सामूहिक योगदान के अवसर मिलते हैं, उससे सबको बहुत लाभ होता है। प्रायः इस तरह से बहुत अच्छा अनुवाद भी हो जाता है और स्कूलों के प्रादेशिक भाषा सम्बन्धी कार्य को भी यथार्थ का रंग देने में सहायता मिलती है। इस काम के बदले में स्कूलों के कोष के लिए कुछ धन भी नवीनता ला सकता है।

अनुवाद का पारिश्रमिक

कार्यालय के अपने कर्मचारियों द्वारा किए गए अनुवाद का खर्च तो उनके वेतन के रूप में कार्यालय के लिए निश्चित राशि में से ही उठाया जाता है, पर अन्य तरीक़ों से कराये जाने वाले अनुवाद के लिए काम के हिसाब से पारिश्रमिक

दिया जा सकता है। आम तौर पर पारिश्रमिक देकर काम कराने के तरीक़े का बड़े पैमाने पर उपयोग करने से बहुत फ़ायदा रहता है। एक तो इससे कार्यालय का अमला बहुत बढ़ने नहीं पाता, और दूसरे ज़्यादा से ज़्यादा लोगों में साहित्य उपलब्धि के काम में दिलचस्पी पैदा की जा सकती है। जैसा कि आगे चलकर बताया जाएगा, यह पारिश्रमिक या तो इस आधार पर दिया जा सकता है कि इसे पुस्तक के प्रकाशन के खर्च में जोड़ लिया जाए और फिर उसी के हिसाब से उस पुस्तक की क़ीमत निश्चय की जाए (इस प्रकार अन्ततः पारिश्रमिक के रूप में दी गई रक़म वसूल हो जाएगी)। या फिर पारिश्रमिक का रुपया कार्यालय के खर्च के लिए स्वीकृत राशि की एक विशेष मद में से दिया जाए, और इसे प्रशासनिक खर्च समझा जाए (इस प्रकार यह रक़म पुस्तक के लिए अनुदान बन जाएगी)। पारिश्रमिक की दर का फ़ैसला इस बात पर निर्भर करता है, कैसी सामग्री का अनुवाद कराया जाता है, इस बारे में कोई पक्का नियम निर्धारित करना असम्भव है।

आम तौर पर अनुवाद का पारिश्रमिक लेखकों को दी जाने वाली सामान्य रायल्टी की दरों से कम ही होता है। मोटे तौर पर, पुस्तक के कुल उत्पादन व्यय का ढाई से दस प्रतिशत अनुवाद का पारिश्रमिक हो सकता है। सीधे प्रकाशन के लिए जो बढ़िया अनुवाद कराया जाये उसका पारिश्रमिक अधिक होना चाहिए और रूपान्तर करने के लिए शुरू में जो साधारण शब्दानुवाद कराया जाये उसके पारिश्रमिक की दर कम होगी। पारिश्रमिक निश्चित करते समय अनुवादक की योग्यता का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

रूपान्तर

रूपान्तर करने का काम लगभग सदा ही थोड़ा बहुत अनुवाद कार्य के साथ साथ चलता है। पुस्तकों का सन्तोषजनक रूपान्तर करवाने और इसके लिए पारिश्रमिक देने की सामान्य विधि बहुत हद तक वैसी ही होती है, जैसी अनुवाद के सम्बन्ध में ऊपर बताई गई है। कभी कार्यालय के भीतर ही रूपान्तर तैयार कराये जाते हैं और कभी बाहर से सहायता ली जाती है। पारिश्रमिक आम तौर पर काम के हिसाब से दिया जाता है और स्पष्ट है कि उसकी दर काम की मात्रा तथा कठिनाई पर निर्भर करेगी। मोटे तौर पर पुस्तक की परचून क़ीमत का ढाई से साढ़े सात प्रतिशत पारिश्रमिक हो सकता है।

नई सामग्री की रचना

नई सामग्री की समस्या पर निम्नलिखित ढंग से विचार किया जा सकता है :

सामग्री कैसी है—(क) सूचनात्मक, (ख) मनोरंजक (इस सबको मूल और पूरक सामग्री में विभाजित किया जा सकता है) इन शब्दों की पूरी व्याख्या आगे की गई है।

स्रोत, तैयार कराने के

(क) जो सामग्री सरकारी विभाग तैयार करवायें और उन्हीं के काम की हो।

(ख) जो सामग्री साहित्य समितियों, सहकारिता समितियों तथा कल्याण संस्थाओं जैसे अर्ध-सार्वजनिक अथवा ग़ैर-सरकारी संगठन तैयार करवायें।

(ग) अन्तर्क्षेत्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे कि बड़े प्रकाशकों, संयुक्त-राष्ट्र-शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति संस्था, अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य निकायों के सुझाव या प्रयास से तैयार कराई जाने वाली सामग्री।

(घ) साहित्य कार्यालय अपने प्रयत्नों से जो सामग्री तैयार कराये (इस में नीचे के पैरे के अन्तर्गत आने वाली सामग्री भी शामिल है।)

स्रोत तैयार करने के

(क) सरकारी विभागों में तैयार की जाने वाली सामग्री, (ख) जो सामग्री कार्यालय का अमला अपने आप या ऊपर के पैरे में (ख) के अन्तर्गत उल्लिखित संस्थाओं के आदेश पर तैयार करे, (ग) जो सामग्री बाहर के किसी लेखक से किसी सरकार के अनुरोध पर लिखवाई गई हो, (घ) स्थानीय लेखकों और अन्य बाहरी सूत्रों द्वारा भेजी गई पांडुलिपियां।

ऊपर के तीन पैरों में जिन तत्वों का उल्लेख किया गया है वे अनेक प्रकार से एक दूसरे के साथ इकट्ठे हो सकते हैं। अगर 'मूल साहित्य' और 'पूरक साहित्य' शब्दों की कुछ व्याख्या कर दी जाए तो विभिन्न कार्यविधियों को समझने में अधिक आसानी होगी।

मूल साहित्य

मूल साहित्य का अर्थ वह सामग्री है जो किसी प्रदेश के सामान्य प्रशासन तथा विकास के लिए अनिवार्य समझी जाती हो। स्कूलों तथा प्रशिक्षण तथा संस्थानों के लिए कम से कम जितनी पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता हो और सार्वजनिक तथा अर्ध-सार्वजनिक सेवाओं के कर्मचारियों के दिग्दर्शन के लिए जिन पुस्तिकाओं की ज़रूरत पड़ती हो, वह सब, तथा स्वास्थ्य, कृषि, वाणिज्य आदि महत्वपूर्ण मामलों पर वयस्कों के पढ़ने के लिए जो सामग्री छापी

जाती हो, कुछ हद तक वह भी मूल सामग्री के अन्तर्गत आती है। चूंकि ऐसी सामग्री अनिवार्य समझी जाती है जैसा कि इसकी परिभाषा से स्पष्ट है, इसलिए सम्भवतः इसकी प्राप्ति का खर्च सार्वजनिक कोष में से किया जाएगा, और इसके उद्देश्य और उपयोगिता को देखते हुए इसका अधिकांश प्रायः या तो मुफ्त बांटा जाएगा या लागत से कम दामों पर बेचा जाएगा। जो विभाग इसे तैयार करायेगा अकसर उसी के कर्मचारी इसे लिखेंगे या इसका सम्पादन करेंगे, कम से कम इस पर विभाग की स्वीकृति ज़रूर ली जाएगी। मूल साहित्य का कच्चा या पक्का मुसव्विदा सम्बद्ध निकाय के अनुरोध पर उपरोक्त किसी संस्था (देखिए स्रोत तैयार करने के) द्वारा तैयार किया जा सकता है, और इसकी तैयारी के हर दौर में कार्यालय के अनुभव और टैक्नीकल सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। फिर भी, चूंकि यह ज़रूरी है कि यह सामग्री तैयार करने वाले निकाय की, जहाँ तक सम्भव हो, कुछ निश्चित ज़रूरतों को पूरा कर सके, इसलिए मुसव्विदे की अन्तिम मन्जूरी उस निकाय को ही देनी है।

पूरक सामग्री

पूरक सामग्री से अभिप्राय विभिन्न प्रकार की वह सामग्री है, जो बहुत लाभकारी भी है और ज़रूरी भी, पर जिसके उत्पादन का खर्च कई कारणों से सार्वजनिक कोष में से किया जाना कठिन है। कुछ मिसालें लीजिए। अधिकतर देशों में सरकार यह व्यवस्था तो कर सकती है कि स्कूलों की पढ़ाई के लिए कम से कम जितनी पाठ्य पुस्तकें अनिवार्य हों वे एक न्यूनतम हद तक अवश्य उपलब्ध रहें, पर जो कोई भी शिक्षा के काम के साथ किसी तरह का वास्ता रखता है वह बहुत सी अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता की कल्पना कर सकता है। ऐसी सामग्री उपलब्ध होने से बहुत लाभ पहुँच सकता है, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु हम चाहे इसे कितना भी ज़रूरी और महत्वपूर्ण क्यों न समझें, यह कहना कठिन है कि इस प्रकार की चीज़ें पूरे सरकारी खर्च पर छप सकती हैं। और फिर, अपनी मर्जी की चीज़ प्राप्त करने के अवसर का मतलब यह भी है कि कुछ हद तक इस चीज़ की कीमत अदा करने की योग्यता और इच्छा भी हो। इसके अतिरिक्त, हो सकता है बहुत से स्कूलों में बहुत सा समय बच्चों को कोई समान भाषा या अन्तर्राष्ट्रीय भाषा सिखाने पर लगाया जाये, पर स्कूल की पढ़ाई खत्म करने के बाद यही बच्चे इन भाषाओं का ज्ञान बनाये रखने या विकसित करने के लिए किताबें कहां से लेंगे? शब्दकोष, मुहावरों आदि की पुस्तकें और सामान्य पठन सामग्री वयस्कों के लिए भी बड़ी उपयोगी हैं। हम यह कैसे कह सकते हैं कि क्या चीज़ मूल और अनिवार्य है और क्या केवल व्यक्तिगत

इच्छा या पसन्द पर आधारित है, या दूसरे शब्दों में पूरक है। स्वास्थ्य शिक्षा जैसे विषय पर अनेक प्रकार की सूचना अनेक तरीकों से दी जा सकती है। मलेरिया की रोक-थाम या पौष्टिकता जैसे एक ही विषय पर कई प्रकार की सामग्री प्रकाशित की जा सकती है। हम सीधे सादे शब्दों में आख्यान की शैली से सूचना दे सकते हैं, या चार्ट अथवा व्यंग्य-चित्र छाप सकते हैं, कथा या नाटक का ढंग भी अपनाया जा सकता है। कुछ परिस्थितियों में एक और कुछ में दूसरा तरीका अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है। जनता के विभिन्न वर्गों की पठन आवश्यकताओं में भी बहुत अन्तर है, ग्रामीण स्त्रियों, सभ्य नगर-वासियों, बागान मज़दूरों, नव शिक्षित ग्रामीणों, सबकी आवश्यकताएं अलग-अलग हैं।

इन सब विषयों, शैली और पाठकों की विविधता का ख्याल करके यह अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि पूरक साहित्य का क्षेत्र कितना विशाल है। वयस्कों के लिए जो मनोरंजक तथा साक्षरता सामग्री तैयार की जाती है, उसका इसके अन्तर्गत आना तो स्वाभाविक ही है। लेकिन, कोई सरकार कितना भी चाहे, यह सब सामग्री छापकर मुफ्त मांगना उसके लिए सम्भव नहीं है। मोटे तौर पर मूल और पूरक साहित्य में कोई अन्तर रखना ही होगा। यह ऐसे किया जा सकता है कि मूल साहित्य तैयार करवाने की जिम्मेदारी तथा प्रयास सम्बद्ध सरकारी विभाग पर छोड़ दिया जाए और वही उसका अधिकतर ख़र्च भी उठाए, हां अन्य सामग्री के लिए वह विभाग साहित्य कार्यालय की सेवाओं का उपयोग कर सकता है। पूरक सामग्री के लिए दायित्व साहित्य कार्यालय का रहे।

यदि पूरक सामग्री अधिक मात्रा में प्रकाशित करनी है तो यह आकर्षक और पाठकों की रुचि और आवश्यकताओं के अनुकूल होनी चाहिए, ताकि वे इसे ख़रीदने के लिए तैयार हों। इसी वजह से ऐसी सामग्री के बारे में ज़िम्मेदारी साहित्य कार्यालय पर रहनी चाहिए, अगर पूरक सामग्री का सरा खर्च सरकारी कोष में से नहीं करना है तो उसकी तैयारी का यही तरीक़ा सम्भव हो सकता है। लेकिन इस कार्य की सफलता कई चीज़ों के ज्ञान और जानकारी पर निर्भर है, जैसे पाठकों की रुचि, ख़रीदने की क्षमता, विषय प्रस्तुत करने के ढंग की विविधता तथा वितरण व्यवस्था की कुशलता। दूसरे शब्दों में यह, अन्दाज़ा लगाने की योग्यता होनी चाहिए कि प्रकाशित सामग्री व्यापारिक दृष्टि से कैसी रहेगी। साहित्य कार्यालय अपने काम के सिलसिले में ऐसी ही टैक्नीकल जानकारी और अनुभव एक जगह इकट्ठा करता है बहुत से अलग-अलग सरकारी विभागों से इस अनुभव की आशा करना अव्यावहारिक भी है और आर्थिक दृष्टि से हानिकर भी।

साहित्य कार्यालय के काम और तरीक़े

अब हम उन तरीक़ों पर विचार कर सकते हैं जिनके आधार पर साहित्य कार्यालय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यवस्था करता है।

मूल सामग्री के लिए :—जहां तक उपरोक्त मूल सामग्री का सम्बन्ध है, कार्यालय इसे स्वयं तैयार नहीं करता, यद्यपि वह विभिन्न विभागों को इसके बारे में झुकाव दे सकता है, न वह स्वयं इन विभागों के लिए सामग्री लिख कर देता है, जब तक कि वे उससे ऐसा करने का विशेष रूप से आग्रह न करें।

इस बात की ज़िम्मेदारी संयोजक विभागों पर है कि वे इस बारे में आवश्यक कदम उठाएं और बाद में मुसव्विदे की स्वीकृति दें। कार्यालय निम्नलिखित तरीक़ों से उनके कार्य में योग और सहायता देता है।

१—इस बारे में सूचना एक जगह केन्द्रित रहती है और एक ही स्थान से परामर्श मिल सकता है कि कौन सी सामग्री सरकारी विभाग या सार्वजनिक अथवा अर्ध-सार्वजनिक संस्थाएं तैयार कर रही हैं या तैयार करने का आयोजन कर रही हैं या प्रस्तावित सामग्री जैसी कौन सी सामग्री अन्य जगहों से प्राप्त हो सकती है, जिसे ज्यों का त्यों या रूपान्तर करके काम में लाया जा सकता हो।

बहुधा यह देखा जाता है कि विभिन्न संस्थाएं अन्य संस्थाओं की गतिविधि से अवगत न होने के कारण वही या वैसा ही काम करती रहती हैं जैसा दूसरी जगह पर भी हो रहा होता है, इससे परिश्रम और धन बेकार नष्ट होता है। इस समस्या के समाधान के लिए कार्यालय जैसे केन्द्रीय संगठन की सेवाएं बहुत मूल्यवान सिद्ध हो सकती हैं। सरकारी विभागों तथा अन्य संस्थाओं को चाहिए कि वे साहित्य के क्षेत्र में अपने आयोजन और कार्यों की संक्षिप्त सूचना कार्यालय को भेजते रहें। इधर कार्यालय को चाहिए कि वह इस क्षेत्र में हो रही कार्रवाइयों की एक साधारण छःमाही रिपोर्ट तैयार करके भेजता रहे और ज़रूरत पड़ने पर मुसव्विदों का आदान प्रदान भी करवा दे।

२—पाठकों के जिस वर्ग के लिए कोई सामग्री तैयार की जा रही हो, उनकी आवश्यकताओं के अनुसार मुसव्विदे के लहजे, भाषा और शैली आदि को ढालने के लिए कार्यालय विशेष जानकारी, परामर्श तथा सम्पादकीय सेवा की व्यवस्था कर सकता है। कुशल टैक्नीकल अधिकारी तथ्यों के बारे में मूल टैक्नीकल सामग्री के मुसव्विदे तो तैयार कर सकते हैं, पर उनके पास इस बात के लिए न तो समय होता है न विशेष जानकारी कि वह उसे पाठकों की आवश्यकताओं के अनुसार पेश कर सकें। वे यह बात भी कम ही जानते हैं कि विभिन्न वर्गों या क्षेत्रों में साक्षरता के स्तर किस अनुपात से हैं और कैसे बदल रहे हैं।

पर कोई पुस्तक या अन्य सामग्री तो अपना उद्देश्य तभी प्राप्त कर सकती है जब उसे इस तरह की जानकारी के आधार पर तैयार किया जाये। यह ज्ञान होने पर ही विषय को प्रस्तुत करने के सबसे अच्छे ढंग का फ़ैसला हो सकता है और यह अनुमान किया जा सकता है कि कितना बड़ा संस्करण छापा जाये। इस प्रकार की जानकारी इकट्ठी करने के लिए विशेषज्ञों को पूरा समय काम करना होता है और इस सेवा की साहित्य कार्यालय व्यवस्था कर सकता है। अगर हर सरकारी विभाग से इस तरह की जानकारी रखने को कहा जाए तो यह आर्थिक दृष्टि से हानिकर है। पर साहित्य कार्यालय को चाहे सरकारी विभाग, इस कार्यविधि से सबसे अधिक लाभ वे परस्पर सहयोग द्वारा ही उठा सकते हैं, एक दूसरे को आदेश देकर या उसे अपनी बात मानने पर मजबूर करके नहीं।

३—ज़रूरत पड़ने पर कार्यालय अनुवाद कार्य में सहायता देता है। इस सहायता के तरीक़े ऊपर बताये जा चुके हैं।

४—कार्यालय मुसव्विदे की लम्बाई और क्रम के बारे में सलाह देकर और चित्रों, चार्टों और अभिन्यास (ले-आउट) के सम्बन्ध में टैक्नीकल सेवाओं की व्यवस्था करके मुद्रण के कार्य में सहायता दे सकता है, जिससे कम से कम खर्च पर अधिक से अधिक प्रभाव पूर्ण सामग्री प्रकाशित की जा सके।

कार्यालय को इस प्रकार की विशेष कुशलता रखने वाले कम से कम एक विशेषज्ञ की आवश्यकता होगी। साहित्यिक प्रकाशनों की बनावट और छपाई के टैक्नीकल पहलुओं पर ध्यान न देने से बहुधा धन का अपव्यय होता है, और हर विभाग के लिए इस तरह की जानकारी की स्वयं व्यवस्था करने से भी ख़र्च बहुत बढ़ जाएगा। जहां तक चित्रों, चार्टों आदि का सम्बन्ध है, कार्यालय के लिए अपने यहां कलाकार रखना ज़रूरी नहीं है। वह कलाकारों की वैसी ही सूची बना सकता है जैसी अनुवाद के लिए बनाने की सिफारिश की गई है। हां, अगर काम इतना ज़्यादा हो कि पूरे समय के लिए एक कलाकार रखा जा सके तो कार्यालय स्थानीय कलाकारों के प्रशिक्षण तथा उनकी सेवाओं के विकास का एक उपयोगी माध्यम बन सकता है।

५—कार्यालय अन्तिम रूप से स्वीकृत मुसव्विदों के सबसे उपयुक्त माध्यम द्वारा मुद्रण और प्रकाशन की व्यवस्था करता है।

किसी चीज़ के मुद्रण तथा प्रकाशन का सबसे अच्छा तरीक़ा क्या है, इस प्रश्न पर आवश्यकता और उपयोगिता को देखकर हर मामले में अलग से विचार किया जाना चाहिए। साहित्य कार्यालय के पास तथा सामान्य जानकारी की केन्द्रित व्यवस्था होने के कारण वह इस प्रश्न का निर्णय करने की सबसे अच्छी जगह है। कार्यालय के पास प्रदेश के भीतर उपलब्ध मुद्रण साधनों की

एक सूची होनी चाहिए और उसे इस बात का भी ज्ञान होना चाहिए कि कहाँ किस तरह का काम सबसे अच्छा हो सकता है। अगर भीतरी साधन पर्याप्त हों तो कार्यालय को प्रदेश से बाहर व्यावसायिक मुद्रकों तथा प्रकाशकों के साथ आवश्यक सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। जहां मुद्रण की सुविधाओं की कमी के कारण अधिक मात्रा में उपयोगी साहित्य की व्यवस्था करने में मुख्य रूप से बाधा पड़ रही हो, वहां प्रायः एक ही मुद्रक के साधनों का विस्तार करने की वजाय बहुत से मुद्रकों की सेवाएं प्राप्त करना ज़्यादा अच्छा और सस्ता रहता है। अक्सर इससे भी अच्छा यह रहता है कि मुद्रकों की बजाय प्रकाशकों के साथ व्यवहार रखा जाए, क्योंकि प्रकाशकों का विभिन्न मुद्रकों से वास्ता पड़ता है और वे जानते हैं कि उनमें से कौन किस तरह का काम सबसे अच्छा करता है। कार्यालय को मुद्रण के दाम चुकाने के लिए या प्रकाशन की गारन्टी देने के लिए धन मिलना चाहिए (प्रकाशन व्यय सम्बन्धी खंड देखिए) किसी टैक्नीकल विभाग के लिए जो विशेष सामग्री प्रकाशित कराई जाए उसके ख़र्च का समुचित अंश कार्यालय बाद में उस विभाग से वसूल कर सकता है (आगे देखिए)। कार्यालय के अपना छापाखाना स्थापित करने में कई ख़तरे और ख़राबियाँ हैं, अन्य सभी उपायों की अच्छी तरह जांच करने के बाद ही उसे ऐसा करना चाहिए।

६—कार्यालय अन्य विभागों की ओर से कापीराइट सम्बन्धी मामलों का भी निपटारा करता है।

७—जब सामग्री छप जाती है तो कार्यालय उसकी प्रतियाँ अपनी सामान्य वितरण व्यवस्था के अधीन ले आता है और अन्य सरकारी विभागों की ओर से वितरण का प्रबन्ध करता है।

पूरक सामग्री के लिए—जहां तक मनोरंजक तथा सूचनात्मक दोनों प्रकार की पूरक सामग्री का सम्बन्ध है, कार्यालय का काम इस प्रकार है: (क) ऊपर के पैरों में उल्लिखित ढंग से कार्रवाई करना तथा ज़िम्मेदार संस्था होने के नाते अधिक सामान्य दिलचस्पी की सामग्री उपलब्ध करना, (ख) अगर बाहरी संस्थाओं द्वारा भेजी गई सामग्री काफ़ी व्यापक उपयोग की हो और उससे प्रदेश की साहित्य सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने में काफ़ी योग हो तो उसके बारे में उपयुक्त सेवाओं की व्यवस्था करना।

प्रतियोगितायें—पूरक सामग्री की रचना में प्रोत्साहन देने के लिए कार्यालय लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन करता है। यह कार्य वह अपने आप या प्रादेशिक साहित्य समितियों के सहयोग से करता है। वह एक ऐसे केन्द्र के रूप में भी काम करता है जहां व्यावसायिक लेखक अपने मुसव्विदे भेज सकें और उन्हें परामर्श मिल सके। स्थानीय साहित्य के विकास की एक समस्या यह है

कि बहुत से लोगों को, जिनमें प्रतिभा विकसित की जा सकती है, इस काम का अनुभव नहीं होता। उन्हें मुसव्विदे के क्रम, विषय को प्रस्तुत करने के ढंग, पुस्तक की लम्बाई आदि के बारे में परामर्श की ज़रूरत होती है। लिखना एक कला है, इसमें कोई सन्देह नहीं, पर दिलचस्प से दिलचस्प रचना के बारे में भी यह ज़रूरी है कि लेखक को मुद्रण और प्रकाशन की शिल्पीय और वित्तीय आवश्यकताओं का कुछ हद तक ज्ञान हो। कार्यालय यह महत्वपूर्ण कार्य दो तरह से करता है। वह छोटी-छोटी पुस्तिकाएं छापकर लेखकों के लिए उपयोगी बातों की सूचना और मुसव्विदे भेजने के बारे में सलाह देता है। इसके अतिरिक्त वह मुसव्विदे भेजने वाले लेखकों को मैत्रिक परामर्श तथा प्रोत्साहन देता है।

साहित्य सामग्री का उत्पादन

नई सामग्री की रचना और साहित्य कार्यालय के काम और तरीक़ों से सम्बद्ध खंडों में जिन मामलों का संक्षेप में विश्लेषण किया गया था, उन पर अब अधिक विस्तारपूर्वक विचार किए जाने की ज़रूरत है।

पठन सामग्री को उपलब्ध कराने के लिए जो कार्य करना होता है उसे तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है : सम्पादन, उत्पादन तथा वितरण। इन तीनों के लिए अलग-अलग तरह की कार्य प्रणाली तथा विशेष जानकारी की ज़रूरत होती है। हर पड़ाव में अन्य बहुत से लोगों के काम की ज़रूरत पड़ती है और उनके काम पर प्रभाव पड़ता है और हर पड़ाव पर विभिन्न मार्गों और उपायों में से किसी एक को अपनाया जा सकता है। पर ये तीनों कार्य एक दूसरे से बहुत हद तक सम्बद्ध है, और एक पड़ाव पर जो तरीक़े या उपाय अपनाये जाएं उनका दूसरे पड़ावों पर अपनाये जाने वाले तरीक़ों और उपायों पर असर पड़ता है तथा वे उनका असर स्वयं ग्रहण करते हैं। साहित्य कार्यालय का एक महत्वपूर्ण काम अपने विशेष ज्ञान और अनुभव का उपयोग करके विभिन्न निर्णयों में समन्वय स्थापित करना है।

सम्पादन

इसके अन्तर्गत सन्तोषजनक मुसव्विदे की अन्तिम तैयारी तक का काम आता है। प्रारम्भिक विचार विनिमय, कच्चे मुसव्विदे की तैयारी, इसे ठीक-ठाक करना और अन्तिम रूप देना, चित्रों, चार्टों की तैयारी और संस्करण की संख्या तथा उत्पादन और वितरण के बारे में शुरू का सोच-विचार, ये सब बातें इस कार्य के अन्तर्गत आ जाती हैं।

अगर पुस्तक के आयोजक बहुत पहले से ही कार्यालय के विशेषज्ञों का परामर्श तथा साहित्य समितियों की यथोचित सलाह ले लें तो उसके बिना किसी

खराबी के जल्दी और सस्ता उत्पादन करने में सहायता मिलेगी। अच्छा तो यह है कि पहला कच्चा मुसव्विदा तैयार होने से पहले या उसकी तैयारी के दौरान ही यह परामर्श ले लिया जाए। नई सामग्री के उत्पादन से सम्बद्ध खंड में जिन मामलों का उल्लेख किया गया है, परामर्श उन्हीं के सम्बन्ध में लिया जाएगा। यह निर्णय कि सामग्री किससे और कैसे लिखवाई जाए उसी समय हो सकता है।

"लागत और उत्पादन कार्यक्रम" तथा "मूल साहित्य" और "पूरक साहित्य" विषयक खंडों में जिन मामलों का ज़िक्र किया गया है, मुसाव्विदे की तैयारी के सिलसिले में उनसे सम्बद्ध बातों पर भी इसी समय निर्णय कर लेना ठीक रहेगा, ताकि सामग्री प्रस्तुत करने के ढंग, उसके उद्देश्य तथा वितरण के तरीक़े में समुचित सम्बन्ध स्थापित हो सके और संस्करण की संख्या पर यथार्थ की दृष्टि से विचार हो सके।

अगर चित्रों, चार्टों की ज़रूरत हो तो उनके बारे में भी शुरू में ही विचार कर लिया जाना चाहिए। इनकी व्यवस्था आयोजक संस्था या साहित्य कार्यालय कर सकता है, या ये बाहर से बनवाये जा सकते हैं। चित्र, चार्ट कई प्रकार के होते हैं—लकीरों वाले, हाफ़-टोन, काले और सफ़ेद, रंगीन इत्यादि और इनमें जिस तरीक़े का उपयोग करने का फ़ैसला किया जाये, वह किसी हद तक पुस्तक के मुद्रण की सामग्री तथा विधि पर निर्भर करेगा और किसी हद तक इन पर अपना प्रभाव भी डालेगा। जहाँ तक मुद्रण की सामग्री और विधि का सम्बन्ध है इन पर भी मुद्रण के साधनों तथा प्रस्तावित अन्तिम लागत को ध्यान में रखकर निर्णय करना होगा। इसलिए ये सब निर्णय पहले ही हो जाने चाहिएं, बाद में नहीं।

अतः यही ठीक है कि बहुत पहले ही से सामग्री के आयोजकों और कार्यालय के बीच विचार-विनिमय हो जाए। आयोजक कार्यालय को पहला कच्चा मुसव्विदा भेज सकते हैं जिसमें सभी तथ्य तो हों पर जिनका अन्तिम रूप में होना आवश्यक नहीं है। तब कार्यालय उसे प्रस्तुत और प्रकाशित करने के तरीक़ों के बारे में अपने सुझाव तैयार करता है, इनके साथ एक सूची लगाता है जिसमें सभी सुझावों पर व्यौरेवार सूचना दी गई हो। तथा उसके साथ लागत के अनुमान भी शामिल किए जाते हैं। यह सब आयोजकों को भेज दिया जाता है। इस प्रकार परस्पर समझौता होने तक विचार विनिमय जारी रहता है।

ऊपर के पैरों में ऐसी सामग्री के बारे में कार्यविधि का उल्लेख किया गया है जो सामान्यतः सरकारी विभाग तैयार करवाते हैं। यह प्रायः मूल

सामग्री होगी, यद्यपि कुछ पूरक सामग्री भी इस तरह से तैयार कराई जा सकती है। लेकिन कार्यालय स्वयं भी सामग्री तैयार करने का आयोजन कर सकता है, जो मुख्य रूप से पूरक सामग्री होगी। वास्तव में पुराने कार्यालय अधिकांश सामग्री स्वयं अपनी ज़िम्मेदारी पर तैयार करते हैं। ऐसी हालत में इतना ज़्यादा प्रारम्भिक विचार विनिमय करने की ज़रूरत नहीं होती, क्योंकि कार्यालय के पास पहले ही से काफ़ी आवश्यक सूचना रहती है। फिर भी जब कार्यालय स्वयं सामग्री तैयार करता है, चाहे उसकी रचना वह खुद करे या कोई लेखक या दल उसके पास भेजे, उसे इस बारे में पूरा ध्यान रखना होता है कि जिस सरकारी विभाग के कार्य से इस सामग्री का सम्बन्ध है यह उसकी आवश्यकताओं अथवा नीतियों से विपरीत न हो। सामान्यतः ठीक व्यवस्था यही है कि मूल सामग्री के लिए अन्तिम स्वीकृति और उत्पादन व्यय की ज़िम्मेदारी आयोजक संस्था पर रहे और पूरक सामग्री की अंतिम स्वीकृति तथा ख़र्च का दायित्व कार्यालय पर हो। अगर दोनों एक दूसरे के मशवरे की परवाह नहीं करते तो इसमें नुक़सान दोनों का है और फ़ायदा किसी का नहीं।

पहले के पैरों में सरकारी विभागों की विशेष आवश्यकता की सामग्री के बारे में सम्पादन सम्बन्धी कार्यविधि पर ख़ास ज़ोर दिया गया है। क्योंकि इस क्षेत्र में दूसरे विभागों के सम्बन्ध में कार्यालय के काम और तरीक़ों को समझना बड़ा ज़रूरी है। इसके अतिरिक्त शुरू-शुरू में कार्यालय का इसी प्रकार का होता है। लेकिन स्कूलों से बाहर युवकों के लिए सामान्य पठन सामग्री उपलब्ध कराने और वयस्कों की मनोरंजन तथा संस्कृति सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के बारे में कार्यालय को जो विशेष स्थान प्राप्त है उसे आंखों से ओझल नहीं किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण तथा प्रचार की सरकारी किताबें जनता की पठन सम्बन्धी आवश्यकताओं का केवल अंश मात्र हैं। अन्य आवश्यकताओं के बारे में, जो सामान्य सरकारी विभागों के कार्यक्षेत्र में नहीं आतीं, कार्यालय पर विशेष दायित्व है। साहित्य कार्यालय का यह कर्त्तव्य है कि वह स्थानीय लेखकों की खोज करे और उन्हें प्रोत्साहन दे, आवश्यक साहित्यिक तथा टैक्नीकल परामर्श दे, और सामान्यतः एक ऐसे केन्द्र का काम करे जिससे लेखक तथा प्रकाशक, दोनों परामर्श तथा पथ-प्रदर्शन की आशा कर सकें।

प्रादेशिक सहायक समितियां

प्रदेश के विस्तार, आबादी तथा प्राकृतिक स्थिति को देखते हुए साहित्य कार्यालय प्रादेशिक साहित्य समितियाँ स्थापित करके और उनके माध्यम से कार्य करके अपने कुछ काम को विकेन्द्रित कर सकता है। साथ ही वह एक केन्द्रीय

साहित्य समिति स्थापित करके उसके द्वारा उनसे योग और सहायता ले सकता है । इन साहित्य समितियों का काम, कम से कम शुरू में, साहित्य कार्यालय को सलाह देना होता है । उनके कार्य का क्षेत्र भाषागत, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक आधार पर, जो भी ठीक समझा जाए, निश्चित किया जा सकता है । सदस्य स्वयंसेवी होने चाहिएँ, जो इस काम में दिलचस्पी, इसके लिए योग्यता और स्वाभाविक नेतृत्व के गुण रखते हों । जिन समितियों में काफ़ी काम हो, उन्हें एक सवैतनिक सचिव की आवश्यकता होगी, चाहे वह पूरे समय काम करने के लिए रखा जाए या दिन में कुछ समय के लिए । यह व्यक्ति, अगर काम काफ़ी हो तो, कार्यालय के अमले का पूरे समय का प्रादेशिक सदस्य भी हो सकता है ।

मोटे तौर पर इन समितियों के सबसे उपयोगी कार्य ये होंगे : बाहर से पांडुलिपियों को प्राप्त करना, उनका मूल्यांकन करना तथा उनके उपयुक्त होने पर उन्हें अपनी टिप्पणियों के साथ कार्यालय को भेजना, ऐसी सामग्री के प्रकाशन के बारे में अपनी ओर से कार्यालय को सिफ़ारशें भेजना जो प्रदेश के लिए आवश्यक समझी जाए या जिसके वहां सफल रहने की आशा हो, कार्यालय को सम्भावित लेखकों, चित्रकारों, अनुवादकों तथा मुद्रण साधनों के सम्बन्ध में सूचना देते रहना, कार्यालय की ओर से भेजी हुई पाण्डुलिपियों तथा प्रकाशनों का मूल्यांकन करना और उसे अपने इलाक़े में इस सामग्री या इसके रूपांतर अथवा अनुवाद की उपयोगिता के विषय पर परामर्श देना, कार्यालय के साथ विचार विनिमय के पश्चात् जो सामग्री ठीक समझी जाए उसका रूपान्तर तथा अनुवाद कराने में सहायता देना, कार्यालय के सहयोग से लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन तथा संचालन करना, अपने इलाक़े में पुस्तक वितरण की समस्याओं की जांच करते रहना और कार्यालय को उनके बारे में परामर्श देना, प्रादेशिक सार्वजनिक पुस्तकालयों के लिए पुस्तकालय समिति के रूप में काम करना, पठन सामग्री की एक पुस्तकालय अथवा प्रदर्शन-कक्ष रखना, जिससे स्थानीय शिक्षकों तथा पुस्तक वितरण का काम करने वालों को पुस्तकों के चयन में सहायता मिले ।

स्पष्ट है कि साहित्य समितियों के काम का क्षेत्र और मात्रा स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर होगी । अगर इन समितियों को अपने खर्च के लिए कुछ रुपया भी उपलब्ध हो तो इनके कार्य में यथार्थ का पुट मिल जाएगा । बहुधा केन्द्रीय साहित्य कार्यालय के लिए यह लाभदायक रहेगा कि वह साहित्य समितियों द्वारा अपने कार्य का विकेन्द्रीकरण करने के साथ-साथ इन समितियों को समुचित वित्तीय अनुदान भी दे । विभिन्न कार्यालयों ने इन उद्देश्यों के लिए अनुदान दिये हैं । यदि सचिव कार्यालय का कर्मचारी न हो तो दिन में कुछ समय काम करने वाले सचिव को सम्मानार्थ पारिश्रमिक देना, बैठकों के आयो-

जन, लेखन प्रतियोगिताओं के संचालन, उनकी जांच तथा उनमें दिये जाने वाले पुरस्कारों, और स्टेशनरी तथा डाक आदि के खर्च, प्रादेशिक प्रदर्शन-कक्ष अथवा पुस्तकालय के सामान तथा प्रबन्ध की लागत, और ज़रूरत होने पर, एक प्रादेशिक पुस्तक भंडार के विकास में योग देने का व्यय ।

कार्यालय किस हद तक अपना विकेन्द्रीकरण कर सकता है या करना चाहता है, यह स्थानीय परिस्थितियों तथा साधनों पर निर्भर करेगा । यहाँ इससे ज़्यादा और कुछ नहीं किया जा सकता कि अब तक प्रयोग में लाए गए तरीक़ों का उल्लेख कर दिया जाए। व्यावहारिक दृष्टि से यह बात साहित्य को प्रोत्साहन देने के सारे काम के लिए लाभकारी है कि कार्यालय इस प्रकार के विकेन्द्रीकरण में विश्वास रखता हो और अपनी स्थापना के बाद कितनी जल्दी हो सके इस पर अमल करने की कोशिश करे, भले ही वह कुछ हद तक ही यह विकेन्द्रीकरण कर सके ।

मुद्रण तथा प्रकाशन

सम्पादकीय कार्य सम्पन्न हो जाने के पश्चात् उत्पादन, या दूसरे शब्दों में मुद्रण के अनेक साधनों में से किसी के द्वारा सामग्री की एक से अनेक प्रतियाँ बनाने के काम की बारी आती है। ये काम दो तरीक़ों से हो सकता है : (क) स्पिरिट या स्टेनसिल से या छोटी आफसैट मशीनों द्वारा प्रतियां तैयार करना, (ख) साधारण मुद्रण ।

इनमें से किसी प्रणाली का उपयोग किया जाए, यह निर्णय प्रायः, व्यावहारिक रूप से, उपलब्ध मुद्रण साधनों पर तथा, सैद्धान्तिक रूप से, सामग्री पर निर्भर करता है । साहित्यिक कार्यालय के विशेषज्ञों की राय इस बारे में बहुत मूल्यवान सिद्ध हो सकती है । बहुत सी छोटी-छोटी आधुनिक आफसैट मशीनें कम दामों पर बहुत अच्छा काम कर देती हैं और बहुत बढ़िया चित्र, चार्ट छाप देती हैं, विशेषकर जब इनके साथ दूसरी छोटी-छोटी 'दफ़्तरी मशीनों', जैसे बिजली के विशेष टाइपराइटर जिनके टाइप फ़ेस तथा अक्षर और पंक्तियाँ अपनी इच्छा से परिवर्तित किए जा सकें, उपलब्ध हों। फिर भी, ये मशीनें सब प्रकार के काम के लिए उपयुक्त नहीं हैं और यह फ़ैसला करने के लिए कि किस विधि से काम लिया जाए, सभी पहलुओं का सन्तुलन करने के अनुभव की आवश्यकता है । सामान्यतः छोटे आकार (कम्पास) की सामग्री के लिए, जिसका छोटा सा प्रारम्भिक संस्करण छापना हो और जिसमें बहुत से चित्र, चार्ट आदि हों, यह मशीनें बहुत लाभकारी हैं । जहां बहुत सी प्रयोगात्मक सामग्री की जरू-

रत हो, वहां तो यह तरीक़ा और भी गुणकारी सिद्ध हो सकता है। अन्य उद्देश्यों के लिए सामान्य मुद्रण प्रणाली ही ज़्यादा ठीक रहती है।

मुद्रित सामग्री के प्रकाशन तथा वितरण के दो मुख्य तरीक़े हैं :—

१. **गारंटी व्यवस्था**—साहित्य कार्यालय ज़िम्मेदार व्यावसायिक प्रकाशकों के माध्यम से तथा उनके साथ सहयोग करके काम करता है और ये प्रकाशक कुछ निर्धारित शर्तों और गारंटियों के साधार पर सामग्री के मुद्रण, प्रकाशन तथा वितरण का प्रबन्ध करते हैं।

२. **प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था**—कार्यालय स्वयं प्रकाशक का काम करता है, वह निम्नलिखित साधनों में से किसी एक के द्वारा मुद्रण का आप प्रबन्ध करता है और बाद में आप ही मुद्रित सामग्री के वितरण की व्यवस्था करता है।

अगर हम पहले उत्पादन तथा वितरण के हर दौर के काम की अलग-अलग और ब्योरेवार तुलना कर लें और यह देख लें कि प्रत्यक्ष मुद्रण और गारंटी व्यवस्थाओं में कहाँ अन्तर रहता है तो आगे जाने वाले मामलों को समझने में ज़्यादा सुविधा होगी। कुछ देशों में परिस्थितियां ऐसी होती हैं कि अनुभवी प्रकाशकों के साथ सहयोग से पूरा लाभ उठाना कठिन या असम्भव हो सकता है। अगर सामग्री मुद्रण की दृष्टि से सीधी-सादी हो, और बाहरी मंडियों का प्रश्न ज़्यादा महत्व न रखता हो तथा बिक्री के लिए रखी जाने वाली प्रतियों से कहीं ज़्यादा मुफ़्त बाँटना हो, तो ऐसी हालतों में आम तौर पर प्रत्यक्ष मुद्रण प्रणाली के प्रयोग से ख़र्च भी कम आता है और काम भी जल्दी होता है।

निम्न पैरों से यह पता चल सकेगा कि साहित्य कार्यालय का इस सम्बन्ध में क्या योग है, और शायद इससे नव-स्थापित कार्यालयों के दीर्घकालीन उद्देश्यों का भी कुछ अन्दाज़ा हो सकेगा।

गारंटी तथा प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था की तुलना करना

पहला पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—कार्यालय मुसव्विदे को ऐसे पड़ाव पर ले आता है जब वह मुद्रण के लिए तैयार है। ऐसा कहने में वह मुसव्विदे की तैयारी का पूरा ख़र्च, जैसे अन्तिम मुसव्विदे को टाइप कराने की लागत, चित्र, चार्ट आदि की तैयारी का व्यय तथा लेखक का पारिश्रमिक आदि स्वयं अदा करेगा। यह ख़र्च या इसका कुछ अंश, जैसे भी कार्यालय की इच्छा हो, वह प्रकाशन से पहले प्रकाशक से वसूल कर सकता है, और प्रकाशक यह रक़म पुस्तक की अन्तिम क़ीमत में जोड़ सकता है। (यदि यह रक़म वसूल न की जाए तो इसे पुस्तक के ख़र्च के लिए दिया गया अनुदान समझा जाना चासिए)।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—यह भी गारंटी व्यवस्था के पिछले पड़ाव की तरह है, अन्तर केवल इतना है कि इस व्यवस्था के अधीन मुसव्विदे की तैयारी का ख़र्च एक ही बार में वसूल नहीं हो सकता है, क्योंकि इसे अदा करने के लिए कोई प्रकाशक ही नहीं है। इस ख़र्च को पुस्तक की बिक्री की क़ीमत में जोड़ा जा सकता है। ऐसी स्थिति में इसकी वसूली, जैसे-जैसे किताब बिकेगी, थोड़ा-थोड़ा करके होगी और पूरी रक़म सारा संस्करण बिक जाने पर ही वसूल होगी। इस प्रकार गारंटी व्यवस्था की अपेक्षा प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अधीन काम के इस पहले दौर में लेनदारी ज़्यादा रहेगी।

दूसरा पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—दूसरे पड़ाव में कार्यालय प्रकाशक को मुसव्विदा आदि दे देता है और मोटे तौर पर बता देता है कि उसे किस तरह की छपाई चाहिए संस्करण की संख्या क्या होगी, कार्यालय ने तब तक कितना खर्च किया है जिसकी प्रकाशक कार्यालय को अदायगी करेगा, कोई रायल्टी, (जो हमारे विचार में लेखक को मिलनी चाहिए) अदा करनी होगी या नहीं, पुस्तक विक्रेताओं को क्या कमीशन दिया जाएगा, इन सबका हिसाब लगाने के बाद परचून क़ीमत क्या रखी जा सकती है, और कार्यालय प्रकाशक को जो गारंटियाँ देने को तैयार है उसके बारे में उसके प्रारम्भिक सुझाव क्या हैं। आम तौर पर गारंटी इस प्रकार की होती है कि प्रकाशक अपने ख़र्च पर निश्चित संख्या में प्रतियाँ छापना और उसे निश्चित क़ीमत पर बाज़ार में बेचना स्वीकार करता है, दूसरी ओर कार्यालय यह बचन देता है कि एक निर्धारित समय की समाप्ति पर (जो सामान्यतः दो से चार वर्ष तक होता है) वह इस संस्करण की सभी अन-बिक्री प्रतियां व्यापारिक मूल्य पर स्वयं ख़रीद लेगा। इससे भिन्न प्रबन्ध मुख्यतः ऐसी हालत में किये जाते हैं जब संस्करण के केवल एक अंश के बारे में ही गारंटी दी जानी हो।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—जिन मामलों पर विचार करना और जिन बातों के बारे में अनुमान तैयार करने होंगे, वे वही हैं जो गारंदी व्यवस्था के दूसरे पड़ाव के अन्तर्गत आती हैं। अन्तर यह है कि यह सब बाद में कार्यालय के ही काम आने के लिए हैं, प्रकाशक के सामने रखने के लिए नहीं।

तीसरा पड़ाव

गारंटी व्यवस्था— तब प्रकाशक पुस्तक के उत्पादन की सभी व्योरेवार टैक्नीकल बातों पर विचार करता है, यह हिसाब लगाता है कि कार्यालय द्वारा

अनुमानित स्थानों के अतिरिक्त और कहां यह पुस्तक बिक सकती है, और इस बात का निर्णय करता है कि कार्यालय ने जितनी संख्या के बारे में गारंटी दी है क्या वह अपनी जोखम पर उससे अधिक प्रतियां छाप सकता है और छाप सकता हैं तो कितनी अधिक। यह यह सब तै करने के बाद वह पूरे संस्करण के मुद्रण के बारे में मुद्रकों से विभिन्न कामों की दरों के आंकड़े मंगवाता है।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—कार्यालय को स्वयं एक या अधिक मुद्रकों से दरों के आँकड़े मंगवाने होंगे, और ज़ाहिर है कि उसे मुद्रक का चुनाव करने तथा बाहर की मंडियां खोजने के लिए प्रकाशकों के बराबर का न तो अनुभव होगा और न उन जैसे उसके सम्पर्क ही होंगे। कार्यालय को जहाँ तक उससे हो सकेगा छपाई, बनावट, जिल्द और काग़ज़ की क़िस्म आदि के बारे में पूरा ब्योरा देना होगा जबकि सामान्यत: यह सब बातें प्रकाशक स्वयं तै रखता है। यह बातें मुद्रक पर भी छोड़ी जा सकती हैं, विशेषकर अच्छे मुद्रक पर, लेकिन जब तक सामग्री बिल्कुल ही सीधी सादी न हो, ऐसा करने में कई बार जोखम उठानी पड़ती है। यह लगभग ऐसा ही है जैसे वास्तुकला के जानकार की सेवाओं के बिना इमारत बनाने का काम शुरू कर दिया जाए। कोई भी अच्छा प्रकाशक इस काम के लिए अपने पास विशेषज्ञ रखता है, जबकि बहुत कम मुद्रक ऐसा करते हैं।

चौथा पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—अब प्रकाशक दूसरे पड़ाव में कार्यालय द्वारा दिए गए सुझावों का उत्तर भेजता है और कुछ को मानता है और कुछ के बदले में सुझाव रखता है। वह यह भी बताता है कि उसका विचार किस तरह से किताब को छापने का है, उसे कौन सी अतिरिक्त मंडियों में किताब के बिकने की आशा है और इसके कारण वह क़ीमत में क्या कमी कर सकता है। इसके साथ ही वह इस बारे में अनुमान प्रस्तुत करता है कि किस तरह की और कितनी किताब छपने से क्या-क्या परचून क़ीमत वसूल की जा सकती है।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—तीसरे पड़ाव में प्राप्त आँकड़ों के आधार पर कार्यालय को स्वयं सारा हिसाब लगाना है और या तो उनमें से कुछ को स्वीकार करना है या अगर दूसरे पड़ाव के आयोजन अव्यावहारिक सिद्ध होते हैं तो नए सुझावों का फैसला करना है। (यह सारा काम बहुत ही टैक्नीकल क़िस्म का है और इसमें सुयोग्य प्रकाशक का अनुभव बहुत मूल्यवान होता है)। यह बात ध्यान देने योग्य है कि असाधारण परिस्थितियों को छोड़, कार्यालय के लिए अपने इलाक़े के अतिरिक्त बाहर की मंडियों में बिक्री की सम्भावनाओं का अनुमान लगाना अत्यन्त कठिन है, और यदि वह ऐसा कर भी ले तो भी

बाद में ऐसे प्रकाशक की सहायता के बिना, जिसके पास वितरण के बने बनाये मार्ग हों, इन बाहर की मंडियों में बिक्री करना बहुत मुश्किल होगा।

पांचवां पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—अब कार्यालय दूसरे पड़ाव में दिए गए सुझावों पर चौथे पड़ाव में प्रकाशक से मिले उत्तर की जांच करता है और या तो प्रकाशक के सुझाव मान लेता है या फिर उसके सुझावों की रोशनी में अपनी आवश्यकताओं में फेर बदल करता है। पांचवें पड़ाव में बातचीत या लिखा पढ़ी तब तक जारी रहती है जब तक सन्तोषजनक समझौता न हो जाए। तब कार्यालय प्रकाशक को सामग्री के प्रकाशन के बारे में विधिवत गारंटी दे देता है। यह गारंटी दूसरे पड़ाव के अन्तर्गत या आगे संशोधित व्यवस्था के अधीन उल्लिखित शर्तों के अनुसार होती है। अन्य सरकारी विभागों के लिए तैयार की जाने वाली मूल सामग्री के बारे में कार्यालय प्रकाशकों को जो गारंटी देता है उसके बदले में सम्बद्ध विभाग यह वचन देता है कि वह गारंटी की अवधि के भीतर अपनी आवश्यकता के अनुसार निश्चित की गई संस्था में प्रतियां ले लेगा।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—जैसे चौथे पड़ाव में।

छठा पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—तब प्रकाशक पांचवें पड़ाव में हुए समझौते के अनुसार अपने खर्च से पुस्तक का उत्पादन करता है। प्रकाशक मुद्रण के लिए मुसव्विदे पर स्वयं आवश्यक निशान वग़ैरा लगाता है, मुद्रण का आर्डर देता है, सभी टैक्नीकल बातों पर नज़र रखता है और पुस्तक से सन्तोषजनक उत्पादन के लिए उत्तरदायी रहता है।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—इस व्यवस्था के अनुसार कार्यालय स्वयं मुद्रक को छपाई का आर्डर देता है और उसे सारा ख़र्च खुद अदा करना पड़ता है। छपाई के दौरान उठने वाले मामले मुद्रक को प्रकाशक के स्थान पर कार्यालय के सामने लाने होते हैं और इस ज़िम्मेदारी को निभाने के लिए कार्यालय के पास सुयोग्य कर्मचारी तथा समय होना चाहिए। ज्यों-ज्यों प्रकाशनों की संख्या बढ़ेगी यह काम अधिक पेचीदा होता जाएगा और अधिक समय खाने लगेगा।

सातवां पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—छपाई आदि का कार्य सम्पन्न हो जाने पर प्रकाशक पुस्तक की प्रतियां मुद्रक से संभाल कर ले लेता है और अपने गोदाम में रखता है। वह पुस्तक के प्राथमिक वितरण का प्रबन्ध करता है, बिक्री का पैसा वसूल

करता है, अगर रायल्टी देनी है तो उसकी अदायगी करता है, स्टाक का हिसाब रखता है और समय-समय पर कार्यालय को बताता है कि कितनी प्रतियां स्टाक में बाकी हैं। चूंकि प्रकाशक ने पुस्तक उत्पादन पर खर्च किया होता है, मुसव्विदे की तयारी की लागत की निर्धारित रक़म कार्यालय को अदा की होती है, और पुस्तक की परचून क़ीमत कार्यालय तथा प्रकाशक के आपसी समझौते से निश्चित हुई होती है, इसलिए बिक्री से होने वाला मुनाफ़ा प्रकाशक अपने पास रखता है। मुनाफ़े के कुछ भाग से प्रकाशक अपने कारोबार को चलाने का आम खर्च निकालता है, बाक़ी उसका अपना नफ़ा है, जिसकी ख़ातिर वह सारा धंधा करता है। अगर कार्यालय भी कुछ नफ़ा लेना चाहे, तो ऐसी पुस्तक की बिक्री की कीमत बढ़ा कर ही किया जा सकता है।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—छपाई आदि का पूरा होने पर कार्यालय पुस्तक का स्टाक आप संभालता है, उसे गोदाम में रखने, उसके विज्ञापन, वितरण, रुपये की वसूली, रायल्टी की अदायगी, स्टाक का हिसाब-किताब आदि सब कार्य उसे खुद ही करने होंगे। अगर परचून क़ीमत में कुछ मुनाफ़े की गुंजाइश रखी गई हो तो मुनाफ़ा कार्यालय स्वयं रखेगा।

आठवां पड़ाव

गारंटी व्यवस्था—गारंटी की अवधि के बाद (जो सामान्यतः दो से चार वर्ष तक होती है) : (क) अगर किताब की बिक्री बराबर हो रही हो, पर उतनी तेज़ी के साथ नहीं जितनी शुरू में आशा की जाती हो, तो आम तौर पर प्रकाशक गारंटी का समय बढ़ाने के लिए तैयार हो जाता है और कार्यालय को अनबिकी प्रतियां उठाने पर मज़बूर नहीं करता, (ख) यदि पुस्तक सफल न हो तो कार्यालय अनबिकी प्रतियां ऐसी क़ीमत पर ख़रीद लेता है जो व्यापारिक मूल्य से अधिक न हो, फिर वह चाहे तो उन्हें बाजार में बेंचने का स्वयं प्रबन्ध कर सकता है और चाहे तो यह ख़र्च बट्टे खाते में डाल सकता है, (ग) अगर पुस्तक सफल सिद्ध हो और उसकी सभी प्रतियां गारंटी का समय पूरा होने से पहले ही बिक जाने का आसार दिखाई देते हों तो प्रकाशक समय रहते कार्यालय को इसकी सूचना देता है और दूसरा संस्करण छापने के औचित्य पर विचार करने में योग देता है। सामान्यतः प्रकाशक स्वयं बिना किसी और गारंटी के अपने ख़र्च पर दूसरा संस्करण छापने को तैयार हो जाता है।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था—आठवें पड़ाव का प्रश्न ही नहीं रहता।

प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अधीन सामग्री की छपाई

जब कोई पुस्तक प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था से छापनी हो, तो कार्यालय इन

तरीकों से छपाई का प्रबन्ध कर सकता है : (क) अपने छापाखाने में (ख) सरकारी छापाखाने में, यदि ऐसा कोई छापाखाना हो, (ग) प्रदेश के भीतर या बाहर के व्यावसायिक मुद्रकों द्वारा।

जिन प्रदेशों में साहित्य कार्यालय की ज़रूरत होती है, वहां अक्सर छापे की सुविधाओं की कमी के कारण भी बहुत कठिनाई रहती है। इसलिए कार्यालय को अपना छापाखाना खोलने का सुझाव बहुत आकर्षक जान पड़ता है। फिर भी इस बारे में सावधानी बरतने के कई कारण हैं, इनमें मुख्य कारण ये हैं—

१—ऐसा करना इस दीर्घकालीन के उद्देश्य के अनुरूप नहीं है कि दूसरों को साहित्य उपलब्ध के काम में योग देने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

२—आधुनिक छापा मशीनें और छपाई के तरीक़े बहुत पेचीदा और विविध हैं, अच्छे छापाखाने पर काफ़ी खर्च आता है और उसकी स्थापना और संचालन का ख़र्च पूरा करने के लिए उसे लगातार और काफ़ी काम करते रहना चाहिए। इसलिए डर यह है कि या तो छापाखाना इतना छोटा होगा कि विविध प्रकार की आवश्यकतायें पूरी नहीं कर सकेगा और मुनासिब लागत पर सारा काम नहीं निकाल सकेगा, या फिर इतना बड़ा होगा कि काम की मात्रा को देखते हुए अपना ख़र्च भी पूरा नहीं कर सकेगा, और मशीनों का बेकार रहना बड़ी महंगी अय्याशी है।

३—छापाखाने को चलाना ख़ास योग्यता का काम है और अक्सर इसके लिए विशेषकर गर्म देशों में, ख़ास तरह की इमारत और विशेष जानकारी रखने वाले कर्मचारियों की ज़रूरत होती है। कार्यालय का अमला जितना बढ़ेगा उतना ही उसका संगठन पेचीदा होगा और उतना ही अधिक समय भीतरी समस्याओं पर नष्ट होगा। इससे न केवल कार्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों की शक्ति असल काम की बजाय भीतरी समस्याओं के समाधान में लगेगी, बल्कि ख़र्च का बहुत बड़ा अंश ऐसा होगा (चाहे वह समय के नष्ट होने के रूप में अप्रत्यक्ष ही रहे) जिसका साहित्य उपलब्धि के काम से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होगा और जिससे प्रत्यक्ष रूप से इस उद्देश्य को बढ़ावा देने में कोई सहायता नहीं मिलेगी।

कार्यालय द्वारा मुद्रित सामग्री तथा व्यावसायिक फ़र्मों द्वारा छापी गई सामग्री के ख़र्च की तुलना करने से शायद यह जान पड़े कि कार्यालय का किया हुआ काम ज़्यादा सस्ता है, क्योंकि उसे इससे नफ़ा नहीं कमाना है, पर यह धारणा भ्रामक होगी। निःसन्देह बाहर के लिए किए हुए काम की लागत में कुछ मुनाफ़ा भी शामिल होगा, पर इसमें कई और चीज़ें भी होंगी, जैसे टैक्नीकल सेवाओं का ख़र्च, मशीनों की घिसाई, चल रहे काम पर होने वाला व्यय,

प्रशासनिक व्यय, वास्तव में वह सारा ऊपरी ख़र्च (ओवर हैड चार्जिंग) इसमें आ जाएगा जो किसी फ़र्म को कर्मचारियों के वेतन और आवश्यक सामान की लागत के अतिरिक्त करना पड़ता है। अगर कार्यालय अपने प्रकाशनों की आप छपाई करने का प्रबन्ध कर ले तो यह ऊपरी ख़र्च ख़त्म नहीं हो जाता। होता यह है कि ग़ैर-सरकारी लेखा व्यवस्था के विपरीत सरकारी लेखों में इस तरह का ख़र्च कई हिस्सों में बंट जाता है और बजट की कई छोटी मदों में खप जाता है। इससे लागत की तुलना के बारे में भ्रामक परिणाम निकाले जाने की आशंका रहती है।

ठीक इन्हीं कारणों से सरकारी छापाख़ाने का केवल साहित्य कार्यालय के काम के लिए अंधाधुंध विस्तार नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि पहले व्यापारिक साधनों से काम करने की सम्भावना को सामने रखकर ख़र्च की अच्छी तरह तुलना कर ली जानी चाहिए। कार्यालय का काम मुख्य रूप से ऐसी विशेष जानकारी और अनुभव की व्यवस्था करना है जो आवश्यक हो पर प्रदेश में और कहीं उपलब्ध न हो : प्रदेश के भीतर उपलब्ध और विकसित किये जाने योग्य टैक्नीकल सेवाओं के साथ बिना ज़रूरत और सेवाएं स्थापित करना उसका काम नहीं है।

किसी चीज़ को प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अनुसार छापा जाए या गारंटी व्यवस्था के अधीन, इस प्रश्न का निर्णय हर एक मामले में अलग से किया जाना चाहिए, ऐसा करते समय इन इन बातों का ख्याल रखना होगा :—

(१) सामग्री कैसी है : छोटे आकार की अस्थायी सामग्री का प्रकाशन करने की बहुत ही कम आवश्यकता पड़ती है और इसलिए प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था से काम लिया जाना चाहिए। (२) कितनी मुफ्त बांटी जाएगी : किसी संस्करण का जितना अधिक अंश बिक्री की अपेक्षा मुफ्त बाँटने के लिए होगा, उतना ही उसे स्वयं छापने में फ़ायदा होगा। इसी प्रकार जितना कम अंश मुफ्त बिक्री के लिए हो, उतना ही प्रकाशक द्वारा छपवाने में लाभ होगा। (३) कार्यालय के अपने प्रदेश से बाहर की मंडियों में कितनी बिक्री हो सकती है : किसी पुस्तक के काफ़ी संख्या में बाहर की मंडियों में बिकने की जितनी अधिक सम्भावना होगी, उतना ही उसे आप छापने की बजाये प्रकाशक द्वारा छपवाने में फ़ायदा रहेगा, शर्त यह है कि प्रकाशक ऐसा चुना जाये जो बाहर के इलाकों में बिक्री करवाने के योग्य हो। (४) सामग्री कितनी स्थायी है : अगर काफ़ी समय तक (मिसाल के तौर पर तीन साल से अधिक) सामग्री की बिना किसी ख़ास परिवर्तन के ज़रूरत रहे तो इसे प्रकाशक द्वारा छपवाना ज़्यादा अच्छा होगा।

अगर सामग्री प्रयोगात्मक हो और जल्दी ही उसके पुराना पड़ जाने की सम्भावना हो तो अकसर स्वयं छापना ज़्यादा ठीक रहता है। (५) प्रदेश में काम करने वाले व्यावसायिक मुद्रक तथा प्रकाशक कितने योग्य हैं : जब तक प्रकाशक गारंटी व्यवस्था के अधीन उल्लिखित सेवाएं देने के योग्य और उनके लिए तैयार न हो, और कारगर वितरण व्यवस्था के विकास में सहयोग देने को राज़ी न हो, तब तक उसके द्वारा पुस्तक छपवाने और उसे मुनाफ़ा देने में कुछ लाभ नहीं। ऐसे ही अगर व्यावसायिक मुद्रक के भाव अनुचित रूप से अधिक हों तो भी उसकी सेवाओं का उपयोग करने में कोई तुक नहीं।

गारंटी में फेर बदल

प्रकाशक द्वारा काम कराने का मूल आधार यह है कि दोनों पक्ष ख़र्च और ज़िम्मेदारियों में हिस्सा बटाएं और लाभ में भी साझी हों। प्रकाशक नफ़ा कमाता है, पर इसके बदले में कार्यालय के लिए विशेष टैक्नीकल सेवाएं तथा वितरण की सुविधाएं, जिनका बहुत ही अधिक महत्व है, उपलब्ध करता है। वह सामग्री के उत्पादन के सिलसिले में अधिकांश तात्कालिक व्यय की भी अपनी ओर से व्यवस्था करता है। कार्यालय प्रकाशक को ठीक-ठीक किया हुआ मुसव्विदा देता है और अपनी गारंटी द्वारा एक नई तथा अनिश्चित मंडी में उसके जोखम को कम करता है। पर जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह ज़रूरी है कि प्रकाशक जो सेवाएं उपलब्ध करे वह अपने उद्देश्य को पूरा करने वाली हों। कार्यालय और प्रकाशक के सहयोग की सफलता इस बात से आँकी जाएगी कि समय बीतने पर कार्यालय द्वारा गारंटी दिए जाने की आवश्यकता बराबर कम होती जाए। शुरू-शुरू में शायद कार्यालय को पूरे संस्करणों को गारंटी देनी पड़े। बाद में यह सम्भव हो सकता है कि कुछ प्रकाशनों के सम्बन्ध में संस्करण के केवल कुछ भाग की गारंटी देने की आवश्यकता हो। मिसाल के तौर पर ७००० प्रतियों के संस्करण में से केवल ३००० की गारंटी दी जाए। शुरू में यह गारंटी अन्तिम ३००० प्रतियों के बारे में हो सकती है, यानी प्रकाशक को जोखम पहली ४००० प्रतियों की बिक्री के लिए होने के कारण कम और कार्यालय का जोखम अन्तिम ३००० प्रतियों के सम्बन्ध में होने के कारण अधिक होगा। पर ज्यों-ज्यों प्रगति होती है, बाजार में माल की साख बन जाती है तथा बिक्री की सम्भावनाओं के बारे में अधिक अच्छी तरह अनुमान लगाया जा सकता है, और इसके साथ ही लोगों में पढ़ने की आदत बढ़ती है, त्यों-त्यों स्थिति धीरे-धीरे बदलती जाती है और हम ऐसी हालत में पहुँच जाते हैं जब कार्यालय को संस्करण के केवल पहले भाग की गारंटी देनी पड़ती है।

अन्त में ऐसी स्थिति पैदा होने लगती है जब कार्यालय की देखरेख में तैयार हुए अधिकाधिक संख्या में मुसव्विदे केवल आवश्यक सूचना के साथ प्रकाशक के हवाले किए जाने लगते हैं और प्रकाशक उन्हें बिना गारंटी के छापने को तैयार होता है। दूसरे शब्दों में अन्तिम लक्ष्य यह है कि कार्यालय एक प्रकार से प्रकाशक का पुस्तक परीक्षक और उसके लिए काम लाने वाला एजेंट बन जाए।

परिव्यय निर्धारण और बजट

व्यावसायिक प्रकाशन में फ़र्म द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का मूल्य उसके खर्च के मुख्य भाग के आधार पर निश्चित किया जाता है। कर्मचारियों के वेतन, पुस्तकों के मुद्रण तथा उत्पादन के लिए आवश्यक सामान की लागत, मज़दूरी, रॉयल्टी तथा अन्य पारिश्रमिक, पूंजी का लाभांश, इमारतों की देख भाल का खर्च, विज्ञापन, सम्मानार्थ भेजी जाने वाली प्रतियों का मूल्य, व्यापारियों का कमीशन, असफल प्रकाशनों से होने वाली हानि इत्यादि सब कुछ पुस्तकों की बिक्री से पूरा होना चाहिए।

पुस्तक विक्रेता को भी पुस्तक की बिक्री से ही कर्मचारियों के वेतन और ऊपरी ख़र्च पूरा करके कुछ नफ़ा कमाना है और यह सब उसे प्रकाशक को दी गई क़ीमत और ख़रीदार से वसूल किए गए दामों के अन्तर में से निकालना है।

साहित्य कार्यालय के सरकारी विभाग होने से ही ये कठोर तथ्य ख़त्म नहीं हो जाते। उपरोक्त विभिन्न ख़र्चों का लेखा शायद ऐसे ढंग से न किया जाए कि वह जनता द्वारा उसके प्रकाशनों के लिए दिए गए दामों से पूरे हो जाएं, पर यह ख़र्च तो है ही और इन्हें पूरा भी करना होगा। कार्यालय के लिए यह जानना बड़ा महत्वपूर्ण है कि यह ख़र्च क्या है, भले ही इन्हें भी पूरा किया जाए। चूंकि कार्यालय एक अविकसित क्षेत्र में काम करता है, इसलिए यह लगभग निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पुस्तकों की बिक्री से यह सारा खर्च निकालना कई वर्ष तक सम्भव नहीं हो सकेगा। फिर भी यह ज़रूरी है कि लागत निर्धारित करने की ऐसी व्यवस्था की जाए जिससे काम के विभिन्न पहलुओं की प्रगति को ठीक-ठीक आंका जा सके।

कार्यालय परिव्यय निर्धारण की जो कार्यविधि अपनाता है उसकी कुछ विशेषताएं होती हैं। इस कार्यविधि का उद्देश्य यह होना चाहिए : (क) सरकार प्रदेश में साहित्य उपलब्धि के लिए कुल मिलाकर जो खर्च करे यह उसकी सही तसवीर पेश कर सके। (अगर यह काम कई विभाग अलग-अलग बिना

किसी योजना के करें तो इस तरह की सही तसवीर मिलना कठिन, बल्कि असम्भव है।) (ख) यह स्पष्ट रूप से पता चल सके कि काम के विभिन्न पहलुओं की क्या प्रगति हो रही है। (ग) इससे केवल आमदनी और खर्च के सन्तुलन का काम ही सिद्ध न हो बल्कि साहित्य कार्यालय के लक्ष्यों को प्राप्त करने में निश्चित रूप से बढ़ावा मिले।

यद्यपि विभिन्न प्रदेशों में बजट की अपनी निश्चित कार्यविधि होती है फिर भी निम्नलिखित बातों से यह अन्दाज़ा हो सकता है कि किस प्रकार की व्यवस्था करनी होगी :

पूंजीगत व्यय :—इसके अधीन नई इमारतों की (जहाँ ज़रूरत हो), छपाई, टाईप, मिमियोग्राफ़ आदि की मशीनों, कारों तथा डिलिवरी वैनों आदि पर होने वाला खर्च आता है।

सामान्य आवर्तक व्यय— (क) व्यक्तिगत वेतन तथा भत्ते, (ख) इमारतों की देखभाल, सफ़ाई, बिजली और टेलीफ़ोन आदि का खर्च, स्टेशनरी और दफ्तर के दूसरे छोटे-मोटे सामान की लागत, कार्यालय के अपने पुस्तकालय के लिए और साहित्य समितियों तथा अन्य संस्थाओं को भेजने के वास्ते किताबों, पत्रिकाओं आदि पर होने वाला खर्च, छपाई आदि के प्रयोग और जांच के लिए किए गए काम का व्यय (जब बिक्री की जांच के लिए प्रकाशन किया जाए तो खर्च प्रकाशन कोष से लिया जाय), लेखन प्रतियोगिताओं के संगठन और संचालन तथा उनमें दिए जाने वाले पुरस्कारों का खर्च, साहित्य समितियों को दिए जाने वाले अनुदान।

प्रकाशन कोष—यह एक अलग विशेष कोष है जो वास्तविक मुद्रण तथा उत्पादन के लिए एक तरह की कार्य-संचालन पूंजी का काम देता है। हर पुस्तक आदि के उत्पादन का प्रत्यक्ष व्यय इस खाते में से किया जाता है और हर प्रकाशन से होने वाली आमदनी इसमें डाल दी जाती है।

वितरण कोष—यद्यपि वितरण व्यवस्था का विकास करना साहित्य कार्यालय के काम का सबसे महत्वपूर्ण पहलू में से है, फिर भी इसका खाता अलग ही रखना उचित रहता है। वितरण के खर्च का अलग से अनुमान किया जाना ज़्यादा ठीक रहता है, क्योंकि यह अपने आप में अलग हैं।

प्रकाशन कोष—हर पुस्तक आदि की रचना और उत्पादन में कई प्रकार से आमदनी और खर्च होता है जो सामान्य प्रशासनिक व्यय से अलग इसी के खाते में डाला जाता है। सम्पादन के सिलसिले में लेखक, अनुवादक अथवा रूपान्तरकर्त्ता तथा चित्रकार को पारिश्रमिक देना होता है, यदि प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अधीन छपाई की जाए तो छपाई की लागत भी देनी पड़ती है।

वितरण के समय बिक्री से आमदनी तो होती है, पर विज्ञापन और नमूने की प्रतियों की बांट पर धन का व्यय भी होता है तथा प्रतियों के खराब होने और न बिकने से हानि उठानी पड़ती है। प्रत्येक प्रकाशन के लिए अलग खाता खोला जाना चाहिए जिसमें उसके खर्च और आमदनी का हिसाब रखा जा सके, क्योंकि कार्यालय को हर समय इस बात की जानकारी रहनी चाहिये कि प्रत्येक पुस्तक कैसे बिक रही है और प्रकाशन सामूहिक रूप से कैसे सफल हो रहे हैं। कार्यालय को पुस्तकों की ज़रूरत पड़ने पर (अनुदान के रूप में) लागत से कम दामों पर बेचने का भी एक ऐसा तरीक़ा अपनाना चाहिए जो सरल भी हो और जिसमें आवश्यक फेर बदल भी किया जा सके। प्रकाशन कोष तथा उसके उपयोग के तरीक़े एक ऐसा साधन है जिससे इन उद्देश्यों की पूर्ति में बहुत सहायता मिलती है और जिसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन करने की भी गुंजाइश रहती है।

चूंकि किसी पुस्तक की शुरू की तैयारी से लेकर उसकी छपाई और वितरण और फिर सारे संस्करण की बिक्री हो जाने तक सामान्यत: कई वर्ष का समय लग जाता है, इसलिए प्रकाशन कोष का संचालन परिवेष्टक कोष के सिद्धान्त के अनुसार किया जाना चाहिए। जब कार्यालय की स्थापना होती है। तो सरकार इस तरह के कोष के लिए एक अधिकतम राशि निश्चित करती है (जैसे, उत्तर रोडेशिया-न्यासलैंड संयुक्त प्रकाशन कार्यालय के लिए यह राशि ५००० पाउण्ड और पूर्व अफ्रीकी साहित्य कार्यालय के लिए २५००० पाउंड थी)। कार्यालय सारी रक़म एक साथ ही नहीं निकाल लेता : वह अपना प्रकाशन कार्यक्रम आरम्भ करने के लिए इसका कुछ अंश, मिसाल के तौर पर १००० पाउंड निकालता है और इसमें से उस पर खर्च करता है, फिर जब बिक्री से आमदनी होती है तो वह उसे इस खाते में डाल देता है। ज़ाहिर है कि शुरू में आमदनी की अपेक्षा ख़र्च बहुत अधिक रहता है और कार्यालय, जैसे-जैसे ज़रूरत पड़ती है, अपने लिए निर्धारित रक़म में से और अधिक रूपया निकाल कर इस कोष में डालता रहता है जिससे कोष सन्तुलित रहे। यह क्रम तब तक चलता है जब तक या तो निर्धारित अधिकतम राशि ख़त्म न हो जाए या आमदनी ख़र्च के बराबर न पहुंच जाए। अगर निर्धारित राशि काफ़ी न रहे तो यह काम कार्यालय का है कि वह सारी स्थिति सरकार के सामने रखे : तब अगर सरकार कार्यालय के कार्य और प्रगति से सन्तुष्ट हो तो वह इस राशि को बढ़ा सकती है। या दूसरा रास्ता यह है कि कार्यालय कुछ समय के लिए अपने कार्य के विस्तार को कम करे और तब तक इसे सीमित रखे जब तक बिक्री की आमदनी कोष को फिर सन्तुलित न कर दे। इस प्रकार, ऐसा 'परिवेष्टक कोष'

रखना न केवल कार्यालय के संगठन का एक आवश्यक अंग है बल्कि इसके द्वारा केन्द्रीय सरकार अपने साधनों तथा नीतियों के अनुसार काम का विस्तार घटा-बढ़ा भी सकती है ।

परिव्यय निर्धारण विधि

अब हमें यह देखना है कि कार्यालय को अपने प्रकाशनों के सम्बन्ध में लागत निर्धारित करने की क्या विधि अपनानी चाहिए। हम यह मानकर चलते हैं कि कार्यालय का उद्देश्य अपने प्रत्येक प्रकाशन का पूरा संस्करण ऐसे दामों पर बेचना है जिनसे उसे न लाभ हो न हानि । इस स्थिति में कार्यालय अपनी पुस्तकों के लिए अन्य सरकारी विभागों, पुस्तक भंडार (यदि कोई ऐसा भंडार हो) और परचून विक्रेताओं से जिस क़ीमत की अदायगी की आशा करता है वह वास्तविक लागत के लगभग होनी चाहिए। अगर कार्यालय कुछ नफ़ा भी कमाना चाहे तो उसे इस विधि में आवश्यक फेर बदल करके पुस्तक की परचून क़ीमत बढ़ानी चाहिए । अगर संस्करण का कुछ भाग अनबिका रहता है तो इससे पुस्तक के खाते में देनदारी या घाटा रहेगा । कार्यालय के लिए यह काफ़ी नहीं है कि वह अपने प्रकाशनों की लागत का हिसाब लगा दे और फिर जो कोई चाहे उन्हें मनमाने दामों पर बेचता रहे ।

यह तो सब मानते हैं कि एक ही पुस्तक अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग दामों में नहीं बिकनी चाहिए, उसका कोई निश्चित मूल्य होना चाहिए । अतः उद्देश्य यह होने चाहिएं :

(क) एक निश्चित प्रादेशिक परचून कीमत तै करना,

(ख) यह देखना कि इस क़ीमत से परचून विक्रेताओं को इतना काफ़ी कमीशन मिल सके जिससे वे वितरण के कार्य में योग देने के लिए प्रोत्साहित हों, जहां थोक व्यापारियों की ज़रूरत महसूस की जाए वहां इस क़ीमत में उनके नफ़े की भी गुंजाइश रखी जाए । कई हालतों में परचून विक्रेता के कमीशन में से ही थोक व्यापारी का हिस्सा निकाला जा सकता है, पर ऐसा करने में यह ध्यान रहे कि परचून व्यापारी कमीशन इतना कम न रह जाए कि उसे बिक्री के लिए कोई प्रोत्साहन ही न मिले ।

उपरोक्त आधार पर परिव्यय निर्धारण विधि इस प्रकार होगी :

(१) प्रकाशन कोष में प्रत्येक प्रकाशन के लिए अलग-अलग खाता खोला जाए ।

(२) सम्पादन का सारा खर्च प्रकाशन कोष में से किया जाए, जो पुस्तक के घाटा खाते में डाल दिया जाए ।

(३) जब उत्पादन का समय आये तो सामग्री या तो (प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अधीन) मुद्रक को सौंप दी जाए या गारण्टी व्यवस्था के अधीन प्रकाशक को दे दी जाए। पहली हालत में छपाई के दाम देने होंगे, यह पुस्तक के घाटा खाते में डाल दिए जायेंगे। अन्य सरकारी विभागों की ओर से मूल सामग्री की तैयारी का जो ख़र्च प्रकाशन कोष में से दिया गया हो वह अब वसूल करके पुस्तक के जमा खाते में डाला जा सकता है। अगर पुस्तक प्रकाशक के हवाले की जाती है तो फिर मुद्रक का बिल चुकाने का कोई प्रश्न नहीं होगा। तब प्रकाशक से सम्पादन व्यय का कुछ भाग देने को कहा जा सकता है और यह पुस्तक के जमा खाते में पड़ेगा। अगर कार्यालय चाहे तो वह पुस्तक की परचून कीमत कम रखने के लिए इस ख़र्च का कुछ अंश न लेने का फ़ैसला कर सकता है (देखिए आगे अनुदान सम्बन्धी खंड)।

(४) मुद्रण अथवा प्रकाशन का कार्य सम्पन्न होने पर कार्यालय का अगला काम परचून क़ीमत निर्धारित करना है (देखिए नीचे)।

(५) बिक्री मूल्य का निर्णय होने के बाद पुस्तक वितरण के लिए दे दी जायगी। तब बिक्री के दाम आने लगेंगे (वितरण का काम करने वाले व्यापारिक मूल्य पर कार्यालय से प्रतियां लेने लगेंगे)। विज्ञापन आदि (देखिए नीचे) के लिए कुछ ख़र्च (जिसका कुछ अंश अप्रत्यक्ष होगा) होने लगेगा जो पुस्तक के घाटा खाते में डाला जाएगा। अन्य कई बातों, जैसे प्रतियों का ख़राब होना, गुम हो जाना या न बिकना आदि, का भी पूरा हिसाब रखना (ब्योरे के लिए देखिए वितरण व्यवस्था सम्बन्धी खंड)।

(६) उचित समय पर, जब या तो सारा संस्करण बिक चुका हो, या यह निर्णय किया जाए कि पुस्तक पुरानी पड़ चुकी है और बाज़ार में और नहीं बिक सकती, प्रकाशन कोष में उसका खाता बन्द कर दिया जाता है और अन्तिम लाभ या हानि का हिसाब लगा लिया जाता है।

प्रादेशिक मूल्य का निर्धारण

प्रत्यक्ष रूप से मुद्रित पुस्तकें : प्रादेशिक मूल्य निश्चित करना न केवल अपने-आप में एक पूरा काम है, बल्कि इससे साहित्य उपलब्धि के कई महत्वपूर्ण पहलुओं का अन्दाज़ा हो सकता है। कार्यालय प्रकाशन कोष में किसी पुस्तक

के खाते की पड़ताल करके यह जान सकता है कि उसके उत्पादन पर क्या-क्या खर्च हुए हैं। इसमें कुछ और चीज़ों का भी हिसाब लगाया जाए, जैसे प्रकाशन से पूरा लाभ उठाने के लिए किया जाने वाला व्यय, विज्ञापन का ख़र्च, थोक और परचून व्यापारियों का कमीशन और अन्य ऊपरी ख़र्च।

पूरा लाभ उठाने के ख़र्च : यदि प्रकाशन से पूरा लाभ उठाना है तो कई प्रकार के ख़र्च करने होंगे, जैसे विज्ञापन देना और छोटे-छोटे 'ब्रोशूर' आदि छापना, कुछ प्रतियां नमूने के तौर पर मुफ्त भेजी जाएंगी, कुछ छपाई, गोदामों या डाक अथवा पार्सलों में ख़राब हो जाएंगी। इनमें से किसी से कोई आमदनी नहीं होगी, इसलिए लागत निर्धारित करने में इनका भी हिसाब लगना चाहिए। इसका एक उचित अनुपात (प्रकाशक लगभग यही अनुपात रखते हैं) अन्तिम परचून क़ीमत का चार प्रतिशत हो सकता है।

परचून विक्रेता का कमीशन : यह कमीशन निर्धारित परचून क़ीमत के २० से ६० प्रतिशत तक होता है : सामान्यतः इसकी दर २५ प्रतिशत और ३३$\frac{1}{3}$ प्रतिशत रहती है। नीचे जो हिसाब लगाया गया है उसमें इन्हीं आंकड़ों को आधार माना गया है।

थोक व्यापारी का कमीशन : यह परचून क़ीमत का पांच से दस प्रतिशत तक हो सकता है : सामान्यतः पांच प्रतिशत होता है।

ऊपरी ख़र्च : व्यावसायिक प्रकाशन में ऊपरी ख़र्च का मतलब व्यापार चलाने का वह ख़र्च होता है जो किसी पुस्तक को छापने की सीधी लागत में शामिल न हो, जैसे वेतन, किराया, बिजली, टेलीफ़ोन और दफ़तर का अन्य ख़र्च। साहित्य कार्यालय सामान्यतः पुस्तक की क़ीमत में यह ख़र्च शामिल नहीं करते : इसे नए साहित्य को प्रोत्साहन देने के लिए सरकारी अनुदान समझा जाता है, और शुरू-शुरू में यह ख़र्च उत्पादन को देखते हुए अपेक्षाकृत बहुत अधिक हो सकता है। यह कार्यालय के प्रशासन के वास्ते स्वीकृत राशि में से किया जाता है और इसे पुस्तकों की बिक्री से पूरा करने की कोशिश नहीं की जाती। फिर भी कार्यालय को इस ख़र्च के प्रति बेपरवाही नहीं बरतनी चाहिए। हो सकता है आगे चलकर व्यावसायिक प्रकाशकों की तरह वह भी इसे किताबों की क़ीमत में शामिल करना चाहे, क्योंकि कार्यालय का दीर्घकालीन उद्देश्य साहित्य उपलब्धि व्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाना है विभिन्न प्रकाशन फ़र्मों के यहां इसका अलग-अलग अनुपात होता है : सामान्यतः यह पुस्तक के उत्पादन व्यय का २० से ४० प्रतिशत तक होता है। नीचे के उदाहरणों में यह ख़र्च लागत का २५ प्रतिशत माना गया है।

अब पुस्तक की परचून क़ीमत निर्धारित की जा सकती है।

नीचे दी गई तीन मिसालें सामान्य सिद्धान्त प्रस्तुत करती हैं : स्थानीय परिस्थितियों और नीतियों के अनुसार आंकड़ों में फेर बदल की जा सकती है। इस तरह का हिसाब लगाने से यह लाभ होगा कि कोरे अनुमान पर ही नहीं चलना पड़ेगा और हानि तथा अनुदान आकस्मिक नहीं होंगे बल्कि पहले से निश्चित की गई योजना के अनुसार होंगे।

उदाहरण १ : यह मानते हुए कि ऊपरी ख़र्च कुल उत्पादन परिव्यय का २५ प्रतिशत, थोक व्यापारी का कमीशन ५ प्रतिशत और परचून व्यापारी का कमीशन ३३$\frac{१}{२}$ प्रतिशत है :

तैयारी का ख़र्च = क

मुद्रण का ख़र्च = ख

ऊपरी ख़र्च[1] = (क + ख) का २५ प्रतिशत = ग

क़ीमत (एक प्रति की) जो कार्यालय वसूल करना चाहता है = क + ख + ग = ल

परचून क़ीमत = व

तब ल (कार्यालय द्वारा वसूल किए जाने वाले दाम) = $\frac{२}{३}$ व (परचून विक्रेता बाकी एक तिहाई रखेगा) — $\frac{१}{२०}$ व (थोक व्यापारी का कमीशन) — $\frac{१}{२५}$ व (विज्ञापन तथा पूरा लाभ उठाने का अन्य व्यय)

अतः ल = $\frac{२}{३}$ व — $\frac{१}{२०}$ व — $\frac{१}{२५}$ व (कम से कम)

व = ल × १.७३४ (कम से कम)

या ल × १. ७५ के लगभग।

उदाहरण २ : यह मानकर कि ऊपरी ख़र्च उत्पादन परिव्यय का प्रतिशत, थोक व्यापारी का कमीशन ५ प्रतिशत और परचून व्यापारी का कमीशन २५ प्रतिशत है :

तैयारी का ख़र्च = क

मुद्रण का ख़र्च = ख

ऊपरी ख़र्च = (क + ख) का २५ प्रतिशत = ग

कीमत (एक प्रति की) जो कार्यालय वसूल करना चाहता है = क + ख + ग = ल परचून की कीमत = व।

तब ल (कार्यालय द्वारा वसूल किए जाने दाम)

= $\frac{३}{४}$ व बाकी एक चौथाई परचून विक्रेता रखेगा) — $\frac{१}{२०}$ व (थोक

नोटः—१ अगर यह व्यय पूरा करने के विचार न हो तो इसे हिसाब में न जोड़ा जाए।

व्यापारी का कमीशन) — $\frac{१}{२५}$ व (विज्ञापन तथा पूरा लाभ उठाने का अन्य खर्च)

अतः ल = $\frac{३}{४}$ व $\frac{१}{२०}$ व — $\frac{१}{२५}$ व (कम से कम)

व = ल × १.५१५ (कम से कम)

उदाहरण ३ : अगर लेखक को पारिश्रमिक के स्थान पर रायल्टी देना हो, तो रायल्टी आम तौर पर परचून कीमत की निश्चित प्रतिशत दर से दी जाती है । मान लो कि यह दर १० प्रतिशत है (जैसे कि आम तौर पर होती है); तब फारमूला इस प्रकार होगा :

कार्यालय द्वारा वसूल की जाने वाली क़ीमत — ल

परचून कीमत — व

तब ल = $\frac{२}{३}$ व (बाकी एक तिहाई परचून विक्रेता का) — $\frac{१}{२०}$ व — $\frac{१}{२५}$ व — $\frac{१}{२०}$ व (रायल्टी)

अतः व — २.०६८ × ल (कम से कम)

गारंटी वाली पुस्तकें—जब कार्यालय प्रकाशक की मार्फत पुस्तकें छपवाता है तो कार्यालय और प्रकाशक की बातचीत के दौरान ही प्रादेशिक परचून क़ीमत निश्चित हो चुकी होती है। कार्यालय अपनी वितरण व्यवस्था के अधीन बिक्री के लिए जो प्रतियाँ लेना चाहता है उसकी वह परचून क़ीमते नहीं देता बल्कि व्यापारिक क़ीमत देता है, अर्थात् निश्चित क़ीमत घटा परचून व्यापारी का कमीशन घटा थोक व्यापारी (यदि कोई हो) का कमीशन। गारंटी की अवधि खत्म होने पर बराबर कार्यालय अनबिकी प्रतियों की जो क़ीमत देता है वह भी इस व्यापारिक क़ीमत के बराबर होती है।

यदि लेखक को रायल्टी दी जानी हो तो रायल्टी की रक़म भी इस व्यापारिक क़ीमत से घटा दी जाती है, इसका कारण यह है कि प्रतियों की वास्तविक बिक्री न होने के कारण लेखक रायल्टी का अधिकारी नहीं है।

प्रकाशक द्वारा छापी गई पुस्तकों की परचून क़ीमत प्रत्यक्ष रूप से मुद्रित पुस्तकों से कुछ अधिक हो सकती है, क्योंकि उसमें प्रकाशक अपना नफ़ा भी शामिल करता है। पर, जैसा कि ऊपर बताया गया है, इसके बदले में इतनी ही बचत कार्यालय के प्रकाशन और संगठन सम्बन्धी खर्च में कमी होने के कारण हो सकती है।

यदि प्रकाशक अपने नफ़े के लिए पुस्तक की परचून क़ीमत का १०% रखता है, तब उदाहरण ३ में व लगभग २.७५ × ल के बराबर होगा : इस उदाहरण में परचून विक्रेता का कमीशन घटाकर २५ प्रतिशत कर देने से ब, २.१७ × ल के बराबर होगा। इस उदाहरण में परचून विक्रेता का कमीशन घटा कर २५ प्रतिशत कर देने से व, २.१७ × ल के बराबर होगा।

अनुदान

कभी-कभी पुस्तकों की लागत से कम दामों पर वेचना उचित होता है, मिसाल के तौर पर भूमि कटाव या स्वास्थ्य समस्याओं जैसे विषयों पर पुस्तकें इतनी महत्वपूर्ण हो सकती हैं कि जनता को वे बिना कठिनाई के उपलब्ध रहें। अधिकतर लोगों का यह अनुभव है कि पाठकों से नाम मात्र की क़ीमत लेना भी मुफ्त बाँटने से अच्छा है। ऐसा करने से यह पता चल सकता है कि प्रतियाँ कहां और कैसे बिक रही हैं, और यह बात कार्यालय के दीर्घकालीन उद्देश्यों के अनुकूल है।

जहाँ तक सरकारी विभागों की ओर से मूल सामग्री के उत्पादन का सम्बन्ध है, अनुदान की रक़म सम्बद्ध विभाग से सलाह मशवरा करके तै की जानी चाहिए और इस विभाग द्वारा कार्यालय को दी जानी चाहिए। कार्यालय के अपने प्रकाशनों के इस मामले में इस तरह की कोई नक़द अदायगी नहीं होगी। इस हालत में अनुदान की शक्ल यह होगी कि निश्चित परचून कीमत से आमदनी की लागत से कम हो और प्रकाशन कोष के सम्बद्ध खाते में मुनासिब हिसाब लगा लिया जाए। जैसे कि पहले बताया जा चुका है, कई कारणों से वितरण के ख़र्च में कमी करके अनुदान देना उचित नहीं होता। यदि वितरण मुख्य रूप से कार्यालय (सरकार) के अपने संगठन द्वारा किया जाए तो भी यह बात उतनी ही सही रहती है। इस प्रकार की व्यवस्था और हिसाब प्रत्यक्ष रूप से मुद्रित सामग्री के मामले में दो तरीकों से किया जा सकता है :

पहला तरीक़ा—ल निर्धारित करते समय उपरोक्त उदाहरणों में उल्लिखित क, ख अथवा ग ख़र्च का कुछ या सारा हिस्सा छोड़ दिया जाए। जो रक़म छोड़ी जाए वह या तो सम्बद्ध विभाग कार्यालय को दे, या यदि प्रकाशन कार्यालय का अपना हो तो यह रक़म प्रकाशन कोष के घटा खाते में डाल ली जाए। ल का निर्धारण करते समय इस ख़र्च को छोड़ देने से अन्तिम परचून क़ीमत 'व' जो 'ल' पर आधारित है, कम हो जाएगी। परचून विक्रेताओं की प्रतिशत कमीशन दर वही रहेगी, यद्यपि कमीशन की राशि में अवश्य कमी हो जाएगी।

दूसरा तरीक़ा—कभी-कभी यह ठीक समझा जाता है कि अनुदान की रक़म एक निश्चित परचून क़ीमत रखने के उद्देश्य से निर्धारित की जाए, यह नहीं कि पहले उदाहरण की तरह कुछ प्रकार के खर्च को पूरा न किया जाए और इसे छोड़कर जो रक़म निकले उसके आधार पर क़ीमत तै कर दी जाए। ऊपर के उदाहरण एक को आधार मानकर यह इस प्रकार किया जा सकता है :

सामान्य क़ीमत के आधार पर कार्यालय को (एक प्रति के लिये) जो राशि मिलेगी — ल।

अनुदान देकर जितनी (एक प्रति के लिए) परचून क़ीमत रखने का विचार है — श।

परचून क़ीमत श के आधार पर कार्यालय को (एक प्रति के लिए) जो राशि मिलेगी $= \frac{२}{३}$ श $- \frac{१}{२१}$ श $- \frac{१}{२५}$ श

$= \frac{१७३}{३००}$ श — ०.५८ श

इसलिए अनुदान — (ल — ०.५८श) × संस्करण की कुल प्रतियों की संख्या।

मिसाल के तौर पर उदाहरण १ के अनुसार किसी एक पुस्तक का कुल उत्पादन व्यय (ल) एक प्रति के पीछे २० इकाइयां आती हैं। तब पूरी परचून क़ीमत (व), जिससे कार्यालय का सारा उत्पादन व्यय पूरा हो जाए, २० × १.७५, यानी ३५ इकाइयाँ होगा। मान लीजिए कि इस पुस्तक को अनुदान देकर ३० इकाई परचून क़ीमत (श) पर बेचना है, तब अनुदान एक प्रति के पीछे ५ इकाइयां नहीं होगा, बल्कि यह होगा :

ल — ०.५८ श इकाई

= २० — ०.५८ × ३०

= २० — १७.४

= २ — ६ इकाई

परचून और थोक व्यापारियों के कमीशन की दरें चाहे कुछ भी हों और ऊपरी खर्च का कोई भी अनुपात निश्चित किया जाए, उनके आधार पर उचित फेर बदल के साथ इसी तरह हिसाब लगाया जा सकता है।

प्रकाशक की मार्फ़त छपवाई गई गारंटी वाली सामग्री के मामले में अनुदान का रुपया दो प्रकार से दिया जा सकता है। एक यह कि प्रकाशक को नक़द रक़म दे दी जाए, जिससे ल में कमी हो जाएगी, या कार्यालय पुस्तक को लागत के दामों पर प्रकाशक से ख़रीद ले और उससे कम क़ीमत पर अपनी वितरण व्यवस्था के अधीन बेचे। यह दूसरा तरीक़ा कुछ विशेष प्रकार की सामग्री (जैसे स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों) के मामले में ही ठीक रहता है, क्योंकि ऐसी सामग्री के प्रदेश से बाहर बिकने की सम्भावना नहीं है। अनुदान के इन दो तरीक़ों का हिसाब तो बहुत पेचीदा है, हां उनके लाभ और हानि का उल्लेख कर देना ठीक रहेगा।

पहले तरीक़े, यानी प्रकाशक को एक साथ नक़द रक़म दे देने का फ़ायदा यह है कि इससे परचून कीमत में अपेक्षाकृत कमी हो सकती है और इसके

अलावा यह तरीक़ा ज़्यादा सीधा और सरल है। नुक़सान इसका यह है कि इससे कार्यालय को नक़द अदायगी करनी पड़ती है और अगर उसका बहुत व्यापक प्रकाशन कार्यक्रम हो तो इससे बहुत असुविधा हो सकती है। फिर यह हिसाब भी बड़ा पेचीदा है कि अगर सारा संस्करण न बिके तो अनुदान का कितना अंश प्रकाशक से वापस वसूल किया जाए।

दूसरे तरीक़े का यह फ़ायदा है कि कोई नक़द रक़म नहीं देनी होती और संस्करण का जितना अंश न बिके उसके लिए कोई अनुदान नहीं देना पड़ता। नुक़सान यह है कि इससे परचून क़ीमत में उतनी कमी नहीं हो पाती, जितनी पहले तरीक़े से की जा सकती है।

वितरण

उत्पादन और परिव्यय निर्धारण के बाद वितरण की बारी आती है। जैसे कि पहले कहा जा चुका है, दीर्घकालीन उद्देश्य यह है कि लोग अपनी आवश्यक की ज़्यादा से ज़्यादा सामग्री खरीद सकें और उन्हें इसके लिए प्रोत्साहन मिले। तभी लोगों की चयन शक्ति का विकास हो सकता है और विविध प्रकार का साहित्य उपलब्ध कराया जा सकता है। इस प्रकार कार्यालय का यह काम है कि वह एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करे जिसमें सरकार और जनता दोनों की आवश्यकता पूरी हो सके, सरकार जो सामग्री बांटना चाहे उसके लिए भी प्रबन्ध हो जाए और जनता को भी अधिकाधिक सामग्री ख़रीदने की सुविधा प्राप्त हो। अतः वितरण सुविधाओं का विकास करने में निम्नलिखित आवश्यकताओं को पूरा करना होगा :

सरकारी विभागों को सामग्री (प्रायः मुफ़्त बांटने के लिए) मिलती रहे। संस्थानों तथा संगठनों—जैसे स्कूलों, सहकारी समितियों, स्वयंसेवी संस्थाओं आदि को अपने सदस्यों या स्थानीय जनता के लिए सामग्री उपलब्ध हो, यह सामग्री यथोचित मुफ्त भी बांटी जा सकती है और बेची भी जा सकती है। जिन लोगों को मुफ़्त सामग्री नहीं दी जाती, उन्हें क़ीमत पर आसानी से सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए, कुछ प्रकार की सामग्री, विशेषकर 'पूरक' सामग्री मुफ़्त बांटी ही नहीं जाती, इसलिए उसकी बिक्री के बारे में संगठित व्यवस्था होनी चाहिए। इस सबके लिए पुस्तक विक्रय सुविधाओं का सिलसिला स्थापित किए जाने की ज़रूरत है।

इन आवश्यकताओं को पूरा करने में कई बातों का ध्यान रखना चाहिए, जैसे :

(१) अगर हर सरकारी विभाग अपनी पुस्तकों के वितरण का स्वयं

प्रबन्ध करे और ये सारे काम अलग से अपने आप करे तो यह व्यवस्था असन्तोषजनक भी होगी और आर्थिक दृष्टि से भी हानिकारक रहेगी। सरकारी विभागों का यह काम नहीं होना चाहिए कि वे निरन्तर पुस्तकों के छोटे-छोटे पार्सल भेजते रहें, उनके बारे में पत्र-व्यवहार करें, छोटी बड़ी रक़में वसूल करें, पुस्तकों का लेखा रखें और जहां-तहां उन्हें गोदाम में रखने का प्रबन्ध करें।

(२) अनुभव से यह देखा गया है कि बिक्री के लिए पुस्तकें उपलब्ध कराने के सिलसिले में जो वित्तीय कार्याविधि अपनानी पड़ती है वह सामान्य वार्षिक सरकारी लेखे की व्यवस्था में मेल नहीं खाती।

(३) जिन लोगों को पुस्तकों की ज़रूरत होती है या जो लोग उनके वितरण में योग दे रहे होते हैं, उन्हें इस बात से अक्सर बड़ी असुविधा होती है कि अलग-अलग पुस्तक मंगवाने के लिए अलग-अलग विभागों को लिखा जाए। जिन्हें काम का काफ़ी अनुभव नहीं होता, उन्हें तो और भी कठिनाई होती है। अगर वे सभी किताबें एक ही स्थान से प्राप्त कर सकें तो कहीं अच्छा है।

(४) प्रदेश बाहर से किताबें मंगवाने का यह तरीक़ा सन्तोषजनक नहीं है कि विदेशी परचून विक्रेताओं से इन्हें ख़रीद लिया जाए, या फिर सरकारी टेंडर के तरीक़े से अथवा एक साथ बहुत सी पुस्तकें ली जाएं। इन सबसे देर भी बहुत लगती है और अक्सर क़ीमत में छूट भी कम मिलती है।

(५) चूंकि यह सारी आवश्यकताएं एक ऐसे प्रदेश में उठती हैं जहां व्यापार आदि का पूरा विकास नहीं हुआ है, और चूँकि इनके सिलसिले में कई विशेष समस्याएँ सामने आती हैं, इसलिए सामान्य व्यापारिक साधन आवश्यक विशेष सेवाएं उपलब्ध कराने में बहुधा असमर्थ होते हैं। फिर बिक्री और नफ़ा भी यहां इतना नहीं होता कि वे बिना किसी सहायता के अपने-आप इस काम में जुटने के लिए प्रोत्साहित हों। इसलिए अन्य उपायों की खोज करनी पड़ती है, कम से कम शुरू के वर्षों में तो ऐसा करना ही होता है। स्पष्ट है कि अगर पुस्तकों को पाठकों तक पहुँचाने के पर्याप्त साधन न हों तो पुस्तकें छापना बेकार है। इस दृष्टि से पुस्तकों के वित-

रण की विधि कम्बलों, साबुन, चीनी के पैकटों या अन्य किसी वस्तु की बांट के तरीक़े से भिन्न नहीं है। कारख़ाना (या पुस्तकों के मामले में छापाख़ाना) बड़ी मात्रा में माल तैयार करता है, इस माल को गोदामों में रखा जाता है, इसकी छोटी खेपें बनाई जाती हैं और उन्हें परचून बिक्री के स्थानों को भेजा जाता है, यह सब थोक व्यापारी का काम है। परचून की दुकानों से व्यक्तिगत उपभोक्ताओं के हाथ माल बेचा जाता है। इस सारे काम पर रूपया ख़र्च होता है। थोक विक्रय के स्थान पर प्रशासनिक और अन्य व्यय होता है, वहाँ से परचून की दुकान तक जाने में ढुलाई और भाड़ा लगता है। और फिर, परचून विक्रेता को भी अपनी रोज़ी कमानी है। किसी भी माध्यम से वितरण किया जाए, ख़र्च तो होता ही है। अगर सरकारी कर्मचारी यह काम करें तो हो सकता है कि कुछ ख़र्च अन्य मदों में डाल दिया जाए और पुस्तक की परचून क़ीमत में इसे शामिल न किया जाए, पर यह ख़र्च तो रहेगा ही। अगर साहित्य कार्यालय को अन्ततः एक ऐसा संगठन बनना है जो सजीव हो, अपना भार आप उठा सके और स्वयं अपने में नई शक्ति का संचार करता रहे, तो उसे हर प्रति की क़ीमत का हिसाब लगाते समय उसमें वितरण का ख़र्च भी शामिल करना चाहिए। जिन देशों में साहित्य उपलब्धि की व्यवस्था बहुत विकसित और स्थिर है, वहां ऐसा ही किया जाता है।

इन देशों में हर पुस्तक का एक "प्रकाशन मूल्य" निश्चित किया जाता है और उसी मूल्य पर उसे परचून विक्रेता जनता के हाथ बेचता है। यह मूल्य उस क़ीमत से अधिक होता है जिस पर परचून विक्रेता पुस्तक को थोक व्यापारी अथवा प्रकाशक से ख़रीदता है। इस अन्तर में वितरण के ख़र्च का अधिकांश शामिल होता है, जैसे कि परिव्यय निर्धारण सम्बन्धी खंड में बताया गया है। परचून व्यापारी का अपना कमीशन विभिन्न देशों में और विभिन्न प्रकार की पुस्तकों के लिए अलग-अलग होता है। अक्सर यह प्रकाशन मूल्य के २० से ६० प्रतिशत तक होता है। यह परचून व्यापारी का सकल लाभ है, शुद्ध लाभ नहीं। इसमें से आमतौर पर उसे भाड़ा और ढुलाई देनी पड़ती है, फिर उसे अपने कर्मचारियों को वेतन देना है और अपनी दुकान को चलाने के सिलसिले में अन्य ख़र्च भी उठाने हैं। जो प्रतियां वह न बेच पाए, उनका नुक़सान भी उसी को

बर्दाश्त करना है। कोई अच्छा विक्रेता ही नई पुस्तकों पर २० प्रतिशत नफ़ा कमा पाता है, बहुत सों का नफ़ा इससे बहुत कम होता है। बहुत से विक्रेता पुस्तकों के साथ-साथ स्टेशनरी, पत्र-पत्रिकाएं, चमड़े और शृंगार आदि की चीज़ें भी बेचते हैं। किताबें बेचना अपने-आप में बहुत नफ़े वाला व्यापार नहीं है। जिन इलाक़ों में लोगों के पास काफ़ी फ़ालतू पैसा नहीं है, वहां उन्हें अक्सर किताबें खरीदने से पहले अन्य आवश्यकताओं को पूरा करना होता है।

ऊपर के पैरों में जिन परिस्थितियों का जिक्र किया गया है उनसे ये निष्कर्ष निकलते हैं :

अगर हम सचमुच चाहते हैं कि साक्षरता को स्थिर बनाने तथा विकसित करने और निरक्षरता को बड़े पैमाने पर लौटने से रोकने के लिए पर्याप्त मात्रा में साहित्य उपलब्ध कराया जाए, तो शुरू से ही वितरण की समस्या के बारे में सक्रिय रूप से कार्रवाई करनी होगी, यह बाद में सोचने की बात नहीं है।

सरकारी और ग़ैर-सरकारी दोनों क्षेत्रों में प्रयत्न करना होगा। ग़ैर-सरकारी क्षेत्र में पुस्तकों की दुकानें, गांवों की दुकानें घूम-फिर कर पुस्तकें बेचने वाले, सहकारी समितियाँ, कल्याण संस्थाएं, क्लब इत्यादि सभी आ जाते हैं। चूंकि पुस्तकें बेचना बहुत ज़्यादा नफ़े का व्यापार नहीं है, और न यह काम बहुत आसान ही है, इसलिए जो परचून विक्रेता बिक्री में सहायता देने को तैयार हों, उनके कमीशन के मामले में अनुदारता नहीं बल्कि उचित हद तक उदारता बरती जानी चाहिए। और, पुस्तक की परचून कीमत में वितरण का ख़र्च भी शामिल रहना चाहिए।

अगर कार्यालय के लिए पुस्तक (अनुदान द्वारा) घाटे पर बेचना ज़रूरी हो, तो अनुदान के रूप में घाटा प्रशासन अथवा उत्पादन की मदों में उठाया जाना चाहिए, परचून विक्रेता का नफ़ा कम करके परचून की क़ीमत नहीं घटाई जानी चाहिए।

जो लोग समुचित सुरक्षणों के आधार पर वितरण के काम में योग देने को तैयार हों, उनकी परामर्श द्वारा तथा अन्य तरीक़ों से सहायता करने के लिए कार्यालय को अपने अमले, संगठन, कार्याविधियों और बजट में पर्याप्त व्यवस्था करनी चाहिए।

केन्द्रीय पुस्तक भण्डार

कभी-कभी एक केन्द्रीय पुस्तक भण्डार की स्थापना करके, जहां पठन सामग्री का स्टाक रहे, इन समस्याओं को हल करने में सहायता मिलती है। सरकारी विभाग अपनी ज़रूरत की सामग्री इस पुस्तक भंडार से ख़रीद सकते

हैं। और लोग जो अपनी ज़रूरत या बिक्री के वास्ते सामग्री लेना चाहें, वे भी पुस्तक भंडार से काफ़ी कमीशन पर इसे मंगवा सकते हैं। विधि यह है कि पुस्तक भंडार विभिन्न स्रोतों से थोक क़ीमत पर पठन सामग्री मंगवा कर अपने गोदाम में रखता है। फिर वह उसे परचून बेचने वालों को छोटी खेपों में व्यापारिक दामों पर देता है, जो उसे आगे बांटते या बेचते हैं। पुस्तक भण्डार जो नफ़ा कमाता है उससे उसके संचालन का आम खर्च पूरा किया जाता है। उसे सामान्य व्यापारिक तरीक़ों से काम करना चाहिए और वैसे ही अपना खाता भी रखना चाहिए उसका लेखा और बजट साहित्य कार्यालय के आम बजट का एक बिल्कुल अलग हिस्सा होना चाहिए। यद्यपि पुस्तक भंडार का उद्देश्य अपने खर्च के बराबर आमदनी करना होगा, फिर भी शुरू के वर्षों में उसे घाटा पड़ने की सम्भावना है। यह घाटा वितरण व्यवस्था विकसित करने का खर्च है। इस तरीक़े का फ़ायदा यह है कि घाटे का पूरा पता रहता है, उसके बारे में योजना बनाई जा सकती है और उसे अपने बस में रखा जाता है, वह इधर-उधर बंटा, छिपा या बस से बाहर नहीं रहता।

कुछ प्रदेशों में ऐसी संस्थाओं को, जो बहुत समय से स्थानीय लोगों को पुस्तकें उपलब्ध कराने का काम कर रही थीं, आधार बना कर इस तरह के पुस्तक भंडार की व्यवस्था की गई है। वहां सरकार ने, साहित्य कार्यालय के माध्यम से, इन संस्थाओं के साथ यह प्रबन्ध किया है कि वे इस मामले में सरकार की ओर से काम करें। उनकी सहायता के लिए सरकार ने जहां आवश्यक हुआ, इमारतों के लिए क़र्ज़ा दिया, पुस्तकों आदि के बारे में अपनी ज़रूरतें उनकी मार्फ़त पूरी कीं और कुछ हालतों में उचित स्वीकृत व्यय के लिए अनुदान भी दिए। मिसाल के तौर पर उत्तर रोडेशिया-न्यासालैंड संयुक्त प्रकाशन कार्यालय के उत्तर रोडेशिया खंड में ऐसा ही किया गया है। अन्य प्रदेशों में जहां इस तरह की व्यवस्था के लिए पहले से कोई आधार मौजूद नहीं था, साहित्य कार्यालय ने शुरू के वर्षों में कुछ आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने पुस्तक भंडार की स्थापना की है। इसके लिए सरकार की ओर से आवश्यक कार्य-संचालन पूंजी तथा इमारतों की व्यवस्था की गई। पुस्तक भंडार को सामान्य व्यापारिक ढंग से काम करने की इजाज़त दी गई है और उसे हर साल अपने व्यापार का लेखा सहकारी औडिटर को दिखाना पड़ता है। इस व्यवस्था के अनुसार उत्तर रोडेशिया-न्यासालैण्ड संयुक्त प्रकाशन कार्यालय की न्यासालैण्ड शाखा में काम हो रहा है।

इस प्रकार, कार्यालय के लिए अपना पुस्तक भंडार स्थापित करने की आवश्यकता और पुस्तक भंडार के कार्यक्षेत्र की व्यापकता बहुत हद तक प्रदेश

के भीतर पहले से काम कर रही है व्यापारिक संस्थाओं की कार्यकुशलता और कार्यक्षेत्र पर निर्भर करती है। यदि ये संस्थाएं कुशलता के साथ और व्यापक क्षेत्र में काम कर रही हैं तो इसकी आश्यकता कम अन्यथा अधिक होगी। अगर प्रदेश के भीतर कोई फ़र्म या संस्था आवश्यक पठन सामग्री तथा कार्यालय के प्रकाशनों को गोदामों में रखने और उनका थोक व्यापार करने को तैयार है, और इसके योग्य भी है, तो कार्यालय के लिए अपना पुस्तक भंडार बनाना एक दम आवश्यक नहीं है। पर यह याद रहे कि केन्द्रीय पुस्तक भंडार के कार्य का एक महत्वपूर्ण पहलू एक प्रकार से साहित्य कार्यालय की व्यापारिक शाखा के रूप में काम करना है। वह पुस्तकों को थोक या परचून बेचने के लिए ही नहीं है, उसे प्रदेश में वितरण व्यवस्था के विकास में ठोस और सक्रिय योग देना है और हर प्रकार से वितरण के सहायक साधनों को विकसित तथा प्रोत्साहित करना है। जब कार्यालय का अपना पुस्तक भंडार हो तो वितरण के इस सारे काम को उसी में केन्द्रित रखना ठीक रहता है, अन्यथा कार्यालय को अपनी व्यापारिक शाखा के माध्यम से इस कार्य का निर्देशन करना होगा।

वितरण संस्थाओं की क़िस्में

जिस तरह के प्रदेशों में साहित्य कार्यालय काम करते हैं उनके बारे में यह आशा नहीं की जा सकती कि वहां केवल पुस्तकों की बिक्री करने वाली दुकानों का बहुत व्यापक सिलसिला होगा। हो सकता है बड़े नगरों में इस प्रकार की दुकानें हों, पर छोटे स्थानों पर पुस्तकों की बिक्री से इतनी आमदनी होने की सम्भावना नहीं है कि केवल उन्हीं की दुकानें हों। इसलिए किताबें बेचने वालों को कुछ अन्य काम भी करने पड़ते हैं। नीचे कुछ ऐसे माध्यमों की सूची दी जाती है जिनके द्वारा पुस्तकों का विततरण करना विभिन्न साहित्य कार्यालयों के लिए लाभकारी रहा है:

केवल पुस्तकें बेचने वाली दुकानें, खानों, कम्पनियों, रेलवे स्टेशनों, बागानों आदि जनता के इकट्ठा होने तथा गुज़रने की जगहों पर स्थापित स्टाल, घूम-फिर कर किताबें बेचने वाली मोटर गाड़ियां, बिसाती की परचून दुकानें।

साहित्य समितियों के शाखा कार्यालय, शिक्षा संस्थान, धार्मिक संस्थाएं, सरकारी प्रशासनिक शाखाएं, हस्पताल इत्यादि।

सहकारी समितियां, कल्याण संस्थाएं, स्थानीय परिषदों के दफ्तर, साक्षरता केन्द्र आदि।

पुरुषों तथा स्त्रियों की समितियां और क्लब, पाठक मंडल और अन्य निजी संस्थाएं।

बिक्री बढ़ाने के उपाय

इन माध्यमों से साहित्य वितरण कार्य का विकास करने के लिए जिन उपायों से काम लिया गया है, वे इस प्रकार हैं :

सामग्री की क़ीमत में इतनी छूट देना कि उसे बेचने पर विक्रेता को उचित नफ़ा मिले।

शुरू में इस शर्त पर विक्रेताओं को पुस्तकें भेजना कि उन्हें न बिकने पर वापस ले लिया जाएगा। यह नए पुस्तक विक्रेताओं को प्रोत्साहन देने का बड़ा उपयोगी उपाय है, पर इसके बारे में काफ़ी सावधानी से काम लिया जाए। एक तो माल काफ़ी कम भेजा जाए, और दूसरे ज्यों ही दुकान या विक्रेता अच्छी बिक्री करता मालूम पड़े, या फिर बिक्री में कोई भी प्रगति दिखाई न दे, यह तरीक़ा बन्द कर दिया जाए। इस बात का पूरा ध्यान रखा जाए कि कौन अन-बिक्री प्रतियां भेजता ही नहीं है या बराबर गन्दी और ख़राब करके प्रतियां लौटाता है। शुरू-शुरू में इस बारे में अकसर सहानुभूति का रवैया अपनाना होता है, और इस तरह से होने वाला नुक़सान वितरण व्यवस्था को स्थापना का ख़र्च समझा जाता है, फिर भी यह ध्यान रहना चाहिए कि यह नुक़सान बहुत न बढ़े और विक्रेता अनुचित लाभ न उठाएं।

उपलब्ध सामग्री और उसके दामों के बारे में परामर्श देना और माल के चुनाव और ख़रीद में सहायता देना। बेचने वालों, विशेष कर छोटे और अनुभवहीन विक्रेताओं को ज़रूरत से ज्यादा माल मंगाने के जोखम से सचेत किया जाए, कई तरह की थोड़ी-थोड़ी किताबें रखना, थोड़ी सी किताबों की बहुत सी प्रतियां रखने से प्रायः अधिक लाभकारी होता है। पुस्तक विक्रेताओं को इस तरह की सलाह देना, कि कौन सी पाठ्य या अन्य पुस्तकों की लगातार मांग रहने की सम्भावना है, भी उपयोगी रहेगा। पर साहित्य कार्यालय को उन्हें इस बात से भी सचेत करना चाहिए कि स्कूलों और अन्य शिक्षा संस्थाओं में निश्चित पुस्तकों की अचानक बदली हो जाने से उनके पास बहुत बड़ी संख्या में बेकार किताबें पड़ी न रह जाएं।

पुस्तकों संभाल कर रखने और अच्छी तरह प्रदर्शित करने के लिए अच्छे डिज़ाइन की अलमारियाँ, शो केस, सन्दूक आदि उधार देना।

कार्यालय के कर्मचारियों का सलाह और सहायता के लिए दौरा करना। स्थानीय पुस्तक प्रदर्शनियों का आयोजन करना। कार्यालय द्वारा विक्रेताओं के नाम और पते विज्ञापित करना।

स्कूलों, अन्य शिक्षा संस्थानों, लायब्रेरियों आदि को, जहां तक हो सके,

स्थानीय विक्रेताओं से पुस्तकें ख़रीदने के लिए प्रोत्साहित करना, बशर्ते कि विक्रेता यह ज़रूरतें पूरी करने के योग्य और उसके लिए तैयार हो।

अनुभवहीन विक्रेताओं को, जब तक वे स्वालम्बी न हो जाएं, बाहर के प्रकाशकों से किताबें मंगवाने में सहायता देना।

पुस्तक भंडार का काम दो अलग दृष्टिकोणों से आंका जाना चाहिए :

(क) जब कार्यालय का अपना पुस्तक भंडार हो।

(ख) जब कार्यालय पहले से स्थापित किसी ग़ैर-सरकारी विक्रय माध्यम को आधार बना कर इस तरह का संगठन करे।

वितरण की सामग्री यह होगी : कार्यालय की अपनी छापी हुई सामग्री, गारंटी देकर व्यावसायिक प्रकाशक के सहयोग से छपवाई सामग्री, और वह पठन सामग्री को कार्यालय की सहायता के बिना प्रकाशकों या अन्य संस्थाओं ने अपने आप छापी हो पर प्रदेश के लिए उपयोगी समझो जाए।

कार्यालय का अपना पुस्तक भंडार

कार्यालय द्वारा प्रकाशित सामग्री : उत्पादन-कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् कार्यालय उपरोक्त विधि के अनुसार सामग्री का परिव्यय निर्धारित करेगा और थोक, व्यापारिक तथा परचून क़ीमतें निश्चित कर देगा। इसके बाद निम्न-लिखित विधियों में से कोई एक अपनाई जाएगी—यहां चुनाव का सवाल नहीं बल्कि कार्यालय को प्रशासन, गोदाम तथा लेखे के बारे में जिस विधि से सुविधा होगी उसे अपनाना होगा :

(१) पुस्तक भंडार किसी प्रकाशन की सभी प्रतियां लेकर उन्हें गोदामों में डाल दे और उनकी बिक्री आरम्भ कर दे। वह निर्धारित समय के बाद (मिसाल के तौर पर हर तिमाही में) बिक चुकी पुस्तकों की आय कार्यालय को भेज दे। कार्यालय को थोक क़ीमत के हिसाब से रुपया भेजा जाएगा और पुस्तक भंडार स्वयं परचून विक्रेताओं तथा सरकारी विभागों से व्यापारिक मूल्य अर्थात् प्रकाशित मूल्य में से ख़रीदने वाले के साथ हुए समझौते के अनुसार कमीशन निकाल कर बाक़ी दाम लेगा।

(२) कार्यालय गोदाम में रखने की आप व्यवस्था करे, इस हालत में पुस्तक भंडार को कार्यालय से केवल उतनी ही प्रतियां मिलेंगी जो शुरू में स्टाक करने के लिए काफ़ी समझी जाएं। सामान्यतः इस व्यवस्था के अधीन पुस्तक भंडार कार्यालय को पुस्तकों के मिलते ही थोक भाव के अनुसार दाम दे देता है, न कि उनके बिकने पर। जैसे-जैसे ज़रूरत पड़े, कार्यालय से और प्रतियां मंगवाई जा सकती हैं।

कार्यालय द्वारा गारंटी पर प्रकाशक से छपवाई गई सामग्री : इस विधि के अनुसार कार्यालय की गारंटी के बदले में प्रकाशक से यह आशा की जाती है कि वह वितरण व्यवस्था के विकास में सक्रिय योग दे और परचून विक्रेता को व्यापारिक मूल्य पर सीधा माल भेजे। इस तरह से छपवाये माल को गोदाम में रखना और बाज़ार में भेजना पुस्तक भंडार का काम नहीं। फिर भी उसे ऐसी पुस्तकों का कुछ स्टाक रखना ही होगा। क्योंकि अगर पुस्तक किसी सरकारी विभाग ने तैयार करवाई हो तो उसकी ज़रूरतें पूरी करने के लिए उसे प्रतियां भेजनी होंगी, और फिर, कई छोटे नये और अनुभवहीन परचून विक्रेता होंगे जो शुरू में थोक ख़रीदारी के लिए प्रकाशक की बजाय पुस्तक भंडार से लेन-देन करना ज़्यादा अच्छा समझते होंगे। इन विक्रेताओं को ऐसी सहायता की काफ़ी ज़रूरत होगी जिसका उल्लेख 'बिक्री बढ़ाने के उपायों' में किया गया है। इसलिए पुस्तक भंडार को गारंटी वाले प्रकाशनों का काफ़ी स्टाक अपने पास रखना होगा और वह यह स्टाक प्रकाशक से थोक भाव पर लेगा। ऐसी प्रतियों के दाम भण्डार उनके मिलने पर ही अदा करेगा, न कि बिक्री पर। हां, जहां तक उसके अपने ग्राहकों (परचून विक्रेताओं) का सम्बन्ध है, वह परिस्थितियों के अनुसार नक़द दाम भी मांग सकता है और माल उधार भी दे सकता है।

जो सामग्री न तो कार्यालय ने स्वयं छापी हो न उसकी गारंटी पर छपी हो : पुस्तक भंडार यह सामग्री प्रकाशकों या दूसरे उत्पादकों से थोक या सबसे अच्छे भावों पर खरीदेगा और माल के पहुँचने तक की लागत को 'ल' मानकर ऊपर के एक खंड में बताई विधि के अनुसार उसका परिव्यय निर्धारण करेगा। फिर वह उसे परचून विक्रेताओं को वैसे ही देगा जैसे दूसरे प्रकाशन देता हो। वह यह सेवाएं जब तक आवश्यक हो उपलब्ध करेगा, पर दीर्घकालीन उद्देश्य यह रहेगा कि जैसे ही परचून विक्रेता पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लें, वे सीधे प्रकाशकों से लेन-देन करने लगें। पुस्तक भंडार को यह जांचना होगा कि वह कौन सी किताबों की कितनी प्रतियां स्टाक में रखे, ताकि ज़रूरत से ज़्यादा संख्या में और बेकार हुई पुस्तकें उसके पास जमा न हो जाएं। इस बारे में यूं तो भंडार के प्रबन्ध को समुचित अधिकार दिए जाने चाहिएं, पर उसके लिए भी ठीक यह होगा कि वह सरकारी विभागों, शिक्षा संस्थानों, साहित्य समितियों, पुस्तकालयों और परचून विक्रेताओं से बराबर परामर्श लेता रहे और साहित्य कार्यालय के मुख्य अधिकारी से, जिसके प्रति वह उत्तरदायी होगा, पूरा सम्पर्क बनाये रखे। लेकिन यह सब होते हुए भी पुस्तक भंडार से आशा की जानी चाहिए कि वह परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार ज़्यादा से ज़्यादा क़िस्म का स्टाक रखे, न कि केवल ऐसी पुस्तकों का जिनका बिकना निश्चित

हो, क्योंकि उसकी स्थापना का कारण ही अन्य सुविधाओं का अभाव है। उसे गतिशील होना है, गतिहीन संस्करण माध्यम नहीं बनना है।

ग़ैर-सरकारी अभिकरणों के आधार पर विकास करना

जब पहले से ही कोई ऐसी व्यावसायिक पुस्तक विक्रय संस्था काम कर रही हो, जिसके पास वितरण का अपना प्रबन्ध हो, या ऐसा प्रबन्ध हो जिसे और व्यापक बनाया जा सके, तो स्पष्ट है कि उसे आधार बनाकर विकास करना नया संगठन बनाने के दुहरे काम से ज्यादा अच्छा है। पर कार्यालय अपना वितरण का काम किस हद तक ऐसी संस्था को सौंप सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि संस्था किस हद तक और किन शर्तों पर विविध प्रकार की पुस्तकों का स्टाक रखने और छोटे विक्रेताओं को कारगर सहायता और प्रोत्साहन देने के लिए तैयार है। अगर वह यह सब न कर सके तो कार्यालय को उसे भी दूसरे परचून विक्रेताओं जैसा समझना चाहिए, और विकास कार्य की जिम्मेदारी स्वयं संभालनी चाहिए। यह स्वाभाविक ही है कि कम-उन्नत देशों में साहित्य प्रवर्धन की अनिश्चित व्यापारिक परिस्थितियों के कारण व्यावसायिक फ़र्में उचित नफ़े की कुछ सम्भावनाओं की आशा ज़रूर करेंगी। उत्तर-रोडेशिया में प्रकाशन कार्यालय ने पुस्तक विक्रय का लम्बा अनुभव रखने वाली संयुक्त मसीही साहित्य सोसाइटी की सेवाएं प्राप्त की है। वहां यह सोसाइटी और कार्यालय एक दूसरे को इस प्रकार सहयोग देते हैं :

(१) कार्यालय सोसाइटी को अपने प्रत्यक्ष तथा गारंटी वाले सभी प्रकाशनों की प्रदेश के भीतर बिक्री के लिए 'सोल एजंसी' देता है।

(२) इसके बदले में सोसाइटी कार्यालय द्वारा प्रत्यक्ष रूप से मुद्रित सभी प्रकाशनों का पूरा स्टाक अपने गोदामों में रखना और किसी भी विधि से मुद्रित प्रकाशनों के स्टाक रखना, उन्हें प्रदर्शित करना तथा उनकी परचून बिक्री का प्रबन्ध करना स्वीकार करती है। इसके अतिरिक्त वह साहित्य कार्यालय की सहायता के बिना प्रकाशित विविध प्रकार की पुस्तकों को भी, जो प्रदेश के लिए उपयोगी समझी जाएं, अपने पास स्टाक करती है, प्रदर्शित करती है तथा उनकी परचून बिक्री का प्रबन्ध करती है। सोसाइटी यह भी स्वीकार करती है कि वह प्रदेश भर में ऐसे सभी अभिकरणों को जो पठन सामग्री के वितरण और विक्रय में योग देने को तैयार हों, सक्रिय सहायता और प्रोत्साहन देगी।

(३) सोसाइटी ऐसी अधिकरणों को (कार्यालय के अभिकर्ताओं के रूप में तथा स्वयं अपने लाभ के लिए) बिक्री बढ़ाने के उपायों में उल्लिखित अधिक-

तर कार्रवाइयों द्वारा सहायता देती है। सोसाइटी को कोई विशेष थोक व्यापार कमीशन नहीं मिलता, उसके साथ समझौता यह है कि वह कार्यालय से मिलने वाली छूट का कम से कम आधा भाग छोटे परचून व्यापारियों को देगी। अधिकतर प्रकाशनों के लिए उसे कार्यालय ३३⅓ प्रतिशत छूट देता है जिसमें से १६⅔ प्रतिशत आगे छोटे परचून बिक्रेताओं को मिल जाता है।

(४) सोसाइटी के काम के सिलसिले में उसके कर्मचारी प्रदेश के भीतर के इलाकों में परचून बिक्रेताओं से जाकर मिलते हैं और उनकी सहायता करते हैं। ऐसे दौरों के ख़र्च का कुछ अंश कार्यालय से अनुदान के रूप में वसूल किया जा सकता है।

(५) प्रत्यक्ष रूप से मुद्रित पुस्तकों की जितनी प्रतियां बिकती हैं उनके दाम सोसाइटी हर तिमाही में कार्यालय को दे देती है। गारंटी पर मुद्रित पुस्तकें वह सीधे प्रकाशक से मंगवाती है, प्रकाशक अपना बिल कार्यालय को भेजता है जो हर तिमाही उसकी अदायगी कर देता है और सोसाइटी हर तिमाही कार्यालय को बिक्री प्रतियों की व्यापारिक क़ीमत अदा कर देती है। अन्य प्रकाशनों की खरीद-फ़रोख्त की ज़िम्मेदारी सोसाइटी की अपनी है।

(६) सोसाइटी के काम में सहायता देने के लिए सरकार ने यह स्वीकार किया है कि वह अपने स्कूलों के लिए आवश्यक पुस्तकें उसकी मार्फ़त खरीदेंगे। अन्य शिक्षा संस्थाओं ने जिन्हें सरकार से अनुदान मिलता है स्वेच्छा से यह समझौता कर रखा है कि वे अपनी ज़रूरत की सामग्री सोसाइटी से ख़रीदेंगी।

(७) सोसाइटी स्कूलों की ज़रूरत की चीज़ें अपने यहां रखतीं है और शिक्षा संस्थानों को इस बात के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है, और अधिकतर संस्थान स्वयं इसमें सुविधा अनुभव करते हैं, कि अपनी ज़रूरत की चीज़ें सोसाइटी से प्राप्त करें।

(८) सरकार ने यह स्वीकार किया था कि यदि सोसाइटी अपना कारोबार बढ़ाने के लिए अपनी इमारतों आदि में विस्तार करना ज़रूरी समझे तो उसके लिए वह बिना ब्याज़ के कुछ ऋण ले सकती है, पर सोसाइटी को यह ऋण लेने की ज़रूरत नहीं पड़ी।

न्यासालैंड में इससे बिल्कुल अलग व्यवस्था है। वहां कोई ऐसा आधार मौजूद नहीं था जिस पर इस प्रकार का ढांचा खड़ा किया जा सकता। इसलिए वहां कार्यालय ने स्वयं अपना पुस्तक भंडार खोला जिसका नाम अफ्रीका बुक सैन्टर (ए० बी० सी०) है। इसका संसालन एक व्यापार प्रबन्धक करता है, जो कार्यालय के अमले का सदस्य है। यह सैन्टर ऐसे सब कार्य करता है जिनका ज़िक्र केन्द्रीय पुस्तक भंडार के संदर्भ में किया जा चुका है। न्यासालैंड सरकार

ने उत्तर रोडेशिया-न्यासालैंड संयुक्त प्रकाशन कार्यालय को इस कार्य के लिए ५००० पाऊंड का बिना ब्याज ऋण दिया और उसकी सहायता करती रही। ए० बी० सी० स्कूलों की ज़रूरत की सामग्री भी रखता है। सरकार के सहयोग की एक मिसाल यह है कि ए० बी० सी० का प्रबन्धक, हालांकि वह साहित्य कार्यालय का कर्मचारी है, शिक्षा विभाग का शिक्षा संभरण अधिकारी भी कह-लाता है, और सरकारी स्कूलों की ज़रूरी सामग्री उसी की मार्फ़त ख़रीदी जाती है। इससे पुस्तक भंडार की सहायता भी होती है और दोनों पक्षों को सुविधा और लाभ भी होता है।

पुस्तकों की चलती-फिरती दुकानें

कुछ परिस्थितियों में पुस्तकों की चलती-फिरती दुकानें निश्चय ही बड़ी लाभकारी सिद्ध हो सकती हैं। छोटी-छोटी सादा बैनों से लेकर बड़ी-बड़ी लारियों तक कई प्रकार की गाड़ियां प्रयोग में लाई गई हैं।

पुस्तक वितरण की मुख्य समस्या ऐसी जगहों पर सामने आती है जहां आबादी थोड़ी और बिखरी हुई होती है और यातायात की व्यवस्था अच्छी नहीं होती है। ठीक इन्हीं जगहों में आमतौर पर सड़कें सबसे रद्दी होती हैं। इस-लिए गाड़ी उतनी ही बड़ी और ऐसे ही नमूने की होनी चाहिए जो उस इलाक़े की सड़कों पर ठीक से चल सके।

किताबें बेचने की गाड़ी ख़रीदने और उसका संचालन करने पर काफ़ी ख़र्च आता है, और आमदनी से ख़र्च कहीं अधिक हो सकता है। विशेषकर ऐसे इलाक़ों में जहां फ़ासिले भी बहुत लम्बे हैं और आबादी भी छिद्री वहां ऐसा होने की विशेष सम्भावना है। उसके विपरीत ऐसे देहात या बस्तियों में जहां काफ़ी घनी आबादा और ख़ासी अच्छी सड़कें हों, स्थिर पुस्तक केन्द्र की बजाये चलती-फिरती गाड़ी से अधिक लाभ हो सकता है।

गाड़ियों का दो तरह से प्रयोग हो सकता है : जहां स्थिर पुस्तक केन्द्र का विकास न हुआ हो वहाँ इन पर से किताबें बेची जा सकती हैं, अन्यथा इनके द्वारा परचून विक्रेताओं को माल पहुँचाया जा सकता है। दोनों काम साथ-साथ भी किए जा सकते हैं। स्वयं कार्यालय को अपने काम को ठीक ढंग से चलाने के लिए किसी परिवहन साधन की आवश्यकता होती है, जिससे उसके कर्म-चारी प्रदेश में एक जगह से दूसरी जगह आ-जा सकें। इन सारे कामों को एक साथ करने का जितना भी अच्छा प्रबन्ध होगा, उतना ही फ़ायदा रहेगा। और, इसके अनुसार ही गाड़ी का डीज़ाइन भी चुनना होगा।

कभी-कभी पुस्तक-गाड़ियों से ही दूसरे सरकारी विभागों का भी काम

करके खर्च में और बचत की जा सकती है, जैसे इनसे फ़िल्में दिखाई जा सकती हैं, ध्वनि रिकार्ड करने का काम किया जा सकता है और सामुदायिक विकास दलों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता है। ऐसी हालत में कार्यालय गाड़ी के अन्दर किताबें रखने और बिक्री के स्थानों पर किताबें प्रदर्शित करने के लिए मुनासिब नमूने के फट्टे या बक्से लगवा सकता है और दूसरे सम्बद्ध विभाग के साथ बाकी जगह के उपयोग तथा यात्रा कार्यक्रम के बारे में प्रबन्ध कर सकता है।

आन्तरिक संगठन : अमला और उसके काम

कोई दो कार्यालय बिल्कुल एक जैसे नहीं हो सकते। कार्यालय कितना बड़ा हो और उसका संगठन कैसा है, यह कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे सम्बद्ध प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, जन-संख्या, आबादी का घना या छिद्री होना, भाषा और संस्कृति की समानता अथवा विविधता, प्रदेश का आर्थिक स्तर, साक्षरता का अनुपात, धन की उपलब्धि, कार्यालय के काम को सारकार द्वारा दी गई प्राथमिकता इत्यादि। यह सब बातें साहित्य कार्यालय के रूप और विकास पर प्रभाव डालेंगी। नक्शा १ व २ तथा आगे की गई व्याख्या में व्यापक कार्य-क्षेत्र वाले एक ऐसे कार्यालय की तस्वीर पेश की गई है। जिसे आवश्यकतानुसार घटाया-बढ़ाया जा सकता है। विस्तार करने के लिए छोटी शाखाएं खोली जा सकती हैं अथवा मुख्य कार्यालय के विभिन्न विभागों में अमले को बढ़ाया जा सकता है, संकोच के लिए विभिन्न कर्मचारियों के कुछ कामों को इकट्ठा किया जा सकता है। पर इन दोनों हालतों में मूल ढांचा और सम्बन्ध ज्यों के त्यों रहेंगे। ध्यान रहे कि एक नए प्रदेश में, चाहे वह कितना ही बड़ा हो, नक्शा २ में दिखाए गए पूरे संगठन और अमले के साथ कार्यालय खोलना न तो आवश्यक है और न व्यावहारिक दृष्टि से सम्भव। इससे बहुत छोटे संगठन के साथ काम शुरू किया जा सकता है। नक्शा २ में जो ढांचा दिखाया गया है वह एक सुसंगठित तथा सुव्यवस्थित साहित्य कार्यालय का है, न कि आरंभिक संगठन का।

नक्शा १ में साहित्य कार्यालय का संगठन, सम्बन्ध तथा कार्य दिखाए गए हैं। नीचे से ऊपर की ओर जाते हुए तीर के निशानों की नम्बरवार व्याख्या इस प्रकार है :

(१) जनता की साहित्य सम्बन्धी आवश्यकताओं का इस मामले से दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों—जैसे स्थानीय नेताओं, सरकारी अधिकारियों तथा सम्भावित लेखकों को पता चलता है, कुछ हालतों में इससे पुस्तकों का मुसव्विदा भी तैयार होगा।

(क) प्रादेशिक साहित्य समितियों द्वारा साहित्या कार्यालय के सहयोग के साथ साहित्य प्रतियोगिताओं का आयोजन किए जाने से न केवल मुसव्विदे प्राप्त करने में सहायता मिलती है, बल्कि लेखकों की खोज और पाठकों की आवश्यकताओं और रुचियों को आंकने के लिए भी यह तरीका बहुत उपयोगी है।

(२) आवश्यकताएं तथा मुसव्विदे प्रादेशिक साहित्य समितियों के सामने, जहां भी वे हों, या सम्बद्ध सरकारी विभाग के सम्मुख आते हैं। आम तौर पर मूल सामग्री की आवश्यकताओं के बारे में सरकारी विभाग और पूरक सामग्री के बारे में ज़्यादातर प्रादेशिक साहित्य समितियां कार्रवाई करेंगी।

(३) सरकारी विभाग तथा साहित्य समितियां अपने सामने आये मामलों पर विचार करने के पश्चात् साहित्य कार्यालय को सिफ़ारिशें भेजेगी, जो तीर के निशान ३ के अनुसार सलाह मशवरा करेगा और सम्पर्क रखेगा। यहां लेखक के चुनाव की पुष्टि हो सकती है।

(३-क) शिक्षा विभाग की विशेष आवश्यकताएं होती हैं और उसे सामग्री भी बहुत अधिक मात्रा में चाहिए, इसलिए अक्सर उसकी अपनी पाठ्य पुस्तक समिति होती है।

(४) ३ में हुए काम के फलस्वरूप सन्तोषजनक मुसव्विदा तैयार होता है, जिसे कार्यालय चुने हुए प्रकाशक अथवा मुद्रक को भेज देता है।

(५) ऐसा करने से पहले शायद कार्यालय अपनी केन्द्रीय साहित्य समिति से सलाह करना चाहे, विशेषकर यह बात कार्यालय द्वारा स्वयं तैयार कराई जाने वाली सामग्री पर लागू होगी। केन्द्रीय समिति का अध्यक्ष कोई वरिष्ठ अधिकारी होना चाहिए।

(६) मुद्रण तथा प्रकाशन कार्य सम्पन्न होने पर सामग्री कार्यालय की वितरण शाखा अथवा केन्द्रीय पुस्तक भंडार के पास जाएगी।

(६-क) कार्यालय के अपने संयोजन से छपी सामग्री के अतिरिक्त अन्य सामग्री भी वितरण शाखा में आ सकती है।

(७) लागत निर्धारित होने तथा मूल्य का हिसाब लगाये जाने के बाद सामग्री सरकारी विभागों (७) को भेजी जाएगी। अन्य सामग्री पुस्तकों की दुकानों और परचून विक्री के दूसरे स्थानों को जाएगी। कुछ सरकारी विभागों तथा संस्थानों को कार्यालय की बजाये परचून विक्रेताओं से सामग्री खरीदने में प्रोत्साहन दिया जाएगा। (७-ख) ज़्यादा अनुभव रखने वाले दुकानदार गारंटी वाली पुस्तकें सीधे प्रकाशकों से मंगवा सकते हैं (७ ख ग)।

(८) इस प्रकार पाठकों की कुछ आवश्यकताएं सरकारी विभागों द्वारा

नक्शा १—

साहित्य कार्यालय का संगठन, सम्बन्ध तथा कार्य

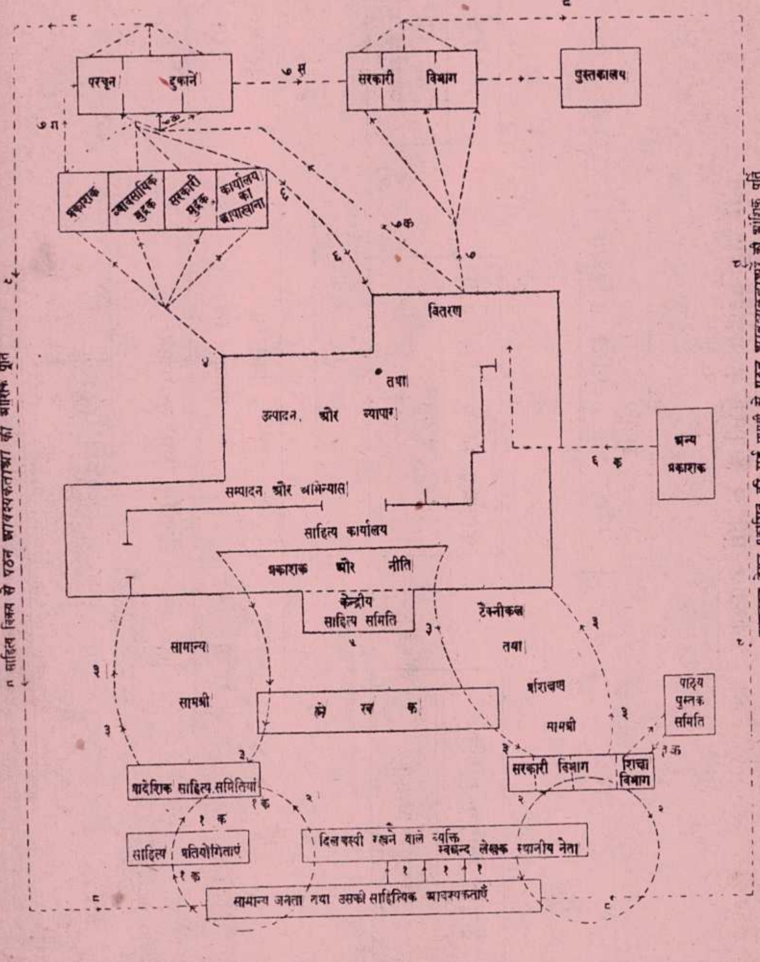

नक्शा-२—साहित्य कार्यालय का प्रशासन और ढांचा

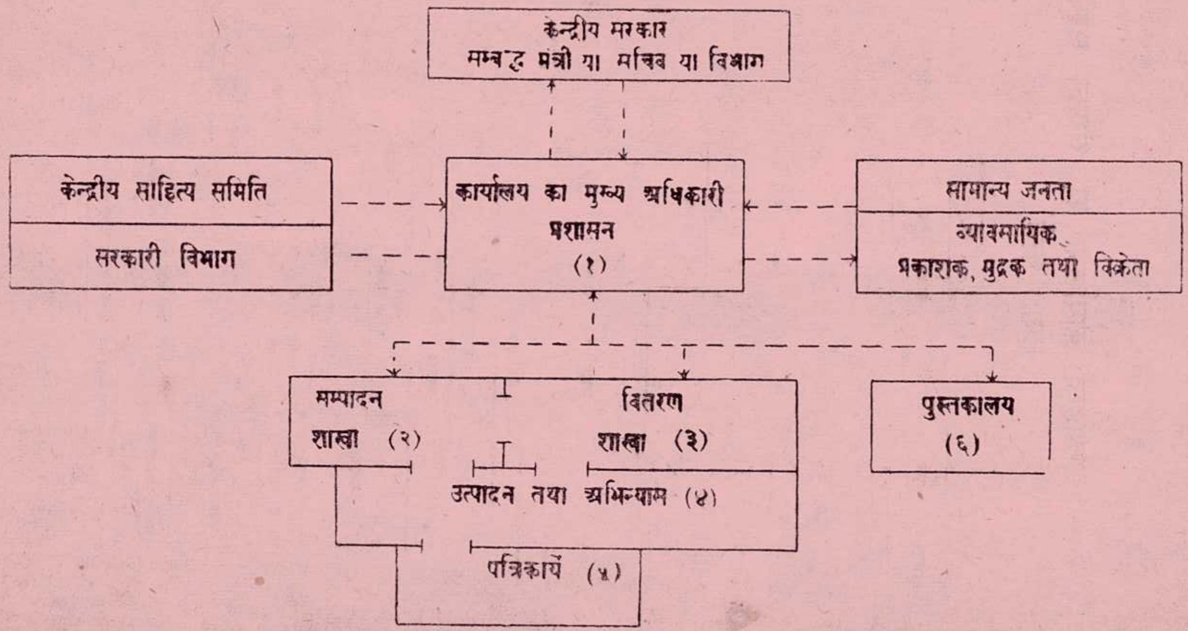

वितरण से और कुछ साहित्य क्रय की अन्य सुविधाएं विकसित करके पूरी की जाती हैं।

नक्शा २ में कार्यालय का प्रकाशन और संगठन ब्यौरे के साथ दिखाया गया है। आम तौर पर यह संगठन ऐसे प्रदेश के लिए उपयुक्त होगा, जहां आबादी ३० लाख से एक करोड़ तक हो, दो से चार तक मुख्य भाषाएं हों, काफ़ी हद तक सांस्कृतिक एकरूपता हो, लगभग ५० प्रतिशत लोग साक्षर हों और निरक्षरता दूर करने का पक्का इरादा हो।

कर्मचारी व्यवस्था

कर्मचारियों के संगठन और कार्यों के बारे में नक्शे के साथ साथ यह व्याख्या भी पढ़ी जाए :—

प्रशासनिक

अमला :—मुख्य अधिकारी, व्यापार प्रबन्धक, लेखा अधिकारी, प्रशासनिक सहायक (एक या अधिक), पुस्तकालय प्रबन्धक और सामग्री अधिकारी, कार्यालय सचिव।

कार्य :—सरकार को साहित्य उपलब्धि से सम्बद्ध मामलों पर सलाह देना और बाद में सरकार द्वारा निर्धारित नीति को कार्यरूप देना। कार्यालय का बजट, संचित वित्तीय लेखे तथा सामान्य आंकड़े इकट्ठे और तैयार करने और पेश करने के काम की देखरेख। सामान्य नीति संचालन तथा समूचे तौर पर कार्यालय का प्रशासन चलाना और संगठन करना। प्रकाशन के लिए मुसव्विदे चुनना और उन्हें स्वीकृति देना, यह तय करना कि मुद्रण प्रत्यक्ष रूप से किया जाए या गारंटी देकर प्रकाशकों से करवाया जाए, प्रकाशकों को दी गई गारंटी की पुष्टि करना। वितरण व्यवस्था के विकास के बारे में नीति निर्धारित करना। केन्द्रीय तथा प्रादेशिक साहित्य समितियों का विकास करना तथा उनके साथ सम्पर्क रखना, और सरकारी विभागों के साथ ताल-मेल करना। सामान्य सूचना का प्रसार और प्रगति की रिपोर्टों तथा दूसरे प्रदेशों से आई नमूने की सामग्री को इधर-उधर भेजना। साहित्य प्रतियोगिताओं का आयोजन। प्रादेशिक साक्षरता अनुपात की तुलनात्मक जांच करना और आंकड़े तैयार करना। (यह काम कोई अन्य सरकारी विभाग भी कर सकता है पर इसकी सूचना कार्यालय को उपलब्ध रहनी चाहिए)।

सम्पादन शाखा

अमला :—सम्पादन अधिकारी (एक या अधिक), मुसव्विदा जांच अधिकारी (एक या अधिक), अनुवाद निरीक्षक, अनुवादक (एक या अधिक)।

कार्य :—मुसव्विदे की प्रारम्भिक जांच। अन्य शाखाओं के साथ सलाह मशवरा करना और प्रकाशन के बारे में सिफ़ारिश पेश करना, तथा कार्यालय के मुख्य अधिकारी को विषय प्रस्तुत करने के ढंग के बारे में सिफ़ारिशें देना। संस्करण की संख्या का अन्य शाखाओं के साथ सहयोग करके, प्रारम्भिक निर्णय करना। अनुवाद और रूपान्तर का प्रबन्ध करना और इस काम पर निगरानी रखगा, ऐसे लोगों की सूची रखना जो इन कार्यों में सहायता दे सकें। सम्पादन प्रशिक्षणार्थियों के काम की देख रेख। अन्य सरकारी विभागों, प्रादेशिक साहित्य समितियों आदि को सुझाव देना। शुद्ध हिज्जों से सम्बद्ध मामलों का निपटारा।

वितरण शाखा

अमला :—व्यापार सहायक (एक या अधिक), स्टोर कीपर (एक या अधिक), पैक करने वाले (एक या अधिक), परचून बिक्री सहायक (एक या अधिक), परचून कार्य शिक्षार्थी।

कार्य :—कार्यालय द्वारा तैयार की गई सामग्री तथा अन्य साधनों से प्राप्त सामग्री को गोदामों में रखना। सरकारी विभागों तथा परचून बिक्रेताओं को माल भेजना। परचून बिक्रेताओं को व्यापार के सम्बन्ध में सहायता और सलाह देना और वितरण व्यवस्था का सामान्य विकास। स्टाक और वितरण का लेखा तथा इनके सम्बन्ध में अन्य हिसाब किताब रखना। (कहीं-कहीं स्कूलों की ज़रूरत की चीज़ें रखना और सप्लाई करना)।

उत्पादन तथा बनावट शाखा

अमला :—उत्पादन अधिकारी, चित्रकार (एक या अधिक) तथा अभिन्यास अधिकारी (एक या अधिक), मशीनों की देखभाल करने वाला, प्रूफ रीडर (एक या अधिक), प्रशिक्षार्थी।

कार्य :—अन्य शाखाओं के सहयोग के साथ अभिन्यासों (ले आऊट्स) तथा चित्रों चार्टों की तैयारी के बारे में टैक्नीकल सलाह देना और इस कार्य की देख रेख करना। कागज़ और ज़िल्द के चुनाव के काम की टैक्नीकल निगरानी, प्रकाशकों तथा मुद्रकों के साथ सम्पर्क, सामग्री की छपाई, सम्पादन शाखा के सहयोग से प्रूफ़ पढ़ना, प्रकाशकों और मुद्रकों के नामों की सूची बनाना और इस बात की जानाकरी रखना कि कौन कैसा काम सबसे अच्छा कर सकता है। कार्यालय के मुख्य अधिकारी को इस बारे में टैक्नीकल सलाह देना कि मुद्रण की कौन-सी नई विधियां उपयोगी हो सकती हैं और कार्यालय द्वारा अपना

छापाख़ाना लगाए जाने की अपेक्षा प्रदेश के भीतर मुद्रकों की किस प्रकार सहायता करने से अधिक लाभ हो सकता है। अगर कार्यालय की कोई मशीनें हों तो उन्हें चालू रखना और उनकी देखभाल करना। प्रायोगिक सामग्री की तैयारी।

पत्रिकाएं

अमला :—पत्रिका सम्पादक, चित्र आदि बनाने वाला, प्रेषण (डिस्पैच) क्लर्क, प्रशिक्षार्थी (एक या अधिक)।

कार्य :—पत्रिका के उत्पादन की कई समस्याएं अन्य सामग्री के उत्पादन की समस्याओं से भिन्न हैं। सामग्री भी भिन्न प्रकार की होती है और उसके लिये अभिन्यास भी अलग प्रकार के चाहिएं। अगर पत्रिका काफ़ी बड़ी है या विशेष ढंग की है, और ख़ासकर अगर वह साल में चार बार से अधिक छपती है, तो उचित यही है कि इसका अपना सम्पादक हो, अन्यथा दूसरी शाखाओं के काम में काफ़ी झंझट पड़ेगा। सम्पादक अभिन्यास तथा उत्पादन शाखा और वितरण शाखा से सहायता मांग सकता है, पर यदि पत्रिका का कुछ विकास होता है तो सम्पादक को कुछ मूल अमला दिया जाना आवश्यक होगा, चाहे यह अमला अतिरिक्त अनुभव प्राप्त करने के लिए कार्यालय की अन्य शाखाओं से भेजा हुआ क्यों न हों।

पुस्तकालय सेवाएं

पुस्तकालयों की व्यवस्था करना साहित्य कार्यालय का काम हो या अन्य विभागों का, यह बात मुख्यतः प्रशासनिक सुविधा तथा सम्बद्ध प्रदेश की पहले की परम्परा पर निर्भर है। हां, यदि कार्यालय को पुस्तकालय सेवाओं के लिए ज़िम्मेदार बनाया जाता है तो उनका प्रबन्ध अन्य शाखाओं से अलग चलाना होगा और उनके अमले की संख्या और ढांचा पूर्णतः पुस्तकालयों की संख्या और छोटा बड़ा होने पर निर्भर करेगा। कार्यालय को पुस्तकालयों के अमले के बारे में उत्तरदायी बनाया जा सकता है, या उन्हें अन्य, सम्भवतः अनेक प्रबन्धों के अधीन चलाया जा सकता है और कार्यालय उन्हें परामर्श देने तथा सामग्री उपलब्ध करने का माध्यम बन सकता है।

सामान्य अमला

इसमें टाईपिस्ट, सन्देशवाहक, गाड़ियों के ड्राइवर आदि आवश्यकतानुसार हो सकते हैं।

नक़्शा २ में कार्यालय के मुख्य अधिकारी और व्यापार प्रबन्ध का नाम साथ साथ दिखाया गया है। यह कार्यालय की इस नीति का सूचक है कि साहित्य उपलब्धि व्यवस्था का विकास शुरू से ही सामान्य स्वावलम्बी व्यापा-

रिक आधार पर करने में बढ़ावा दिया जाए। समुचित परिस्थितियों में अकसर प्रशासनिक शाखा में व्यापार प्रबन्ध के कार्य तथा लेखा रखने के काम को वितरण शाखा में व्यापार सहायक के काम के साथ बहुत हद तक मिलाया जा सकता है। जब कार्यालय का अपना केन्द्रीय पुस्तक भंडार न हो (अर्थात् वह यह कार्य किसी पहले से चल रही संस्था के माध्यम से करता हो) तो पुस्तक वितरण का बहुत सा वास्तविक कार्य नहीं रहता और कार्यालय को केवल प्रशासन, सम्पर्क तथा प्रोत्साहन का काम करना होता है। यह काम कार्यालय की प्रशासनिक शाखा कर सकती है और परिणामस्वरूप वितरण शाखा के अधीन उल्लिखित अमले की ज़रूरत नहीं पड़ती। इस काम को व्यापार प्रबन्धक, लेखा अधिकारी तथा कार्यालय का मुख्य अधिकारी और अन्य अमला बांट कर करें। ऐसा कार्यालय के विकास के शुरू के दौर में भी किया जा सकता है, क्योंकि तब बहुत कम सामग्री का निपटारा करना होता है। जब कार्यालय का अपना पुस्तक भंडार हो, पर काम की मात्रा दरमियानी हो, तो हो सकता है प्रशासनिक शाखा में अलग व्यापार प्रबन्धक की ज़रूरत न पड़े, उसका अधिकतर काम पुस्तक भंडार का मुख्य अधिकारी कर सकता है और बाक़ी प्रशासनिक शाखा के अमले में बांटा जा सकता है।

प्रशासनिक शाखा में प्रशासन सहायक और पुस्तकालय प्रबन्धक तथा सामग्री अधिकारी नियुक्त करना तभी आवश्यक है जब काम बहुत हो और व्यापक हो। केवल बहुत बड़े कार्यालय में ही ऐसे अधिकारी रखना उचित होगा। प्रशासन सहायक का अधिकतर काम सम्पादन शाखा में सम्पादन अधिकारी कर सकते हैं। पुस्तकालय प्रबन्धक तथा सामग्री अधिकारी का काम इतना कम होगा कि केवल बहुत बड़े कार्यालयों में ही ऐसा अलग अधिकारी रखने की गुंजाइश होगी पर अच्छे सचिव के बिना, चाहे कार्यालय कितना भी छोटा हो, काम चलना कठिन है।

छोटी शाखाओं या प्रादेशिक साहित्य समितियों में सचिवों की आवश्यकता बड़े कार्यालयों को, या फिर काम का काफ़ी विकास हो जाने पर, अथवा फिर स्पष्ट भाषागत या सांस्कृतिक विभाजन वाले प्रदेशों में ही पड़ेगी।

सम्पादन शाखा में सम्पादन अधिकारी की नियुक्ति पर कार्यालय को बहुत शीघ्र विचार करना होगा। वास्तव में यह अधिकारी व्यापार अधिकारी से भी पहले नियुक्त किया जा सकता है, भले ही उसके पद का महत्व व्यापार अधिकारी से अधिक न समझा जाए। सबसे अच्छा सम्पादन अधिकारी वही हो सकेगा जो स्वयं बहुत सी भाषाओं का जानने वाला हो। यदि ऐसा हो तो अनुवाद की देखरेख करने वाले अधिकारी की नियुक्ति की ज़रूरत अधिक काम

होने पर पड़ेगी। अगर कार्यालय के बाहर के अनुवादकों की सेवाओं का पारिश्रमिक देकर बहुत बड़े पैमाने पर उपयोग किया जा सके तो इस अनुवाद अधिकारी की नियुक्ति और भी अनावश्यक होगी। लेकिन इसका एक परिणाम यह होगा कि उन लोगों को अनुवाद की कला में प्रशिक्षण पाने की सुविधाएं नहीं दी जा सकेंगी, और जिन प्रदेशों में अनुवाद का महत्व बराबर बने रहने की सम्भावना हो वहाँ इस कमी की आसानी के साथ अनदेखी नहीं की जा सकती। जैसा कि पहले बताया जा चुका है कुछ अनुवादक तथा मुसव्विदे की जांच करने वाले कर्मचारी कार्यालय के स्थायी अमले में होंगे और कुछ अन्य जगहों से उसमें काम करने के लिए आये हुए होंगे। उत्तर रोडेशिया-न्यासालैंड संयुक्त प्रकाशन कार्यालय में दस्तूर यह है कि यह दोनों काम मिला दिए जाते हैं। यानी एक ही व्यक्ति मुसव्विदों की जांच भी करता है और अनुवाद का काम भी। इसका लाभ यह है कि एक तो उनके काम में यथार्थ की भावना पैदा होती है और दूसरे उनका प्रशिक्षण और भी मूल्यवान होता है। मुसव्विदे की जांच और अनुवाद करने वाले कर्मचारियों की संख्या इस बात पर निर्भर करती है कि काम कितना और कितनी भाषाओं में करना है। पर यह याद रखना चाहिए कि इन्हीं लोगों में से हमें आगे चलकर सम्पादन अधिकारी और कार्यालय के अन्य अधिकारी तथा प्रादेशिक साहित्य समितियों और कार्यालय की शाखाओं के सचिव मिल सकेंगे। इसलिए उनका पद बड़े महत्व का है, और उनके प्रशिक्षण के महत्व तथा भावी विकास की सम्भावनाओं के आधार पर भी उनकी संख्या निश्चित की जा सकती है। रूपान्तर करना सम्पादन अधिकारियों के कर्तव्यों में से एक है और यदि उन्हें पहले से उचित अनुभव हो तो वे कार्यालय के मुख्य अधिकारी की उसके कुछ कार्यों में सहायता कर सकते हैं और प्रादेशिक साहित्य समितियों तथा अन्य सरकारी विभागों के साथ सम्पर्क रखने में योग दे सकते हैं।

उत्पादन तथा अभिन्यास (ले आउट) शाखा के अमले की व्यवस्था बहुत हद तक कार्यालय द्वारा स्वयं छापे जाने वाली और गारंटी देकर प्रकाशकों से छपवाई जाने वाली सामग्री के अनुपात पर निर्भर करती है। अगर प्रत्यक्ष मुद्रण व्यवस्था के अधीन बहुत सी सामग्री छापी जाती हो तो इस शाखा का काम बहुत बढ़ जाएगा। अगर प्रदेश में समुचित व्यापारिक तथा व्यावसायिक सुविधाएं उपलब्ध हों और अच्छे चित्रकारों की, जो काम के हिसाब से पारिश्रम लेकर कार्य करने को तैयार हों, सूची बन सके तो इस शाखा के अमले में काफ़ी कमी की जा सकती है, और इसका ज़्यादातर काम प्रशासनिक तथा सम्पादन शाखाओं द्वारा निपटाया जा सकता है। पर फिर भी काम ऐसा है

जिसके लिए बहुत अधिक विशेष जानकारी की जरूरत है और बाहर से पारिश्रमिक देकर करवाये गये काम पर भी बहुत निगरानी रखने की ज़रूरत है, धन या परिश्रम के व्यय और असन्तोषजनक प्रकाशनों में भी काफ़ी जोखम है।

प्रशान्त सागर के एक द्वीप में एक सादा और कम ख़र्च वाले संगठन की योजना बनाई गई है जो उदाहरण के रूप में पेश की जा सकती है। इस संगठन के नमूने पर बड़े कार्यालय की शाखा की शुरुआत की जा सकती है। यह एक छोटा सा इलाक़ा था, एक जगह से दूसरी जगह आना-जाना बहुत आसान था, आबादी ८०००० थी, भाषा तथा संस्कृति की एकरूपता थी, मातृ भाषा में साक्षरता का अनुपात बहुत अधिक था, पर पठन सामग्री लगभग बिलकुल उपलब्ध नहीं थी और एक विदेशी भाषा (अंग्रेज़ी) के साहित्य की भी बहुत आवश्यकता थी, लायब्रेरियों और पुस्तक विक्रेताओं का अभाव था।

सर्वेक्षण से पता चला है कि यद्यपि सामान्य आवश्यकताओं को अच्छी तरह से अनुभव किया जाता था, पर काम इतना नहीं था कि उसके किसी एक हिस्से के लिए पूरा अधिकारी रखना उचित होता। परिणामस्वरूप प्रगति धीमी पड़ती जा रही थी, कुछ कार्यों के लिए तो किसी की ज़िम्मेदारी थी ही नहीं और कुछ के बारे में यह बहुत से लोगों में बंटी हुई थी। मुख्य आवश्यकता यह थी कि स्थानीय भाषा में ज़्यादा और अच्छी सामग्री के उत्पादन की ओर लगातार ध्यान दिया जाए और इस काम में प्रोत्साहन दिया जाए, स्थानीय प्रकाशनों तथा अंग्रेज़ी पुस्तकों दोनों के वितरण का प्रबन्ध सुधारा जाए, और पुस्तकालयों की स्थापना की जाए।

यह देखते हुए कि काम बहुत छोटे पैमाने पर होगा, एक स्वयंसेवी भाषा तथा साहित्य समिति की स्थापना का प्रस्ताव पास किया गया, जिसे ये काम करने थे :

एक केन्द्रीय पुस्तकालय खोलने के बारे में ब्योरेवार योजना तैयार करना, यह पुस्तकालय स्थापित होने पर सरकार की ओर से उसका प्रबन्ध संस्था के रूप में काम करना, उपलब्ध धनराशि में से पुस्तकें ख़रीदने के लिए उनका चुनाव करना।

लिपि और हिज्जों के सुधार विषयक मामलों की बराबर जांच की ज़िम्मेदारी संभालना और आवश्यक सिफ़ारिशें करना, सभी सम्भव उपायों द्वारा अच्छे स्थानीय साहित्य के उत्पादन के लिए प्रोत्साहन देना और प्रबंध करना।

प्रदेश के भीतर उपयोगी साहित्य के वितरण और विक्रय से सम्बद्ध मामलों पर बराबर ध्यान देते रहना।

समिति की रचना के बारे में रिफारिशें इस प्रकार थीं :

अध्यक्ष—सरकार का सचिव,

वैकल्पित अध्यक्ष—शिक्षा विभाग का निर्देशक,

सदस्य—शिक्षा विभाग का निर्देशक और पांच अन्य व्यक्ति,

सचिव—एक सवैतनिक अधिकारी।

एक छोटे से केन्द्रीय पुस्तक भंडार की स्थापना का भी प्रस्ताव किया गया जो स्कूलों की पुस्तकों तथा अन्य पठन सामग्री का स्टाक रखे और उपलब्ध करे, सारे द्वीप में पुस्तकों के वितरण में बढ़ावा दे और केन्द्रीय पुस्तकालय की स्थापना होने पर उसके लिए पुस्तकों का प्रबन्ध करे।

काम को निरन्तर और सक्रिय रूप से जारी रखने के लिए पूरे समय के एक अधिकारी की नियुक्ति का प्रस्ताव किया गया जो साहित्य तथा भाषा समिति का सचिव और प्रबन्ध अधिकारी तथा पुस्तक भंडार का प्रबन्धक भी हो, और शुरू-शुरू में केन्द्रीय पुस्तकालय का प्रबन्ध भी उसी के अधीन रहे। उसके नीचे चार छोटे सहायक कर्मचारी हों जो आम दफ्तरी काम-काज करें, पर इनमें से दो को लाइब्रेरी अथवा साहित्य उत्पादन कार्यों में ज़्यादा ज़िम्मेदारी का काम संभालने के लिए प्रशिक्षार्थी समझा जाए।

इस योजना की एक और विशेषता प्रदेश के १०५ स्कूलों के पुस्तकालयों की देख-भाल करना था। अब तक पुस्तकालयों के लिए पुस्तकों का प्रबन्ध करना और उनकी देख-भाल करना शिक्षा विभाग का काम था, जो अपने कर्मचारियों तथा स्कूल अध्यापकों से उनके अपने कार्य के अतिरिक्त यह काम भी करवाता था। अब पुस्तक भेजने और उनकी मरम्मत की देखभाल करने का कार्य केन्द्रीय पुस्तकालय और पुस्तक भंडार को सौंप दिया गया। इससे अध्यापक और अन्य कर्मचारी शिक्षा के अपने काम में, जो केवल वही कर सकते थे, और अधिक समय लगाने के योग्य हो गए। शिक्षा विभाग का निर्देशक साहित्य तथा भाषा समिति का सदस्य होने के नाते अब भी इन लाइब्रेरियों के काम में बराबर दिलचस्पी ले सकता है और उस पर अपना प्रभाव डाल सकता है।

इस योजना से पता चलता है कि कैसे बहुत बड़े खर्च वाला लम्बा चौड़ा संगठन बनाए बिना ऐसी व्यवस्था की जा सकती है कि एक छोटे से प्रदेश का एक दूसरे से सम्बद्ध साहित्य समस्याओं पर बराबर विशेषज्ञों द्वारा ध्यान दिया जा सके।

अमले की योग्यतायें और नियुक्ति

कार्यालय की स्थापना के सिलसिले में पहला काम यह होगा कि एक निर्देशक नियुक्त किया जाए। इस निर्देशक को अपनी नियुक्ति के पहले वर्ष का

अधिकांश इन कामों पर लगाना होगा : प्रस्तुत अध्ययन में उल्लिखित समस्याओं और इस तरह के अन्य मामलों का सर्वेक्षण करना, यह देखना कि अन्य सरकारी विभाग और व्यापारिक संस्थाएँ समस्या को और प्रस्तावित संगठन के काम को समझें, इन निकायों की समस्याओं को जानना और इनका सहयोग प्राप्त करना, सरकार को पेश करने के लिए प्रारम्भिक योजना और बजट का मुसव्विदा तैयार करना, और दूसरे वर्ष में कार्य आरम्भ करने के लिए उपयुक्त कर्मचारी वृन्द तैयार करना । आम तौर पर जितनी जल्दी हो सके एक अस्थायी केन्द्रीय साहित्य समिति नियुक्त कर दी जानी चाहिए और सक्रिय रूप से उसका परामर्श तथा योग प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए । इससे बड़ा फ़ायदा रहता है । पहले वर्ष के अन्त तक तात्कालिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक अल्पकालीन प्रकाशन कार्यक्रम बन जाना चाहिए और आगे दो या तीन वर्षों में जो प्रकाशन किए जाने हैं उनके बारे में नीति का स्पष्ट नक़्शा सामने आ जाना चाहिए ।

निर्देशक ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसमें प्रशासन की बहुत काफी योग्यता हो, यदि शिक्षा के क्षेत्र में उसका व्यापक अनुभव हो तो और भी अच्छा है । इस बात की सूझ-बूझ रखता हो, या प्राप्त कर सके । उसमें वैसी योग्यताएँ भी होनी चाहिएँ जो सम्पादन अधिकारी के लिए आवश्यक हैं । उसे एक ओर तो सरकारी विभागों से और दूसरी ओर जनता और व्यापारिक संस्थाओं के साथ कार-व्यवहार करना है, और यह काम आसान नहीं है । इन सब का सहयोग प्राप्त करने के लिए उसमें व्यक्तिगत गुण भी होने चाहिए और उसे मुनासिब दर्जा भी दिया जाना चाहिए ।

अगली नियुक्तियाँ, जो दूसरे वर्ष के आरम्भ में ही करनी होंगी, संभवतः सम्पादन अधिकारी या उत्पादन तथा अभिन्यास शाखा के अधिकारी की होंगी । अगर ये दोनों अधिकारी एक साथ नियुक्त न करने हों, तो फिर मुख्यतः स्थानीय परिस्थितियों को देखकर ही यह निर्णय किया जा सकता है कि किसे पहले और किसे बाद में रखा जाए । जहाँ बहुत सी सामग्री अपने आप छापनी हो, विशेषकर जब व्यापारिक मुद्रण सुविधाएँ पर्याप्त न हों, तो उत्पादन तथा अभिन्यास शाखा का जल्दी स्थापित किया जाना और भी आवश्यक हो जाता है । ऐसी परिस्थिति में उत्पादन तथा अभिन्यास शाखा के कर्मचारियों की नियुक्ति सम्पादन शाखा से पहले की जा सकती है । यह भी याद रखना चाहिए कि ऐसा करने से सरकारी विभागों द्वारा आयोजित मूल सामग्री की ओर तो अवश्य ध्यान दिया जाने लगेगा पर शायद पूरक सामग्री तथा वयस्कों की दिलचस्पी की आम और मनोरंजक सामग्री की ओर कम ध्यान दिया जा सकेगा,

जो सम्पादन शाखा के प्रमुख कार्यों में से हैं। उत्पादन तथा अभिन्यास शाखा के मुख्य अधिकारी की योग्यताएँ ऐसी होनी चाहिएँ कि वह इसी अध्ययन में पहले बताए गए कार्यों को पूरा कर सके। प्रदेश के भीतर काम का अनुभव निश्चय ही लाभकारी सिद्ध होगा, पर मुख्यतः इस पद के लिए टैक्नीकल योग्यताओं की आवश्यकता है जिनमें स्थानीय परिस्थितियों से अधिक फर्क नहीं पड़ता।

अगर सरकारी छापेखाने या व्यापारिक फ़र्मों के माध्यम से छपाई की काफ़ी सुविधायें उपलब्ध हों तो सम्पादन शाखा के कर्मचारियों की नियुक्ति, जिसमें कदाचित् एक चित्रकार भी हो सकता है, उत्पादन तथा अभिन्यास शाखा से पहले की जा सकती है। इससे मूल और पूरक सामग्री के प्रकाशन में साथ-साथ प्रगति हो सकेगी।

सम्पादन शाखा का कार्यभार संभालने के लिए एक अच्छा अधिकारी ढूंढ निकालना सदा ही आसान नहीं होता। उसकी पहली योग्यता यह होनी चाहिए कि उसे अपने पाठकों के रीति-रिवाजों और संस्कृति का अच्छी तरह से ज्ञान हो। आदर्श अधिकारी वह होगा जो मानव विज्ञान की कुछ जानकारी रखता हो, कई भाषाएं जानता हो और प्रकाशन के काम की भी उसे सूझ बूझ हो। यद्यपि उसे शिक्षकों के काम की सूझ होनी चाहिए और उनकी आवश्यकताओं के प्रति सहानुभूति का रवैया अपनाना चाहिए पर उसे अपने आपको ज़्यादा शिक्षक के रूप में नहीं देखना चाहिए।

चाहे कार्यालय अपना पुस्तक भंडार बनाए या अन्य संस्थाओं की मार्फ़त काम करने का निर्णय करे, दूसरे वर्ष के अन्त तक व्यापार प्रबन्धक की नियुक्ति करनी ही होगी, इससे अधिक देर शायद नहीं की जा सकेगी। व्यापार प्रबंधक के पद का बड़ा महत्त्व है। अगर सम्भव हो तो उसे पुस्तक व्यापार का अनुभव होना चाहिए, किसी प्रकार के परचून व्यापार का तजरबा तो होना ही चाहिए, लेख के बारे में योग्यता भी अनिवार्य है। जिस प्रकार से यह अधिकारी परामर्श देगा और जिस कुशलता से वितरण व्यवस्था का संगठन और विकास करेगा उसका कार्यालय की प्रगति पर बहुत असर पड़ेगा। इसके अतिरिक्त सम्पादन और उत्पादन शाखाओं पर कार्यालय के प्रकाशनों के बारे में जनता की प्रतिक्रिया का प्रभाव पड़ना ज़रूरी है और इस प्रतिक्रिया का पता वितरण शाखा में चल सकेगा, जिसका मुख्य अधिकारी यही व्यापार प्रबन्धक होगा।

तो ये हैं सबसे महत्वपूर्ण नियुक्तियां। अन्य पदों पर छोटे अधिकारी होंगे—योग्यता में कम नहीं, शायद तजरबा उन्हें कम हो सकता है। अन्य संगठनों की तरह यहां भी वे अपने काम से अनुभव प्राप्त करेंगे। उनकी नियुक्ति

उनकी योग्यताओं की पृष्ठभूमि और आगे उन्नति करने की क्षमता को देखकर की जा सकती है। वेतन की निश्चित दरें बताना सम्भव नहीं है। हाँ, मार्गदर्शन के लिए पुराने कार्यालयों की मिसाल दी जा सकती है, जिन्होंने निर्देशक का वेतन शिक्षा, कृषि आदि समाज सेवा विभागों के निर्देशकों और सहायक निर्देशकों के वेतन के बीच में कहीं निर्धारित करना उचित समझा है। अन्य पदों के लिए वेतन दरें दूसरे विभागों के समान अधिकारियों या कर्मचारियों के वेतन के बराबर अथवा निर्देशक के वेतन के साथ उनके अनुपात के आधार पर निश्चित की गई हैं।

नीति सम्बन्धी समस्याएं

कार्यालय का निर्देशक प्रकाशन कार्यक्रम के लिए उत्तरदायी है और उसके अनुभव, ईमानदारी और सूझ बूझ पर बहुत निर्भर करता है। सन्देह के सभी मामलों में उसके लिए अच्छा यही होगा कि वह अपनी केन्द्रीय साहित्य परामर्श समिति से सलाह ले और उसके बताये मार्ग पर चले।

एक विशेष कठिनाई ऐसे मुसव्विदों के बारे में पेश आ सकती है जिनके प्रकाशन से मतभेद उठ खड़े होने का डर हो, या जिनके वित्तीय दृष्टि से सफल होने में सन्देह हो। यद्यपि साहित्य कार्यालय सरकारी संगठन होने के नाते राजनीतिक प्रकाशनों से बचने की कोशिश करेंगे, फिर भी इस के लिए ऐसे मुसव्विदों के बारे में निर्णय करने का अवसर आ सकता है जिन पर अन्य कारणों से मतभेद होने की सम्भावना हो या जिनकी सफलता सन्दिग्ध हो। मिसाल के तौर पर, स्थानीय इतिहास तथा परम्पराओं के बारे में पुस्तकें अकसर लोक-प्रिय होती हैं पर उनपर मतभेद उठ खड़े होने की सम्भावना रहती है, विशेषकर जब उनका आधार दन्तकथाओं या सुनी सुनाई बातों पर हो। फिर, लिखने में बोलने के बजाय ज्यादा संयम से काम लेना होता है, पर नए साहित्य के सभी रचयिता इस बात को नहीं समझते। परिणामस्वरूप कार्यालय के पास ऐसे मुसव्विदे आ सकते हैं जो अपनी अभिव्यक्ति और अन्तर्वस्तु की दृष्टि से शायद नए और अछूते जान पड़ें, पर हो सकता है उसके पास यह अन्दाजा करने के लिए कि प्रकाशित होने पर वे कहां तक जनता को स्वीकृत होंगे या लोकप्रिय होंगे, बहुत ही कम पूर्वोदाहरण हों या बिल्कुल ही न हों।

इन मामलों का निर्णय करने का ऐसा कोई एक तरीक़ा नहीं है, जो सदा ही सफल रहे, इनसे निपटने के लिए अनेक तरीक़े आजमाए जा सकते हैं। अगर किसी पुस्तक में वास्तविकता और कल्पना दोनों का ऐसा मिश्रण हो जिसमें भेद करना कठिन हो, तो उसके शीर्षक की ओर ध्यान देना सहायक

होगा। मिसाल के तौर पर, किसी वस्तु या जन-समाज 'इतिहास' का मतलब यह होगा कि उसमें जो कुछ लिखा गया है वह प्रामाणिक है, पर 'इतिहास' शब्द को 'कहानी' में बदल देने से बड़ी होशियारी के साथ प्रामाणिकता के इस अभिप्राय को कम किया जा सकता है।

जहां प्रकाशन के सम्बन्ध में अनिश्चितता इतनी मतभेद की सम्भावना के कारण न हो जितनी उनकी अन्तर्वस्तु के लोकप्रिय होने या उसकी अभिव्यक्ति के ढंग को जनता द्वारा स्वीकार किए जाने के बारे में पूर्वोदाहरणों के अभाव की वजह से, तो वहां ध्यानपूर्वक सोच समझ कर लिखी गई भूमिका से बहुत काम चल सकता है। पर यह याद रहे कि कार्यालय का एक काम नई पाठक जनता की रुचियों के बारे में सूचना प्राप्त करना भी है और यह कुछ प्रकाशनों के बारे में प्रायोगिक दृष्टिकोण अपनाकर ही किया जा सकता है, दोषवेचन कार्यालय का काम नहीं है। वित्तीय सफलता का लक्ष्य सामने होना चाहिए पर यही एकमात्र मापदण्ड नहीं है। और फिर, किसी एक प्रकाशन में हुई आर्थिक हानि से कहीं अधिक लाभ उससे प्राप्त होने वाली जानकारी के कारण भावी प्रकाशनों में हो सकता है।

परिशिष्ट-१

सारांश तथा टिप्पणियां

डा० रूपर्ट ईस्ट

श्री बूस रॉबर्ट्स के अध्ययन में ऐसे प्रदेशों में, जहां अभी प्रकाशन व्यवसाय साहित्य सम्बन्धी सभी आवश्यकताएं पूरी करने योग्य नहीं हुआ है, सब प्रकार के साहित्य की उपलब्धि के माध्यम के रूप में एक साहित्य कार्यालय के कार्यों और संगठन का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। अध्ययन में कार्यालय के उद्देश्य, सामग्री इकट्ठी करने और उसका सम्पादन करने, उत्पादन, वितरण, परिव्यय निर्धारण और प्रशासन जैसी समस्याओं का सफलतापूर्वक विवेचन किया गया है।

लेखक की मुख्य धारणा यह है कि साहित्य कार्यालय को साहित्य उत्पादन का एक स्थायी साधन नहीं समझा जाना चाहिए, बल्कि यह मानकर चलना चाहिए कि उसका काम तब तक साहित्य की कमी को पूरा करने में योग देना है जब तक यह कार्य व्यावसायिक प्रकाशन स्वयं संभालने के योग्य न हो जाए, और कार्यालय की सभी गतिविधियों का आयोजन इसी आधार पर किया जाना चाहिए। अतः श्री रांबर्ट्स इस बात के पक्ष में हैं कि सभी स्थानीय सुविधाओं—कार्यालय से बाहर के लेखकों, प्रकाशकों, छापाखानों और परचून विक्रेताओं—का उपयोग किया जाए, यह नहीं कि कार्यालय इन सबका काम आप करे। इसी सिद्धान्त के अनुसार वे (क्षणिक साहित्य को छोड़) मुद्रक के साथ छपाई का ठेका करने की बजाय गारंटी देकर सामग्री प्रकाशित करवाने का तरीक़ा ज़्यादा अच्छा समझते हैं, और आमतौर पर कार्यालय द्वारा अपना छापाख़ाना स्थापित किए जाने के विरुद्ध हैं।

लेकिन चूंकि श्री रांबर्ट्स उपरोक्त सभी परिस्थितियों और प्रदेशों को इस अध्ययन के क्षेत्र में लाना चाहते हैं और कई वास्तविक कार्यालयों की कार्यप्रणाली और अनुभव के आधार पर एक मिली-जुली तस्वीर पेश करना चाहते

हैं, इसलिए उन्होंने अपनी सिफ़ारिशों के साथ यह शर्त जोड़ दी है कि उन्हें उसी हद तक अमल में लाया जा सकेगा जिस हद तक वे स्थानीय परिस्थितियों के अनुभव हों।

बजट और परिव्यय निर्धारण सम्बन्धी खंड का भी आधार यह सिद्धांत है कि व्यावसायिक प्रकाशन फर्मों की तरह ऊपरी खर्च समेत (जो भले ही सरकारी बजट की अन्य मदों में से हों) कार्यालय का सारा खर्च प्रत्येक प्रकाशन की परचून क़ीमत में शामिल किया जाना चाहिए, चाहे अनुदान द्वारा इस क़ीमत में कमी की जाए या नहीं।

यह अध्ययन केवल उन्हीं संगठनों के बारे में है जो सरकार के सीधे नियन्त्रण में साहित्य उत्पादन का कार्य करते हों। वास्तव में जिन संगठनों का वर्णन किया गया है वे सरकारी विभाग हैं, जिनमें सरकारी अधिकारी काम करते हैं। उसमें अर्ध-सरकारी तथा स्वतन्त्र निकायों जैसे बर्मा अनुदान सोसाइटी, गासकिया निगम (नाइजीरिया), जिस रूप में कि वह शुरू में स्थापित किया गया था, लिट्रेसी हाऊस (इलाहबाद) या जामिया मिलिया को शामिल नहीं किया।

ऐसे संगठनों के होने से लेखक की मुख्य दलीलों में कोई अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि इस प्रकार के बड़े ग़ैर-सरकारी संगठनों को भी अन्तिम समय की एक विशेषता समझा जा सकता है, जिनका स्थान अन्ततः आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी विकास के बहुत आगे के दौर में व्यावसायिक प्रकाशन व्यवस्था ले सकती है। साहित्य कार्यालय के दूसरे सरकारी विभागों के साथ पूरा सहयोग करने के बारे में जो कुछ कहा गया है वह वैसे ही, बल्कि उससे भी ज़्यादा, स्वतन्त्र निकायों पर भी लागू होता है। सही और व्यावहारिक बजट बनाने और परिव्यय निर्धारित करने की आवश्यकता स्वतन्त्र निकायों के मामले में और भी स्पष्ट है, चाहे उन्हें कोई अनुदान मिलता हो या नहीं।

यह मूल समस्या अब भी हमारे सामने है कि साहित्य कार्यालय या एक बड़े ग़ैर-सरकारी निकाय द्वारा कुशलतापूर्वक चलने वाला छापाख़ाना स्थापित करना और लेखन तथा वितरण जैसी साहित्य उत्पादन की अन्य शाखाओं की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना पूर्ण व्यावसायिक प्रकाशन के अन्तिम लक्ष्य की ओर प्रगति में कहां तक बाधक हो सकते हैं।

यह ख़तरा तो वास्तव में रहता ही है कि किसी बड़े संगठन की स्थापना से ग़ैर-सरकारी उद्यम के बढने में बाधा न पड़ जाए, और विशेषकर साहित्य उत्पादन के शुरू के दौर में, जब इस काम पर ऐसे संगठन का लगभग एकाधिकार सा होता है, इसकी सम्भावना और भी अधिक रहती है। पर इस

मामले पर (कम से कम कुछ प्रदेशों में) विशेष परिस्थितियों का भी असर पड़ता है, और उनमें से कुछ का होना लेखक ने भी स्वीकार किया है।

सबसे पहले, अगर प्रदेश ऐसा है जिसमें पहले से व्यवस्थित साहित्य की परम्परा नहीं है—और आमतौर पर उन प्रदेशों में जहां साहित्य कार्यालय स्थापित करने की ज़रूरत हो, सम्भवतः इसी तरह की स्थिति होगी—या कम से कम जैसे साहित्य की ज़रूरत है वैसा मौजूद नहीं है, तो यह आशा नहीं की जा सकती कि जनता में से बने बनाये लेखक मिल जाएंगे। इसलिए इस बात की अधिक सम्भावना नहीं कि केवल उपयुक्त मुसव्विदों के लिए अपील करने से ही कोई सन्तोषजनक परिणाम निकल सकेगा। अगर अनुभवी लेखक मौजूद भी हों तो भी स्पष्ट है कि वे उपयुक्त साहित्य, मिसाल के तौर पर ऐसी पुस्तकें जो एक विशेष स्तर तक साक्षर देहाती वयस्कों के काम की हों, नहीं लिख सकेंगे। ऐसे लेखन के लिए विशेष प्रकार की योग्यता चाहिए, जिसके लिए बहुत शोध कार्य और प्रयोग की ज़रूरत है।

इस तरह के काम करने का यह तरीक़ा ज़्यादा अच्छा है कि इसे संगठन के भीतर विशेष प्रशिक्षण पाए हुए या पा रहे लेखक करें और साथ में पूर्व परीक्षण, मूल्यांकन तथा जनता की रुचियों की जांच करने की सभी आवश्यक विधियों का प्रयोग किया जा सके।

निम्नलिखित टिप्पणियों का सम्बन्ध मुख्य रूप से ऐसी भाषाओं से है जिनकी कोई साहित्यिक परम्परा नहीं है या जिनका साहित्य अभी विकसित नहीं हुआ है। ये टिप्पणियां कुछ हद तक ऐसी साहित्यिक भाषाओं पर भी लागू होती हैं जिन्होंने अभी तक किसी विशेष उद्देश्य या विशेष वर्ग के लिए उपयुक्त लेखन पद्धति को जन्म नहीं दिया है। ऐसी हालत में बहुत ज़्यादा ज़रूरत बढ़िया आदर्श रचनाओं की है, जिनके आधार पर भविष्य में पुस्तकें लिखी जा सकें या जो भावी कृतियों का मानक बन सकें। हो सकता है कि ऐसी कोई रचना किसी प्रतिभाशाली स्वच्छन्द लेखक की लेखनी से अचानक हो जाए, पर ज़्यादा सम्भावना इसी बात की है कि इस तरह की पुस्तकें विशेष उद्देश्यों को सामने रखकर काम करने वाला कर्मचारी वृन्द वर्षों के अनुभव और अभ्यास के बाद तैयार कर सकेगा।

साहित्य उत्पादन के शुरू के दौर में अच्छे नमूने पेश करना बहुत ज़रूरी हैं, क्योंकि अगर पहले-पहले छापी गई किताबें, शैली, लिपि तथा हिज्जों, व्याकरण आदि की दृष्टि से अच्छी नहीं होंगी तो उनसे एक ऐसी मिसाल बन जाने का डर है जो बहुत समय तक क़ायम रह सकती है। ऐसा खास तौर पर स्कूलों

की पुस्तकों के मामले में देखने में आता है । बच्चे छोटी आयु में, जो नई बातें और नए प्रभाव ग्रहण करने की उम्र होती है, पढ़ने-लिखने की ख़राब आदतें डाल लेते हैं जो उनकी आयु के साथ-साथ बढ़ती जाती है, और फिर अगली पीढ़ी में पहुँच जाती हैं । एक बार ये आदतें और पूर्वाग्रह भाषा में घुस जाएं, फिर उन्हें निकालना लगभग असम्भव हो जाता है । इसी वजह से इस धारणा के साथ सहमत होना कठिन है कि साहित्य उत्पादन संगठनों के काम के शुरू के दौर में ज़्यादा किताबें छापना अच्छी किताबें छापने से अधिक महत्वपूर्ण है । अगर शुरू में ही, कम से कम प्रारम्भिक सामग्री तैयार करने वालों—जैसे, लेखकों, अनुवादकों और प्रूफ रीडरों—से, ऊँचे स्तर के काम की आशा की जाए तो भाषा में या उस तरह की आगे होने वाली रचनाओं पर बहुत बड़ा असर पड़ेगा, और जो अतिरिक्त समय या ध्यान दिया गया होगा वह व्यर्थ नहीं जाएगा । अगर एक शाखा इस बात पर पूरा ध्यान दे, तो ज्यादा संख्या में पुस्तकें छापना भी सम्भव हो सकता है, ये दोनों चीज़ें एक दूसरे के विपरीत नहीं हैं । मुख्य प्रश्न शुरू में ही सबसे योग्य लोगों को एक जगह इकट्ठा करने का है । कुछ बहुत बढ़िया किस्म की आदर्श पुस्तकें तैयार करने में शायद पांच या दस वर्ष लग जाएं, पर किसी भाषा के जीवन में आख़िर यह समय है कितना ?

चित्रों आदि पर भी यही बातें लागू होती हैं । अगर एक बहुत अच्छा चित्रकार परिश्रम करके किसी विषय के उपयुक्त ऐसे चित्र और चार्ट बनाता है जो प्रभावपूर्ण भी हों और आसानी के साथ समझ में भी आ सकें, तो उनका असर उसका काम बन्द हो जाने के बाद भी बहुत समय तक दिखाई देगा । न केवल अन्य चित्रकार उसकी शैली का अनुसरण करेंगे, बल्कि पाठक भी उसी स्तर के काम की मांग करने लगेंगे । चित्रों आदि की बुरी परम्परा बनाना भी इतना ही आसान है, इससे जनता वैसे ही घटिया काम की आशा करने लगेगी और बाद में पसन्द भी करने लगेगी ।

अनुवाद और रूपान्तर के लिए भी प्रशिक्षित विशेषज्ञों की आवश्यकता है, विशेषकर जब दोनों सम्बद्ध भाषाओं की पृष्ठभूमि और अभिव्यक्ति का ढंग अलग-अलग हो । सिवाय ऐसे प्रदेशों के जहां इस तरह के विशेषज्ञ पहले से मौजूद हों, यह काम पारिश्रमिक देकर शायद ही करवाया जा सके, इसे प्रशिक्षित कर्मचारियों को ही करना चाहिए ।

प्रस्तुत अध्ययन का लेखक इस बात को स्वीकार करता है बाहर के प्रकाशक जो सेवाएं उपलब्ध कर सकते हैं वे प्रदेश और स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं । इस मामले में ऐसी साहित्य उत्पादन संस्था को जो सच-

मुच प्रकाशकों से सहयोग करना चाहे और उन्हें मंडी में जाने देना चाहे कठिनाई पेश आ सकती हो। एक ऐसी संस्था की मिसाल लीजिए जो इस उद्देश्य से बनाई गई है कि देसी भाषा या भाषाओं में खास क़िस्म की पठन सामग्री उपलब्ध कराई जाए। गांवों के लोगों तक यह सामग्री पहुँचने की आशा की जाती है, पर वितरण के इस काम के लिए कोई सुव्यवस्थित संगठन नहीं है। अब इरादे चाहे कितने ही ऊंचे और दृढ़ हों, पर यह समझना कठिन है कि शुरू के दौर में किसी बाहरी प्रकाशक से कैसे कोई ख़ास सहायता मिल सकेगी। वह मुसव्विदों, आदि का प्रबन्ध नहीं कर सकता, क्योंकि उसके स्थानीय सम्पर्क नहीं हैं। मुसव्विदों, सम्पादन और प्रूफ़ पढ़ने के लिए उसे संस्था के कर्मचारियों पर निर्भर करना होगा। वह इस सामग्री को छाप नहीं सकता और भाषा का ज्ञान न होने के कारण मुसव्विदे पर छपाई के लिए निशान तक नहीं लगा सकता। मुद्रित सामग्री का वितरण भी वह नहीं कर सकता। वह पूंजी का प्रबन्ध करेगा—यदि संस्था उसे जोखम से बचाने के लिए गारंटी दे—सामग्री को गोदाम में रखेगा, और आवश्यकता पड़ने पर नए संस्करणों की व्यवस्था करेगा। कई बार ऐसे स्थानीय प्रकाशक उपलब्ध नहीं होते जो यह कार्य कर सकें और प्रश्न बाहरी, सम्भवतः अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करने वाली फ़र्मों की सेवाओं का उपयोग करने का रह जाएगा। निश्चय ही ये फ़र्में स्थानीय प्रकाशनों की अपेक्षा ज्यादा अच्छी शक्ल-सूरत वाली किताबें प्रकाशित कर सकेंगी, पर प्रदेश की अपनी साहित्य उत्पादन व्यवस्था स्थापित करने में उनका कोई वास्तविक योग नहीं होगा, वे तो उन्हें स्थानीय मुद्रकों से छपवायेंगी भी नहीं।

पाकिस्तान या भारत जैसे अपेक्षाकृत अधिक विकसित अर्थ-व्यवस्था वाले देशों में स्थानीय प्रकाशकों की निश्चय ही कोई कमी नहीं है, बल्कि कुछ तो बहुत अच्छी योग्यता और साख रखते हैं। पर वहां भी उनसे यह आशा करना उचित नहीं होगा, कि वे कम से कम जब तक उनके द्वारा अनुसरण के लिए अच्छे नमूने तैयार न हो जाएं, इस नए क्षेत्र में सन्तोषजनक पुस्तकें प्रकाशित कर सकें। प्रकाशन के ठेकों के लिए होड़ का तरीक़ा भी (जो एक समय में पाकिस्तान में शिक्षा की किताबों के लिए अपना गया था) इस तरह के साहित्य के प्रकाशन के लिए उपयुक्त नहीं होगा।

शिक्षा की किताबें छापने वाली कुछ विश्वविख्यात प्रकाशन फ़र्मों ने ऐसी किताबें प्रकाशित की हैं जिनका बहुत सी भाषाओं में अनुवाद हुआ है, अक्सर यह अनुवाद कार्य स्थानीय संस्थाओं के सहयोग से किया गया है। एक बनावट रखकर और समान चित्र आदि छापकर, वे बड़े पैमाने पर बहुत अच्छी

पाठशालाएं उपलब्ध कर सकी हैं । पर इनका लाभ अभी सीमित ही है, क्योंकि किसी एक देश में तैयार की गई पठन सामग्री, चाहे वह कितनी भी सर्वमान्य रुचि की हो, अन्य देशों के लिए बहुत कम ही उपयुक्त रहती है, और चित्र आदि तो लगभग कभी भी नहीं । शुरू के दौर में तो एक ही प्रदेश के अलग-अलग इलाक़ों की भी आवश्यकताएं भिन्न होती हैं। हां, ऐसी पुस्तकों का मामला अलग है जो अन्य देशों के लोगों के बारे में हों, या ऐसे विषयों पर हों जिनमें संसार भर में दिलचस्पी ली जाती हो । पर शायद ऐसी पुस्तकें नए साक्षर लोगों के लिए बहुत ज़्यादा उपयोगी नहीं होंगी ।

इसलिए मेरा विचार है कि प्रकाशकों के सहयोग तथा स्थानीय साधनों के पूरे उपयोग की इच्छा प्रशंसनीय होने पर भी कई हालतों में पूरी तभी की जा सकेगी जब प्रदेश में आमतौर पर शिक्षा का विकास और आर्थिक प्रगति हो चुके । तब तक साहित्य संस्था को रचना, रूपान्तर, चित्रकारी, प्रकाशन तथा मुद्रण के क्षेत्रों में काम स्वयं संभालना पड़ेगा, चाहे सिद्धान्त रूप से वह यह काम ग़ैर-सरकारी उद्यम पर छोड़ना ठीक समझती हो ।

पर वह यह सब कार्य स्वयं करते हुए भी अन्तिम लक्ष्य—पूर्ण रूप से शिक्षित ऐसे जन-समाज की स्थापना जो अपनी आवश्यकता का हर प्रकार का साहित्य रचे, छापे और बेचे—की प्राप्ति में बहुत योग दे सकती है । कम से कम एक वैकल्पित सिद्धान्त यह प्रस्तुत किया जा सकता है कि किसी साहित्य संस्था के लिए शुरू के वर्षों में इस लक्ष्य की प्राप्ति में योग देने का सबसे अच्छा तरीक़ा कर्मचारियों के प्रशिक्षण और बढ़िया आदर्श सामग्री के उत्पादन पर बल देना है, उसे ज़्यादा मात्रा में सामग्री प्रकाशित करने और उत्पादन कार्यक्रमों को किसी न किसी तरह पूरा करने तथा मामूली क़िस्म की बहुत सी पुस्तकों को छापने के लोभ में आकर इस उद्देश्य से हटना नहीं चाहिए । हो सकता है इस मार्ग पर चलकर वह अन्ततः देश के भावी साहित्य उत्पादन के लिए ज्यादा लाभप्रद कार्य कर सके, क्योंकि इस तरीक़े से वह अच्छे लेखन तथा उत्पादन की परम्परा स्थापित कर सकेगी और सुयोग्य लेखकों तथा टैक्नीकल जानकारों का एक ऐसा समूह तैयार कर सकेगी जो उसकी अपनी उपयोगिता समाप्त हो जाने के बाद भी बढ़िया काम का सिलसिला जारी रख सकेंगे ।

परिशिष्ट-२

पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय की परिव्यय सूचियां

नमूने की लागत सूची-क

कार्यालय द्वारा खर्च का अनुमान

पांडुलिपि नं० :—१०००, शीर्षक : लैंप्रोसी (लुगांडा)

छापने का खर्च		शिलिंग	सैंट
५०५० [1]प्रतियों का मुद्रण		४००	००
चित्र : हाफ़टोन ब्लाक		१००	००
लेखक का पारिश्रमिक-शून्य		—	—
हाऊसचार्ज[2] (छोटा मोटा खर्च)	२½ प्रतिशत	१०	००
ढुलाई की सुरक्षित राशि में[3]	२½ प्रतिशत	१०	००
आकस्मिकता कोष[4] में	२½ प्रतिशत	१०	००
		५३०	००
अनुदान		२८०	००
अनुदान के बाद अनुमानित लागत		२५०	००

नोट :—१. यद्यपि ५०५० प्रतियां छापी गईं, परन्तु परिव्यय निर्धारण ५००० प्रतियों के आधार पर किया गया। शेष ५० प्रतियां मुफ्त बांटने, बिक्रय परिबर्धन तथा पुस्तकालयों को भेजने के लिए हैं।

२. यह कार्यालय द्वारा किए जाने वाले अनेक छोटे-मोटे खर्चों (जैसे विज्ञापन आदि) के लिए है। पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय के लिए २॥ प्रतिशत की सुरक्षित राशि काफ़ी रही है, पर अन्य प्रदेशों में यह कम या अधिक हो सकती है।

३. कार्यालय ६८०००० वर्गमील क्षेत्र में थोक व्यापारियों को पुस्तकें पहुँचाता है और इनकी ढुलाई उनसे नहीं लेता। इससे सारे पूर्व अफ्रीका में पुस्तकें समान मूल्य पर बिक सकती हैं। यह खर्च इस सुरक्षित कोष में से लिया जाता है, जो पर्याप्त सिद्ध हुआ है।

४. कार्यालय के प्रकाशन कोष स्टाक पर किये जाने वाले ऐसे खर्च के लिए, जो सामान्य खर्च न समझा जाए, सुरक्षित कोष।

एक प्रति की शुद्ध अनुमानित लागत		०५
जमा १०० प्रतिशत[५]		०५
बिक्रय मूल्य		१०
कमीशन : परचून बिक्रेताओं[६] के लिए	२५ प्रतिशत	
थोक बिक्रेताओं[७] के लिए	३३⅓ प्रतिशत	
अनुदान का वितरण :[८]	कार्यालय के अनुदान कोष में से	
अन्य टिप्पणियां :	ब्लाकों का कुल खर्च इसी संस्करण के खर्च में जोड़ा गया, अन्य चार देसी भाषाओं के संस्करणों के खर्च में इसे शामिल करने की आवश्यकता नहीं।	

तिथि : ३१ दिसम्बर १९५६

सी० जी० रिचर्ड्स
निर्देशक, पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय।

---

५. कोष को चालू रखने के लिए कुछ नफ़ा ज़रूरी है। पूर्व अफ्रीका साहित्य कार्यालय के लिए यह नफ़ा पर्याप्त सिद्ध हुआ है। यह कार्यालय अपने प्रकाशन कोष का उपयोग केवल तात्कालिक, प्रायोगिक तथा बहुत सस्ते प्रकाशनों के लिए करता है। नियमानुसार उसके लिए प्रकाशन व्यवसाय के साथ होड़ करने की मनाही है। अगर कोई पुस्तक बाजार में साधारण बिक्री के लिए छापनी हो तो वह किसी व्यावसायिक प्रकाशक के हवाले कर दी जाती है, कभी कभी बिना गारंटी के और कभी-कभी इस गारंटी के साथ कि एक निश्चित अवधि तक (जो आम तौर पर प्रकाशन के बाद आने वाली पहली जनवरी से तीन या पांच वर्ष की होती है) सभी अनबिकी प्रतियां व्यापारिक शर्तों पर ख़रीद ली जाएंगी।

६. ये परचून बिक्रेता मुख्य रूप से सरकारी अधिकारी ही होते हैं जो अपने काम के बाद उसका प्रभाव क़ायम रखने के लिए इस प्रकार की पुस्तकें प्रदर्शित करते या बेचते हैं। इन्हें ये पुस्तकें इस आधार पर दी जाती हैं कि न बिकें तो वापस ले ली जाएंगी। इस तरह के कमीशन या छूट की ज़रूरत इसलिए है कि कुछ प्रतियां ख़राब या चोरी हो जाती हैं, जिससे नुक़सान उठाना पड़ता है, या उन्हें प्रदर्शित करने में सहायता देने वालों को थोड़ा बहुत पैसा देना पड़ता है। कुछ प्रतियां व्यापारियों के हाथ भी बेची जाती हैं।

७. थोक व्यापारी वे पुस्तक बिक्रेता है जिनकी अपनी शाखाएं हैं या जो आगे व्यापारियों के हाथ बिक्री करते हैं जब वे इन पुस्तकों को व्यापारियों के पास बेचें तो कार्यालय द्वारा दिया जाने वाला परचून बिक्री का २५ प्रतिशत कमीशन उन व्यापारियों को मिलता है और शेष ८⅓ प्रतिशत वे अपने पास रखते हैं।

८. कार्यालय के प्रकाशन कोष का पांचवां भाग एक अलग अनुदान कोष में डाल दिया गया था। अगर पुस्तक किसी विशेष उद्देश्य के लिए छापी गई है और उसकी क़ीमत बहुत कम रखना ज़रूरी है—जैसे ग्रामीणों में कष्ट निवारण आन्दोलन को बढ़ावा देने के लिए या वयस्कों को लिखना पढ़ना सिखाने के लिए तैयार की गई पुस्तकें—तो उसकी सस्ती क़ीमत

नमूने की लागत सूची-ख

कार्यालय द्वारा खर्च का अनुमान

पांडुलिपि नं० :—५०० शीर्षक : हांउ कीनिया इज़ गवर्नड्

छापने का ख़र्च :—	शिलिंग	सैंट
७५५० प्रतियों का मुद्रण	९८७५	००
चित्र : मुख पृष्ठ का ब्लाक	१००	००
लेखक का पारिश्रमिक : पहले संस्करण में संशोधन के लिए	५६०	००
हाऊस चार्ज २½ प्रतिशत	२४७	००
ढुलाई की सुरक्षित राशि में २½ प्रतिशत	२४७	००
आकस्मिक कोष में २½ प्रतिशत	२४७	००
कुल अनुमानित व्यय	११२७६	००
एक प्रति का शुद्ध परिव्यय	१	५१
जमा १०० प्रतिशत	१	५१
बिक्रय मूल्य	३	०२

कमीशन : परचून बिक्रेताओं के लिए २५ प्रतिशत
थोक बिक्रेताओं के लिए ३३⅓ प्रतिशत

अनुदान का विवरण : शून्य

अन्य टिप्पणियां : कापी राइट कार्यालय का होगा।

सी० जी० रिचर्डस्
निर्देशक, पूर्व अफ्रीका
साहित्य कार्यालय।

निश्चित कर दी जाती है, और लागत को बिक्री के मूल्य के ५० प्रतिशत पर लाने के लिए अनुदान कोष में से पैसा निकाल दिया जाता है। कभी-कभी सरकारी विभाग उस योजना के कोष में से अनुदान की यह रकम देने को तैयार होते हैं जिसके सिलसिले में यह पुस्तक छापी गई हो।

भाग ३

वास्तविक साहित्य संगठनों का कार्य

अध्याय ६

बर्मा अनुवाद सोसाइटी

(सोसाइटी के फ़रवरी १९५६ तक के अनुभव की रिपोर्ट, जिसे कार्यालय के अमले ने तैयार किया)

(इस व्योरेवार रिपोर्ट से पता चलता है कि बर्मा सरकार साहित्य उपलब्धि कार्य के सभी क्षेत्रों में कैसे साहसपूर्ण प्रयत्न कर रही है । साथ ही इसमें बिना किसी झिझक के यह भी स्वीकार किया गया है कि अभी किन कठिनाइयों पर विजय पानी बाक़ी है ।)

भूमिका

इस रिपोर्ट में बर्मा अनुवाद सोसाइटी के सामान्य कार्य का विवरण दिया गया है, और इस कार्य के उन पहलुओं का व्योरेवार उल्लेख किया गया है जिनका सम्बन्ध विशेष रूप से नए साक्षरता प्राप्त या बहुत कम पढ़े लिखे लोगों के लिए सामग्री तैयार करने से है । जन शिक्षा परिषद् द्वारा तैयार किये जाने वाली साक्षरता प्रशिक्षण पुस्तिकाओं तथा सरकारी विभागों द्वारा कभी-कभी तैयार की जाने वाली विकास प्रचार सामग्री को छोड़, पढ़ना, लिखना आरम्भ कर रहे वयस्कों के लिए बाक़ायदा और लगातार पठन सामग्री तैयार करने वाली बर्मा भर में यही संस्था है ।

सोसाइटी के कार्यक्रम में सभी स्तरों के पाठकों के लिये सामग्री तैयार करना भी शामिल है, विश्व कोष, टैक्नीकल प्रशिक्षण सामग्री, पाठ्य पुस्तकें और बहुत ज़्यादा पढ़े लिखे लोगों की आम दिलचस्पी की किताबें छापना भी इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आ जाता है । इसी प्रकार सोसाइटी के कार्यक्षेत्र में मुद्रकों तथा पत्रकारों के लिए प्रशिक्षण का आयोजन, पुस्तकालयों की व्यवस्था, सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करना, साहित्यि पुरस्कार देना, वयस्कों के लिए शाम की कक्षाओं का प्रबन्ध आदि काम आ जाते हैं ।

कुछ समय हुआ सोसाइटी ने बहुत कम पढ़ना लिखना जानने वाले लोगों के लिए विशेष रूप से तैयार कराई गई सामग्री उपलब्ध करने की आवश्यकता को अनुभव किया। पाठकों को उनकी अपनी भाषा में ज्ञान उपलब्ध कराना ही पर्याप्त नहीं है, सम्बद्ध पाठकों के अनुभाव को ध्यान में रखते हुए यह भी देखना होता है कि किस प्रकार का ज्ञान उनके लिए उपयोगी होगा, कैसी सूचना महत्वपूर्ण होगी, और किस तरह की कहानियों से उनका मनोरंजन हो सकेगा। ऐसी सामग्री चुनने के बाद उसे ऐसी भाषा और ऐसे ढंग से पेश किया जाए कि वह पाठकों की समझ में आ सके, उनके लिए आकर्षक हो, उनपर अपना असर छोड़े और किसी न किसी तरह से उनके आचार-व्यवहार को सुधारे।

यद्यपि आरम्भ में सोसाइटी के अधिकतर प्रकाशन अन्य भाषाओं के अनुवाद थे, पर अब उसका कार्यक्रम एक ऐसे प्रकाशक जैसा है जो देश में सभी प्रकार के पाठकों की पठन आवश्यकताएँ पूरी करने की कोशिश कर रहा है, विशेषकर ऐसी सामग्री प्रकाशित करता है जिसके बारे में आवश्यकताओं को व्यावसायिक प्रकाशक सन्तोष जनक ढंग से पूरा नहीं कर पाये हैं।

पृष्ठ भूमि

पश्चिमी देशों के लोग इस बात की कल्पना नहीं कर सकते कि किसी भी प्रकार की सामग्री मुद्रित रूप में उनकी अपनी भाषा में उपलब्ध न हो। बर्मा के लोग इतने भाग्यशाली नहीं हैं। जब सन् १९४७ में बर्मा अनुवाद सोसाइटी की स्थापना हुई, उस समय आम बर्मी नागरिक को विश्व का ज्ञान भंडार सीमित मात्रा में ही उपलब्ध था। साधारण बर्मी पाठक, विद्यार्थी या विद्वान को बर्मी भाषा में बौद्ध धर्म या राजनीति को छोड़ आधुनिक संसार के विभिन्न पक्षों को पेश करने वाली कुछ छुट-पुट पुस्तकें ही मिल सकती थीं, और उनमें भी विषय का विस्तृत विवेचन नहीं होता था।

सोसाइटी का उद्देश्य बर्मी भाषा और साहित्य को आधुनिक युग के अनुरूप बनाना है, और सब प्रकार के पाठकों के लिए सभी विषयों पर पुस्तकें छापना और बांटना, तथा अपने विशेष कार्यों द्वारा देश के बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन के विकास में प्रोत्साहन देना है। प्रोत्साहन का यह कार्य इतना सफल रहा है कि सामग्री के लिए विदेशी लेखकों पर निर्भर करना दिन-दिन कम आवश्यक हो रहा है। इस समय सोसाइटी के बहुत कम प्रकाशन दूसरी भाषाओं के सीधे अनुवाद होते हैं।

सामान्य पाठक के लिए किताबें

सोसाइटी का एक मुख्य ध्येय सामान्य पाठक को बर्मी भाषा में विश्व

चिन्तन के सभी पहलुओं पर साहित्य उपलब्ध कराना है। **जन ज्ञान माला में परचून व्यापार, विश्व के महान वैज्ञानिक, बर्मा के पक्षी और जीवाणुओं के शिकारी,** आदि शीर्षकों से पुस्तकें छापी गई हैं। **जेबी पुस्तक माला और गृह विश्वविद्यालय पुस्तक माला में संयुक्त राष्ट्र संगटन, बजट का अध्ययन कैसे करें,** और **धरती की वर्णमाला आदि पुस्तकें हैं।**

विशेष विषयों की पुस्तकों में **विज्ञान पुस्तक माला, इतिहास पुस्तक माला, पचास वर्ष माला** (जिसमें बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में विज्ञान, यात्रा, खेल, शिक्षा, व्यापार, शासन तथा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर किताबें हैं), **महान पुस्तक माला** (दूसरे देशों की अमर रचनाएं) और **जन हितकारी राज्य पुस्तक माला** आदि लड़ियां प्रकाशित की गई हैं।

जन हितकारी राज्य शृङ्खला—ग्रामीण वयस्कों के उपयोग और स्कूलों में पूरक अध्ययन के काम आने वाली सरल सामग्री प्रकाशित करने का पहला प्रयत्न था। इस शृंखला में १२३ पुस्तिकाएं हैं और इनका आयोजन ऐसे ढंग से किया गया है कि आधुनिक जगत के ज्ञान के सभी सामान्य विषयों पर संक्षेप में प्रकाश डाला जा सके। प्रत्येक पुस्तिका में औसत से कोई ४० पृष्ठ होते हैं, जिनका लगभग ४० प्रतिशत भाग चित्रों आदि से भरा होता है। इन्हें सोलह पुआइंट के मोटे अक्षरों में छापा जाता है और ये देखने में आकर्षक हैं। इनकी क़ीमत ५० रुपया (कोई पचास नए पैसे के बराबर) होती है और ये बहुत लोकप्रिय हुई हैं। यह सारी १२३ पुस्तकें सरकार के पाठ्य पुस्तक निर्देशक की देख रेख में सोसाइटी के सम्पादकों ने लिखी हैं। इनके मुसव्विदों की तैयारी का काम पूरा हो गया है और इनमें से ३० पुस्तिकाओं के ५०-५० हजार के संस्करण छपे हैं। इस लड़ी की पुस्तिकाएं किसी प्रकार का प्रशिक्षण देने के लिए नहीं हैं, बल्कि उनमें एक तरह से सामान्य ज्ञान की रूप रेखा दी गई है। एक अन्य योजना हाल में शुरू की गई है, जिसमें दो पुस्तक मालाएं शामिल होंगी। यह पुस्तकें ऐसे लोगों के लिए होंगी, जिन्होंने बाक़ायदा शिक्षा नहीं पाई हो या बहुत कम प्राप्त की हो। पहली पुस्तक माला के द्वारा सरल और दिलचस्प तरीके से ऐसी जानकारी दी जाएगी जो पढ़ने की मामूली सी योग्यता वाले बर्मी किसान के दैनिक जीवन के लिए लाभकारी हो। दूसरी पुस्तक माला में ज़रा ज़्यादा योग्यता वाले यानी चौथे या पांचवे दर्जे तक पढ़े लोगों की दिलचस्पी के लिए छोटे छोटे नाटक और कहानियां होंगी। इन कहानियों द्वारा भी पाठक को सामाजिक, नागरिक, आर्थिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सुधार के लिए आवश्यक जानकारी दी जाएगी। इन पुस्तक मालाओं की पुस्तिकायें बर्मी लेखक और शिल्पी

तैयार करेंगे। प्रत्येक पुस्तिका में बहुत से चित्र आदि होंगे और १६ से ४० तक पृष्ठ रहेंगे।

मासिक पत्रिका "सापी बेईमान" (साहित्य का स्थान) में विज्ञान, विश्व इतिहास, सामाजिक घटनाओं, सामान्य सूचना, व्यावहारिक अर्थ-शास्त्र, कृषि, स्वास्थ्य आदि विषयों पर लोकप्रिय तथा सचित्र लेख होते हैं। हर लेख में बर्मा का दृष्टिकोंण पेश किया जाना आवश्यक है, और भाषा और शैली बहुत सरल रहती है। हर महीने २६००० प्रतियां सभी सार्वजनिक स्कूलों, पुस्तकालयों और सामान्य जनता को बांटी जाती हैं।

स्कूलों की पुस्तकें और विश्व कोष आदि

अब सभी सार्वजनिक स्कूलों में शिक्षा का माध्यम बर्मी[1] है। सोसाइटी देश में पाठ्य पुस्तकों वाले सबसे बड़े प्रकाशकों में से हैं। वह प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा के स्कूलों के लिए पाठ्यपुस्तकें, अध्यापकों के काम आने वाली पुस्तिकायें, स्कूलों के पुस्तकालयों की सामग्री, टैक्नीकल तथा व्यावसायिक स्कूलो के लिए प्रशिक्षण सामग्री, आदि छापती है।

एक समझौता विचाराधीन है जिसके अनुसार वर्मा अनुवाद सोसाइटी रंगून विश्वविद्यालय के लिए प्रकाशक के रूप में काम करेगी और विश्वविद्यालय की पाठ्य पुस्तकें तथा शब्द कोष आदि छापेगी।

इस समय जब यह रिपोर्ट लिखी जा रही है, 'साधारण विज्ञान विश्व कोष' की तैयारी का काम लगभग पूरा हो चुका है। इसके कुल २३ भाग होंगे जिसमें से दो अब जनता को उपलब्ध हैं। सरल भाषा में लिखे गए इस सचित्र विश्य कोष द्वारा बर्मी जनता को विज्ञान के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी मिल सकेगी।

चौदह भागों का एक "बर्मी सचित्र विश्वकोष" लगभग समाप्ति पर पहुँच चुका है। इसके प्रथम दो भाग सरकारी शालाओं, पुस्तकालयों तथा जनता को उपलब्ध कराये जा चुके हैं। इस विश्व कोष की तैयारी का काम सन् १९४९ में आरम्भ हुआ था। और ये विश्व ज्ञान की ओर बर्मा का एक महत्वपूर्ण क़दम है। यद्यपि इसमें अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की सूचना दी गई है, तथापि बर्मी तथा एशियाई संस्कृति पर विशेष बल दिया गया है। विश्वकोष के लिए सूचना इकट्ठी करने के वास्ते काफ़ी मौलिक शोध कार्य किया गया है।

---

१. वर्मा में अनेक भाषाएं होने की कोई समस्या नहीं है। दूर दूर इलाकों के छुट पुट पहाड़ी क़बीलों को छोड़ अधिकांश जनता (कुल आबादी का शायद ९० से ९५ प्रतिशत) बर्मी भाषा बोलती है, या कुछ लोग इसके साथ स्थानीय भाषा में बोलते हैं।

विशेष कार्य

साहित्यिक पुरस्कार—हर वर्ष सबसे उत्तम बर्मी उपन्यास, किसी महान् पुस्तक के सबसे अच्छे अनुवाद, साहित्यिक लेखों की सर्वश्रेष्ठ रचना और सामान्य ज्ञान के किसी विषय पर लिखी गई सबसे बढ़िया पुस्तक के लिए एक-एक पुरस्कार दिया जाता है।

प्रशिक्षण कक्षाएं—सोसाइटी मशीनमैनों, कम्पोज़िटरों, जिल्द-साज़ों और ब्लाक बनाने वालों के काम की सिखलाई के लिए कक्षाओं का निर्देशन करती है, जिनमें छपाई का काम करने वाले सभी लोग प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। वह पठन-कक्षों तथा स्कूल पुस्तकालयों की देखभाल करने वालों को पुस्तकालय विज्ञान की शिक्षा देने के लिए अल्पकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था करती है और बर्मी तथा अंग्रेज़ी में पत्रिकारिता का एक पाठ्य-क्रम शुरू करने का भी आयोजन किया जा रहा है।

शोध शाखा—सोसाइटी की एक शोध शाखा है जिसके उद्देश्य ये हैं:—

(क) यह जांच करना कि सोसाइटी के प्रकाशन जिन लोगों के लिए छापे गए हों, उन्हें सम्बद्ध विषय पर जानकारी देने और उसमें दिलचस्पी पैदा करने में वे कहां तक सफल रहते हैं;

(ख) ऐसे सिद्धान्त निश्चित करना जिनसे सोसाइटी को अपने भावी कार्या-क्रम की योजना बनाने में सहायता मिले।

सापी बईमान सार्वजनिक पुस्तकालय—विदेशी सरकारों की सूचना सेवाओं को छोड़ बर्मा भर में यह सबसे बड़ा सार्वजनिक पुस्तकालय है। इसका संचालन सोसाइटी करती है। इसकी सदस्यता का कोई चन्दा नहीं है अंग्रेज़ी तथा बर्मी पुस्तकों की कुल संख्या ५००० है। १९५५-५६ में ३७५०० चेट[1] मूल्य की पुस्तकें ख़रीदने का बजट था। लाइब्रेरी में छः व्यावसायिक और ग्यारह उप-व्यावसायिक कर्मचारी काम करते हैं जिनका वार्षिक वेतन ३२००० चेट है। पुस्तकालय में किताबें उधार देने, पठन कक्ष, दृश्य श्रव्य साधन, बच्चों की लायब्रेरी तथा बाल कक्ष की व्यवस्थाएं हैं।

आगे की शिक्षा—जो लोग सामान्य तथा विशेष क्षेत्रों में आगे शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं उनके लिए रंगून में बाक़ायदा पढ़ाई का प्रबन्ध है। यह शिक्षा बर्मा अनुवाद सोसाइटी के प्रकाशनों के माध्यम से दी जाती है। कक्षाएं ऐसे समय पर आयोजित की जाती हैं जो विद्यार्थियों के लिए सुविधाजनक हों, और सारा साल जारी रहती हैं।

---

१. एक भारतीय रुपये के बराबर।

बर्मी संस्कृति वार्ताएं तथा समारोह—संघ संस्कृति मंत्रालय के सहयोग से बर्मी संस्कृति पर वार्ताओं का आयोजन किया जाता है और नाटक आदि दिखाये जाते हैं। यह समारोह आम तौर पर सोसाइटी के अपने मैदान में खुले रंगमंच पर होते हैं, और दस-दस हज़ार तक लोग इनमें शामिल होते हैं। इन सार्वजनिक समारोंहों द्वारा सोसाइटी बर्मी साहित्य तथा ललित कलाओं में जनता की रुचि बढ़ाती है।

शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल—ग़ैर-सरकारी संस्था होते हुए भी सोसाइटी सरकार तथा व्यावसायिक प्रकाशकों और शिक्षा मंडलों से पूरा सहयोग करती है। कुछ समय हुआ, सोसाइटी ने सरकारी मंत्रालयों तथा विभागों द्वारा शिक्षा प्रकाशकों के उत्पादन और उपयोग में बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक शिक्षा अध्ययन मंडल का संगठन किया। चौदह सरकारी मंत्रालयों तथा विभागों के प्रतिनिधियों ने, समूचे कार्यक्रम की तैयारी से लेकर अलग-अलग प्रकाशनों के उत्पादन और वितरण तक, शिक्षा प्रकाशन के सभी पहलुओं की तीन महीने जांच की। अब यह अध्ययन मंडल एक व्यावसायिक स्वयंसेवी संस्था बन गया है, जिसकी समय-समय पर बैठकें होती रहती हैं और जो प्रकाशन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योजनायें शुरू कर रहा है। मंडल प्रकाशनों का मूल्यांकन करता है, और देश में पुस्तक प्रकाशन तथा विक्रय के बारे में सूचना इकट्ठीकरने की एक सेवा का आयोजन कर रहा है (देखिए परिशिष्ट २)।

प्रशासन

पन्द्रह सदस्यों की एक परिषद् सोसाइटी का प्रबन्ध चलाती है; और एक आयोजना समिति, जिसकी नियुक्ति परिषद् करती है, प्रकाशनों की योजनाएं तैयार करती है। प्रबन्ध सचिव, जिसके अधीन सम्पादन तथा मुद्रण का काम करने वाले लगभग ३५० कर्मचारी हैं, परिषद् और आयोजना समिति के निर्णयों को कार्यरूप देता है। सम्पादन तथा प्रशासन समितियां, जिनके सदस्य सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञ हैं, सोसाइटी को उसके कार्यक्रम के बारे में परामर्श देते हैं। पारिभाषिक शब्दावली समिति विदेशी पारिभाषिक शब्दों के बर्मी पर्याय निश्चित करती है।

सोसाइटी अपने लिए लेखकों और अनुवादकों को स्वयं प्रशिक्षण देती है, यद्यपि बाहर के लेखकों की रचनाएं खुशी से स्वीकार करती है, और अकसर उनसे रचनाओं के लिए आग्रह करती है। एक अभिन्यास तथा चित्र-कला शाखा सम्पादकों के साथ पूरे सहयोग से काम करती है। रंगून में सोसाइटी के

वितरण कार्यालय में एक प्रेक्षाग्रह (आडिटोरियम) बिक्रय कक्ष, सभा भवन, सार्वजनिक पुस्तकालय तथा प्रदर्शन कक्ष है।

छापाख़ाने में आधुनिक ढंग की स्वचालित मशीनें हैं, जिनसे एक घन्टे में १६ पृष्ठ की ३००० प्रतियाँ छापी जा सकती हैं। इसके अतिरिक्त उसमें ब्लाकों की प्रयोगशाला, हाथ से टाइप कम्पोज़ करने की शाखा और जिल्दें बनाने की शाखा भी है। १९५६-५९ के विकास कार्यक्रम के अधीन इस छापेख़ाने में ८ लाख चेट से अधिक मूल्य के अतिरिक्त यन्त्र लगाने का आयोजन किया गया है। सामान्यतः प्रत्येक पुस्तक के एक संस्करण में २५,००० या इससे अधिक प्रतियां छापी जाती हैं। सरकार जिन पुस्तकों को स्कूलों तथा ग्राम पुस्तकालयों के लिए उपयोगी समझती है उनकी १५,००० से २०,००० तक प्रतियां ख़रीद लेती है। आमतौर पर सोसाइटी प्रत्येक पुस्तक की ५,००० प्रतियां खुले बाज़ार में बेचती है, और वह इस बिक्री को बढ़ाने के लिए विक्रय संगठन के विस्तार का आयोजन कर रही है।

पहली अक्टूबर १९५४ से ३० सितम्बर १९५५ तक सोसाइटी ने, मासिक पत्रिका और विश्व कोष को छोड़, ये किताबें छापीं : विज्ञापन पुस्तकमाला, १३; स्कूलों की पाठ्य पुस्तकें, १८; विश्व ज्ञान, के सभी पहलुओं पर सरल पुस्तिकाएं, ११; जन ज्ञान, ३; व्यावसायिक प्रशिक्षण, ३; स्कूलों की पूरक पाठ्य पुस्तकें, ८; सांस्कृतिक रचनाएं, २। कुल मिलाकर एक वर्ष के समय में ५८ पुस्तकों की १८,३३,००० प्रतियां छापी गईं; औसत से हर किताब की ३२,००० प्रतियां प्रकाशित हुईं। इन ५८ पुस्तकों में कुल ५,६८१ पृष्ठों की पठन सामग्री थी। इस पुस्तक उत्पादन की तुलना अमरीकी प्रकाशन फ़र्मों के साथ की जा सकती है। सन् १९५४ में अमरीकी प्रकाशन फ़ार्मों में से ऐपलटन-सैंचरी-क्राफ़्ट्स ने ६४, बैन नौस्ट्रेंडन ६४, एबिगंडन प्रेस ने ६० और क्राऊन ने ५५ पुस्तकें छापीं। पुस्तकों के अतिरिक्त पिछले वित्त वर्ष में सोसाइटी की मासिक पत्रिका की २,५२,००० प्रतियां छपीं और बर्मी सचित्र विश्व कोष की पहली दो जिल्दों की ५०-५० हज़ार प्रतियां उपलब्ध की गईं।

१९५४-५५ के वित्तीय आंकड़े इस प्रकार हैं :

	चेट		चेट
पहली अक्टूबर १९५४ को खाते की रक़म	४७०६४७	ख़र्च-पहली अक्टूबर १९५४ से ३० सितम्बर तक	४७३२७२०
आमदनी	७८८९८१९	की शेष रक़म	३६२७७४६
कुल	८३६०४६६	कुल	८३६०४६६

आमदनी तथा शेष रक़म में विश्व कोष छापने के लिए १५००००० चेट का ऋण और नगर में नई इमारत के लिए १८००००० चेट का विशेष अनुदान भी शामिल है। १९५५-५६ का बजट कोई ६० लाख का है।

सोसाइटी अपने प्रकाशन कार्यक्रमों का सारा ख़र्च स्वयं उठाती है। हां, सरकार अक्सर इमारतों और मशीनों को बढ़ाने के लिए सोसाइटी को अनुदान देती रहती है। सोसाइटी का राजनीतिक मामलों से कोई सम्बन्ध नहीं, और परिषद् इस बात पर ज़ोर देती है कि उसके कर्मचारी राजनीतिक दल-बन्दियों से अलग रहें।

विकास कार्यक्रम

१९५४ और १९५५ में सोसाइटी के प्रबन्ध सचिव ने प्रबन्ध परिषद् की एक समिति की सहायता से एक विकास कार्यक्रम तैयार किया, जो १९५६ से १९५९ तक के लिए है। इसमें ये व्यवस्थाएं हैं :—

(क) कुछ प्रकार की सामग्री का उत्पादन बढ़ाना;

(ख) परामर्श सेवाओं और कर्मचारियों के वैदेशिक प्रशिक्षण द्वारा ज़्यादा अच्छे कार्यक्रम तैयार करना और ज़्यादा अच्छी पठन सामग्री अधिक आकर्षक रूप में छापना;

(ग) परामर्श सेवाओं तथा वैदेशिक प्रशिक्षण सुविधाओं द्वारा प्रशासन में सुधार;

(घ) मुद्रण सुविधाओं का विस्तार (१९५५-५६ में आठ लाख चेट की नई मशीनों के आर्डर दिए गए; १९५६-५९ के लिए आठ लाख के और ख़र्च की स्वीकृति और १९५६ में छापाख़ाने के लिए नई दो मंज़िला इमारत उपलब्ध करना);

(ङ) परामर्श सेवाओं तथा वैदेशिक प्रशिक्षण द्वारा शेष कार्यों का विस्तार।

१९५६-५९ में सोसाइटी ६० लाख चेट के सामान्य वार्षिक बजट के अतिरिक्त लगभग ५५ लाख चेट विकास कार्यों पर ख़र्च करेगी। फ़ोर्ड फ़ाऊंडेशन के और आगे योग के ब्यौरे पर बातचीत चल रही है। फ़ाऊंडेशन के योग से शायद छोटी पुस्तकों के वितरण, अभिन्यास और डिज़ाइन, संचार शोध और मुद्रण इन्जीनियरी के बारे में सलाहकारों का प्रबन्ध, वैदेशिक प्रशिक्षण में सहायता तथा विदेश से सामान ख़रीदने के बारे में व्यवस्था की जाएगी[1]। विकास कार्यक्रमों के कुछ और पहलू नीचे सोसाइटी के काम के विवरण में उल्लिखित हैं।

अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना

दो नई पुस्तक मालाएं

कुछ समय से सोसाइटी के प्रकाशनों में एक अन्य चीज़ पर जोर दिया जाने लगा है। आधुनिक ज्ञान का भंडार उपलब्ध कराने से भी ज़्यादा आवश्यकता इस बात की है कि सादा और सरल पठन सामग्री के द्वारा सूचना और विचारों को गांवों में रहने वाले लोगों तक, जो देश की आबादी का बड़ा हिस्सा है, प्रभाव-पूर्ण ढंग से पहुँचाया जाए, ताकि ग्रामवासियों के जीवन और रहन-सहन में सुधार किया जा सके। सरकार बच्चों की प्राथमिक शिक्षा और वयस्कों की साक्षरता प्राप्ति के लिए जो जोरदार प्रयत्न कर रही है उनके कारण गांवों में बड़ी मात्रा में विविध प्रकार के साहित्य की आवश्यकता बराबर बढ़ रही है। इस पठन सामग्री का उद्देश्य केवल ग्रामवासियों का मनोरंजन करना ही नहीं होना चाहिए, इससे भी ज़्यादा मूल महत्व की बात यह है कि यह साहित्य उन का जीवन सुधारने के लिए उन्हें रास्ता दिखाए।

बर्मा अनुवाद सोसाइटी दो प्रकार के पाठक वर्गों के लिए, जिन्हें पठन सामग्री की सबसे अधिक आवश्यकता है, इस सामग्री की व्यवस्था करने का एक कार्यक्रम शुरू कर रही है :—

(क) ऐसे लोग जिन्होंने साक्षरता की सीमा को बस पार ही किया है या जिन्होंने पढ़ना अभी सीखा है ही; ऐसे लोगों को नव साक्षर कहा जा सकता है। (ख) ऐसे लोग जिनकी पढ़ने की योग्यता पहले वर्ग से अधिक है, पर जिन्हें अभी पढ़ने की बहुत ज़्यादा आदत नहीं पड़ी है। इन वर्गों के लिए सोसाइटी दो पुस्तक मालाएं तैयार कर रही है : एक, (क) वर्ग के पाठकों के लिए १६ से ४० पृष्ठों की कहानियों की सचित्र पुस्तिकाएं, और दो, दरमियाने दरजे के पाठकों के लिए छोटी कहानियों की पुस्तकें दोनों पुस्तक मालाओं की सामग्री में एक जैसी चीजों पर बल दिया जाएगा। पहली शृङ्खला का नाम **जन पुस्तिकाएं** और दूसरी का **गल्प पुस्तक माला** है।

वास्तव में दूसरी पुस्तक माला बहुत प्रकार के पाठकों के लिए होंगीं और अपेक्षाकृत ऊंची पठन योग्यता वाले लोग भी इसमें दिलचस्पी ले सकेंगे। अब से दो तीन पीढ़ियां पहले बर्मा में छोटे-छोटे नाटकों की पुस्तकें बहुत लोक-

१. तब से इसमें से बहुत सी सहायता मिल चुकी है।

प्रिय थीं । इन्हें एक आदमी पढ़कर सुनाता और जिस तरह के पाठकों के बारे में हम सोच रहे हैं वैसे लोग उनका बहुत आनन्द लेते थे । आशा की जाती है कि दूसरी पुस्तक माला की कहानियां इन छोटे नाटकों के अभाव को पूरा कर सकेंगी और जनता में स्वीकृत तथा लोकप्रिय होंगी । इनमें उन नाटकों से अंतर यह है कि इनके द्वारा ऐसी सूचना और विचार पाठक तक पहुँचाये जाएंगे जो उसके लिए उपयोगी हो ! इस सिलसिले की पहली छोटी कहानी ऊनू ने लिखी है और उसमें स्वच्छ पानी के महत्व और छूत की बीमारियों की रोकथाम के टीकों की आवश्यकता पर बल दिया गया है ।

इन दोनों पुस्तक मालाओं के प्रकाशन कार्यक्रम को अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना इसलिए कहा जाता है कि दोनों का उद्देश्य योग्यता के प्रत्येक स्तर पर पुस्तकों का एक लगातार सिलसिला बांध देना है, जिससे बहुत बड़ी संख्या में लोग पढ़ने की आदत डालें, पठन योग्यता बढ़ाएं, और उपयोगी सूचना प्राप्त करें । इस तरह सोसाइटी एक प्रकार से जन शिक्षा परिषद् और जनता के बीच काम करने वाली अन्य संस्थाओं के कार्य में सहायता दे रही है । दोनों पुस्तक मालाओं में इन छः विषयों पर पुस्तकें होंगी : कृषि, स्वास्थ्य, व्यावहारिक अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, सामान्य संस्कृति और मनोरंजन । इन विषयों का चुनाव शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल ने किया था । इस कार्यक्रम की प्रगति के साथ-साथ दृश्य श्रव्य साधन शाखा का विकास करने का भी विचार किया जा रहा है, जो प्रत्येक पुस्तिका के साथ समन्वित अध्यापन चार्ट और पोस्टर छापेगी और दोनों पुस्तक मालाओं के कार्य में योग देगी ।

वर्तमान अमला तथा संगठन

इस समय अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना का निर्देशक सोसाइटी की पत्रिका का सम्पादन करता है । उसके अधीन दो योजना सम्पादक हैं, जो अपना पूरा समय जन पुस्तिकाओं पर लगाते हैं । ये योजना सम्पादक प्रत्येक पुस्तिका के लिए विभिन्न सरकारी मंत्रालयों तथा विभागों के प्रतिनिधियों के एक सहमण्डल और सोसाइटी की प्रकाशन शोध शाखा के सहयोग से योजना बनाते हैं। प्रकाशन शोध शाखा ग्रामीण पाठकों की पठन योग्यता, रुचि और आदतों का अध्ययन करती है ।

सलाहकार मंडल में स्वास्थ्य, सहकारिता, जन शिक्षा, कृषि, पुलिस, शिक्षा आदि मंत्रालयों तथा विभागों के प्रतिनिधि हैं, ये सब इस शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल के सदस्य थे जिनका संगठन १९५५ के शुरू में किया गया था । अध्ययन मंडल के अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना के अधीन आवश्यक पुस्ति-

काओं की प्रारम्भिक सूची तैयार की थी । इस सूची में निम्नलिखित शीर्षक और विषय शामिल हैं :

स्वास्थ्य—बच्चों की देखभाल, अपाहिज बच्चों की देखरेख, व्यक्तिगत सफ़ाई, प्रथमोपचार ज़च्चगी, माता द्वारा बच्चों का पालन, बुढ़ापा, घर और आस पास की सफ़ाई, ग्रामीण निवास, पानी, अच्छा भोजन, नशों से बचना, पान खाना, तम्बाकू पीना, मानसिक स्वास्थ्य, साधारण रोग, छूत की बीमारियों, मलेरिया नियन्त्रण, बावले कुत्ते का काटना, सांप का डसना ।

कृषि—चावल की क़िस्में और उनमें सुधार, फ़सलों का माननिर्धारण, घर की खेती (बाग़बानी), रासायनिक खाद, भूमि की उपजाऊ शक्ति का बचाव, सिंचाई, अच्छे औज़ार, दुहरी फसलें, किसानों की आत्मनिर्भरता, अच्छी फ़सल पैदा करने के उपाय, वन रक्षा, मवेशियों की देखभाल, कुक्कुट पालन (रोग नियन्त्रण), फ़सलों की कीड़ों आदि से रक्षा ।

नागरिक-शास्त्र—आप और आपका देश, ग्राम प्रशासन, वोट और वोट की पर्ची का प्रयोग, बर्मा का इतिहास, ग्राम रक्षा, आपका मित्र पुलिसमैन, आग (गांव में या जंगल में), ग्राम परिषद् ।

सामान्य संस्कृति—जीवन चरित्र : (क) धार्मिक नेताओं के (ख) राष्ट्रीय (ग) अन्तर्राष्ट्रीय; बौद्ध धर्म का साधारण ज्ञान; पैगोडों का इतिहास; लोकगीत, बर्मा के राष्ट्रिक, बर्मा के कलाकार तथा लेखक, त्यौहार ।

अर्थशास्त्र—किफ़ायत और घर की अर्थ व्यवस्था, शौक़िया काम और दस्तकारी, ग्राम सहकारी समितियां : (क) उपभोगता (ख) उत्पादक (ग) बहुद्देशीय ।

मनोरंजन—लोक कथाएं, खेल, पालतू जानवर ।

इस शृंखला की पहली पुस्तिकाओं के लिए यह सूची पर्याप्त मान कर स्वीकार कर ली गई है ।

गल्प पुस्तक माला में भी विषय वही है जो जन-पुस्तिकाओं के हैं, पर यह पुस्तकें निर्देशक के व्यक्तिगत निरीक्षण में बाहर के लेखकों से पारिश्रमिक देकर लिखवाई जाती हैं । निर्देशक लेखक को पुस्तक शृङ्खला की आवश्यकताओं से अवगत कराता है, विषय बताता है और अन्य सम्बद्ध सूचना देता है। जब मुसव्विदा आता है तो भाषा और अन्तर्वस्तु के निश्चित मानकों के अनुसार उसका सम्पादन किया जाता है और टैक्नीकल सूचना की शुद्धि के बारे में सलाहकार मंडल की राय ली जाती है । पुस्तक माला के लिए जो कहानी स्वीकार की जाए उसका लेखक को २५० चेट पारिश्रमिक दिया जाता है ।

भावी अमला तथा संगठन

१९५६-५९ की अवधि में अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना का विकास होने पर जन-पुस्तिका माला की प्रत्येक शृङ्खला का एक अलग विभागीय सम्पादक होगा, जो एक ही विषय पर पुस्तकें तैयार कराने में विशेष कुशलता और जानकारी रखने वाला होगा; अर्थात् स्वास्थ्य, कृषि, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, सामान्य संस्कृति और मनोरंजन विषयों के लिए अलग-अलग सम्पादक होंगे, और वे अपने-अपने क्षेत्र में प्रकाशन कार्यक्रम बनाने और विशेषज्ञ सलाहकार समितियाँ स्थापित करने के लिए उत्तरदायी होंगे।

स्थायी विकास कार्यक्रम के अनुसार प्रत्येक विभागीय सम्पादक को वैदेशिक प्रशिक्षण दिलवाया जाएगा।

वर्तमान (१९५६) बजट के अधीन जन-पुस्तिका माला में केवल २४ पुस्तिकाएं छापी जा सकती हैं, जिनमें से प्रत्येक का संस्करण ५०००० प्रतियों का होगा। पर सन् १९५९ तक, बजट बढ़ने से, हर साल एक-एक लाख के संस्करण वाली ४०-५० पुस्तिकाएं छपने लगेंगी प्रत्येक पुस्तिका पर २५ प्या (२५ नए पैसे के बराबर) ख़र्च होने का अनुमान है, १० प्या मुद्रण पर और १५ प्या सम्पादन, वितरण आदि पर। इनकी विक्रय क़ीमत भी लगभग २५ प्या होगी।

गल्प पुस्तक माला का विकास ज़रा सावधानी के साथ और सोच-विचार कर किया जाएगा, और बाहर से आने वाले मुसव्विदों के अच्छा या ख़राब होंने पर निर्भर करेगा। अगर आने वाले मुसव्विदे अच्छे न हों या उनकी लेखन शैली अनमेल और असंगत हो, अथवा अगर जनता उन्हें काफी पसन्द न करे, तो इस पुस्तक माला की प्रगति को कम करना पड़ेगा। हो सकता है सोसाइटी मुसव्विदों का सम्पादन करने के लिए ही नहीं बल्कि उनकी रचना करने के वास्ते भी कई पूरे समय के सम्पादक रखे । इस प्रकार कभी-कभी शायद जन पुस्तिका माला के सम्पादक भी गल्प पुस्तक माला की तैयारी का काम करें।

पुस्तिका की अन्तर्वस्तु का आयोजन

दोनों शृंखलाओं की पुस्तिकाओं के लिए अन्तर्वस्तु का आयोजन करते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि ऐसी सूचना चुनी जाय जो ग्रामीण पाठकों के जीवन में वास्तविक महत्व रखती हो और टैक्नीकल तौर पर सही हो। इसलिए पुस्तिका का आयोजन विशेषज्ञों के सलाहकार मंडल के पूरे सहयोग से किया जाना आवश्यक है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, ये विशेषज्ञ सरकार के जन हित-

कारी कार्यक्रम के विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय रूप से कार्य कर रहे होते हैं। उनसे कहा जाता है वे (क) बताये कि प्रत्येक क्षेत्र में अधिक आवश्यकता किस चीज़ की है और इस प्रकार अविच्छिन्न पठन सामग्री की योजना की सर्वोपरि नीति निर्धारित करने में सहायता दें, और (ख) बतायें कि किसी विषय पर लिखी जाने वाली पुस्तिका में कौन सी आवश्यक सूचना दी जाए और इस प्रकार प्रत्येक वस्तु की अन्तर्वस्तु का निर्धारण करने में योग दें। गल्प पुस्तक माला के मुसव्विदे जैसा कि पहले बताया गया है, लेखकों से प्राप्त होने के बाद इन विशेषज्ञों की सहायता से शुद्ध किए जाते हैं। सोसाइटी ने प्रत्येक प्रकाशन की योजना बनाने के बारे में शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल के डा० स्पालिंडग द्वारा विकसित विधि के अनुसार प्रयोग किए हैं। इसका नाम 'बुनियादी क़दम' विधि है। जब विशेषज्ञों से निश्चित विषयों के बारे में, जिन पर मुसव्विदे की रचना की जानी होती है, सलाह ली जाती है तो उनसे निम्नांकित प्रश्नावली के उत्तर भेजने को कहा जाता है।

शिक्षा प्रकाशन की बुनियादी कदम योजना

१—इस सूचना की किस पाठक वर्ग को आवश्यकता है (पुरुष, स्त्री, किसान, मछुवे, मजदूर, देहाती, शहरी, सामान्य जनता) ?

२—आपके विचार में इस वर्ग को क्या सिखाया जाना चाहिये ?

३—आपके विचार में इस वर्ग को क्या करना चाहिए ?

(क) वह क्यों ऐसा करे ?

(ख) वह कब ऐसा करे ?

(ग) वह कैसे ऐसा करे ?

(घ) उसे कौन से बुनियादी क़दम उठाने चाहिए ?

४—पुस्तिका पढ़ने वाला व्यक्ति कहाँ से सहायता या सलाह ले सकता है ?

५—उपरोक्त मूल बातों को पेश करने के लिए क्या आप किसी कहानी या प्लाट या रूप रेखा सुझा सकते हैं ?

६—क्या आप उपरोक्त विषय पर पुस्तकों की कोई सूची दे सकते हैं ?

इस प्रश्नावली और व्यक्तिगत सलाह मशबरे से विशेषज्ञों के विचारों को स्पष्ट लक्ष्यों में परिवर्तित कराने में बहुत सहायता मिली है।

पुस्तिका की अन्तर्वस्तु, शैली तथा डिज़ाइन के मानक

अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना की पुस्तिकाओं का आयोज़न करते समय सोसाइटी इस क्षेत्र में अनुभव रखने वालों के सुझाओं पर ध्यान देती है और उस

शोध से भी फ़ायदा उठाती है जो वयस्कों को पढ़ाने और समझाने के लिए, विशेषकर ऐसे देशों में जहाँ कम पढ़े लिखे वयस्कों का अनुपात बहुत अधिक है, अब तक हुई है ।

विविध प्रकार के अनुभव और शोध कार्य के आधार पर हमने जन पुस्तिका माला के कुछ मूल मानक निर्धारित किए हैं:—

१—सलाह देने या सैद्धांतिक बहस करने की बजाय कहानी वृत्तान्त का तरीक़ा ज़्यादा अच्छा समझा जाएगा। इस धारणा के परीक्षण के लिए हमारी शोध शाखा स्वच्छ पानी के विषय पर पुस्तिका के दो प्रायोगिक संस्करणों द्वारा गांवों में पाठकों की पसन्द का पता लगाने का आयोजन कर रही है। दोनों पुस्तिकाओं की शक्ल सूरत एक जैसी है। दोनों में मूलपाठ बहुत कम हैं और हर पृष्ठ के सामने पूरे पृष्ठ का चित्र है। एक पुस्तिका में ऐसे देहातियों की कहानी है जो अस्वच्छ पानी का सेवन करने से बीमार पड़ जाते हैं और दूसरी में स्वच्छ पानी प्राप्त करने या तैयार करने के बारे में सीधी सलाह दी गई है। एक जैसे ग्रामीण प्रदेशों में पुस्तिका का एक या दूसरा संस्करण बांटा जाएगा और कई दिन बाद पुस्तिका प्राप्त करने वालों की परीक्षा की जाएगी, जिसके द्वारा यह पता लगाने की कोशिश की जएगी कि उन्होंने पुस्तिका का क्या किया, क्या याद रखा और उसमें दी गई सूचना का क्या उपयोग किया कहानी वाली पुस्तिका पाने वालों के उत्तरों की सलाह वाली पुस्तिका पाने वालों के उत्तरों से तुलना करके यह नतीजा निकालने में सहायता मिलनी चाहिए कि जनता पर प्रभाव डालने के सम्बन्ध में दोनों तरीक़ों में कोई विशेष अन्तर है या नहीं ।

२—प्रत्येक पुस्तिका में केवल थोड़ी सी सूचना दी जाएगी—दो तीन मुख्य बातों से अधिक नहीं । अन्य देशों में समान पाठकों के बीच खोज से पता चला है कि किसी पुस्तक में जितने अधिक विचार होंगे नौसिखिए वयस्क पाठक उनमें से उतने ही कम ग्रहण करेंगे, और जितने कम होंगे उतने अधिक ।

३—टाइप बड़ा होना चाहिए—कम से कम १८ प्वाइंट का—और पंक्तियों के बीच ख़ाली जगह काफ़ी होनी चाहिए। वैसे भी अंग्रेज़ी के मुक़ाबले में समान प्वाइंटों की बर्मी टाइप में मूल वर्णों का आकार छोटा होता है ।

४—टाइप सादा शक्ल का और एक जैसा होना चाहिए, मुख्य पृष्ठ पर भी, मुड़ी हुई लम्बी, चौड़ी, या लहराती हुई शक्लों के वर्णों का प्रयोग नहीं किया जाएगा, यद्यपि बर्मी किताबों के मुख्य पृष्ठों पर बहुधा ऐसी टाइप के अक्षर छापने की प्रवृत्ति पाई जाती है । नौ सिखियों के लिए, एक जैसे परम्प-

रागत ढंग के अक्षर पढ़ना ज्यादा आसान होता है और वे आम तौर पर चाहते हैं कि मुद्रित सामग्री में वैसा ही टाइप हो ।

५—किसी पुस्तिका में ४० से अधिक पृष्ठ नहीं होंगे और औसत से हर पृष्ठ पर चार से छः तक छोटे-छोटे वाक्य होंगे, इससे ज़्यादा नहीं । उसके सामने के पृष्ठ पर चित्र होगा । पुस्तिका का आकार इतना होगा कि वह साधारण बर्मी बंडी की जेब में आ जाए ।

६—मूल लेख की तरह चित्र सीधे सादे और स्पष्ट होंगे, और उनमें ऐसी वस्तुएं या दृश्य नहीं होंगे जिनकी मूल बात को समझाने के लिए आवश्यकता न हो । हर चित्र साथ के मूल लेख को स्पष्ट करेगा और इस प्रकार न केवल वह पाठक में दिलचस्पी पैदा करेगा बल्कि सम्बद्ध सूचना को समझाने में भी सहायक होगा ।

७—पुस्तकों के मुख्य पृष्ठ रंगीन होंगे । पुस्तक के भीतर काले के साथ केवल एक और रंग मिलाकर चित्र बहुत कम छापे जाएंगे, क्योंकि अनुसन्धान से पता चला है कि इससे देखने वाला चक्कर में पड़ जाता है, विशेषकर जब रंग वस्तुओं के वास्तविक रंगों जैसे न हो । जब खर्च कम रखने के लिए केवल (काले के साथ) एक ही रंग इस्तेमाल करना हो तो इसका उपयोग मूल लेख के अंशों पर विशेष बल देने या चित्रों में किसी कार्य की विधि को ज्यादा स्पष्ट करके दिखाने के लिए किया जाएगा । सफ़ेद काली छपाई की पुस्तकों के मुक़ाबले में रंगीन पुस्तकों के प्रभाव की जांच के लिए शोध कार्य का आयोजन किया जा रहा है ।

८—शब्दावली ऐसी हो जिसका अक्सर प्रयोग होता है । लोगों में जाकर उनकी शब्दों को समझने और पढ़ने की क्षमता की जांच करने का आयोजन किया जा रहा है। सम्भवतः इससे पठन योग्यता के बारे में फ़ारमूला या मानक निर्धारित किये जा सकेंगे ।

छपाई

पुस्तिकाएं सोसाइटी के अपने छापाखाने में छपती हैं। १९५६-५७ में आठ लाख चेट की नई मशीनें लगाई जाएंगी जिनमें से अधिकतर अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना के अधीन मुद्रण के अतिरिक्त कार्य के लिए होंगी ।

अन्य सम्बद्ध कार्य

शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल ने शिक्षा प्रकाशनों की प्राप्ति और मूल्यांकन के बारे में एक समिति की स्थापना की है । यह समिति ऐसे उपायों की जांच कर रही है जिनके द्वारा बर्मा में छपे सभी शिक्षा प्रकाशनों को इकट्ठा

किया जा सके, उनका मूल्यांकन किया जा सके और एक त्रैमासिक सूचनापत्र में टिप्पणियां प्रकाशित की जा सकें।

इस समिति ने जो प्रायोगिक मूल्यांकन फ़ार्म तैयार किया है वह प्रस्तुत अध्याय के परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। इस फ़ार्म का उपयोग एक सांख्यिक परिमान के आधार पर प्रकाशनों का मूल्यांकन करने में किया जाता है। समिति के तीन सदस्य इस फ़ार्म की सहायता से मूल्यनिरूपण करते हैं और फिर पूरी समिति के सामने रखने से पहले प्रत्येक मूल्यांकन की अन्य दो के साथ औसत निकाली जाती है।

प्रकाशकों से इस सम्मति के साथ सहयोग करने को कहा जा रहा है और अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना निर्देशक भी जन पुस्तिका माला और गल्प पुस्तक माला की योजना बनाने में समिति से सहयोग कर रहा है। इस समिति की सहायता से दुहरे काम से बचा जा सकता है।

सापी बईमान पत्रिका

नीति तथा कार्यक्रम

प्रबन्ध परिषद् ने यह अनुभव करते हुए कि बाज़ार में जो पत्रिकाएँ आ रही हैं वे मुख्य रूप से पढ़े लिखे नगरवासियों के मतलब की हैं ग्रामीण पाठकों के लिए अपनी एक पत्रिका निकालने का निर्णय किया। यह तै पाया कि इस पत्रिका का उद्देश्य ग्रामवासियों की आवश्यकताओं को पूरा करना और मनोरंजन के साथ-साथ उन्हें शिक्षित करना तथा उनका स्तर ऊँचा उठाना है।

यह मानते हुए कि ग्रामीण पाठक तीन या चार दर्जे तक पढ़े लिखे होते हैं, ऐसी पत्रिका की आवश्यकता थी जिसकी भाषा सरल हो और सामग्री आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की गई हो। यह महसूस किया गया कि पत्रिका ग्रामवासियों द्वारा अपनी पठन शक्ति बढ़ाने और विचारों को समझने तथा ग्रहण करने के लिए आधार शिला के समान होगी, इसके बाद वह विज्ञान, कला, साहित्य, कृषि आदि की पुस्तकों से लाभ उठा सकता है।

इन उद्देश्यों के साथ १ जून १९५१ को सापी बेईमान पत्रिका का सूत्रपात हुआ यह पत्रिका हर महीने छपती है और इसकी एक प्रति का मूल्य दो चेट है। सालाना चन्दा साधारण ग्राहकों के लिए १६ चेट और सोसाइटी के सदस्यों के लिए १४ चेट है। सोसाइटी हर महीने २१००० प्रतियाँ छापती है। बर्मा सरकार का सूचना विभाग, स्कूलों, पुस्तकालयों, और गांवों के जन शिक्षा केन्द्रों में मुफ्त बांटने के लिये हर महीने १८००० प्रतियां ख़रीद लेता है। औसत से प्रत्येक गांव में एक प्रति जाती है, क्योंकि बर्मा में कोई १८००० गांव

हैं। सरकार के इस प्रकार १८००० प्रतियां खरीदने से पत्रिका के लिए नफ़ा होना निश्चित है। सरकार और ग्राहकों द्वारा क्रय से कुल आय का कोई ६५ प्रतिशत प्राप्त होता है, शेष ५ प्रतिशत विज्ञापनों से आता है। सोसाइटी की वितरण शाखा की आशा है कि वह वितरण कार्यक्रम के विस्तार-द्वारा सार्वजनिक क्रय में वृद्धि कर सकेगी (देखिये वितरण सम्बन्धी खंड)।

पत्रिका स्वास्थ्य और सफ़ाई के बारे में मूल जानकारी देती है और आधुनिक विज्ञान की प्रगति की झलक पेश करती है। वह पाठकों के मन में नागरिक कर्त्तव्यों के बारे में चेतना पैदा करती है और देश के भीतर एकता तथा दूसरे देशों से मित्रता पर बल देती है। पत्रिका पाठकों को संसार के विभिन्न भागों में घटने वाली सामयिक घटनाओं से अवगत करती है और उन की पृष्ठ भूमि बनाती है।

बर्मा अनुवाद सोसाइटी कई वर्षों से एक पारिभाषिक शब्दावली योजना चला रही है, जिसके अधीन सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञों की सहायता से बड़ी तीव्र गति के साथ बर्मी पारिभाषिक शब्द निश्चित किये जा रहे हैं। प्रत्येक क्षेत्र में काम आने वाले शब्दों की सूचियाँ सोसाइटी द्वारा बाक़ायदा प्रकाशित की जाती हैं और समय-समय पर पत्रिका में अतिरिक्त शब्दों की सूचियाँ छापी जाती हैं।

मुख्य अधिकारी के अतिरिक्त, जिसने अमरीका से पत्रिकारिता की उच्च शिक्षा पाई है, पत्रिका के लिये दस लेखक—सम्पादक हैं। उनमें अधिकतर विज्ञान, अर्थशास्त्र अथवा राजनीति के स्नातक हैं। अमले में एक भूतपूर्व स्वच्छन्द लेखक और स्थानीय मुद्रण तथा प्रकाशन का दस साल का अनुभव रखने वाला एक कर्मचारी है।

सोसाइटी की मुद्रण शाखा पत्रिका को छापती और उसका संचय करती है। यह शाखा ब्रिटेन में प्रशिक्षित एक अनुभवी टैक्नीकल जानकार के अधीन है और इस शाखा के अधिकतर खंडों (छापाखाना, ब्लाक बनाना, मांनोटाईप, हाथ की कम्पोजिंग, जिल्दसाज़ी आदि) के मुखिया भी विदेशों से प्रशिक्षण पाये हुए लोग हैं।

मुद्रण शाखा में छपाई, कम्पोज़िंग, ब्लाक बनाने, तार तथा टांका लगाने इत्यादि कामों की आधुनिक मशीनें हैं। अगले तीन वर्षों में सोसाइटी के विकास कार्यक्रम के अधीन और भी मशीनें लगाई जाएंगी।

सोसाइटी की प्रकाशन शोध शाखा ग्रामवासियों की रुचियों और पढ़ने की आदतों का अध्ययन और पत्रिका के बारे में पाठक सर्वेक्षण करने का विचार कर रही है। जन-हितकारी राज्य पुस्तक माला की एक सरल पुस्तिका के बारे में प्रारम्भिक अध्ययन से पता चला है कि गांवों में ऊँची आवाज़ से और चुप-

चाप पढ़ने की भी काफ़ी रुचि पाई जाती है। कुछ चुने हुए जन शिक्षा संगठन-कर्त्ताओं के विचारों का सर्वेक्षण करने से ज्ञात हुआ है कि ये लोग सोसाइटी की पत्रिका की गणना ग्रामवासियों द्वारा चार सबसे अधिक पसन्द की जाने वाली पत्रिकाओं में करते हैं।

पत्रिका की अंतर्वस्तु के बारे में पाठकों की राय जानने के लिए पहला क़दम उठाया गया है। पत्रिका की हर प्रति के साथ एक जवाबी कार्ड रखा जाता है जिस पर पाठकों से यह बताने को कहा जाता है कि उन्हें पत्रिका के कौन से लेख पसन्द हैं और कौन से नापसन्द। कुछ पाठकों का विचार है कि पत्रिका का वर्तमान आकार (९$\frac{३}{४}$ × १३$\frac{३}{४}$ इंच) ज्यादा बड़ा है। कुछ के ख्याल में तिरंगे ब्लाकों का प्रयोग मुख पृष्ठ के अतिरिक्त भीतर के पृष्ठों में भी अधिक होना चाहिए। अध्यापकों तथा विद्यार्थियों की ओर से, जो पत्रिका में शिक्षा और सूचना के विषयों को बहुत लाभकारी समझते हैं, प्रशंसा के पत्र आते रहते हैं।

अभी तक बर्मी भाषा में इस बारे में कोई खोज नहीं की गई है कि कितने लम्बे वाक्य या पैरे पढ़ने के लिए ठीक रहते हैं, न शब्दावृत्ति या मूल शब्दावली के सम्बन्ध में कोई अनुसंधान हुआ है। फिर भी लेखक-सम्पादकों को आदेश दिया गया है कि वे सरल शब्द, छोटे वाक्य और छोटे पैरे लिखें।

पत्रिका का आयोजन

महीने में दो बार सम्पादकों की बैठक होती है, जिसमें विचार-विनिमय के पश्चात् अगले अंकों के लिए सामग्री निश्चित की जाती है। सोसाइटी द्वारा निर्धारित सिद्धान्तों का पालन किया जाता है पर परिषद् के सामान्य आदेशों के परिपालन में काफ़ी स्वतन्त्रता भी दी जाती है।

सम्पादकों की ये बैठकें अनौपचारिक होती हैं और प्रत्येक सम्पादक अपने सुझाव देता है। ये सुझाव लेख तैयार करने वाला सम्पादक लिख लेता है। इस तरीक़े से एक तो सम्पादकों में सहयोग से काम करने की भावना पैदा होती है और दूसरे अलग-अलग सम्पादकों द्वारा एक जैसे लेख लिखे जाने की सम्भावना नहीं रहती।

लेखक-सम्पादकों को एक यह भी हिदायत दी गई है कि वे अपने मासिक लेखों के लिए सूचना की खोज में जो लेख या कहानी पढ़ें, उनके बारे में संक्षिप्त नोट ले लें। ये नोट (३ × ५ इंच के) कार्डों पर लिखे जाते हैं जिन्हें भावी उपयोग के लिए अलग-अलग शीर्षक के अधीन सुरक्षित रखा

जाता है। अब तक ऐसे १०००० कार्ड बन चुके हैं, और उनकी संख्या बराबर बढ़ रही है।

जब किसी पत्रिका के लेख का यह संक्षिप्त विवरण तैयार किया जाता है तो उसके सूचक कार्ड में लेख या कहानी का शीर्षक छापने वाली पत्रिका का नाम, लेखक का नाम और पृष्ठ नम्बर दर्ज किया जाता है। सम्पादक उस लेख पर अपने हस्ताक्षर भी कर देता है ताकि अन्य लोग बिना ज़रूरत उसका कार्ड न बनाएं।

जैसे ही लेखक-सम्पादक कोई लेख लिखकर देता है, प्रबन्ध सम्पादक उसके और चित्रकार के सहयोग से उसके लिए चित्रों और अभिन्यास की योजना बनाता है। अगर फ़ोटो की ज़रूरत हो तो प्रबन्ध सम्पादक और लेखक-सम्पादक फ़ोटोग्राफ़र को ऐसे फ़ोटो लेने का आदेश देते हैं जिनसे लेख में दी गई बातें समझने में सहायता मिले।

जब ब्लाक और गैली प्रूफ़ तैयार हो जाते हैं तो प्रबन्ध और लेखक सम्पादक मिलकर उसका मेकअप निश्चित करते हैं, और फिर मेकअप के पत्र तथा गैली प्रूफ़ मुद्रण सम्पादक को भेज देते हैं।

रंगीन छपाई के प्रयोग

चूंकि पत्रिका ग्रामवासियों के लिए है, जो शायद उसे सावधानी के साथ इस्तेमाल नहीं करेंगे, इसलिए बाहर के पन्ने मोटे और मज़बूत काग़ज़ के होते हैं। आमतौर पर मुख पृष्ठ पर दो से लेकर चार रंगों तक के चित्र होते हैं। बर्मा में रंगीन चित्रों की छपाई का आम तरीक़ा यह है कि समान मूल बाह्य रेखाओं वाले अलग-अलग रंगों के ब्लाक बनाए जाते हैं। अगर ये ब्लाक ठीक एक दूसरे पर छपें तो तस्वीर अच्छी आती है। पर २१००० फ़र्मे छापते समय अक्सर ऐसा नहीं होता, और चित्र धुंधला बन जाता है। इससे बचने के लिए ब्लाक बनाने वाले से कहा जाता है कि वह बाह्य रेखाओं का एक रंग का ब्लाक बनाए और अन्य रंगों के ब्लाकों में ये रेखाएं अंकित न करे। छपने पर ये चित्र धुंधले नहीं पड़ते और यदि दो एक रंगों के ब्लाक बिल्कुल ठीक जगह पर न भी छपें तो भी गहरे रंग की एक बाह्य रेखा चित्र के हर हिस्से की आकृति को बनाए रखती है और ब्लाकों का ज़रा हटकर छपना मालूम नहीं पड़ता।

सम्पादकों का चुनाव

चूंकि पत्रिका के सभी लेख अमले के सदस्यों द्वारा लिखे जाते हैं इसलिए इस काम के वास्ते जो सम्पादक चुने जाएं उनमें निश्चित शैली के अनुसार

लिखने की योग्यता होनी चाहिये। लेखक-सम्पादक पद के उम्मीदवारों को पहले पत्रिका की नीति समझाई जाती है। उन्हें यह भी बताया जाता है कि सम्भावित पाठकों की औसत शिक्षा तीसरे या चौथे दरजे के बराबर है, लेख में स्थानीय रंग और बर्मी दृष्टिकोण होना ज़रूरी है।

जब उम्मीदवारों को यह समझा दिया जाता है तो उनसे अपनी मर्ज़ी का एक नमूने का लेख लिखने को कहा जाता है। प्रबन्ध सम्पादक और प्रत्येक उम्मीदवार मिलकर विषय निर्धारित करते हैं। फिर उम्मीदवारों को तथ्यों और मूल सामग्री की खोज के लिए कोई एक सप्ताह का समय दिया जाता है। सप्ताह के अन्त में वे अपने लेखों की रूप रेखा बनाते हैं और उनके बारे में प्रबन्ध सम्पादक से विचार विमर्श करते हैं। इसके बाद वे अपने लेख लिखते हैं।

उम्मीदवार यदि चाहें तो अपने लेखों के लिए पत्रिका विभाग के सूचक कार्ड देख सकते हैं। उपयोगी पत्रिकाओं की प्रतियां दफ़्तर में रखी जाती हैं।

लेखन परीक्षा के बाद उम्मीदवारों से अंग्रेज़ी साहित्य में से एक छोटा सा अंश बर्मी भाषा में अनुवाद के लिए दिया जाता है। यह परीक्षा सबके लिए समान होती है। उद्देश्य यह पता लगाता है कि उम्मीदवार को अंग्रेज़ी का व्यावहारिक ज्ञान और बर्मी भाषा पर अधिकार है या नहीं। इस तरीक़े से अब तक जो उम्मीदवार चुने गए हैं उनका काम बहुत बढ़िया रहा है।

वितरण

बर्मा अनुवाद सोसाइटी, यद्यपि अक्सर सरकार के साथ पूरे सहयोग से काम करती है, फिर भी यह ग़ैर-सरकारी, नफ़े की इच्छा के बिना काम करने वाली शिक्षा संस्था है। अनावर्तक पूंजीगत व्यय अक्सर सरकार से प्राप्त होने वाले अनुदानों से किया गया है, पर सोसाइटी से यह आशा की जाती है कि वह बराबर स्वावलम्बी होती जाएगी। अब तक वितरण का काम ज्यादातर सरकारी साधनों से ही किया जाता रहा है। सूचना और शिक्षा विभाग अधिकतर प्रकाशनों की प्रतियां देश भर में स्कूलों, पुस्तकालयों तथा पठन कक्षों में बांटने के लिए बहुत बड़ी संख्या में खरीद लेते हैं। सोसाइटी सरकार द्वारा वितरण में प्रोत्साहन तो देती है पर वह इस पर निर्भर नहीं रह सकती।

जो लोग स्कूलों तथा पुस्तकालयों की मार्फ़त पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं उनकी संख्या बहुत सीमित है। सोसाइटी पूर्ण रूप से सरकारी सहायता पर निर्भर नहीं रह सकती और न उसे रहना ही चाहिए, विशेष कर जब सरकारी क्रय किसी वर्ष में कम या बन्द भी हो सकता है।

इस समस्या का एक ही हल है, और वह यह कि सोसाइटी अपने प्रकाशन सीधे जनता के हाथ बेचने की व्यवस्था करे। अब से कुछ समय पहले तक सोसाइटी का सार्वजनिक विक्रय बहुत सीमित रहा है, क्योंकि हमारी वितरण शाखा का अमला बहुत थोड़ा था और विक्रय आन्दोलन तथा विक्रय नियमों के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी। अगर स्थानीय पुस्तक विक्रेता हमारी पुस्तकें अपनी दुकानों पर रखना चाहें तो या तो हमारे साथ लिखा पढ़ी करें या हमारे दफ़्तरों में आकर नक़द दाम अदा करके बिक्री के लिए पुस्तकें ले जाएं, निश्चित कमीशन के अतिरिक्त उन्हें बहुत कम प्रोत्साहन दिया गया है।

१९५६-५९ के व्यापक विकास कार्यक्रम के अधीन सोसाइटी वितरण की एक विस्तृत योजना आरम्भ कर रही है, इस योजना के अनुसार यह प्रबन्ध किया जाएगा कि स्कूलों और पठन कक्षों में पाठकों के सामान्य रूप से पुस्तकें मिलते रहने के अतिरिक्त[1] एक के अधिक से अधिक लोगों को अर्ध व्यापारिक आधार पर आसानी से ये पुस्तकें उपलब्ध हो सकें। सोसाइटी अनुभव करती है कि उसके शिक्षा सम्बन्धी लक्ष्य और उद्देश्य तभी पूरे हो सकते हैं जब पुस्तकें उनसे लाभान्वित होने के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को आसानी से उपलब्ध हों। सरकारी वितरण साधनों से वे केवल उन्हीं लोगों तक पहुँच सकती है जो या तो अक्सर पठन कक्षों में आते जाते हों या स्कूलों में पढ़ते हों। विस्तृत विक्रय कार्यक्रम के अधीन हम अपने प्रकाशन सबके लिए उपलब्ध करने की आशा रखते हैं।

प्रकाशनों की क़ीमत केवल उत्पादन परिव्यय को पूरा करती है। कभी-कभी उत्पादन लागत के बराबर क़ीमत रखने से वह बहुत बढ़ जाती है, तब पुस्तक घाटे पर बेची जाती है।

सोसाइटी का यह दृढ़ विश्वास है कि किसी प्रकाशन को मुफ़्त बाँटने से यह कहीं अच्छा है कि उसकी नाम मात्र ही क़ीमत रख दी जाए। लोग मुफ़्त मिलने वाली वस्तु की अपेक्षा ख़रीदी हुई चीज़ को ज़्यादा महत्व देते हैं।

जैसे कि आपने पहले पढ़ा होगा, जन पुस्तिका माला के प्रकाशन २५ रुपया क़ीमत पर बिकेंगे। आशा की जाती है कि अर्ध-व्यापारिक वितरण व्यवस्था के विकास से सरकार द्वारा बांटी गई प्रतियों के अतिरिक्त बहुत बड़ी संख्या में और प्रतियां भी जनता को मिल सकेंगी।

---

१. सोसाइटी का सरकार द्वारा ख़रीदी गई पुस्तकों को मुफ्त बांटने पर कोई नियन्त्रण नहीं है। वह ऐसी जांच का आयोजन कर रही है जिससे सरकारी वितरण व्यवस्था में अगर कोई रुकावटें हों तो प्रकट हो सकें। जांच के परिणामों को ध्यान में रखकर वह मुनासिब सिफ़ारिशें करेगी।

वर्तमान अमला और कार्यक्रम

सोसाइटी ने अपने नए विक्रय तथा वितरण कार्यक्रम पर जुलाई १९५५ में अमल शुरू किया। वितरण अधिकारी के नीचे दो नए अधिकारी-एक सूचना अधिकारी और एक विक्रय-वितरण अधिकारी-नियुक्त किए गए हैं। ये दोनों नये विक्रय कार्यक्रमों और उनके साथ सूचना तथा प्रचार का आयोजन करने के लिए मिल कर काम करते हैं।

घूम फिर कर वितरण करने के लिए चार एजंट नियुक्त किए गए हैं, जिनका काम मुफ़स्सिल में प्रायोगिक 'बेचो या लौटाओ' कार्यक्रम शुरू करना है। ये एजंट नगर-नगर, गांव-गाँव जाते हैं और स्थानीय विक्रेताओं को बर्मा अनुवाद सोसाइटी की पुस्तकें बिना जोखम के बेचने के लिए राज़ी करते हैं। फिर, लगभग महीने में एक बार प्रत्येक विक्रेता से मिलते हैं। सोसाइटी के वर्तमान बजट में उसकी अपनी गाड़ियों द्वारा पुस्तकें विक्रेताओं को पहुँचाने की व्यवस्था नहीं है, इसलिए एजंट सार्वजनिक परिवहन साधनों का उपयोग करते हैं और रंगून कार्यालय को इस बात की सुचना दे देते हैं कि पुस्तकें कहां भेजी जाएं। इन पुस्तकों के लिए ज़िम्मेदारी वितरण एजंटों की रहती है और वही अपने माहवार दौर में विक्रेताओं से बिकी किताबों के दाम इकट्ठे करते हैं। अदायगी की एक प्रायोगिक व्यवस्था यह भी है कि आने वाले महीने का स्टाक बी॰ पी॰ पार्सल द्वारा भेजा जाता है और डाकिया पार्सल के बदले पिछले महीने की बिक्री का रुपया वसूल करता है। इस प्रकार वितरण एजंट को रुपया लेना देना नहीं पड़ता और विक्रेता नया स्टाक लेने से पहले पिछली अदायगी कर देता है।

रंगून में ऐसी ही व्यवस्था का प्रयोग किया जा रहा है। यहां हमारे पास एक पुस्तक गाड़ी है जो शहर के बारौनक़ इलाकों में परचून बिक्री की दुकान के रूप में भी कार्य करती है।

भावी विकास

घूमते फिरते छः एजंट रखे जाएंगे और इस प्रकार देश के दसों प्रशासन खंडों के लिए ऐसा एक-एक एजंट हो जाएगा। जिन इलाक़ों में सड़कों और सुरक्षा की व्यवस्था ठीक है उनमें प्रचार और वितरण के लिए मोटर गाड़ियां खरीदी जायेंगी। इन्हें ये एजंट पुस्तक विक्रेताओं को पुस्तकें पहुँचाने और पुस्तकों का प्रचार करने के लिए इस्तेंमाल करेगा इन गाड़ियों पर से परचून की बिक्री नहीं की जाएयी, ये प्रत्येक नगर नगर और गांव में एक विक्रय स्थान की स्थापना करेंगी और फिर ऐसा प्रचार करेंगी जिससे ग्रामवासी यह जान ले कि

सोसाइटी के प्रकाशन उस स्थान पर बराबर उपलब्ध रहेंगे । वर्तमान योजना के अनुसार १९६० तक ऐसी सात-आठ गाड़ियां चलने लगेंगी ।

इसके अतिरिक्त किताबों के छोटे बड़े कई सौ रैक इस्तेमाल में लाए जाएंगे । ये रैक सोसाइटी द्वारा विक्रेताओं को उधार दिए जाएंगे । कुछ रैक अमरीका से मंगवाये जा रहे हैं ताकि वे जल्द प्राप्त हो सकें और यह पता चल सके कि किस भाव और नमूने के रैक उपलब्ध हैं ।

जैसे-जैसे वितरण कार्यक्रम आगे बढ़ेगा बीजक और खाते का नई विधियों को अपनाने की ज़रूरत होगी, ताकि बढ़े हुए इंदराजों की जानकारी रह सके और एक दूसरे खाते में जाने वाले हिसाब की आवश्यक पड़ताल हो सके । बर्मा के लिए यह कार्यक्रम एक नई चीज़ है और निःसन्देह ऐसी बहुत सी कठिनाइयां आएंगी जिनका अभी हमें ख़्याल नहीं है । इसलिए वितरण शाखा एक ऐसे सलाह- की सेवाएं प्राप्त करने का आयोजन कर रही है जिसे सोसाइटी के प्रकाशनों जैसी छोटी पुस्तकों की बिक्री और प्रबर्धन का व्यावहारिक अनुभव हो । उसका काम बीजक और बिल की ऐसी विधि का विकास करना होगा जिससे माल का स्टाक रखने और बाद में उसकी बिल बनाने में सुविधा रहे ।

वितरण एजंटों की विक्री के तरीकों और वितरण व्यवस्था के बारे में प्रशिक्षण दिया जाएगा । प्रचार-वितरण गाड़ियों के काम और रास्ते निश्चित कर दिए जाएंगे और खाते और बीजक की विधियों को विकसित किया जाएगा । प्रचार सामग्री और रैक आदि ऐसे ढंग के होंगे जो उन्हें इस्तेमाल करने वाले एजंटों और विक्रेताओं की जरूरतों के लिए उपयुक्त हों ।

विक्रय, प्रचार और वितरण एक गतिशील क्रम है । केवल ख़र्च बढ़ाने से ही कोई कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता । बर्मा अनुवाद सोसाइटी का विचार है कि उसने एक ऐसी व्यवस्था बनाई है, जिससे वितरण कार्यकर्ताओं का प्रभाव उत्साही स्थानीय एजंटों की भर्ती द्वारा कई गुना होकर बंट जाएगा और यदि सोसाइटी के एजंट महीने में एक बार दौरा करेंगे तो यह स्थानीय एजंट प्रति- दिन कार्यशील रहेंगे ।

प्रकाशन शोध शाला

सामान्य पृष्ठभूमि

यह शाखा स्थापित करने की सिफ़ारिश सोसाइटी के शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल ने की थी । सोसाइटी ने एक शोध समिति बनाई जिसने इस सिफारिश का अनुमोदन किया ।

शोध शाखा के उद्देश्य

शाखा के उद्देश्य दो हैं—(क) ऐसा अध्ययन तथा मूल्यांकन करना, जिससे सोसाइटी को यह अन्दाज़ा हो सके कि उसके प्रकाशन सम्भावित पाठकों तक सूचना और विचारों को पहुँचाने में कितने सफल हैं, और (ख) ऐसी मूल खोज करना, जिससे देश में सार्वजनिक सम्पर्क के साधनों द्वारा जनता तक अपनी बात पहुंचाने में दिलचस्पी रखने वाले सभी संगठन अपने काम को ज्यादा अच्छी तरह समझ सकें।

संगठन तथा अमला

इस समय शाखा में थोड़ा सा अमला है, जो शुरू के दौर में प्रारम्भिक पड़ताल के लिए रखा गया है, इस ख्याल से कि धीरे-धीरे कार्यक्रम का विकास किया जाएगा और अगले तीन वर्षों में शोध कार्यों का क्षेत्र बढ़ा दिया जाएगा। एक कठिनाई यह है कि मौक़े पर जाकर काम करने के लिए कोई अमला नहीं है और दफ्तरों में परिणामों के विश्लेषण के लिये भी बहुत कम कर्मचारी हैं। परिषद् यह महसूस करती है कि बाहर मौक़े पर काम करने वालों के बिना यह शाखा ठीक ढंग से कार्य नहीं कर सकती। जन शिक्षा परिषद् के एक पदाधिकारी ने जो शोध समिति का भी सदस्य है, शोध शाखा के कार्य के शुरू के दौर में बाहर के काम के लिए जन शिक्षा संगठनकर्ताओं की सेवाएं पेश कीं।

अगस्त और सितम्बर १९५५ में जन शिक्षा परिषद् और बर्मा अनुवाद सोसाइटी ने १९२ जन शिक्षा संगठनकर्ताओं को शोध की विधियों का प्रशिक्षण दिलवाया। प्रशिक्षणार्थियों के सम्मुख सरकार के शिक्षा तथा जनगणना विभागों विश्वविद्यालय और जन शिक्षा केन्द्र के जानकारों ने लैक्चर दिए। प्रशिक्षण ४०-४० मिनट के ११२ पीरियडों में दिया गया। इनकी बांट इस प्रकार की गई।

सिद्धान्त पर लैक्चर (३० प्रतिशत) : विभिन्न पहलुओं में सम्बन्ध निर्धारित करना, विचारों विचार संचरण के बारे में खोज, भेंट की विधि, जन सम्पर्क, बर्मी शब्दावली और अंक संकलन।

प्रदर्शन तथा सामूहिक बहस (२० प्रतिशत) : भेंट करने की विधियों और विचार ग्रहण प्रीक्षणों का प्रदर्शन।

प्रयोग कार्य—कार्यालय में (३० प्रतिशत) : शब्दावृति गणना, भेंट विधि और सामूहिक अभ्यास।

प्रयोग कार्य बाहर जाकर (२० प्रतिशत) : चार चुने हुये गांवों में बर्मा अनुवाद सोसाइटी के प्रकाशन 'हमारे साधन' का मूल्यांकन अध्ययन।

भावी कार्यक्रम

शोध शाखा इन प्रश्नों का उत्तर खोजती है : कौन, किससे, किस माध्यम से, क्या कहता है और इसका क्या प्रभाव पड़ता है ?

'कौन' से सोसाइटी के कार्यक्रम पर क्या असर पड़ता है ? मिसाल के तौर पर, क्या बर्मा में विभिन्न स्तरों के पाठक लेखक या प्रकाशक के नाम पर मुद्रित सामग्री को स्वीकार अथवा अस्वीकार करते हैं ?

'क्या' से अभिप्राय प्रकाशन की अन्तर्वस्तु है । इस मामले में शाखा को पाठकों के वर्गों के आधार पर सोसाइटी के प्रकाशनों की अन्तर्वस्तु का अध्ययन करना है । मिसाल के तौर पर, क्या किसी विशेष स्तर के पाठक वर्ग के लिए लिखी गई सामग्री उद्दिष्ट पाठकों की समझ में आ सकेगी, क्या उन पाठकों को उसकी अन्तर्वस्तु में दिलचस्पी होगी, इत्यादि ।

किसे का मतलब पसाठक जनता है । शाखा को बर्मा में विभिन्न संभावित पाठक वर्गों की योग्यता और दिलचस्पी के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करनी होगी, ताकि अधिक प्रभाव-पूर्ण सामग्री तैयार की जा सके । इस पठनीयता अध्ययन में निश्चित रूप से ये कार्य शामिल होंगे :

(क) बर्मी भाषा की बनावट के बारे में व्यापक खोज, ताकि ऐसी सामान्य बातों का निर्धारण किया जा सके जिनके कारण बर्मी भाषा के पढ़ने में कठिनाई उत्पन्न होती है ।

(ख) शब्दावली अनुसंधान, ताकि यह जाना जा सके कि बर्मी भाषा में सबसे ज़्यादा प्रयोग में आने वाले शब्द कौन से हैं ।

(ग) बाहर मौके पर जाकर जांच, ताकि विचार ग्रहण क्षमता परीक्षणों तथा पाठक सर्वेक्षण द्वारा सम्भावित पाठक वर्गों की योग्यताओं और दिलचस्पियों का पता चल सके ।

'साधन', जहां तक सोसाइटी का सम्बन्ध है, मुख्य रूप से मुद्रित सामग्री है । इस मामले में शोध शाखा को विषय प्रस्तुत करने और वितरण के अधिक प्रभावशीली तरीक़ों की जाँच करनी होगी । सोसाइटी के प्रकाशनों के सरकार द्वारा वितरण के तरीकों का अध्ययन यह सुझाने के लिए करना होगा कि कैसे इस सामग्री से और ज़्यादा लाभ उठाया जा सकता है । विभिन्न प्रकार की सूचना पाठकों तक पहुँचाने के सबसे अच्छे साधनों का पता लगाने के लिए भी खोज की जा सकती है । सोसाइटी के अलग-अलग प्रकाशनों के प्रभाव का अध्ययन जिन बातों को सामने रखकर करना होगा, वे इस प्रकार हैं : जिन पाठकों के लिए सामग्री प्रकाशित की गई है, क्या (क) वह उन तक पहुँचती है (उपलब्ध

है) ? (ख) उनमें दिलचस्पी पैदा करती है ? (ग) उनके द्वारा पढ़ी जाती है ? (घ) वह उसमें दी गई सूचना पर विश्वास करते हैं ? (ङ) उनमें इस सूचना से कोई परिवर्तन होता है या वे किसी प्रकार से उस पर अमल करते हैं।

शोध समाचार

जल्दी ही शोध शाखा की ओर से एक सूचना पत्र छपने लगेगा। इसमें सोसाइटी द्वारा किए जा रहे शोध कार्यों का सारांश हुआ करेगा और सम्बद्ध क्षेत्रों में खोज के बारे में लेख छपा करेंगे। विदेशी पत्रिकाओं के उपयुक्त लेखों की भी इसमें नक़ल किया जाएगा।

सूचना पत्र मुफ्त बांटा जाएगा, और शिक्षा तथा सूचना साहित्य छापने वाले सरकारी विभागों, सोसाइटी के सम्पादकों, परिषद् तथा कुछ समितियों के सदस्यों के अतिरिक्त व्यावसायिक प्रकाशकों, विश्वविद्यालय के विभागों तथा इसकी मांग करने वाले अन्य लोगों को भी भेजा जाएगा।

अब तक की योजनाएँ

बर्मी ग्रामवासियों की पढ़ने की आदतों, योग्यताओं और पसन्द की प्रायोगिक पड़ताल—१९५५ के आरम्भ में कुछ चुने हुए जन शिक्षा संगठनकर्त्ताओं के विचार एकत्र करने के लिए पड़ताल की गई। उद्देश्य यह जानना था कि उन की राय में ग्राम कार्य के लिए किस प्रकार की पठन सामग्री की आवश्यकता है और किस ढंग की सामग्री को ग्रामवासी सबसे ज़्यादा पसन्द करते हैं। उनसे ऐसी पुस्तकों के बारे में आँकड़े भी प्राप्त किए गए जो ग्राम पुस्तकालयों और पठन कक्षों से सबसे अधिक और सबसे कम बार पढ़ने के लिए ली गईं। जन शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे लगभग ८०० में से ८६ संगठनकर्त्ताओं को चुना गया, जो सबसे ज्यादा अनुभवी थे। ये ८६ संगठनकर्त्ता देश भर में फैले हुये थे और कुल मिलाकर १४०००० की आबादी के गांवों में काम कर रहे थे। इस पड़ताल के सबसे अधिक मान्य परिणाम इस प्रकार रहे—

१. संगठनकर्त्ताओं का भारी बहुमत इस बात के पक्ष में था कि उन्हें अपने स्थानीय कार्यक्रम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए खेती, स्वास्थ्य, नागरिक शास्त्र, घरेलू अर्थ-व्यवस्था आदि व्यावहारिक विषयों पर सरल पठन सामग्री की आवश्यकता है।

२. पर संगठनकर्त्ताओं का ख्याल था कि अभी साक्षर ग्रामीण पाठक अधिकतर मनोरंजक पुस्तकों, व्यापारिक पत्रिकाओं और धार्मिक साहित्य में दिलचस्पी लेते हैं।

३. ८६ में से ७१ संगठनकर्त्ताओं का, जिनके गांवों में पठन कक्ष या पुस्तकालय थे, कहना था कि पुस्तकालयों का बहुत कम उपयोग किया जा रहा है। पड़ताल से पिछले वर्ष में अधिकतर पुस्तकालयों या पठन कक्षों से १०-१८, १९-४० और ४० से ऊपर आयु के तीनों वर्गों के पाठकों ने १००-१०० से भी कम पुस्तकें पढ़ने के लिए लीं।

४. इन ७१ ग्राम पुस्तकालयों से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार औसत से सबसे अधिक पसन्द की जाने वाली पुस्तकें ये थीं : मनोरंजन, ३, अपना कार्य आप करने के बारे में पुस्तकें, २, (मित्र कैसे बनाएँ और लोगों को प्रभावित कैसे करें, स्वास्थ्य, आचार, खेल आदि) धार्मिक साहित्य, ३, वीरता और जान जोखम में डालने की सच्ची कहानियां, २, विश्लेषणात्मक ढंग की पुस्तकें, ५, (संयुक्त राष्ट्र संघ, बर्मा का आर्थिक जीवन, परमाणु की कहानी इत्यादि)।

५. पत्रिकाओं में, प्रौढ़ आयु के लोगों को छोड़, अन्य पाठक जन शिक्षा परिषद् और बर्मा अनुवाद सोसाइटी की पत्रिकाओं की अपेक्ष व्यापारिक पत्रिकाएँ अधिक पसन्द करते हैं।

६. उपरोक्त परिणामों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि ग्रामीणों को यद्यपि अपने जीवन में काम आने वाले व्यावहारिक ज्ञान की बहुत आवश्यकता है, पर इस प्रकार की बहुत ही कम सामग्री उपलब्ध है। जो लोग पठन कक्षों में जाते हैं, वे उपलब्ध सामग्री में से मनोरंजन, अपनी सहायता आप करने और धार्मिक विषयों पर साहित्य ज्यादा पसंद करते हैं।

७. इसी प्रकार, पड़ताल से यह भी पता चला कि ग्रामीण पाठक कोरे शास्त्रीय या सैद्धान्तिक ज्ञान में दिलचस्पी नहीं रखते और काल्पनिक कथा कहानी के अतिरिक्त जो पुस्तकें उन्हें अच्छी लगती हैं वे या तो दैनिक जीवन से सम्बद्ध होनी चाहिएं या जान जोखम में डालने के कारनामों के बारे में, दूसरे शब्दों में वे अच्छी मनोरंजक हों। इस बात को देखते हुए बर्मा अनुवाद सोसाइटी की ग्रामवासियों के दैनिक जीवन से सम्बद्ध विषयों पर सचित्र पुस्तकें और अधिक छापने की नीति उचित जान पड़ती है। संगठनकर्त्ताओं ने अपने स्थानीय कार्यक्रमों के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ऐसे ही साहित्य की मांग की थी।

८. सोसाइटी की नई पुस्तक मालाओं में ग्रामीणों को व्यावहारिक ज्ञान कहानी की शक्ल में देने की नीति सफल होने की आशा है, क्योंकि ग्रामीण पाठक मनोरंजक कथा-कहानियों को ज़्यादा पसन्द करते हैं।

जन हितकारी राज्य पुस्तक माला की विचार संचरण क्षमता का प्रायोगिक अध्ययन—यह पड़ताल पांच गांवों में की गई, जो रंगून से दस मील के अन्दर-अन्दर थे और एक जन-शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र के पास थे। अगस्त १९५५ में शोध और भेंट की विधियों के बारे में विशेष प्रशिक्षण पा रहे १९२ में से ११८ व्यक्तियों ने इस पड़ताल में भाग लिया।

खोज का आधार यह तै हुआ कि अगर एक गांव में एक पुस्तक बांट दी जाए और चार दिन बाद वापस जाकर पुस्तक का क्या हुआ, उसमें क्या याद रहा, इत्यादि प्रश्न पूछे जाएं तो किसी सरल और दिलचस्प पुस्तक की संचरण क्षमता का अनुमान लगाया जा सकता है।

इस कार्य के लिए जन-हितकारी राज्य पुस्तक माला की एक पुस्तिका 'बर्मा के साधन' चुनी गई। यह सोलह प्वाइन्ट के टाइप में छपी है और इसमें कुल जगह का कम से कम ४० प्रतिशत चित्रों आदि से भरा है। इसके २६ पृष्ठ हैं और ये उन किताबों में से है जो स्कूल के बच्चों और सामान्य जनता को सरल से सरल ढंग पर सूचना देने के उद्देश्य से तैयार की गई है।

पड़ताल के लिए चुने गए पांच गांवों में ११८ परिवारों को यह पुस्तिका बांटी गई और बाद में उनसे पूछताछ की गई। इनमें अधिकतर लोग शून्य से चार वर्ष तक शिक्षा के वर्ग में थे और ज़्यादा संख्या रंगून में बिना कारीगरी का या थोड़ी बहुत कारीगरी का काम करने वालों की थी। इस प्रकार यह वर्ग ज़्यादा अलग-अलग गांवों के लोगों को बहुत अधिक प्रतिनिधित्व नहीं करता था। जांच से निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले गए :

१. सरल, पढ़ने योग्य, बहुत से चित्रों वाली पुस्तिकाएं, जैसी कि परीक्षण पुस्तिका 'बर्मा के साधन' थी, वयस्क ग्रामीण में काफ़ी दिलचस्पी पैदा करती है, चाहे वह बहुत कम पढ़ा-लिखा हो या बिल्कुल ही न हो। पुस्तिका को, जो मुफ़्त बांटी गई थी, अधिकतर लोगों ने पास रखा और पढ़ा। ऐसा करने वालों में ज़्यादा लोग वे थे जिन्होंने देशी भाषा के स्कूलों में कुछ दर्जे तक पढ़ाई की थी, या इससे भी कम शिक्षा प्राप्त की थी।
२. ऐसी पुस्तिकाओं के सम्भावित पाठक उन्हें प्राप्त करने वालों से अधिक हैं। कम से कम १६ प्रतिशत परिवारों में पुस्तिका एक

व्यक्ति ने एक या अनेक अन्य व्यक्तियों को पढ़कर सुनाई। कई अन्य पुस्तिकाएं परिवार में या बाहर मित्रों को पढ़ने के लिए दी गईं।

३. पुस्तिका पढ़ने वालों में ६५ प्रतिशत ने उसका सही शीर्षक याद रखा। जिन्हें शीर्षक याद न था उनमें से बहुत सों को पुस्तिका की अन्तर्वस्तु का कुछ अंश याद रहा।

४. पुस्तिका में पुस्तक माला के सम्पादक की दृष्टि से दस मुख्य भाव थे। इनकी पाठकों के उत्तरों से तुलना करके अनुमान लगाया गया है कि अधिकतर पाठक १० से ३० प्रतिशत याद रख सके। इससे अन्य पड़तालों के इस निष्कर्ष की पुष्टि होती है कि किसी पुस्तक में जितने ज्यादा विचार हों उतने ही कम याद रहते हैं, और जितने कम हों उतने ज्यादा। (ऊपर की पड़ताल से पता चलता है कि सामग्री के प्रकाशन से पहले उसके उद्देश्य की भली भांति जांच कर ली जानी चाहिए क्योंकि जो पुस्तकें सामान्य रूप से पढ़ी जाने के लिए होती हैं उन्हें पाठक अक्सर एक बार पढ़ने के बाद दोबारा नहीं देखता। कई हालतों में ऐसा नहीं भी होता, पर ऐसी सामग्री का मूल उन्हीं विचारों को समझा जा सकता है जो एक बार पढ़ने से याद रहें)।

५. अनपढ़ लोग भी प्रायः मुद्रित सामग्री का प्रभाव ग्रहण करते हैं, क्योंकि परिवार के अन्य सदस्य उहें पढ़ कर सुना सकते हैं। पड़ताल में जिन लोगों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया गया उनमें अपढ़ व्यक्ति बहुत कम थे, इसलिए इस बारे में इससे आगे किसी और निश्चित परिणाम पर नहीं पहुँचा जा सका। इस मामले पर और खोज होनी चाहिए।

६. विभिन्न स्तरों पर शिक्षा पाए हुए साक्षरों द्वारा पुस्तिका के उपयोग में कोई विशेष अन्तर दिखाई नहीं दिया, और न उसकी अन्तर्वस्तु याद रखने के बारे में उत्तरों में कोई ख़ास फ़र्क जान पड़ा। जिन साक्षरों ने बाक़ायदा कोई शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, उन्होंने, आम तौर पर, पुस्तिका में उतनी ही दिलचस्पी दिखाई जितनी चार या इससे भी अधिक वर्षों तक स्कूलों में पढ़े साक्षरों ने प्रकट की, और विचारों को याद रखने के परीक्षण में भी दोनों तरह के पाठक लगभग एक जैसे ही रहे। इसका एक यह मतलब भी हो सकता है कि जिन लोगों ने स्कूलों में बाक़ायदा शिक्षा पाई है

उन्होंने स्कूल छोड़ने के बाद अपनी पढ़ने की आदतों को बढ़ाया नहीं और वास्तव में बहुत कम पढ़ा—ऐसा कदाचित् पठन सामग्री के अभाव के कारण हुआ।

भविष्य में अध्ययन दो प्रकार का होगा। विवरणात्मक पड़ताल (लोग गांवों में क्या पढ़ रहे हैं) और प्रायोगिक अनुसन्धान (भाषा के किन तत्वों से बर्मी गद्य की पठनीयता बढ़ती है ? विचार प्रस्तुत करने के किस ढंग से सामग्री की पठनीयता पर प्रभाव पड़ता है ?) यह अध्ययन ज्यादा दूर के इलाक़ों में स्थित गांवों में किए जाएंगे, ताकि वास्तविक ग्रामीण पाठकों की रुचियों और आवश्यकताओं का और अच्छा अन्दाज़ा हो सके।

शब्दावृत्ति गणना—बहुत से स्वयं-सेवी कार्यकर्ता, जिनमें कुछ जन शिक्षा कर्मचारी भी थे, १९५५ में कई महीने तक इस बारे में आंकड़े इकट्ठे करने में लगे रहे कि बर्मी भाषा के कौन से शब्द कितनी बार प्रयुक्त होते हैं, पर, दुर्भाग्य से कोई परिणाम न निकला। बर्मी प्रत्ययात्मिक भाषा है। जब किसी एक लेखांश में प्रयुक्त शब्दों की तालिकाएं बनाई गईं तो कोई दो तालिकाएं एक दूसरी से नहीं मिलती थीं। इसके बाद भावों की इकाइयों की तालिकाएं तैयार की गई, तो वे भी एक दूसरी से भिन्न थीं। मात्राओं की तालिकाएं बनाने में कोई कठिनाई नहीं थी, पर इनका कुछ लाभ भी नहीं। हमें इस अध्ययन की ज़रूरत इसलिए है कि सब से अधिक प्रयोग में आने वाले सार्थक संकेतों का चुनाव किया जा सके, न कि निरर्थक मात्राओं का। शायद और खोज से धातुओं की समुचित परिभाषा निश्चित की जा सके जिससे तालिका बनाने वाले सभी कार्यकर्ताओं से एक जैसे परिणाम प्राप्त हो सकें।

व्यावहारिक महत्व की सूचना प्रस्तुत करने के दो तरीकों के प्रभाव की जांच—यह जाँच अविच्छिन्न पठन सामग्री योजना के साथ मिलकर की जा रही है। (योजना से सम्बद्ध खंड में खोज की विधि का वर्णन पहले किया जा चका है।)

बर्मा अनुवाद सोसाइटी के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में दर्शकों का सर्वेक्षण—यद्यपि सांस्कृतिक कार्यक्रमों का सोसाइटी के पुस्तक प्रकाशन कार्य से कोई सम्बन्ध नहीं, फिर भी शोध शाखा से कहा गया है कि सप्ताहान्त में होने वाले ऐसे कार्यक्रमों के दर्शकों का सर्वेक्षण करके यह पता लगाए कि किस किस्म के लोग इनमें आते हैं। अगर मुख्य रूप से पास-पड़ोस के लोग, या विश्वविद्यालय के विद्यार्थी अथवा विशेष दिलचस्पी रखने वाले अन्य लोग ही आते हैं तो सोसाइटी यह समझेगी कि ये कार्यक्रम काफ़ी हद तक समान्य दिलचस्पी के नहीं हैं।

विकास कार्यक्रम—सोसाइटी के त्रिवर्षीय विकास कार्यक्रम (१९५६-५९) के अन्तर्गत शोध शाखा को भी बढ़ाया जाएगा। बजट में (जिसके साथ-साथ फ़ोर्ड फ़ाऊंडेशन से सहायता मिलने की भी सम्भावना है) अधिक स्थायी तथा अस्थायी अमले, प्रस्तावित शोध अध्ययनों, चुने हुए कर्मचारियों के वैदेशिक प्रशिक्षण, मशीनें और सामान मंगाने और आवश्यक परामर्श प्राप्त करने के लिए खर्च की व्यवस्था है। तीन वर्ष की इस अवधि के लिए शोध शाखा का प्रस्तावित बजट ७ लाख चेट का है। विकास कार्यक्रम पूरा हो जाने के बाद शाखा का वार्षिक बजट लगभग ५०००० चेट रहा।

परिशिष्ट-१

मूल्यांकन तथा टिप्पणी की विधि

सामान्य विधि

जो प्रकाशन बर्मा अनुवाद सोसाइटी की शोध शाखा के त्रैमासिक सूचना-पत्र की सूची में शामिल करने के लिए भेजे जाएं उन सबका शिक्षा प्रशासन अध्ययन मंडल द्वारा मूल्यांकन किया जाना ज़रूरी है। इसके लिए मूल्यांकन तथा टिप्पणी प्रपत्र (देखिए नीचे) का उपयोग किया जाता है। प्रपत्र के तीन भाग हैं—(१) प्रकाशक द्वारा दी जाने वाली सूचना, (२) बनाबट सम्बन्धी आंकड़े, (३) समिति द्वारा मूल्यांकन।

जब कोई पुस्तक मूल्यांकन के लिए आए तो उसका नाम (१) भाग में लिखकर प्रपत्र प्रकाशक को भेज दिया जाता है। जब प्रकाशक उसे भर कर लौटा देता है तो (२) भाग को अध्ययन मंडल का सचिव भरता है। सचिव प्रपत्र की तीन प्रतियां तैयार करता है, जिनमें केवल (१) और (२) भागों की ही सूचना भरी जाती है।

यह तीन प्रतियां मंडल के तीन सदस्यों में बांट दी जाती हैं, और वे अलग-अलग (३) भाग को भरते हैं। इसके हर अंश का मूल्यांकन अंक देकर किया जाता है।

इन तीनों सदस्यों को स्वतन्त्र रूप से अलग-अलग काम करना होता है और अगर पुस्तक की एक ही प्रति प्राप्त हो तो वह उन्हें बारी-बारी से दी जाती है। जब एक सदस्य अपना काम खत्म करके पुस्तक दूसरे को दे देता है तो उसके द्वारा भरा गया प्रपत्र भी सचिव को वापस मिल जाता है।

यदि सामग्री ऐसे ढंग की हो कि प्रपत्र का कोई प्रश्न उस पर लागू न होता हो तो मूल्यांकन करने वाला उसके पूरे अंक देता है।

मूल्यांकन करने वालों को आम तौर पर यह देखना होता है कि प्रकाशन प्रस्तावित मानकों पर किस हद तक पूरा उतरता है, और फिर उसी हिसाब

से वह प्रत्येक प्रश्न पर अंक देता है। उदाहरणार्थ खंड (क) के पहले प्रश्न को लीजिए। यदि ग्रामीण पाठकों के लिए एक पुस्तक ६ प्वांइट के टाइप में छपी है और पंक्तियों के बीच कोई खाली जगह नहीं है तो इसे शायद १० में से १ या २ अंक दिए जाएं। इसका मतलब यह होगा कि टाइप उपयुक्त नहीं समझा गया और १ या २ अंक बाईं ओर के वर्ग में लिख दिया जाएगा। ६ या ८ अंक देने का मतलब यह होगा कि टाइप कुछ अच्छा है, पर पूरी तरह उपयुक्त नहीं।

मूल्यांकन सारांश

जब तीनों सदस्य अपनी मूल्यांकन सूचियां सचिव को दे दें तो वह तीनों द्वारा दिए गए अंकों की औसत और सारांश निकाल कर मूल्यांकन सारांश प्रपत्र पर अंकित करता है। इस प्रपत्र पर प्रत्येक खंड में तीनों द्वारा दिए गए अंक तथा उनकी औसत दर्ज की जाती है। मिसाल के तौर पर यदि खंड (क) प्रश्न १ में पहला सदस्य ४, दूसरा ३ और तीसरा २ अंक देता है तो सचिव मूल्यांकन सारांश के खंड (क) की पहली पंक्ति पर ४, ३, २, अंक लिख देगा। यही सभी अंकों का जोड़ और औसत भी निकालेगा।

समिति द्वारा विचार विनिमय

मूल्यांकन और टिप्पणी समिति प्रत्येक प्रकाशन के इस सारांश पर विचार करेगी। बैठक में सचिव यह सूचना देगा: (ग) मूल्यांकन प्रपत्र के प्रत्येक खंड के हर प्रश्न पर तीनों सदस्यों द्वारा दिए गए अंकों की औसत, (ख) क्या तीनों में किसी प्रश्न पर बहुत अधिक मतभेद है, और यदि है तो किस पर, (ग) प्रत्येक खंड में कुल अंकों की औसत, (घ) सभी खंडों के कुल जोड़ का औसत (प्रकाशन का अन्तिम मूल्यनिरूपण)।

जब इस सारी सूचना पर बहस होती है तो सचिव समिति की टिप्पणियों को भी सारांश प्रपत्र पर लिख लेता है। यह टिप्पणियां पुस्तक के हर पहलू के बारे में समिति के विचारों को व्यक्त करती है और इन्हीं आधार पर अन्तिम टिप्पणी त्रैमासिक सूचना पत्र में छापी जाती हैं।

मूल्यांकन तथा टिप्पणी प्रपत्र
पुस्तक टिप्पणी अभिनिर्देश सेवा
शिक्षा प्रकाशन अध्ययन मंडल
बर्मा अनुवाद सोसाइटी

१—प्रकाशन् द्वारा दी जाने वाली सूचना

१. पुस्तक का शीर्षक..
२. लेखक..
३. प्रकाशन तिथि..
४. मुद्रित प्रतियों की कुल संख्या..
५. वितरण के लिए कब तैयार हुई..
६. वास्तविक वितरण कब आरम्भ हुआ..
७. अब तक कितनी प्रतियां बिकी हैं (यदि बिकी हुई हो)..........
८. वितरण के साधन (व्यापारिक, सरकारी आदि)................
९. कितनी प्रतियां बिकी हैं..
१०. किस प्रकार के पाठकों के लिए हैं (बताइये कि औसत सम्भावित पाठक का प्रदेश, व्यवसाय और शिक्षा क्या होनी चाहिए।)......
११. प्रकाशन का उद्देश्य..
१२. लागत..
१३. मुद्रक का नाम..
१४. संस्करणों की संख्या..
१५. पुस्तक
१६. पुस्तक के उत्पादन में क्या कठिनाइयां हुई..........................

प्रस्तुत कर्ता..........................
तिथि:—.............   हस्ताक्षर..........................
नम्बर..........................

२—बनावट सम्बन्धी आंकड़े

१. साईज़ इंचों में..
२. पृष्ठ संख्या..
३. जिल्द कैसी है : मोटे काग़ज़ की..........................
गत्ते की..........................
किसी और तरह की..........................

४. पुस्तक के मुख्य भाग में प्रयुक्त टाईप का साईज़..................
५. मुद्रित पृष्ठों में चित्रों आदि का अनुपात..........................
६. रंगों की संख्या (काले समेत)—मुख पृष्ठ पर..................
चित्रों में..........................
मूल पाठ में..........................
७. परिचय लेख............यदि हैं तो किसने लिखा..............
८. भूमिका.................यदि है तो किसने लिखी..............
९. सूचक अंक..

३—समिति मूल्यांकन

(क)—बनावट और आकृति (७५ अंक)

१. ☐ (१०अंक) टाईप इतना बड़ा है कि सम्भावित पाठक आसानी से पढ़ सकें।
२. ☐ (५ अंक) पढ़ने में आसानी के लिए कालमों की चौड़ाई।
३. ☐ (१०अंक) मूलपाठ, हाशिए, चित्रों आदि की तरतीब का कुल मिलाकर क्या प्रभाव पड़ता है ?
४. ☐ (१० अंक) सामग्री की घिच पिच तो नहीं।
५. ☐ (५ अंक) मूलपाठ के अंशों पर विशेष बल देने के लिए रंगों का उपयोग।
६. ☐ (१०अंक) उपशीर्षकों, बाक्सों, विशेष टाइप आदि का उपयोग।
७. ☐ (५ अंक) पुस्तक के उद्देश्य को देखते हुए काग़ज़ कैसा है ?
८. ☐ (१०अंक) छपाई कैसी है ?
९. ☐ (१५अंक) जिल्द की खूबसूरती और मज़बूती।
१०. ☐ (५ अंक) साईज़ कितना उपयुक्त है।

(ख) चित्र आदि (७५ अंक)

१. ☐ (५अंक) मुखपृष्ठ का चित्र प्रभावपूर्ण और शीर्षक दिलचस्प है।
२. ☐ (१५अंक) काफी और अच्छे चित्र हैं।
३. ☐ (१०अंक) क्या चित्र देखते ही समझ में आ जाते हैं ?
४. ☐ (१०अंक) क्या चित्रों से मूलपाठ स्पष्ट होता है।
५. ☐ (५ अंक) क्या विधियों का विवरण चित्रों से स्पष्ट होता है ?
६. ☐ (५ अंक) क्या चित्रों में मानवीयता है ?
७. ☐ (१० अंक) चित्रों में घिच पिच तो नहीं ?

८. ☐ (५ अंक) क्या चित्रों में दिखाई गई शक्लें जानी पहचानी और आकर्षक हैं ?

९. ☐ (५ अंक) क्या आवश्यकतानुसार नक्शे और चार्ट हैं ?

१०. ☐ (५ अंक) क्या चित्रों के रंग यथार्थ चित्रण करते हैं ?

(ग) भाषा (५० अंक)

१. ☐ (१०अंक) जाने पहचाने शब्द या भाव इकाइयों का प्रयोग (पाली या साहित्यिक शब्द नहीं होने चाहिएं ।)

२. ☐ (१०अंक) वाक्य छोटे और उत्तम पुरुषोक्ति का प्रयोग ।

३. ☐ (१०अंक) पैरे औसतन छोटे ।

४. ☐ (१०अंक) टैक्नीकल शब्द हटा दिये गये हैं, या समझा दिए गए हैं ।

५. ☐ (१०अंक) सम्भावित पाठकों के लिए शब्द और भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से भाषा जानी पहचानी और आसानी से पढ़ी जाने योग्य है ।

(घ) प्रस्तुत करने का ढंग और अन्तर्वस्तु (१०० अंक)

१. ☐ (१५ अंक) भूमिका महत्वपूर्ण तथा दिलचस्प ।

२. ☐ (१०अंक) भावों का क्रम युक्ति संगत, विकास स्पष्ट ।

३. ☐ (१०अंक) क्या सम्भावित पाठक के जीवन व्यवहार से निकट सम्बन्ध है ।

४. ☐ (५ अंक) क्या सामग्री सामयिक है, पुरानी तो नहीं ?

५. ☐ (५ अंक) यदि आंकड़े दिए गए हैं तो क्या वे आवश्यक हैं ?

६. ☐ (१०अंक) क्या यह स्पष्ट है कि प्रत्येक खंड पाठक को क्या सिखाना या उससे क्या करवाना चाहता है ?

७. ☐ (१०अंक) क्या अन्तर्वस्तु स्पष्ट होने के अतिरिक्त पाठक को कार्य के लिए भी प्रेरित करती है ?

८. ☐ (५ अंक) क्या किसी निश्चित कार्य का सुझाव है, जैसे चेचक का टीका, लगवाना, सार्वजनिक स्वास्थ्य सहायक से सलाह लेना, चावल का अच्छा बीज खरीदना ?

९. ☐ (५ अंक) क्या उसी कार्य में दिलचस्पी लेने वाले अन्य संगठनों के उद्देश्यों या कार्यक्रमों का उल्लेख है ?

१०. ☐ (५ अंक) क्या सारी पुस्तक में दिलचस्पी लगातार बनी रहती है ?

११. ☐ (१०अंक) क्या सारी पुस्तक में उपयुक्त स्थलों पर सारांश दिए गए हैं (जैसे संक्षिप्त विवरण, निष्कर्षों का क्रमिक उल्लेख, चार्ट, चित्र, कार्टून, इत्यादि) ?

१२. ☐ (५ अंक) क्या किसी लोकप्रिय नारे या प्रतीक से काम लिया गया है, यदि हां, तो क्या उसका बार-बार और प्रभावपूर्ण ढंग से उपयोग किया गया है ?

१३. ☐ (५ अंक) क्या इसी विषय पर और सामग्री प्रकाशित की जाएगी, यदि हाँ तो क्या इस बात का उल्लेख किया गया है ?

१४. ☐ (५ अंक) क्या यह बताया गया है कि पाठक और अधिक सूचना कहां से प्राप्त कर सकता है (पुस्तक सूचियां, सरकारी एकांशों के पते, इत्यादि) ?

१५. ☐ (५ अंक) क्या केवल वही सूचना दी गई है जो पाठक के लिए महत्व रखती है ?

परिशिष्ट—२

सारांश तथा टिप्पणियां

डा० रूपर्ट ईस्ट

बर्मा अनुवाद सोसाइटी अर्ध-राष्ट्रीय क़िस्म का काफ़ी बड़ा संगठन है, जिस पर एकीकृत नियन्त्रण है और जो साहित्य उत्पादन के अधिकतर कार्य स्वयं करता है। यदि एक बड़े केन्द्रीय संगठन या अनेक स्वावलम्बी संगठनों की स्थापना पर विचार करना हो तो इस सोसाइटी के अनुभव और समस्याओं का अध्ययन दिलचस्पी से ख़ाली नहीं होगा। इसलिए इसकी रिपोर्ट को पढ़कर कुछ बातें विचारार्थ प्रस्तुत की जाती हैं।

सबसे पहली बात प्रशासन और नियन्त्रण का महत्वपूर्ण प्रश्न है। रिपोर्ट में बर्मा अनुवाद सोसाइटी को बिना नफ़े के काम करने वाली ग़ैर सरकारी शिक्षा संस्था में बताया गया है। पर चूंकि प्रबन्ध परिषद में ज़्यादा संख्या बड़े-बड़े अधिकारियों की है और अध्यक्ष प्रधान मन्त्री स्वयं हैं, और चूंकि सोसाइटी काफ़ी हद तक सरकारी आर्थिक सहायता पर निर्भर हैं, चाहे यह सहायता प्रत्यक्ष पूंजीगत अनुदानों के रूप में हो या अप्रत्यक्ष लाभ के रूप में (जैसे प्रकाशनों का अधिकांश सरकार के हाथ बिक जाने की सुविधा), इसलिए यह ख्याल किया जा सकता है कि उस पर, कम से कम नीति के सभी मामलों के बारे में सरकार का कुछ नियन्त्रण अवश्य होगा।

इस प्रकार के किसी भी राष्ट्रीय संगठन के मामले में, जिसका इतना ज़्यादा सरकारी विभागों और सरकारी नीति के इतने अधिक पहलुओं से संबंध हो, यह स्वाभाविक ही है कि उसके कार्यों पर निगरानी रखने और उसका कार्य क्रम निश्चित करने में सरकार का बहुत काफ़ी हद तक दख़ल हो। वयस्क शिक्षा का यह मूल सिद्धान्त है कि लोगों को स्वयं उद्यम करने में प्रोत्साहन दिया जाय, इसलिए जहां तक हो सके पठन सामग्री के उत्पादन में सरकारी उद्देश्यों का रहना

ही सम्भवतः उचित होता है। परन्तु इस सामग्री पर सरकारी छाप का परोक्ष होना स्पष्ट है और यह सरकारी वितरण साधनों से पाठक तक पहुंचती है, अतः साधारण ग्रामवासी के लिए इसे सरकारी हिदायतों के सिवा और कुछ समझना कठिन होगा, विशेषकर ऐसी हालत में, जब स्वभाव और परम्परा से वह पीढ़ियों से चली आ रही जीवन पद्धति को तब तक बदलना नहीं चाहता जब तक उसे ऐसा करने का आदेश न दिया जाये। उद्देश्य यह है कि वह पुस्तक और उसके भीतर दी गई सलाह, सूचना और मनोरंजक बातों को पसन्द करे, इसलिए नहीं कि यह सब अधिकारियों की ओर से आया है बल्कि इसलिए कि वह उसके मूल्य को समझता है, और फिर इसी कारण से उस पर अमल भी करे। इस प्रकार, वह साहित्य की ज़रूरत महसूस करने लगेगा, उसें अपना समझेगा और संभवतः विशेषकर अन्त में पत्रिकाओं में, स्वयं भी उसकी रचना में भाग लेने लगेगा।

इसलिए यद्यपि, कम से कम कुछ समय के लिये, नीति पर नियन्त्रण और अन्तिम ज़िम्मेदारी शायद सरकार के हाथ में रहनी चाहिए, जो इस योजना की प्रेरक है और इसका आंशिक खर्च उठाती है। तथापि क्या ऐसा संगठन बनाना सम्भव है जो न केवल अपना कार्यक्रम निश्चित करने और अपने काम का प्रबन्ध करने में सचमुच स्वतन्त्र हो बल्कि जन-साधारण भी उसे ऐसा समझे। दूसरे शब्दों में ऐसा संगठन, जिसे वह अपने शासकों से सम्बद्ध न समझता हो बल्कि यह ख्याल करे कि उसमें उसका निजी हित है और वह, थोड़ा बहुत उसकी सहायता पर निर्भर है। रिपोर्ट को देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि सोसाइटी कहां तक इस उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल हुई है, या वह वास्तव में ऐसा करना चाहती भी है या नहीं।

अगर इस उद्देश्य को वांछनीय समझा जाये तो इसकी प्राप्ति के ऐसे कई उपाय हैं जिन पर विचार किया जा सकता है। उदाहरणार्थ :

१. नियन्त्रण सम्बद्ध प्रदेशों के वरिष्ठ नागरिकों की एक परिषद् को सौंप दिया जाए; सरकारी सदस्यों की बहुत अधिक संख्या न हो।
२. प्रबन्ध और उत्पादन कर्मचारियों के मार्गदर्शन के लिए सामान्य सिद्धान्तों की एक सूची बना दी जाए और उनका परिपालन उन्हीं पर छोड़ दिया जाए।
३. सामग्री इकट्ठा करने, बेचने और वितरण के काम, जहां तक हो सके, सरकारी साधनों से न किये जाएँ बल्कि उनकी स्वतन्त्र व्यवस्था स्थापित की जाए।

४. गांवों के लोगों में दिलचस्पी पैदा करने और उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए न्यूनतम स्तर पर सलाहकार समितियां बनाई जाएँ।
५. पत्रिकाओं में साधारण पाठकों के पत्र और टिप्पणियां प्रकाशित करने में बढ़ावा दिया जाए।
६. आमदनी और बचत के हर उचित साधन का उपयोग किया जाए ताकि आर्थिक स्वावलम्बन प्राप्त हो सके, मिसाल के तौर पर एक कुशल विज्ञापन तथा विक्रय व्यवस्था स्थापित की जाए, उचित विज्ञापन स्वीकार किए जाएं, छापाखाना कम ख़र्च पर अच्छा काम करें, और कम से कम प्रशासनिक अमला रखा जाए।

लेकिन व्यापारिक पक्ष पर ज़रूरत से ज़्यादा बल देने में भी ख़तरा है। संगठन को इतनी काफ़ी आर्थिक सहायता प्राप्त होनी चाहिए कि उसे पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता न पड़े; यह बात बहुत आवश्यक जान पड़ती है। अन्यथा व्यापारिक हित में शिक्षा का उद्देश्य आंखों से ओझल हो जाने का डर है।

वित्त और विक्रय

इनका अन्तिम प्रश्न से गहरा सम्बन्ध है। सोसाइटी ने यह सिद्धान्त स्वीकार किया है कि उसके प्रकाशन मुफ्त बांटे जाने की बजाए बेचे जाएँ, चाहे क़ीमत नाम मात्र ही ली जाए; और वह सरकारी साधनों से अलग अपने प्रकाशनों की बिक्री बढ़ाने की पूरी कोशिश कर रही है। पर कोई चीज़ बड़ी मात्रा में मुफ्त बांटी गई हो तो उसकी शेष मात्रा को बेचने की कठिनाई स्पष्ट है, विशेषकर ऐसी हालत में जबकि सम्भावित ख़रीदार ग़रीब हों और मुफ्त प्राप्त करने के आदि हो चुके हों। और, यही वह लोग हैं जिनमें साहित्य ख़रीदने की आदत विशेष रूप से डालनी है। 'सापी बईमान' पत्रिका की मिसाल लीजिये। इसकी २१००० प्रतियों में से १८००० सरकार मुफ्त बांटने के लिए ख़रीदती है।

एक अन्य समस्या मुद्रण का भारी खर्च है। किसी प्रकाशन के उत्पादन पर चाहे कितना कम खर्च हो, और उसका संस्करण चाहे कितना बड़ा हो (इस प्रकार के साहित्य के बहुत बड़े संस्करण छापना आम तौर पर सम्भव नहीं होता), उसे काफ़ी अनुदान के बिना ऐसी क़ीमत पर बेचना लगभग असम्भव है जो उसके सम्भावित ख़रीदार अदा कर सकते हों। अनुदान देकर लागत से कम दामों पर बेचने का एक परिणाम यह होगा कि वे जो किताबें ख़रीदेंगे

उनके मूल्य के बारे में उनके मन में ग़लत धारणा बन जायेगी; सही क़ीमत का पता तब चलेगा जब उन्हें बिना अनुदान के छपे व्यापारिक प्रकाशन ख़रीदने पड़ेंगे। पर शायद महंगी किताबें बेचने के मुक़ाबले में यह कम ख़राबी की बात मानी जा सकती है।

अधिकतर सरकारी विभाग और लोक कल्याण संस्थाएँ साहित्य या कोई अन्य चीज़ बेचने की सम्भावना से बचना चाहते हैं, इस कारण से नहीं कि वे इसके सिद्धान्त रूप से विरोधी हैं बल्कि इसलिए कि उनकी व्यवस्था, परम्परा और स्वभाव इस काम के अनुरूप नहीं है; उनके लिए बहुत सी सामग्री एक बार ख़रीदकर मुफ्त बांट देना ज़्यादा आसान है। पर इस बात में कोई सन्देह नहीं कि आमतौर पर साधारण आदमी मुफ्त मिली पुस्तक या पत्रिका की बजाये उसकी ज़्यादा क़द्र करता है जो उसने क़ीमत पर ख़रीदी हो, और फिर किसी साहित्य को तभी सफल समझा जा सकता है जब लोग उसे प्राप्त करने के लिए कुछ ख़र्च करने को तैयार हों। इसलिए यह सोचना उचित जान पड़ता है कि एक वास्तविक विक्रय व्यवस्था स्थापित करने के बारे में कठिनाइयां कहाँ तक दूर की जा सकती हैं।

× × ×

डा० ईस्ट की उपरोक्त टिप्पणीं के साथ-साथ एक सूचना देना आवश्यक प्रतीत होता है। बर्मा अनुवाद सोसाइटी के जनवरी १९५९ के सूचनापत्र में बताया गया कि उसकी वार्षिक आय १० लाख डालर तक पहुँच गई है और इसका ८० प्रतिशत पुस्तक विक्रेताओं की मार्फत सामान्य जनता के हाथ बिक्री से प्राप्त हो रहा है। १९५५-५६ में सोसाइटी की ८० प्रतिशत आय सरकार के हाथों सामूहिक विक्रय से होती थी। (सम्पादक)

अध्याय ७

लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस

गिलर्मो नानैती, निर्देशक शिक्षा विभाग, अखिल अमरीकी संघ

[इस अध्ययन से पता चलता है कि एक निश्चित उद्देश्य, एक भाषा वाला व्यापक प्रदेश और काफ़ी धन होने से क्या कुछ प्राप्त किया जा सकता है।

इस अध्याय के अन्त में दी गई टिप्पणियों में डा० ईस्ट ने यह प्रश्न उठाया है कि क्या प्रत्येक पुस्तिका किसी प्रदेश के सभी वर्गों के लिए समान रूप से उपयुक्त होती है ? इस प्रश्न का उत्तर तो स्थानीय परिस्थितियों को देखकर ही दिया जा सकता है, पर साहित्य प्रसार का कार्य करने वाले अधिकतर लोगों का यह अनुभव रहा है कि अगर ऐसा साहित्य तैयार करने की कोशिश की जाए जिसे सब स्वीकार करें तो शायद वह किसी को भी पूर्णरूप से स्वीकार नहीं होगा।]

उद्देश्य और संगठन

पृष्ठभूमि

लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस की स्थापना एक समझौते के अनुसार की गई थी जो जून १९५० में अमरीकी राष्ट्र संघ (आर्गेनाज़ेशन ऑफ़ अमेरिकन स्टेट्स) और संयुक्त राष्ट्र की शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति संस्था (यूनेस्को) के बीच हुआ था। उसे एक और समझौते द्वारा संशोधित किया गया और नया समझौता अक्टूबर १९५४ में लागू हुआ।

नये समझौते के अनुसार प्रेस (लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस) के कार्य इस प्रकार हैं :

लैटिन अमरीकी के लिए मूल शिक्षा की सामग्री तैयार करना और

बांटना, इस सम्बन्ध में क्रेफ़ाल[1] द्वारा किए गए प्रायोगिक कार्य पर विशेष रूप से ध्यान देना।

अमरीकी राष्ट्रों की ओर से भेजी गई मूल शिक्षा सामग्री का संचय, विश्लेषण तथा वर्गीकरण करना।

क्रेफ़ाल या लैटिन अमरीका में इस तरह के अन्य संस्थानों द्वारा भेजे गए शिक्षार्थियों के लिए पुस्तक उत्पादन के प्रशिक्षण का आयोजन करना।

सरकार और मूल शिक्षा सामग्री की तैयारी में दिलचस्पी रखने वाले संगठनों को टैक्नीकल सूचना उपलब्ध कराना।

संयुक्त सलाहकार और समिति

समझौते में यूनेस्को और अमरीकी राष्ट्र संगठन के प्रतिनिधियों की एक संयुक्त सलाहकार समिति बनाने की व्यवस्था है जिसका काम लैटिन अमरीका में मूल शिक्षा की समस्याओं पर विचार करना और उसके प्रसार में प्रोत्सान देना तथा इस क्षेत्र में दोनों संगठनों के कार्यक्रमों और योजनाओं में समन्वय स्थापित करना है। समझौते में कहा गया है : 'संयुक्त सलाहकार समिति लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस के संचालन में विशेष दिलचस्पी लेगी' और 'कार्यक्रमों के प्रस्तावों और बजटों की जांच करेगी...तथा अपनी टिप्पणियां और सुझाव यूनेस्को और अमरीकी राष्ट्र संगठन को भेजेगी'।

संगठन और अमले के कार्य

इस समय प्रेस का कर्मचारी संगठन इस प्रकार है : एक निर्देशक, एक सम्पादक, एक सहायक सम्पादक, एक रेखा चित्र कला विशेषज्ञ, एक चित्रकार, एक सचिव। इसके अतिरिक्त शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, तथा आर्थिक और सामाजिक मामलों के लिए टैक्नीकल सलाहकार समितियां हैं।

निर्देशक के काम :—संयुक्त सलाहकार समिति की सिफ़ारिशों के अनुसार मूल शिक्षा सामग्री के उत्पादन की योजना निर्धारित करना, मूल शिक्षा सामग्री का उत्पादन, प्रकाशन, और वितरण, प्रेस के अमले पर निगरानी, विषयों का अन्तिम चुनाव तथा अन्तर्वस्तु और चित्रों की जांच और स्वीकृति, टैक्नीकल समितियों की बैठकें बुलाना; प्रेस का अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों, सामग्री के उपयोग में दिलचस्पी रखने वाले संस्थानों, अखिल अमरीकी संघ के अन्य कार्यालयों और अमरीकी राष्ट्रों की दूसरी विशेष संस्थाओं से सम्बन्ध बनाए

---

१. 'क्रेफ़ाल' शब्द एक मूल शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र के नाम के पहले अक्षरों को लेकर बना है, जिसका संचालन यूनेस्को, अमरीकी राष्ट्र संगठन और मैक्सीको सरकार मिलकर चाहते हैं।

रखना, लैटिन अमरीका में मूल शिक्षा पुस्तकालयों की स्थापना में बढ़ावा देना और उनके बारे में सूचना उपलब्ध करना ।

सम्पादक के काम :—अमरीकी राष्ट्र संगठन के शिक्षा विभाग की शिक्षा आदान-प्रदान शाखा के साथ मूल शिक्षा सामग्री के संचय और वर्गीकरण के बारे में सम्पर्क रखना, प्रेस के निर्देशक द्वारा निर्धारित प्रकाशनों की तैयारी और उनके अन्तिम मुसव्विदे की जांच, प्रेस के सम्पादकीय कार्य का सन्तोषजनक संचालन, अन्तिम मुसव्विदे की तैयारी, विशेषज्ञ के साथ मिल कर चित्रों, चार्टों का आयोजन और फिर उनकी अन्तिम स्वीकृति, निर्देशक के सलाहकार के रूप में कार्य करना और उसे अपनी शाखा के काम और टैक्नीकल मामलों तथा तात्कालिक समस्याओं के बारे में अवगत करना, प्रकाशित और वितरित सामग्री की लेखा रखने की व्यवस्था करना, कार्यालय के अमले पर निगरानी ।

रेखाचित्र कला विशेषज्ञ के काम—सम्पादक के आदेशों और मूलपाठ के अनुसार यह तै करना कि कितने और कैसे चित्र आदि बनाए जाएं, मुद्रण शाखा की सलाह से सामग्री का अभिन्यास निश्चित करना, पुस्तकों के लिए चार्टों की तैयारी, अन्य दृश्य सामग्री की तैयारी, मूल शिक्षा से सम्बद्ध प्रदर्शनियों की तैयारी ऐसे परीक्षणों की तैयारी और संचालन जिनका उद्देश्य यह पता लगाना हो कि कैसे चित्र और चार्ट नवशिक्षित पाठकों और निरक्षर लोगों को बात समझाने के लिए सबसे उपयुक्त हैं, मूल और पूरक पढ़ाई की पुस्तिकाओं और अन्य सामग्री के मूलपाठ और चित्रों आदि में सम्बन्ध का अध्ययन; मूल शिक्षा कार्य के लिए सबसे अधिक सहायक दृश्य साधनों की जांच ।

चित्रकार के काम—पुस्तिकाओं और अन्य दृश्य सामग्री के लिए चित्र-चार्ट बनाना; ऑफ़ सैट विधि से तैयार किये जाने वाले चित्रों चार्टों के अक्षरों और रेखाओं को ठीक ठाक करना ।

सहायक सम्पादक के काम—मूल शिक्षा सामग्री की तैयारी में सम्पादक को सहायता देना, सम्पादक द्वारा निर्धारित सामग्री का मुसव्विदा तैयार करना टैक्नीकल समितियों द्वारा किए गए आंकड़ों या प्रदर्शन पुस्तकालय से प्राप्त जानकारी के आधार पर सूचना सामग्री तैयार करना; स्पेनिश तथा अंग्रेजी में पुस्तकों की सूचियां बनाना और मूल शिक्षा सामग्री इकट्ठी करना ।

सचिव के काम—शिक्षा विभाग की शिक्षा आदान-प्रदान शाखा द्वारा संगठित स्थायी पाठ्य पुस्तक प्रदर्शन पुस्तकालय की देखभाल; सचिव के सामान्य कार्य ।

शुरू-शुरू में प्रेस ने, कांट्रेक्ट पर, सामग्री उत्पादन के एक विशेषज्ञ की सेवाएं प्राप्त कीं, जिसके कार्य इस प्रकार थे—मूल शिक्षा सामग्री के लिए सबसे उपयुक्त शब्दावली का अध्ययन, विभिन्न प्रकार की सामग्री में प्रयुक्त शब्दावली के स्तर निर्धारित करना, यह जानने के लिए कि वह निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति और भावी पाठकों की समझने की क्षमता के किस प्रकार अनुकूल हो सकती है, सामग्री का लैटिन अमरीका के विभिन्न प्रदेशों में परीक्षण, निर्देशक, सम्पादक और रेखाचित्र कलाविशेषज्ञ के साथ मूल शिक्षा के लिए सबसे उपयुक्त दृश्य सामग्री की योजना बनाना।

अखिल अमरीकी संघ के साथ व्यावहारिक सम्बन्ध

प्रेस अखिल अमरीकी संघ के अधिकतर कार्यालयों और सेवाओं के साथ व्यावहारिक सम्बन्ध रखता है। इन सम्बन्धों को टैक्नीकल और प्रशासनिक दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

टैक्नीकल सम्बन्ध—यह सम्बन्ध उन विशेष कार्यालय और सेवाओं के साथ रखे जाते हैं जिन पर लैटिन अमरीकी की समस्याओं के बारे में शोध करने और उनके हल सुझाने की ज़िम्मेदारी है। इन सम्बन्धों को औपचारिक रूप देने के लिए प्रेस ने चार टैक्नीकल सलाहकार समितियां बनाई हैं: स्वास्थ्य विषयक समिति, जिसमें अखिल अमरीकी सफ़ाई कार्यालय तथा अखिल अमरीकी संघ के डाक्टर और विशेषज्ञ हैं, शिक्षा सम्बन्धी समिति और कृषि सम्बन्धी समिति, जिनमें अखिल अमरीकी संघ विशेषज्ञ हैं, आर्थिक और सामाजिक मामलों की समिति, जिसमें अखिल अमरीकी संघ के आर्थिक और सामाजिक मामलों के विभाग के विशेषज्ञ हैं।

इन टैक्नीकल सम्बन्धों के कारण जो सहयोग स्थापित होता है उसका प्रेस को भी लाभ पहुँचता है और उन कार्यालयों और संगठनों को भी जिनके प्रतिनिधि समितियों में हैं। ये कार्यालय और संगठन काफ़ी समय से लैटिन अमरीका की विभिन्न समस्याओं पर शोध कार्य कर रहे हैं। मिसाल के तौर पर अखिल अमरीकी सफ़ाई कार्यालय ६० वर्ष से भी अधिक समय से स्वास्थ्य और सफ़ाई के क्षेत्र में कार्य कर रहा है। ऐसा ही, संघ के कई टैक्नीकल कार्यालय अन्य क्षेत्र में कर रहे हैं। साथ ही, ये कार्यालय और संगठन के प्रत्येक लैटिन अमरीकी देश की राष्ट्रीय संस्थाओं और सेवाओं के साथ मिलकर अपने-अपने क्षेत्र में कार्य का विकास कर रहे हैं।

टैक्नीकल समितियां इन-इन कार्यों में योग देती है:

पठन सामग्री के लिए विषयों का चुनाव, क्योंकि समितियां जिन संगठनों

का प्रतिनिधित्व करती हैं उन्होंने सम्बद्ध क्षेत्रों में विशेष खोज की है और उन क्षेत्रों में लैटिन अमरीकी देशों की जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं पर घ्यान दे रहे हैं।

प्रत्येक विषय पर टैक्नीकल सूचना देना, क्योंकि सम्बद्ध संगठनों को अपनी बात जनता तक पहुँचानी है और क्योंकि वे इस बारे में सबसे अच्छा निर्णय कर सकते हैं कि पठन सामग्री में दी गई जानकारी को उपयोगी बनाने के लिए कम से कम और कितनी टैक्नीकल सूचना की ज़रूरत है।

मुसव्विदे की जांच, यह देखने के लिये कि टैक्नीकल दृष्टि से सूचना सही हो।

चित्रों-चार्टों की जांच, यह देखने के लिए कि वे टैक्नीकल बातों को ठीक तरह से समझाते हों।

ऐसी संस्थाओं, वर्गों और व्यक्तियों के बारे में सूचना इकट्ठी करना, जो पुस्तिकाओं का उपयोग करना चाहते हों, क्योंकि समितियों में जिन कार्यालयों और संगठनों के प्रतिनिधि हैं वे अपने-अपने क्षेत्र में विभिन्न देशों के अधिकारियों और विशेषज्ञों से सम्पर्क रखते हैं।

ये संगठन और सेवाएँ लैटिन अमरीकी देशों में जो कार्य कर रही हों, उनसे सम्बद्ध सामग्री का उपयोग।

प्रशासनिक सम्बन्ध—प्रेस के अखिल अमरीकी संघ के साथ प्रशासनिक सम्बन्ध इन मामलों के बारे में हैं :

(क) वित्त सेवाएं, जिनकी, व्यवस्था प्रशासन सेवा विभाग की राजकोष शाखा करती हैं।

(ख) वितरण सेवाएं, जिनकी व्यवस्था प्रकाशन तथा वितरण शाखा करती हैं।

(ग) मुद्रण सेवाएं, जिनकी व्यवस्था मुद्रण तथा प्रतिलिपि शाखाएं करती हैं,

(घ) प्रकाशन सेवाएं, अर्थात् लागत का अनुमान आदि लगाना, जिनकी व्यवस्था मुद्रण शाखा करती हैं।

अमले का प्रशिक्षण

प्रेस में मूल शिक्षा सामग्री के उत्पादन का प्रशिक्षण देने के लिए किसी बाक़ायदा कार्यक्रम का विकास नहीं किया है। हां, इस प्रकार की सामग्री की तैयारी से सम्बद्ध कार्य करने वाले व्यक्ति अक्सर उसके यहां आते हैं और उन्हें उन पहलुओं के बारे में आवश्यक सूचना दी जाती है जिनमें उन्हें दिलचस्पी

हो। प्रेस किसी संगठित शिक्षाक्रम के संचालन का दावा किए बिना यह कार्य करता है। जो लोग मुद्रण या चित्र चार्ट बनाने और छापने के कामों का अध्ययन करना चाहें, या शब्दावली, सम्पादन, आकृति, कम्पोजिंग, टाईपोग्राफ़ी और अन्य टैक्नीकल कार्यों पर प्रेस के अनुभव का लाभ उठाना चाहें, उन्हें इसका अवसर दिया जाता है।

सरकारी और ग़ैर-सरकारी मुद्रण

प्रेस के प्रकाशनों से, विभिन्न सरकारों तथा संस्थाओं को, वैसी ही सामग्री के उत्पादन में प्रोत्साहन मिला है। सरकारों और ग़ैर-सरकारी संस्थाओं ने प्रेस द्वारा प्रकाशित सामग्री को दोबारा ज्यों का त्यों या रूपान्तर करके छापा है या जन शिक्षा प्रकाशनों में उसके अंश दिए हैं।

सम्पादन नीति

प्रकाशन कार्यक्रम

प्रेस के प्रकाशन कार्यक्रम की प्रेरणा अमरीकी राष्ट्र संगठन के उद्देश्य पत्र, विशेषकर उसके सामाजिक तथा सांस्कृतिक सिद्धान्तों, और मानव अधिकारों तथा कर्त्तव्यों के बारे में अमरीकी घोषणा-पत्र से मिली है। यह कार्यक्रम अमरीकी राष्ट्रों से सम्मेलनों और गोष्ठियों की सिफ़ारिशों पर भी आधारित है।

प्रेस का मुख्य उद्देश्य निरक्षरता के विरुद्ध आन्दोलन और लैटिन अमरीकी जनता का जीवन-स्तर ऊंचा उठाने में योग देना हैं। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रेस मूल शिक्षा पुस्तकालयों की स्थापना में बढ़ावा देता है। इन पुस्तकालयों द्वारा जनता को पठन की सुविधाएं मिलती हैं, उपयोगी ज्ञान का संचार होता है और ये सार्वजनिक सुधार के लिए सामूहिक सहयोग केन्द्रों का काम करते हैं। इस प्रकार अमरीकी राष्ट्र संगठन लोगों को एक समान उद्देश्य के लिए संगठित करने का प्रयत्न करता है, और इस उद्देश्य, इस संगठन के उद्देश्य पत्र के अनुसार, "मानव के लिए स्वतन्त्र भूमि और ऐसा अनुकूल वातावरण उपलब्ध करना है जहां वह अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके और अपनी न्यायोचित आकांक्षाओं को पूरा कर सकें।"

इन ध्येयों की प्राप्ति के लिए मूल शिक्षा के एक संकेन्द्रित कार्यक्रम की आवश्यकता है—ऐसे कार्यक्रम की, जिससे जनता को अमरीकी राष्ट्रों के उद्देश्यों के प्रति जागरूक करने और उद्देश्य पत्र में उल्लिखित सांस्कृतिक तथा सामाजिक प्रगति की आकांक्षाओं का विकास करने में योग मिले। इन उद्देश्यों के प्रति चेतना उत्पन्न करने के अतिरिक्त, मूल शिक्षा द्वारा यह प्रयास भी किया

जाता है कि जनता ऐसा ज्ञान और जानकारी प्राप्त कर सके जिससे उसका जीवन-स्तर उद्देश्य पत्र में स्वीकृत मानवीय सम्मान के सिद्धान्तों के अनुरूप ऊंचा उठाने में सहायता मिले। परिणामस्वरूप, प्रेस अपने प्रकाशनों के विषय निर्धारित करते समय मूल शिक्षा के उद्देश्यों को सामने रखता है। प्रेस ये पुस्तक-शृंखलाएं तैयार कर रहा है : (क) वयस्कों के लिए पढ़ाई आरम्भ करने की पुस्तकें, (ख) मूल ज्ञान तथा शिल्प, अर्थात् वे विषय जिन पर प्राथमिक स्कूलों की शिक्षा दी जाती है, जैसे भाषा, कलाएं, गणित, सामाजिक तथा प्राकृतिक विज्ञान, (ग) नागरिक शास्त्र, (घ) स्वास्थ्य, (ङ) आर्थिक और सामाजिक मामले, (च) कृषि तथा श्रम, (छ) फुर्सत के समय की पढ़ाई।

अखिल अमरीकी संघ के कार्यक्रम से सम्बन्ध

उपरोक्त क्षेत्रों में विषयों का चुनाव टैक्नीकल सलाहकार समितियों की सहायता से किया जाता है जिनके कार्य का उल्लेख आगे किया गया है। यह समितियां विषयों के चुनाव में जो सहायता देती है, उसके द्वारा प्रेस का कार्य अखिल अमरीकी संघ तथा अमरीकी देशों के विशिष्ट संगठनों के सर्वोपरि कार्यक्रमों से सम्बद्ध है। इस सहयोग से प्रेस को मूल शिक्षा के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्ध रखने वाले विशिष्ट कार्यालयों और संस्थानों द्वारा किए गए शोध कार्य से लाभ उठाने का भी अवसर मिलता है। सलाहकार समितियों का योग ि षयों के चुनाव तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वे सामग्री की अन्तर्वस्तु और विषय के प्रस्तुत करने के ढंग के बारे में भी परामर्श देती हैं।

इस विधि से अखिल अमरीकी संघ की सेवाओं के विशेषज्ञ मूल शिक्षा आन्दोलनों में साझी होते हैं, क्योंकि वे (डाक्टर, नर्सें, कृषि शास्त्री, सामाजिक कार्यकर्ता, मानव शास्त्री, सहकारिता तथा कृषि विकास कार्य करने वाले) अपने कार्य के लिए इस प्रकार की पठन सामग्री और दृश्य श्रव्य साधनों की सहायता चाहते हैं।

टैक्नीकल जानकार और जनसाधारण के बीच कड़ी

अमरीकी राष्ट्र संगठन के कार्यक्रम का विकास करने में विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ योग देते हैं—राजनीतिज्ञों से लेकर, जो संगठन की परिषद् में गोलार्थ के प्रदेशों के बीच सद्भाव और एकता के लिए प्रयत्न कर रहे हैं, सामाजिक तथा प्राकृतिक विज्ञानों के विशेषज्ञों तक, जो अमरीकी राष्ट्रों की समस्याओं पर शोध और जनता का जीवन-स्तर ऊंचा उठाने के लिए ज्ञान प्रसार के कार्य कर रहे हैं।

अमरीकी राष्ट्र संगठन का बहुपक्षीय सन्देश जनता तक पहुँचना चाहिए। इसके प्रसार में बाधक जनता की निरक्षरता और या सीमित पठन क्षमता है—इस दुर्बलता का प्रभाव अमरीकी राष्ट्रों के बहुत बड़े जन-समूह पर पड़ रहा है। लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस को जनता को पढ़ने की कला सिखाने में योग देना है। इसके लिए प्रेस ऐसी सामग्री तैयार कर रहा है जिससे पढ़ना सिखाया जा सके। इसके साथ ही वह ऐसी सरल पुस्तिकाएं भी तैयार कर रहा है जिनसे पढ़ने की आदत डालने और उपयोगी जानकारी का प्रसार करने में सहायता मिले।

लैटिन अमरीका में निरक्षर और अर्थ-साक्षर लोगों की संख्या से यह अंदाजा किया जा सकता है कि प्रेस का कार्य कितना महत्व रखता है। अनुमान लगाया गया है कि १९५० में अमरीका महाद्वीप में साढ़े चार करोड़ निरक्षर वयस्क थे। (निरक्षरों में ऐसे सभी व्यक्तियों की गणना की गई जो एक साधारण सन्देश लिखने या पढ़ने के अयोग्य हों।)

इस प्रकार लैटिन अमरीका की जनता दो क्षेत्रों में विभाजित है, प्रकाश का क्षेत्र और अन्धकार का क्षेत्र—साक्षर तथा निरक्षर। पर, सांस्कृतिक विकास के साधन के रूप में पठन के महत्व को समझते हुए यह विभाजन इतना दृढ़ नहीं होना चाहिए। प्रकाश और अन्धकार के बीच कुछ गोधूली क्षेत्र भी हैं, अर्थात् ऐसे साक्षर जो जनगणना सूचियों के साक्षर वर्ग में होने के बावजूद केवल दो या तीन वर्ष तक प्राथमिक शिक्षा पाए हुए हैं। ये लोग प्रायः अल्पविकसित समाज में रहते हैं जहां पढ़ने के लिए बहुत कम प्रोत्साहन या सुविधाएं हैं। ऐसी परिस्थितियों में रहने वालों की पठन सामग्री को समझने की क्षमता बहुत सीमित है। आंकड़ों से पता चलता है कि लैटिन अमरीका में अधिकतर लोगों ने प्राथमिक स्कूलों में पहले तीन साल की पढ़ाई से अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं की है। वास्तव में ऐसे विद्यार्थियों की संख्या बहुत अधिक है जो एक साल के बाद ही स्कूल छोड़ देते हैं और अगली कक्षाओं में छात्रों की गिनती बहुत कम रह जाती है। लैटिन अमरीका के गांवों में जन शिक्षा के जो आन्दोलन विकसित किए जाएं उनमें निरक्षर और सीमित पठन क्षमता वाले लोगों के भारी अनुपात को ध्यान में रखना जरूरी है। इसलिए स्पष्ट है कि इस समस्या के बारे में खोज करने और अमरीकी राष्ट्र संगठन का सन्देश लोगों तक पहुँचाने में लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस का बहुत महत्व है।

उत्पादन विधियां

शैली और अन्तर्वस्तु की समस्याएं

प्रेस ने मूल शिक्षा सामग्री के सम्बन्ध में शैली और अन्तर्वस्तु की समस्याओं की जांच की। इसके निष्कर्षों को बाद में एक गोल मेज़ सम्मेलन के सामने रखा गया, जिसमें अमरीका संयुक्त राज्य और लैटिन अमरीका के विशेषज्ञ शामिल हुए।

मुख्य रूप से रचना विधि और शैली, शब्दावली, आकृति और विषय प्रस्तुत करने के ढंग, टाईपोग्राफ़ी, परीक्षण और चित्रों आदि के बारे में विचार किया गया।

रचना शैली—यह विषय के अनुकूल होनी चाहिए। मिसाल के तौर पर लेखक आरकान विवृत्ति (एक्सपोज़ीशन), कहानी कथनोपकथन, पशु पक्षियों की कहानी आदि तरीक़ों में से जो भी अपने विषय के लिए उपयुक्त समझे अपना सकता है। अन्तर्वस्तु और शैली को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि दोनों का सम्बन्ध एक ही रचनात्मक क्रिया से है। अतः कोई एक साहित्यिक शैली मनमाने ढंग पर निर्धारित कर देना उचित नहीं। उद्देश्य यह है कि पुस्तक का विषय पाठक को दिलचस्प लगे और उसे उससे आनन्द मिले, ताकि उसे पढ़ने की आदत पड़े। जो भी शैली चुनी जाये उसमें दो और विशेषताएं होनी चाहिएं : इस प्रकार पाठक को पठन सामग्री में अपनी कुछ समस्याओं और कठिनाइयों का समाधान ढूंढ़ने में सहायता मिलेगी।

गोल मेज़ सम्मेलन ने जो सामान्य सुझाव दिए वे इस प्रकार हैं :

१—यदि भाव प्रत्यक्ष रूप से पेश करने हों तो पत्र या व्यक्तिगत सन्देश की शैली का उपयोग किया जाए; अर्थात् अन्य पुरुषोक्ति की बजाय पाठक को सम्बोधित करके लिखा जाए। मूलपाठ का पाठक से जितना कम व्यक्तिगत सम्बन्ध हो उतना ही उसे पढ़ना कठिन होता है।

२—यदि आख्यान शैली को अपनाया जाए तो कोशिश यह होनी चाहिए कि जो चीज़ भी पेश की जाए उसके बारे में पाठक की आंखों के सामने तस्वीर सी खिंच जाए। विषय को ऐसे पात्रों के जीवन में घटित घटनाओं के रूप में प्रस्तुत किया जाए जिनसे पाठक एकात्म्य स्थापित कर सके।

३—अनावश्यक ब्यौरे से बचा जाए।

४—कहानी में केवल कुछ मूल विचार ही दिए जाएँ।

५—शब्द नियमित क्रम से प्रयुक्त किए जाएं। नए या अपरिचित शब्दों की संदर्भ में व्याख्या हो जाए या उन्हें अध्ययन के लिए पाठ के आरम्भ में लिख दिया जाए। फिर उन्हें मूल लेख में बार-बार दुहराया जाए।

६—वाक्य, विशेष कर पुस्तिका के आरंभ में, छोटे-छोटे होने चाहिएं। इसका यह अर्थ नहीं कि आगे चलकर अपेक्षाकृत लम्बे वाक्य न आएं, पर उनमें ऐसे उपखण्ड नहीं होने चाहिएं जिनसे मतलब समझने के लिए सारा वाक्य फिर से पढ़ना पड़े। वाक्य रचना को बदलते रहना ज़्यादा अच्छा है।

७—पुस्तिका ऐसी होनी चाहिए जिसे आसानी के साथ पढ़ा जा सके। पैरे न केवल छोटे हों बल्कि दो पैरों के बीच काफ़ी जगह छोड़ी जाए।

वाक्य रचना के नियम—मूल शिक्षा सामग्री की रचना में वाक्य विन्यास के बारे में कुछ आवश्यकताओं को पूरा करना ज़रूरी है। इस सम्बन्ध में कोई दृढ़ नियम निश्चित करना सम्भव नहीं है। इनका निर्णय एक व्यक्तिगत कार्य है और लेखक को स्वयं यह अनुभव करना चाहिए कि भाषा का कौन सा रूप कहां उपयुक्त रहेगा।

स्पेनिश भाषा में रचना के लिए गोल मेज़ सम्मेलन ने कुछ मानक निर्धारित किए :

(क) शब्दों का क्रम प्रत्यक्ष और सीधा हो, उल्टे क्रम से बचा जाए;
(ख) पेच और घुमाव वाले वाक्यों से ज़्यादा सीधे वाक्यों का उपयोग किया जाए;
(ग) सरल क्रियाओं को अधिक अच्छा समझा जाए;
(घ) एक ध्वनि वाले (मौनी सिलेबिक) शब्द अधिक प्रयुक्त किए जाएँ;
(ङ) संशयार्थ वाक्यों के कठिन रूपों का प्रयोग न किया जाए;
(च) इस बात का खास ध्यान रखा जाए कि अर्थ अस्पष्ट न हों।

शब्दावली—शब्दावली ऐसी होनी चाहिए कि जिन लोगों के लिए पुस्तिका रची गई हो शब्द उनके जाने पहचाने हों। शब्दावली के चुनाव में कुशल लेखकों और अध्यापकों में सहयोग होना बहुत महत्वपूर्ण है। जिस जगह सामग्री का उपयोग करना हो वहाँ सामग्री के परीक्षण द्वारा शब्दों के प्रभाव

का निर्णय करना बहुत लाभकारी रहता है। शब्दावली के बारे में उपलब्ध तालिकाओं की सहायता लेना भी उपयोगी है।

जब सामग्री ऐसे ढंग से पेश की जाए जिससे पाठक में दिलचस्पी पैदा हो और उसे अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को सुलझाने में सहायता मिले तो शब्द कम कठिन जान पड़ते हैं। यह बात ध्यान में रहनी चाहिए।

उचित होगा कि बोलने की स्पेनिश भाषा की शब्दावली के बारे में ऐसा अनुसन्धान किया जाए, जिससे न केवल ज़्यादा अच्छी पठन सामग्री तैयार करने में बल्कि ऐसे विषयों का निर्धारण करने में भी सहायता मिल सके जिनमें सम्भावित पाठक दिलचस्पी लेते हों। इन विषयों पर भविष्य में पुस्तिकाएँ लिखी जा सकती हैं।

चित्र आदि—इनसे पाठक में दिलचस्पी पैदा होनी चाहिए और उसे विषय को समझने में सहायता मिलनी चाहिए। चित्रों आदि की संख्या या मूल लेख के साथ उनके अनुपात के बारे में कोई निश्चित नियम नहीं है। सामान्यत: पढ़ाई के पहले दौर में चित्र आदि अनिवार्य हैं, पर आगे चल कर उनकी आवश्यकता धीरे-धीरे घटती जाती है। मूल लेख और चित्रों आदि का अनुपात पुस्तिका के उद्देश्य के अनुसार निर्धारित किया जाता है। चित्रों से पाठक को यह अनुभव होना चाहिये कि वे वयस्कों के लिए बनाए गए हैं, बालकों के लिए नहीं। वे न केवल आकर्षक और आसानी से समझ में आने वाले हों बल्कि उनमें जो कुछ दिखाया जाए वह यथार्थ का चित्रण करता हो। चित्र मूल लेख का जितना स्पष्टीकरण करते हैं उतना ही वे अपने उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। प्रेस ने अपनी पहली पूरक पुस्तिकाओं में दृश्य-भाव इकाइयों के रूप में पाठ दिये हैं। प्रत्येक इकाई में एक चित्र होता है जिस पर पाठ के मुख्य भाव को अंकित करने वाला शीर्षक होता है। आमतौर पर मूल पाठ शीर्षक के शब्दों से आरम्भ होता है। इस प्रकार पढ़ना आरम्भ करने वाले पाठक के सामने एक ऐसी इकाई होती है जिसके अन्तर्गत मूल पाठ, शीर्षक और चित्र तीनों मिलकर भाव को समझने में सहायता देते हैं।

चित्रों के बारे में बहुत कम शोध कार्य हुआ है और अभी निश्चित निष्कर्ष प्रस्तुत नहीं किये जा सकते। इस क्षेत्र में खोज वांछनीय है।

मुख पृष्ठ—पाठक की उत्कंठा जगाने के लिए मुख पृष्ठ का विषय से सीधा सम्बन्ध होना चाहिए। अगर पुस्तिकाएँ अलग-अलग शृङ्खलाओं में प्रकाशित की जाएँ तो प्रत्येक शृङ्खला की रंगों, आकृति तथा शीर्षक द्वारा अलग पहचान होनी चाहिए।

आकृति—पुस्तिका का आकार और वज़न ऐसा होना चाहिए कि उसे आसानी से रखा और संभाला जा सके। प्रेस का अनुभव है कि जेबी आकार उसके उद्देश्यों के लिए सबसे उपयुक्त है।

टाइप और कम्पोज़िंग—टाइप का साइज़ और शक्ल पाठक के स्तर के अनुकूल होना चाहिए। मूल पाठ के लिए १८ प्वाइंट गैरापौंड टाइप और चित्रों के शीर्षकों के लिए २४ प्वाइंट टाइप बहुत लाभकारी पाया गया है। कुछ मौक़ों पर १४ प्वाइंट सैंचरी टाइप का भी प्रयोग किया गया है। कुछ और टाइप भी हैं जो अधिक स्पष्ट शक्ल के होने के कारण पढ़ना शुरू करने वालों के लिए उपयुक्त कहे जा सकते हैं, जैसे १८ प्वाइंट ग्रैनजौन या १४ प्वाइंट कैसलौन मूल पाठ के लिए और २४ प्वाइंट शीर्षकों के लिए।

टाइप स्पष्ट होना चाहिए और वैसा ही होना चाहिए जैसा पुस्तकों और समाचार-पत्रों में प्रयुक्त होता है। पढ़ना सीखने वालों के लिये मूल लेख में रोमन टाइप सबसे उपयुक्त है और "इटैलिक्स" का विशेष हालतों में ही प्रयोग किया जाना चाहिए। पंक्तियों की संख्या पृष्ठ के आकार पर निर्भर है; हर दो पंक्तियों के बीच इतनी जगह होनी चाहिए कि शब्द आसानी के साथ दिखाई दे सकें।

नए सीखने वालों के लिए वाक्य तोड़-तोड़ कर लिखे जाने चाहिएँ, ताकि हर पंक्ति में केवल एक भाव हो। पंक्तियों के अन्त में आने वाले शब्दों का विच्छेद नहीं होना चाहिये। उच्चतम स्तरों के लिए छोटे पैरों को पठन सामग्री की इकाई बनाना ठीक रहेगा।

विधियों का उपयोग

आइये उपरोक्त सिद्धान्तों के उपयोग का एक वास्तविक उदाहरण लें, पुस्तिका का शीर्षक है : 'चेचक'।

विषय का चुनाव—विषय लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस की स्वास्थ्य सलाहकार समिति ने सुझाया, क्योंकि चेचक की बीमारी कई लैटिन अमरीकी देशों में एक समस्या बनी हुई है और जनता में उनके टीके के फ़ायदों का प्रचार करना ज़रूरी है।

अन्तर्वस्तु का निर्णय—स्वास्थ्य सलाहकार समिति द्वारा दी गई टैक्नीकल सूचना के अनुसार जनता को इन मामलों के बारे में मूल बातों की जानकारी देना ज़रूरी था :

चेचक का खतरा—बीमारी की निशानियां, उसकी संक्रामकता, सम्भावित परिणाम—रोगी का इलाज और अन्य लोगों को उसकी छूत से बचाना।

रोकथाम-टीके का महत्व, टीका लगाने का सबसे अच्छा समय। इन तथ्यों को ऐसे ढंग से पेश करना था जो सरल हो और सीमित शिक्षा पाए लोग आसानी से समझ सकें।

प्रस्तुत करने का ढंग—इस नीरस विषय को पेश करने के लिये यह निर्णय किया गया कि महामारी के, जिसका इतने लोग, विशेषकर बच्चे, शिकार होते हैं, नाटकीय पहलुओं को उभारा जाए। इसलिए पुस्तिका का शीर्षक रखा गया : 'चेचक पेद्रीता की स्मृति में'।

कहानी एक ग़रीब स्त्री मारिया सुनाती है जिसके दो बेटे पेट्रीया और पाब्लों हैं। पेट्रीतो, जो कहानी का मुख्य पात्र है, स्वस्थ और हंसमुख लड़का है। वह खेलता है, गाता है, स्कूल जाता है और माता-पिता की आंखों का तारा है। एक दिन वह बीमार पड़ जाता है। उसके रोग की निशानियां क्या हैं ? उसे ज्वर है और उसका मुंह दानों से भर जाता है। उसकी मां नहीं जानती कि उसे क्या हुआ। वह अपनी पड़ौसिन जुआना को बुलाती है जुआना, जो अधिक अनुभवी है, कहती है "यह तो चेचक है।"

अगले पाठकों में जुआना चेचक के परिणाम बताती है—कम से कम चेहरे पर दाग़ पड़ जाना और अधिक से अधिक अन्धापन या मृत्यु। परिणाम भी नाटकीय ढंग से पेश किए जाते हैं यानी जुआना पास पड़ौस के उन लोगों की चर्चा करती है जिन्हें ये दुःख सहने पड़े। मारिया डाक्टर को बुलाती है। वह रोगी की स्थिति बहुत गम्भीर पाता है। डाक्टर जुआना की सीधी सादी बातों में दी गई सूचना की पूर्ति करता है और यह भी बताता है कि चेचक कैसे फैलती है। साथ ही वह स्वस्थ लोगों को टीका लगवाने की सलाह देता है। दुर्भाग्य से पेट्रीतो मर जाता है। उसके माता-पिता दुख से स्तब्ध रह जाते हैं और पास पड़ौस में भी, जहां लड़का लोकप्रिय था, लोगों को ब़हुत सदमा होता है। डाक्टर बताता है कि बीमार आदमी ने जिन चीज़ों को छुआ हो उनसे दूसरे लोगों को बीमारी लग सकती है। पेट्रीतो का पिता, जिसे अपने दूसरे बेटे के बारे में चिन्ता हो रही है, पेट्रीतो का खिलौना जला देता है। पास पड़ौस में दुःख और चिन्ता है। जुआना बताती है कि उसके बेटे लुई और पाब्लो तथा अन्य बच्चों ने टीके करवा लिए थे इसलिए वे बीमार नहीं पड़े। डाक्टर पड़ौसियों से बातचीत करता है और उन्हें टीका लगवाने का महत्व समझाता है। इससे सारे पड़ौसी टीका लगवाने के लिए तैयार हो जाते हैं।

बनावट, वाक्य रचना और शब्दावली—विषय का विकास दृश्य-भाव इकाइयों द्वारा किया गया है। प्रत्येक इकाई में एक चित्र, एक शीर्षक और मूल

लेख हैं; जिन सब में एक ही भाव है। प्रत्येक इकाई एक मूल भाव का विकास करती है और चित्र तथा लेख दोनों में कोई अनावश्यक ब्यौरा नहीं दिया गया है।

नए शब्द उनकी कठिनाई के अनुसार धीरे-धीरे क्रम से लाए गए हैं, और सहज ढंग से उन्हें दुहराया गया है। मिसाल के तौर पर पहले पहल बीमारी का वर्णन सीधे सादे तरीक़े से किया गया है :

एक दिन पेट्रीतो बीमार पड़ जाता है।

उसे बुख़ार है और उसका चेहरा दानों से भर गया है।

अगले पाठ में बीमारी का नाम और निशानियां हैं।

उसने जुआना को बुलाया।

जुआना बोली

यह चेचक है।

यह नया शब्द है और उस मूल भाव से सम्बन्ध रखता है जिस पर बल देना है। उसे शीर्षक में और अगले पाठ, नं० ११, के मूल लेख में दुहराया गया है। पाठ नं० १२ में इस शब्द को तीन बार नं० १३ में दो बार और नं० १४ में एक बार दुहराया गया है। शब्द 'टीका' और उससे बनने वाले अन्य शब्दों को पाठ १४ में दो बार और पाठ १६ में तीन बार दुहराया गया है। अगले पाठों में भी यह शब्द बार-बार आते हैं।

वाक्य छोटे हैं; पहले कुछ पाठों में बहुत छोटे और बहुत कम। ज्यों-ज्यों कहानी आगे बढ़ती है वे अधिक लम्बे और ज़्यादा होते जाते हैं; पर सरल हैं और तुरन्त समझ में आ सकते हैं। पंक्तियों की लम्बाई इतनी है कि प्रत्येक में एक पूर्ण और स्पष्ट भाव है।

वाक्यों और पैरों के बीच ऐसे ढंग से खाली जगह छोड़ी गई है कि पाठक प्रत्येक पठन इकाई का तात्पर्य आसानी से ग्रहण कर सके।

सारी पुस्तिका में विषय की एकता है। प्रत्येक दृश्य पिछले दृश्यों पर आधारित होता है और आने वाले दृश्यों की भूमिका बांधता है। आख्यान के विकास में स्वाभाविकता है।

केवल उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया गया है जो लैटिन अमरीका के लोगों के लिए जाने पहचाने हैं, क्योंकि शब्दावली शब्दावृत्ति तालिकाओं और लैटिन अमरीका में रोज़मर्रा के शब्दों पर आधारित है। पात्र लैटिन अमरीकी ग्रामवासियों जैसे हैं और जिन लोगों के वास्ते पुस्तिका लिखी गई है उनका उनके साथ एकात्म्य स्थापित करना आसान है।

वाक्य रचना के सम्बन्ध में इस रिपोर्ट में उल्लिखित मानकों का पालन किया गया है।

चित्र—चित्र में यथार्थानुकूल, आकर्षक और आसानी से समझ में आने वाले हैं। हर एक में एक निश्चित भाव है : मेरा नाम मारिया है; पेट्रीतो और लुई खेलते हैं; पेट्रीतो बीमार है; तोनो अन्धा है; हमें डाक्टर ने टीका लगाया; पेद्रीतो मर गया; उन्होंने दूसरे बच्चों को टीका लगाया।

मुख पृष्ठ पर मुख्य पात्र पैट्रीतो का चित्र है और आकार ऐसा है कि पुस्तिका को इस्तेमाल करने में आसानी रहे। शीर्षकों के लिए २४ प्वाइंट और मूलपाठ के लिए १८ प्वाइंट का टाइप प्रयुक्त किया गया है। अन्त में चेचक के बारे में साधारण १४ प्वाइंट के टाइप में कुल सलाह दी गई है।

पुस्तिका की समाप्ति पर कुछ कठिन शब्दों की व्याख्या और पाठ का सार निकालने और पुनः विचार करने के लिए कुछ प्रश्न हैं।

सामग्री का परीक्षण

प्रेस ने कोस्टारीका और मैक्सीको के शिक्षा अधिकारियों के सहयोग और ग़ैर-सरकारी संस्थानों तथा शिक्षकों, विशेषज्ञों और नागरिकों की सहायता से एक परीक्षण क्रम का प्रबन्ध किया। इन परीक्षणों का उद्देश्य व्यावहारिक ढंग से भाव ग्रहण योग्यता, क्रमस्थापन, चित्रों के प्रभाव और सामग्री की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित करने की सामान्य क्षमता के स्तर निर्धारित करना था।

परीक्षण के लिए प्रत्येक पुस्तक को चार भागों में तैयार किया गया; एक भाग में केवल चित्र, दूसरे में चित्र और शीर्षक, तीसरे में केवल मूलपाठ और चौथे में चित्र, शीर्षक और मूलपाठ तीनों थे।

परीक्षण अध्यापकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, विस्तार अभिकर्ताओं और ग्रामीण शिक्षकों की सहायता से किए गए। प्रत्येक परीक्षणकर्ता ने नागरिक तथा ग्रामीण पाठकों के वर्गों को सामग्री से परिचित कराया। एक वर्ग ने चित्रों के बिना मूलपाठ पढ़ा, फिर पुस्तक बन्द करके जो कुछ याद रहा काग़ज़ पर लिख दिया; एक और वर्ग ने चित्रों वाला पूरा मूल लेख पढ़ा और फिर पुस्तक बन्द करके उसका सारांश दिया।

साथ ही शब्दों को समझने की क्षमता, विषयों द्वारा पैदा की गई दिलचस्पी और भावी पठन के विषयों के सम्बन्ध में भी परीक्षण किए गए।

पाठक के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध

प्रेस पाठक के साथ सीधे सम्बन्ध स्थापित करने की कोशिश करता है। इस उद्देश्य के लिए प्रत्येक पुस्तिका में एक पन्ना रखा जाता है जिसे पाठक

बिना डाक टिकिट लगाए अखिल अमरीकी संघ को भेज सकता है। इस पर अनेक प्रश्न होते हैं जिनका उद्देश्य यह जानना होता है कि पुस्तिका के पाठक में कितनी दिलचस्पी पैदा की, शब्दावली कहाँ तक समझ में आई और चित्रों को कितना पसन्द किया गया। ऐसे नए विषयों के बारे में भी प्रश्न होते हैं जिनमें पाठक को दिलचस्पी हो सके। प्रस को विभिन्न अमरीकी देशों से अनेक उत्तर प्राप्त हुए हैं।

प्रवर्धन, वितरण और मूल्य

प्रचार

प्रैस ने अपना वितरण कार्य ऐसे संगठनों और व्यक्तियों को, जिन्हें उसके प्रकाशनों का लैटिन अमरीकी देशों में उपयोग करने में दिलचस्पी हो, नमूने की प्रतियां और पुस्तक सूचियां भेजकर आरम्भ किया। इसके अतिरिक्त उसने लैटिन अमरीका के सबसे महत्त्वपूर्ण समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं और शिक्षा तथा समाजिक-उन्नति में दिलचस्पी रखने वाले बहुत से व्यक्तियों को पुस्तक सूचियां तथा सूचना पत्र भेजे।

अखिल अमरीकी संघ की शिक्षा तथा प्रकाशन-वितरण शाखाओं के कर्मचारी और प्रेस के अपने कर्मचारी कई लैटिन अमरीकी देशों में गए, जहां उन्होंने मूल शिक्षा के काम से सम्बन्ध रखने वाले लोगों को सामग्री से परिचित कराने के लिए उनके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित किया।

आर्डरों का परिपालन

शुरू में प्रेस ने यह नीति अपनाई कि जो लोग उसकी सामग्री प्राप्त करना चाहें उनकी प्रार्थना पर उन्हें लागत के दामों पर सामग्री दे दी जाए। इस उद्देश्यके लिए विशेष आर्डर फार्म और मूल्य सूचियां बाँटी गईं। इस प्रकार प्रेस ने २० लाख से अधिक पुस्तिकाएं सरकारों, सरकारी और ग़ैर-सरकारी संगठनों और सामान्य जनता में वितरित कीं।

पैक करना और डाक द्वारा भेजना

इन कार्यों के लिए प्रेस प्रकाशन-वितरण शाखा की सेवाओं का उपयोग करता है। इस शाखा के अधीन अमरीकी संघ कार्यालय में आवश्यक कुशल कर्मचारी हैं और लैटिन अमरीकी देशों की राजधानियों में एजन्सियाँ हैं।

मूल शिक्षा पुस्तकालय

वितरण के पहले प्रयत्नों की सफलता से मूल शिक्षा सामग्री के उपयोग के बारे में एक नई धारणा ने जन्म लिया। प्रेस ने निर्णय किया कि इस सामग्री को

मूल शिक्षा पुस्तकालयों में संचित किया जाए। यह ऐसे पठन केन्द्र हों जहां मूल शिक्षा के कार्य से दिलचस्पी रखने वाले दल और समितियां बैठकर समस्याओं पर विचार कर सकें और प्रत्येक वर्ग के कार्य में योग देने के लिए विशेष रूप से तैयार की गई सामग्री को ध्यान में रखकर उन पर बहस और उनका विश्लेषण कर सकें।

सामग्री में समस्याओं का उल्लेख होता है, समाधान के उपाय सुझाये जाते हैं, सूचना दी जाती है और समाज अथवा व्यक्तियों के लिए निश्चित कार्यों का प्रस्ताव किया जाता है। इस प्रकार पुस्तकालय सच्चे अर्थों में मूल शिक्षा स्कूल बन जाते हैं। लैटिन अमरीका के अनेक प्रदेशों से, जहां लोगों ने मूल शिक्षा पुस्तकालय के माध्यम से मिलकर काम करने और समस्याओं को हल करने के लिए अपना संगठन किया है, बहुत बड़ी संख्या में पत्र प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार इस दिशा में प्रेस का अनुभव बहुत अच्छा रहा।

१०० मूल पुस्तकाएं:—पुस्तकालय में १०० मूल पुस्तिकाओं की दस-दस प्रतियां होती हैं। जैसे कि ऊपर बताया जा चुका है ये पुस्तिकाएं मूल शिक्षा के उद्देश्यों के अनुरूप होती हैं। दूसरे शब्दों में वे वही जानकारी और ज्ञान देती हैं जिनकी शिक्षा प्राथमिक स्कूलों में दी जाती है—अर्थात् भाषा, साधारण गणित, प्राकृतिक तथा सामाजिक विज्ञान, सामूहिक जीवन का परिचय, स्वास्थ्य, कृषि, श्रम, आर्थिक तथा सामाजिक मामले, और फुर्सत के समय की पढ़ाई। इस तरह पुस्तकालय एक प्रकार से सामान्य दैनिक जीवन के लिए उपयोगी सूचना का एक भंडार है।

पुस्तकालयों की स्थापना:—अमरीकी राष्ट्र संगठन लैटिन अमरीका में एक लाख मूल शिक्षा पुस्तकालय खोलने का आयोजन कर रहा है और प्रेस के १९५६-५७ के अपने कार्यक्रम में ऐसे पांच हज़ार पुस्तकालय स्थापित करने की व्यवस्था है।

लैटिन अमरीका में इस योजना को खूब पसन्द किया गया है। मूल शिक्षा पुस्तकालयों का एक राष्ट्रीय कार्यक्रम स्वीकार करने वाले पहले दो देश कोस्टा, रीका और निकारागुआ थे। इन में से प्रत्येक ने एक केन्द्रीय समिति बनाई है। जिसके सदस्य मूल शिक्षा तथा पुस्तकालय संगठन के विशेषज्ञ हैं और अध्यक्ष शिक्षा मंत्री हैं। दोनों देशों में विभिन्न प्रदेशों को प्रश्नावलियां भेजी गई हैं, जिनमें पुस्तकालयों के संचालन के लिए उपलब्ध स्थानीय साधनों, वर्तमान आवश्यकताओं, सम्भावित पाठक संख्या और स्वयंसेवी कार्यकर्त्ताओं के बारे में सूचना मांगी गई है। उपरोक्त दोनों समितियों में से प्रत्येक को प्रेस से ५०० पुस्तका-

लयों के लिए सामग्री मिल चुकी है और वह एक हजार और पुस्तकालय बनाने का आयोजन कर रही है। प्रेस ने बोलबिया, ईक्वेडोर और पेरू को भी पांच-पांच सौ पुस्तकालयों की सामग्री भेजी है।

पुस्तकालयों का संचालन :—मूल शिक्षा सामग्री के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए मूल शिक्षा पुस्तकालय को ऐसे विचार दलों और सारी स्थानीय जनता की बैठकों के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। विचार दलों की स्थापना की विधि ऐसी होनी चाहिए जिससे वयस्क शिक्षा के कार्य में बढ़ावा मिले। इससे स्थानीय नेताओं का योग प्राप्त होगा, लोगों के घरों में आना जाना होगा और उन विषयों के बारे में दिलचस्पी पैदा होगी जिन पर सामग्री लिखी गई है।

प्रेस ने दीवारों पर लगाने की सूचियां तैयार की हैं जिनमें पुस्तिकाओं के मुख पृष्ठ दिखाए गए होते हैं। ये सूचियां सुन्दर रंगों में छपी होती हैं और इन्हें पुस्तकालयों की इमारत के बाहर और पठन कक्ष में दीवारों पर चिपका दिया जाता है। इन्हें हर कोई देखता है और इस प्रकार ये दिलचस्पी पैदा करने और विचार गोष्ठियों में प्रोत्साहन देती हैं।

पुस्तकालय ग्राम स्कूलों, नगर पालिकाओं की इमारतों, नगरों के सभा भवनों, गिर्जाघरों, मज़दूर सभाओं या सहकारी संस्थाओं के कार्यालयों या लोगों के घरों में खोले जा सकते हैं। फर्नीचर साधारण चाहिए—केवल एक मेज, कुछ कुर्सियां और पुस्तिकाएं तथा अन्य पठन सामग्री रखने के लिए शेल्फ। सामग्री का प्रदर्शन लकड़ी या गत्ते के तख़्तों पर किया जा सकता है, जिन पर पुस्तिकाएं टिकाने के लिए हुक लगे हों। दीवारों को प्रेस के चार्टों से सजाया जा सकता है।

प्रेस ने एक दिग्दर्शन पुस्तिका छापी है जिसमें पुस्तकालय के संगठन और सामग्री के उपयोग के बारे में सुझाव दिए गए हैं। पुस्तिका में बताया गया है कि कैसे एक नगर ने प्रेस से सामग्री प्राप्त करके मूल शिक्षा पुस्तकालय की स्थापना और संचालन किया। इस पुस्तिका की मूल सूचना लैटिन अमरीकी समुदायों के वास्तविक अनुभवों पर आधारित है।

प्रेस ने एक कार्य दिग्दर्शन पुस्तिका भी छापी है जिसमें पुस्तकालयों के कार्यों का विकास करने के बारे में सुझाव हैं। इस पुस्तिका में पुस्तकालयों के आरम्भ, उद्देश्य तथा कार्यक्षेत्र के बारे में कुछ आवश्यक सूचना दी गई है और उनकी स्थापना और उपयोग के सम्बन्ध में कुछ सुझाव पेश किए गए हैं। पुस्तिका में मूल शिक्षा का प्रसार करने वालों और दल नेताओं के कार्यों का उल्लेख किया गया है। इसमें यह भी बताया गया है कि पठन दलों के कितने

सदस्य होने चाहिएँ; सामग्री में किन उद्देश्यों से दिलचस्पी पैदा की जाए; व्यक्तिगत और सामूहिक पठन की विधि और सामग्री की व्याख्या करने, उस पर विचार विनिमय, उसका सार निकालने और उसे कार्यरूप देने के लिए क्या तरीक़े अपनाए जाएँ। यह सब सुझाव विभिन्न अमरीकी देशों में कार्य कर रहे मूल शिक्षा केन्द्रों के अनुभव पर आधारित हैं।

इस कार्य दिग्दर्शन पुस्तिका में विभिन्न पुस्तिकाओं पर बहस में सरकारी विशेषज्ञों की सेवाओं के उपयोग पर बहुत महत्व दिया गया है। इसमें सुझाव दिया गया है कि पुस्तकालय प्रबन्धक, साँस्कृतिक मिशन कर्मचारियों, खेती, विस्तार और स्वास्थ्य सेवाओं, विश्वविद्यालय विस्तार संगठन, शिक्षा मंत्रालयों में सांस्कृतिक विकास विभागों, फ़िल्मों और रेडियो से सहायता प्राप्त करें।

और अन्ततः यह सुझाव दिया गया है कि समुदाय के सुयोग्य सदस्यों, जैसे अध्यापकों, डाक्टरों, पशु-चिकित्सकों, अनुभवी कृषकों तथा ऐसे अन्य लोगों को विभिन्न विषयों पर विचार विनिमय में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जाए। इस प्रकार पुस्तकालयों से मूल शिक्षा के कार्य में बहुत बढ़ावा मिल सकता है।

मुद्रित प्रतियों की संख्या और मूल्य

प्रेस प्रत्येक नई पुस्तिका के पहले संस्करण में १०००० प्रतियां छापता है, जो मूल शिक्षा से सम्बन्ध रखने वाले सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी संगठनों को दी जाती हैं। इनके अतिरिक्त प्रेस बहुत से अध्यापकों और सांस्कृतिक उन्नति में दिलचस्पी रखने वाले अन्य लोगों के व्यक्तिगत अनुरोध पर भी पुस्तिकाएँ भेजता है। मांग और उपयोग की सम्भावनाओं के अनुसार नए संस्करण छापे जाते हैं। मिसाल के तौर पर 'अपनी भूमि की रक्षा करो' नामक पुस्तिका के छः संस्करण छपे हैं और मुद्रित प्रतियों की कुल संख्या २३६००० है। कुछ अन्य पुस्तिकाओं की मांग इससे बहुत कम रही है। मूल शिक्षा पुस्तकालय स्थापित करने की नई नीति के अधीन प्रेस हर महीने एक नई पुस्तिका छापने का आयोजन कर रहा है। इसका संस्करण इतना बड़ा हुआ करेगा कि पुस्तकालयों, सरकारों और सरकारी संगठनों और मूल शिक्षा से दिलचस्पी रखने वाले लोगों को आवश्यक संख्या में प्रतियां उपलब्ध हो सकें।

प्रेस अपने प्रकाशनों का मूल्य केवल काग़ज़ की क़ीमत और छपाई की लागत के आधार पर निश्चित करता है। पुस्तिकाओं की तैयारी और प्रकाशन पर जो और खर्च होता है उसे अखिल अमरीकी संघ की एक सेवा समझा जाता है। इसके अतिरिक्त प्रेस १००० या अधिक प्रतियों के आर्डर पर ३० प्रतिशत

छूट देता है। इन नाममात्र क़ीमतों पर पुस्तिकाएँ बेचना लैटिन अमरीका में निरक्षरता उन्मूलन आन्दोलन में अखिल अमरीकी संघ का योगदान है। पुस्तिकाएँ गत्ते के डिब्बों में भेजी जाती हैं; प्रत्येक में २१० प्रतियां जाती हैं और पार्सल का वज़न कोई १८ पाउंड होता है।

उपहार योजना

अखिल अमरीकी संघ ने एक योजना बनाई है, जिसके अधीन साक्षरता आन्दोलन में दिलचस्पी रखने वाले ग़ैर-सरकारी संस्थान और व्यक्ति पुस्तिकाएँ और अन्य मूल सामग्री उपहार के रूप में देकर प्रेस के काम में हाथ बटा सकते हैं।

इस योजना के अनुसार संस्थान, दल या व्यक्ति किसी स्कूल या मूल शिक्षा कार्य करने वाली संस्था को सामग्री प्राप्त करने के लिए मनोनीत कर सकता है। यदि उपहार देने वाला किसी को नामज़द न करे तो अखिल अमरीकी संघ ज़रूरतमन्द संस्थाओं की अपनी सूचियों में से किसी का चुनाव कर लेता है और इसकी सूचना उपहार देने वालों को दे देता है। उन्हें उस इलाके का नक़्शा भेजा जाता है जहाँ उपहार में दी जाने वाली पुस्तिकाओं का उपयोग किया जाएगा, पुस्तिकाओं के नमूने भेजे जाते हैं और एक सनद दी जाती है जिसमें पश्चिमी गोलार्ध के निरक्षरता उन्मूलन आंदोलन में उनके इस योग की प्रशंसा की होती है।

अखिल अमरीकी संघ उपहार प्राप्त करने वालों को भी सूचित करता है और उनसे सामग्री मिलने का उपहार देने वालों को भेजने के लिए कहता है। इस समय चार तरह के उपहार पैकट उपलब्ध हैं—

१२ पुस्तिकाओं की	१०-१० प्रतियाँ—	कुल १२० प्रतियाँ मूल्य,	४ डालर,
१२ ,,	,, २०- २० ,,	,, २४० ,, ,,	८ ,,
१२ ,,	,, १००-१०० ,,	,, १२०० ,, ,,	३६ ,,
१२ ,,	,, २००-२०० ,,	,, २४०० ,, ,,	७२ ,,

प्रकाशित पुस्तिकाओं की संख्या

प्रेस ने १९५३ और १९५४ में ४० पुस्तिकाएँ प्रकाशित कीं, जिनकी प्रतियों की कुल संख्या कोई साढ़े सत्ताईस लाख है।

परिशिष्ट

सारांश तथा टिप्पणियां

डा० रूपर्ट ईस्ट

लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस के कार्य का अध्ययन अपेक्षाकृत आसान है क्योंकि उसका उद्देश्य सीमित है और उसने बहुत अच्छे व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। उसका मुख्य योग लैटिन अमरीका के वयस्क पाठकों के लिए बड़ी अच्छी पहली पाठ-माला प्रकाशित करना है। इस पुस्तिका माला के लिए जो विषय चुने गए हैं और जिस ढंग पर प्रस्तुत किए गए हैं उनके बारे में डा० स्पाल्डिंग ने भी अध्ययन किया है (देखिए आगे)।

प्रस्तुत रिपोर्ट में कहा गया है, "चित्रों और मूलपाठ का अनुपात पुस्तिका के विषय पर निर्भर करता है।" शायद अन्य लोग इसके साथ यह जोड़ना चाहें "और उपलब्ध धन पर"। प्रेस की पुस्तिकाएं अच्छे काग़ज़ पर छपी होती हैं और उनके आवरण पृष्ठ खासे मोटे होते हैं, मूल पाठ के प्रत्येक पृष्ठ के साथ पूरे पृष्ठ का चित्र होता है, हासिया काफ़ी खुला होता है और पंक्तियों के बीच काफ़ी जगह होती है। कुछ पृष्ठों में तो केवल थोड़ी सी पंक्तियाँ छपी होती हैं। दूसरे शब्दों में इन प्रकाशनों पर काफ़ी ज्यादा खर्च आता है। ये पुस्तिकाएं जिन पाठकों के लिए प्रकाशित की गई हैं, उनके हाथ बेची नहीं जा सकतीं, और सीमित बजट वाले संगठन, जैसे कि अफ्रीकी साहित्य कार्यालय, मुश्किल से ही ऐसी पुस्तिकाएं छाप सकते हैं। हां, यदि क़ीमत का ख्याल न हो तो ये पुस्तिकाएं निःसन्देह अपनी तरह की श्रेष्ठतम हैं और इनके उत्पादन का अनुभव इस क्षेत्र में व्यावहारिक कार्य करने वालों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

यहां यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि प्रेस सारे लैटिन अमरीका की जरूरत की सामग्री प्रकाशित करता है और बहुत बड़े संस्करण छापने के कारण

उत्पादन परिव्यय कम कर सकता है। संसार के अन्य भागों में ऐसा होना आमतौर पर सम्भव नहीं है। अगर प्रदेश में बहुत सी भाषाएं या उप-भाषाएं बोली जाती हैं तो प्रत्येक पुस्तिका के मूल पाठ का अलग संस्करण छापना होगा और अगर उसमें विभिन्न प्रकार के भौगोलिक क्षेत्र, लोग, रीति-रिवाज, वेशभूषा आदि हैं तो एक जैसे चित्र भी छापना उपयुक्त न होगा।

शायद यह कहना ठीक ही होगा कि साहित्य जितना ही प्राथमिक हो उतने ही छोटे इलाक़े में उसे प्रयुक्त किया जा सकता है, और साक्षरता का स्तर जितना ही कम हो उतना ही उसके मूलपाठ और चित्रों का सम्भावित पाठकों के अनुरूप होना आवश्यक है। वास्तव में यह सन्देह उठ सकता है कि इस प्रकार के साहित्य का एक रूप सारे लटिन अमरीका में पूर्णतः उपयुक्त कैसे हो सकता है; निश्चय ही इस मामले में व्यावहारिक पहलू पर ज़्यादा महत्व दिया गया है।

यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर स्थानीय साहित्य कार्यकर्ता का, जो अपने इलाके की जनता की विशेष आवश्यकताओं और दुर्बलताओं को देखता है, बड़े पैमाने पर सामग्री छापने वाले प्रकाशक के साथ संघर्ष हो सकता है। ऐसा प्रकाशक बड़े संस्करणों और व्यापक वितरण की बात सोचता है और उसके लिए यह समझना कठिन है कि उसके विचार में जो मामूली ब्यौरे की बातें हैं उन्हें स्थानीय जनता कितना महत्व दे सकती है।

भाग ४
टैक्नीकल अध्ययन लेख

अध्याय ८

मुद्रित सामग्री द्वारा विचार संचरण पर अनुसंधान

एस० स्पार्लिंडग, पी० एच० डी०[1]

मुद्रित सामग्री की उपलब्धि

हम मुद्रित सामग्री और भाव संचरण में इसकी सम्भावित क्षमता के बारे में क्या जानते हैं? संसार भर में वयस्कों की पढ़ने की आदतों की पड़ताल करने से निश्चित रूप से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि लोग सबसे पहले उस सामग्री में से चुनाव करते हैं जो तुरन्त मिल सकती हो। फिर उसमें से वे ऐसी सामग्री चुनते हैं जो पढ़ने में सरल हो और उनकी पसन्द के विषय पर हो। पहले उपलब्धि, दूसरे पढ़े जाने की क्षमता, तीसरे विषय की दिलचस्पी।

बर्मा जैसे देशों में मुद्रित सामग्री जनता तक पहुँचाने के साधन बहुत ही सीमित हैं। अभी तक सार्वजनिक पुस्तकालयों का कोई देशव्यापी सिलसिला नहीं है। वैसे तो सारे देश के ज़िलों और सब-डिवीजनों में सूचना मंत्रालय द्वारा स्थापित कई सौ पठन कक्ष हैं, जिनमें ज़्यादातर विदेशी दूतावासों और संस्थाओं की प्रचार सामग्री, सरकारी प्रचार पुस्तिकाएँ और बर्मा अनुवाद सोसाइटी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें होती हैं, कई नगर पालिकाओं ने भी पुस्तकालय खोल रखे हैं और गैर-सरकारी पठन कक्ष भी हैं, पर हमारे पास इस बारे में कोई आँकड़े नहीं हैं कि वर्तमान पुस्तकालयों और पठन कक्षों में कितने लोग बाकायदा आते हैं और वहां से कितनी पुस्तकें पढ़ने के लिए ली जाती हैं। यह ख्याल करना ठीक ही होगा कि कुल आबादी के बहुत कम भाग को यह सुविधा उपलब्ध है और जहां है वहां भी सम्भवतः बहुत कम लोग इससे लाभ उठा रहे हैं।

---

१. यह डा० स्पांल्डिग, के एक अध्ययन लेख का संक्षिप्त रूप है; मूल लेख बर्मा अनुसन्धान सोसाइटी के लिए तैयार किया गया और दिसम्बर १९५५ में रंगून विश्वविद्यालय में पढ़ा गया।

यह व्यावहारिक अनुसन्धान का एक बड़ा क्षेत्र है, जिसमें केवल आंकड़े इकट्ठे करने का काम है। किस-किस को पुस्तकालयों की सुविधा उपलब्ध है ? कितने लोग इसका उपयोग करते हैं ? जिस आबादी के लिए पुस्तकालय हैं उसके हर व्यक्ति के पीछे इन पर क्या खर्च आता है और पुस्तकालयों के कर्मचारियों और पुस्तकों पर कितना खर्च हो रहा है ? कितनी किताबें हैं ? सदस्य बनने और पुस्तक उधार लेने की विधियाँ क्या हैं ?

अमरीका संयुक्त राज्य जैसे ऊँचे दरजे के साक्षर देश में भी कुल आबादी के १७ प्रतिशत (लगभग २ करोड़ ७० लाख) लोगों को सार्वजनिक पुस्तकालयों की सुविधा प्राप्त नहीं है। ४८ में से १० राज्यों में ४० प्रतिशत से अधिक लोगों के लिए कोई पुस्तकालय व्यवस्था नहीं है। जहां सार्वजनिक पुस्तकालय हैं वहां भी बहुत कम लोग पुस्तकालयों में लगातार जाते हैं; जो अक्सर जाते हैं उनके भी किसी एक मुद्रित वस्तु से प्रभावित होने की सम्भावना बहुत कम है। इसलिए इस बात की बहुत सम्भावना है कि यदि अमरीका संयुक्त राज्य में सूचना या शिक्षा का कोई प्रकाशन केवल सार्वजनिक पुस्तकालयों के माध्यम से वितरित किया जाए तो अपेक्षाकृत बहुत कम लोग उसका प्रभाव ग्रहण करेंगे। शिक्षा सामग्री के वितरण के लिए केवल पुस्तकालयों और पठन कक्षों पर निर्भर करना बहुत जोखम की बात है।

बर्मा में जन शिक्षा कार्यकर्ताओं ने जो खोज की है उसके आधार पर अनुमान लगाया गया है कि जन शिक्षा परिषद् के एक आदर्श गांव में केवल छः से आठ प्रतिशत लोग पुस्तकालय का उपयोग करते हैं। एक लाभकारी अध्ययन यह हो सकता है कि प्रदेश में पुस्तकालयों का उपयोग करने वालों की हड़ताल की जाए और पता लगाया जाए कि पुस्तकालय के निकट होने, शिक्षा, व्यवसाय आदि का पुस्तकालय उपयोग पर क्या असर पड़ता है ? पुस्तकालय का पास में होना बहुत महत्वपूर्ण जान पड़ता है। पुस्तक उधार लेने की विधि का सरल होना एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व है।

कुछ अन्य अध्ययनों के लिए, जिनका सम्बन्ध केवल आंकड़े इकट्ठे करने से हैं, बर्मा के प्रकाशकों के सहयोग की ज़रूरत होगी। ऐसे कोई पूरे आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं कि वर्ष में बर्मा में कितनी पुस्तकें प्रकाशित हुईं, किन विषयों पर छापी गईं, कैसे संस्करण छपे, किस प्रकार वितरण हुआ, कितना नफ़ा रहा, इत्यादि।

१९५४ के वर्ष की समाप्ति के तीन सप्ताह के भीतर हमें मालूम हो गया था कि उस वर्ष अमरीका संयुक्त राज्य में ११९०१ नई पुस्तकें प्रकाशित

हुईं, सरकारी मुद्रणालय से ५००० प्रकाशन जारी हुए और संयुक्त राष्ट्र ने लगभग ३०००० पुस्तकें प्रकाशित कीं। हमें यह भी पता चल गया कि किस विषय पर कितनी पुस्तकें प्रकाशित हुईं, और प्रत्येक प्रकाशन ने कितनी प्रकाशित कीं, और हमें इस बात का आम अन्दाज़ा हो गया कि प्रकाशकों ने कैसे संस्करण छापे और उन्हें कितना नफ़ा रहा। विभिन्न प्रकाशकों द्वारा दिए गए विक्रय आँकड़ों का अध्ययन करने से ही पाठकों की रूचियों के बारे में कुछ अस्थायी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

हम बर्मी भाषा में अधिक सामग्री छापने की आवश्यकता की बात करते हैं पर हमें इतना तक मालूम नहीं कि इस समय क्या कुछ उपलब्ध है। इस प्रकार की सूचना इकट्ठी करने की व्यवस्था बहुत आवश्यक है। एक पुस्तक संस्था या इस तरह का कोई संगठन यह सेवा उपलब्ध कर सकता है। केवल 'बर्मा गज़ट' की सूचियां नक़ल करने से ही बहुत कुछ हो सकता है। (प्रत्येक प्रकाशक को पुस्तक की तीन प्रतियां ज़िला मैजिस्ट्रेट के पास जमा करानी होती हैं और बाद में इन पुस्तकों की सूची 'बर्मा गज़ट' में छपती है)। इन सूचियों का प्रकाशक, विषय आदि आधारों पर वर्गीकरण किया जा सकता है और प्रकाशकों से और अधिक ब्योरा देने को कहा जा सकता है।

उपलब्ध सामग्री के बारे में आंकड़े इकट्ठे करने के अतिरिक्त एक और समस्या वितरण के विस्तार की है। बर्मा में अधिकांश मुद्रित सामग्री के संस्करण बहुत ही छोटे होते हैं और जहां प्रकाशनों का व्यापारिक वितरण होता है वहां अक्सर इसके दो एक ही मुख्य साधन होते हैं। ऐसे प्रयोगों की ज़रूरत है जिनसे मुफ्त बाँटी जाने वाली सामग्री की वितरण व्यवस्था ज़्यादा उपयोगी बनाने और व्यापारिक प्रकाशन सबको उपलब्ध कराने के उपाय ढूंढे जा सकें।

यह ठीक है कि अधिकतर प्रकाशकों के पास न तो इतना धन होता है न अनुभव कि वह विक्रय का देशव्यापी सिलसिला स्थापित करें, जिससे उपयुक्त प्रकाशन सभी सम्भावित खरीदारों को उपलब्ध हो सकें। ऐसा शायद एक सहकारी विक्रय संगठन की स्थापना से हो सकता है, जो सदस्य प्रकाशकों के प्रकाशनों को बेचे। शुरू में इसे कुछ अनुदान भी दिया जा सकता है। इस प्रकार पुस्तक-गाड़ियों, प्रायोगिक 'बेचो या लौटाओ', वितरण, प्रदर्शन-विधियों और प्रचार में सहकारी ढंग से अनेक प्रकाशक साझी हो सकते हैं।

बर्मा में ग्रामवासियों की क्रय शक्ति के बारे में अध्ययन की ज़रूरत है। निश्चय ही वह पश्चिमी देशों के लोगों की क्रय शक्ति के मुक़ाबले में बहुत कम

है, फिर भी पश्चिमी देशों में तीन चार डालर पर बिकने वाली पुस्तकें ग्रामीण पाठकों की आय का जितना हिस्सा लेती हैं बर्मा में एक चेट क़ीमत की पुस्तकें एक औसत ग्रामीण बर्मी की आय में से उससे अधिक नहीं लेंगी। ग्रामीण पाठक के लिए विशेष महत्व रखने वाले विषयों पर अच्छी तरह से लिखी गई ख़ासी अच्छी पुस्तकें, अगर विक्रय व्यवस्था अच्छी हो तो, अवश्य बिकेंगी। इसका एक सबूत यह है कि भारत में दो रुपये तक की क़ीमत के लाखों पंचांग हर वर्ष बिक जाते हैं। शास्त्रीय ग्रंथों की भारत में लगातार खपत होती है और ग्रामीण प्रदेशों में भी यह काफ़ी संख्या में बिकते हैं। सम्भवत: निश्चित क्षेत्रों में नियंत्रित परिस्थितियों के अधीन मुफ़्त या व्यापारिक वितरण योजनाओं का परीक्षण किया जा सकता है, जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दोनों में से कौन सी व्यवस्था उपयोगी है।

पठनीयता

प्रकाशन के उपलब्ध होने के साथ-साथ यह भी ज़रूरी है कि वह जिन पाठकों के लिए हैं वह उसे आसानी से पढ़ सकें। यदि बहुत ध्यान लगाकर पढ़े जाने की ज़रूरत है या उद्दिष्ट पाठक उसकी शब्दावली को नहीं समझ सकते तो भी उसके पढ़ने वालों की संख्या बहुत कम होगी।

पत्रकार, लेखक तथा शिक्षक अक्सर यह कहते हैं कि ऐसा सरल, स्पष्ट और कूजे में दरिया को बन्द करने वाला गद्य लिखाना कठिन नहीं है जो सब की समझ में आ सके पर पढ़े और समझे जाने की क्षमता के अध्ययनों से पता चला है कि समाचार-पत्रों के बहुत से लेख उनके पाठकों की पठन योग्यता से बहुत ऊंचे होते हैं। अन्य अध्ययनों से मालूम हुआ है कि सरकारी गद्य, व्यापारिक सन्देश और विज्ञापन बहुधा ऐसी भाषा में लिखे जाते हैं कि वह पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट करने से पहले ही उन्हें खो बैठते हैं।

अंग्रेजी और स्पेनिश में अध्ययन से पठनीयता के सूत्र निश्चित किए गए हैं, जिन के आधार पर पढ़ने की कठिनाई के स्तरों के अनुसार सामग्री का वर्गीकरण किया गया है। यह अनुमान लगाने के लिए कि जनता तक विचार पहुँचाने के उद्देश्य से तैयार की गई सामग्री पढ़ने में कितनी कठिन है, ये सूत्र बहुत लाभकारी सिद्ध हुए हैं। लोग अपनी योग्यता से अधिक कठिन सामग्री नहीं पढ़ते, बल्कि आम तौर पर ऐसी सामग्री पसन्द करते हैं जो उनकी अधिकतम योग्यता से दो-तीन दर्जे नीचे हो।

यह सही है कि पठनीयता सूत्र उन सब तत्वों के मापक नहीं हैं जिनका मुद्रित सामग्री की विचार संचरण क्षमता पर असर पड़ता है, फिर भी इन से

सामग्री की कठिनाई का ठीक अनुमान लग सकता है। अधिकतर अनुसन्धान-कर्त्ता सूत्र के अलग-अलग तत्वों का विच्छेद करके पड़ताल करते हैं। वे पहले कुछ लेखांश विभिन्न स्तरों पर शिक्षा पाए वयस्कों और बच्चों से पढ़वाते हैं और फिर यह परीक्षा लेते हैं कि उन्होंने जो कुछ पढ़ा उसे कहाँ तक समझा। अलग-अलग शिक्षा स्तर वाले पाठक जिस हद तक मतलब समझते हैं उसी के हिसाब से कठिनाई के स्तर निश्चित किए जाते हैं।

अंग्रेजी गद्य के पढ़ने की कठिनाई के जो तत्व निर्धारित किए हैं वे इस प्रकार हैं : शब्दयोगी वाक्यांशों की संख्या, गौण वाक्य खंडों की संख्या, उपसर्गों और प्रत्ययों की संख्या, शब्दों की लम्बाई और वाक्यों की लम्बाई।

अंग्रेजी में शब्दों की औसत लम्बाई लेखांश में प्रयुक्त शब्दों की कठिनाई की सूचक है। स्पेनिश में इसका पढ़ने की कठिनाई से कोई सम्बन्ध नहीं पाया जाता। स्पेनिश में शब्दों की सापेक्ष औसत अवृत्ति से शब्दावली की कठिनाई का अन्दाजा होता है; अर्थात् यदि किसी लेखांश में प्रयुक्त शब्द, औसत से, भाषा में कम बार इस्तेमाल किए जाने वाले शब्दों में से होंगे तो वो लेखाँश उस लेखांश से ज्यादा कठिन होगा जिसमें, औसत से, आमतौर पर ज्यादा इस्तेमाल किए जाने वाले शब्द प्रयुक्त किए गए हों।

शब्दों का इस्तेमाल

चूँकि अक्सर यह देखा गया है कि प्रयुक्त शब्दों का पढ़ने की कठिनाई पर असर पड़ता है, इसलिए किसी भाषा के शब्दों की सापेक्ष आवृत्ति निर्धारित करना उपयोगी रहता है। औसत से ज्यादा बार इस्तेमाल किए जाने वाले शब्द पढ़ने में सरल होंगे क्योंकि वह साधारण पाठक के जाने पहचाने होंगे। अंग्रेजी और स्पेनिश भाषाओं में शायद कोई ५०००० शब्द हैं लेकिन सब से अधिक बार प्रयुक्त होने वाले जो पहले २००० शब्द चुने गए हैं, अधिकांश मुद्रित सामग्री में प्रचलित कम से कम ९० प्रतिशत शब्द उन्हीं में से होते हैं। भाषा में प्रचलित कम से कम ५० प्रतिशत शब्द सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाले पहले सौ शब्दों में से होते हैं।

लेकिन ग्रामीण पाठकों के लिए पठन सामग्री की रचना करते समय शब्दावृत्ति तालिकाओं का प्रयोग करने में भी एक बात से सावधान रहना चाहिए। शब्दावृत्ति तालिकाएं उन शब्दों की होती हैं जो लेखक अपनी लिखित रचनाओं में इस्तेमाल करते हैं। उनका गांवों में इस्तेमाल की जाने वाली शब्दावली से कोई सम्बन्ध नहीं होता। अगर शब्दावृत्ति तालिका उपलब्ध भी हो तो भी इस तालिका के अनुसार सबसे अधिक उपयोग में आने वाले शब्दों का गांवों में परी-

क्षण कर लेना ठीक रहेगा। इससे यह पता चल सकेगा कि कौन से शब्द समझे जा सकते हैं, और कौन से नहीं और कौन से ऐसे शब्द हैं जो गांवों में तालिका के शब्दों की जगह इस्तेमाल होते हैं। दो वर्ष हुए, मैंने क्यूबा में ऐसे ही एक परीक्षण का निर्देशन किया था। इससे पता चला कि गांवों में इस्तेमाल होने वाले शब्दों और तालिका के अनुसार बहुत अधिक प्रयुक्त होने वाले शब्दों में काफी अन्तर था।

हिन्दी में एक शब्दावृत्ति तालिका जल्दी ही छपने वाली है और अन्य एशियाई भाषाओं में भी इसी प्रकार का अध्ययन हो रहा है। हाल में बर्मी भाषा के शब्दों की गणना के तीन तरीकों से काम लिया गया पर दुर्भाग्य से कोई भी सफल न हुआ। (ब्यौरे के लिए देखिए बर्मा अनुवाद सोसाइटी की रिपोर्ट—अध्याय ६)।

पारिभाषिक शब्द

टैक्नीकल क्षेत्रों में पारिभाषिक शब्दों के निर्धारण के लिए अनुसन्धान की आवश्यकता है। बर्मा इस काम में काफी आगे बढ़ चुका है। बर्मा अनुवाद सोसाइटी की पारिभाषिक शब्दावली समितियों की वाकायदा बैठकें होती हैं और वे विभिन्न विषयों पर प्रामाणिक टैक्नीकल शब्दों का निर्धारण करती रहती हैं।

इन शब्दावलियों से एक और समस्या का समाधान जरूरी हो जाता है; वह है : लोगों को कैसे इन निर्धारित शब्दों के उपयोग की आदत डाली जाए ? यह ठीक है कि सोसाइटी की समितियां शब्दों का निर्धारण करते समय भाषा में प्रयुक्त हो रहे शब्दों का ख्याल रखती हैं, पर यह तै करने में कि कौन से शब्द भाषा में चल रहे हैं समितियों का फ़ैसला उनके अपने दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त बहुत से पारिभाषिक शब्द अपेक्षाकृत नए होते हैं और उनका उपयोग बहुत कम बार हो रहा होता है।

यह ठीक है कि बर्मा अनुवाद सोसाइटी के सभी प्रकाशनों में निर्धारित पारिभाषिक शब्दों को इस्तेमाल किया जाता है पर यह भी खतरे की चीज है, क्योंकि निर्धारित शब्द केवल उसी व्यक्ति के लिए कोई मतलब रखता है जिसके पास बर्मा अनुवाद सोसाइटी की शब्द सूची हो। आम पाठक ने पारिभाषिक शब्द समितियों की कार्रवाई में तो हिस्सा लिया नहीं होता, इससे उसके लिए उस शब्द का कोई निश्चित अर्थ नहीं होता। वास्तव में, बहुत से पारिभाषिक शब्दों को पठन सामग्री में शामिल करते समय नए शब्द समझा जाना चाहिए।

नए शब्दों का प्रयोग

अध्ययन से पता चला है कि किसी पुस्तक या लेख में जो नए शब्द शामिल किए जाते हैं वे तभी सीखे और याद किए जा सकते हैं जब उन्हें विभिन्न संदर्भों से और बार बार इस्तेमाल किया जाय ताकि पढ़ने वाला स्वाभाविक रूप से उन्हें पहचानने लगे। कुछ अनुसन्धान-कर्ताओं का सुझाव है कि पठन सामग्री में कोई नया शब्द कम से कम सात आठ बार दुहराया जाए तभी यह समझा जा सकता है कि पाठक उसे बाद में पहचान लेगा। इसी तरह अगर उस शब्द का पूरा मतलब समझाना है तो उसे बड़ी होशियारी के साथ विभिन्न संदर्भों में प्रस्तुत किया जाए जिससे उसके अर्थ के सभी पहलू स्पष्ट हो जाएं।

और फिर, कोई शब्द चाहे कितनी ही बार दुहराया जाए, उसे पाठक तब तक नहीं सीखेगा जब तक पठन सामग्री स्वयं उसे पढ़ने के लिए आकृष्ट न करे; वह दिलचस्प और सम्भावित पाठक के जीवन में महत्व रखने वाली होनी चाहिए।

तेज़ी के साथ बहुत से विषयों में विशेष पारिभाषिक शब्दावली की रचना करते समय इस बात का ख्याल करना चाहिए कि किसी पठन सामग्री में पांच या छः से अधिक नये शब्द सीखना अधिकतर लोगों के लिए बहुत भारी बोझ है। यह बात अनुसन्धान से सिद्ध हो चुकी है। गांवों में पढ़ना आरम्भ करने वाले पाठकों पर यह बोझ और भी कम रहना चाहिए।

शैली

वाक्य रचना और शब्दावली के अतिरिक्त शैली से भी किसी पुस्तक या लेख की पठनीयता पर असर पड़ता है। अँग्रेजी में एक सांख्यिक सूत्र द्वारा सामग्री का वैयक्तिक सम्बन्ध आंका जाता है। इस सूत्र के अनुसार तुम, हम, हमारा, वे आदि सर्वनाम, व्यक्तिवाचक संज्ञाएं और मनुष्यों और उनके संबंधों से सम्बद्ध शब्दों की गणना की जाती है। यह देखा गया है कि जिस सामग्री में ऐसे शब्दों का बाहुल्य होता है वह, बनिस्बत उस सामग्री के जिसमें ऐसे शब्द कम हों औसतन ज़्यादा लोगों के लिए अधिक दिलचस्प होती है।

इसका एक कारण यह है कि अँग्रेजी भाषा में इस तरह के अवैयक्तिक वाक्य लिखे जा सकते हैं: 'स्वस्थ समाज की सुरक्षा के लिए स्वच्छ पानी की व्यवस्था आवश्यक है।' इसके बदले में 'अगर आप स्वस्थ रहना चाहते हैं तो पानी उबाल कर पियें' इस वाक्य में वैयक्तिक सम्बन्ध की ज़्यादा झलक है।

अन्य अध्ययनों से ये निष्कर्ष निकाले गये हैं:—सामग्री को ऐसे छोटे-छोटे खण्डों में बांटा जाए कि उसका आशय आसानी से ग्रहण किया जा सके और

तर्क का विकास बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए, उचित स्थानों पर पिछली बातों को दुहराया जाये और उनका सारांश दिया जाए, बहुत से विचारों को एक जगह जमा नहीं करना चाहिए; पाठक को साझी बनाना, जैसे उससे प्रश्न करना, उपयोगी रहता है; छोटे पैरे जिन पर काफी संख्या में शीर्षक और उपशीर्षक हों पाठक को विचार ग्रहण करने में सहायता देते हैं।

लैटिन अमरीकी देशों में गांवों में पड़ताल के दौरान में मैंने पाया कि सबसे निचले स्तर पर लिखी गई सामग्री को दो या तीन दर्जे तक शिक्षा पाये हुए वयस्क पूरी तरह समझ कर पढ़ सकते थे। इस सामग्री में हर वाक्य में औसत से आठ से दस तक शब्द होते थे और ९२ प्रतिशत या इससे अधिक शब्द भाषा के १५०० सबसे अधिक बार प्रयुक्त होने वाले शब्दों में से होते थे। लेखक के स्पेनिश पठनीयता सूत्र के २०० प्वाइंट वाले कठिनाई पैमाने में यह सामग्री ४० और ६० प्वाइंट के बीच होती थी।

अन्य परीक्षणों से कुछ ऐसे तत्वों का ज्ञान हुआ जो किसी सूत्र से मापे नहीं जा सकते, उदाहरणार्थ :

१. यह देखा गया कि ग्रामीण पाठक एक बैठक में बिना थकान के अधिक से अधिक केवल ८०० शब्दों की सामग्री पढ़ सकते हैं।

२. सामग्री में जितने अधिक भाव हों अपेक्षाकृत उतने कम ग्रहण किए जाते हैं, और जितने कम हों उतने अधिक। दूसरे शब्दों में, एक पुस्तिका द्वारा केवल थोड़े से मुख्य भावों का संचरण किया जा सकता है और अगर बहुत ज़्यादा सूचना दी जाए तो पाठक बहुत कम निश्चित ज्ञान ग्रहण कर सकेगा।

३. ग्रामीण वयस्क पाठकों में सबसे अधिक प्रभाव-पूर्ण सामग्री बहुत से चित्रों वाली सरल पुस्तिकाओं की एक लड़ी साबित हुई, जिनमें प्रत्येक मुद्रित पृष्ठ पर और प्रत्येक पुस्तिका में बहुत कम भाव प्रस्तुत किए गए थे, सलाहा सामान्य धारणाएं या सिद्धान्त पेश करने की बजाय आख्यान अथवा विवृत्ति की शैली अपनाई गई थी और पुस्तिकाओं का पाठक के व्यक्तिगत जीवन में विशेष महत्व रखने वाले मामलों से सम्बन्ध था।

टाइप

कोई पुस्तक कितनी भी अच्छी और दिलचस्प हो उसकी बुरी छपाई उसका सारा असर ख़राब कर सकती है। पढ़ते समय आंख की गति और पढ़ने की रफ़्तार के अध्ययन से टाईपोग्राफी के बारे में कुछ ऐसी बातों का पता चला

है कि जिनका अंग्रेज़ी में मुद्रित सामग्री की पठनीयता पर प्रभाव पड़ता है। यह निष्कर्ष, जिनका बर्मी भाषा मुद्रित सामग्री द्वारा भाव संचरण से भी कुछ सम्बन्ध हो सकता है, इस प्रकार है :

१. छोटे टाइप के इस्तेमाल से यद्यपि बड़े टाइप की अपेक्षा प्रति पृष्ठ पर अधिक सामग्री छापी जा सकती है तथापि यह वास्तविक बचत नहीं है। छोटा टाइप पाठकों को खोता है क्योंकि वह कठिन दिखाई पड़ता है और उसके पढ़ने से बोझ महसूस होता है। अंग्रज़ी में १० प्वाइंट से छोटा टाइप इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए और बहुत से उद्देश्यों के लिए १२ प्वाइंट तक का टाइप उपयोगी रहेगा।

२. पंक्तियों के बीच की खाली जगह के बारे में अक्सर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया जाता, पर देखा गया है कि पढ़ने की आसानी से इसका उतना ही सम्बन्ध है जितना टाइप के साइज का। अगर ८ प्वाइंट का भी टाइप इस्तेमाल किया जाए, पर पंक्तियों के बीच इतनी काफ़ी ख़ाली जगह हो कि अक्षर स्पष्ट दिखाई पड़ें तो उस छपाई को पढ़ना ज़्यादा आसान होगा, बनिस्बत १० प्वाइंट के टाइप की छपाई से जिसमें पंक्तियों के बीच कोई ख़ाली जगह न हो।

३. पंक्तियाँ बहुत लम्बी या बहुत छोटी होने से भी पढ़ने में कम आसानी रहेगी। अँग्रेजी में औसत पाठक के लिए ८० मिलीमीटर (३$\frac{1}{2}$ इंच) की पंक्तियों का पढ़ना सबसे आसान जान पड़ा है। यह लम्बाई १० प्वाइंट के टाइप के लिए है और टाइप के छोटे बड़े होने पर इसमें परिवर्तन आवश्यक हो सकता है, क्योंकि बड़े टाइप से पंक्ति में कम शब्द आएंगे। कुछ भी हो, बड़ी पंक्तियों से पढ़ने में रुकावट पड़ती है, क्योंकि हर पंक्ति पढ़ चुकने पर अगली पंक्ति पर जाना कठिन होता है। बहुत छोटी पंक्तियां थोड़ी-थोड़ी देर बाद बदलती हैं और इनसे भी पाठक को उलझन होती है।

४. पैरे के शुरू में थोड़ी सी ख़ाली जगह छोड़ देने से पढ़ने में सुविधा रहती है। यह भी सुझाव दिया गया है कि एक पंक्ति को छोड़कर दूसरी के शुरू में कुछ मिलीमीटर जगह छोड़ दी जाए, इतनी नहीं कि पंक्ति की लम्बाई में अन्तर पड़े या दृष्टि के एक सिरे से दूसरे तक समान रूप से जाने में बाधक हो, बस इतनी हो कि आँख पंक्तियों में भेद कर सके। सीमित पठन क्षमता वाले लोगों के लिए सामग्री छापते समय यह सुझाव उपयोगी हो सकता है।

मैंने कई अवसरों पर सुझाव दिया है कि सीमित पठन योग्यता वाले पाठकों के लिए सामग्री तैयार करते समय पहली पंक्ति को छोड़ बाक़ी सारा पैरा दाईं तरफ़ को मुड़ा होना चाहिए। इसे पढ़ते समय पाठक पैरे की दूसरी पंक्ति ज़्यादा आसानी से ढूंढ़ सकेगा।

५. टाइपोग्राफ़ी के विशेषज्ञ इस बात पर ज़ोर देते हैं कि चित्रों में और मुद्रित मूल पाठ के आसपास काफी जगह होनी चाहिये। यदि सामग्री में घिचपिच हो तो वह पढ़ने में कठिन दिखाई देती है, अगर आस-पास बहुत सी खाली जगह हो तो पढ़ने में आसान जान पड़ती है।

६. टाइप की शक्ल एक सी होनी चाहिए। ज़्यादा से ज़्यादा, किसी पृष्ठ या मुख पृष्ठ पर दो शक्लों का टाइप इस्तेमाल किया जाए। बहुत सी शक्लों का टाइप इस्तेमाल करने से पृष्ठ पर छपाई के टुकड़े-टुकड़े से दिखाई देंगे। दो टाइप इस्तेमाल करते समय भी ध्यान रहना चाहिए कि वे एक दूसरे से अच्छी तरह मिल जाएं। बर्मी भाषा की पुस्तकों में आमतौर पर मुख पृष्ठ पर ज़्यादा से ज़्यादा क़िस्मों के टाइप इस्तेमाल किये जाने की प्रवृत्ति पाई जाती है, जो ठीक नहीं। इससे पढ़ने में कठिनाई होती है और पुस्तक किसी तरह से भी आकर्षक दिखाई नहीं देती। छोटे बड़े कई साइज़ों का टाइप मुख पृष्ठ पर इस्तेमाल करने में कोई बुराई नहीं। टेढ़ी-मेढ़ी शक्लों के अक्षर केवल चित्रकार की कारीगरी विज्ञापित करते हैं, पर अस्पष्ट होने के कारण अपने उद्देश्य की पूर्ति में बाधक होते हैं।

७. सबसे आकर्षक और प्रभावपूर्ण अभिन्यास वह होता है जिसमें भाव संचरण के लिए आवश्यक चीज़ें ही हों, जैसे मूल पाठ, शीर्षक तथा उपशीर्षक और चित्र। इनके साथ किसी तरह की सजावट चांद तारे या बेल-बूटे बनाने की जरूरत नहीं। यह बिना ज़रूरत की शक्लें और सजावट असल बात की ओर से ध्यान हटाती हैं। खाली जगह को बेकार चीज़ों से नहीं भरना चाहिए।

रंग का इस्तेमाल

यह सिद्ध करने के लिए कि पाठक किस रंग या रंगों को पसन्द करते हैं बहुत से अध्ययन किये गए हैं, पर इनमें से अधिकतर ऐसे हैं जिनसे प्रकाशक को कोई ख़ास सहायता नहीं मिलती। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि रंगों की पसन्द अपने में अलग से कोई मतलब नहीं रखती, क्योंकि लोग निश्चित कार्यों के लिए रंगों का अलग-अलग चुनाव करते हैं। एक आदमी अगर यह कहता है

कि उसे हरा रंग पसन्द है तो वह ज़रूर ही यही रंग अपने बच्चे के कम्बल, डिनर की प्लेटों, अपनी क़मीज़ और जूतों के लिए नहीं चुनेगा।

अपने प्रकाशनों में रंगों के चुनाव के लिए हमें यही बात ध्यान में रखनी चाहिये। रंग संदेश के संचरण में सहायक होना चाहिए। रंग में आकृष्ट करने की शक्ति है पर यदि बुद्धिमानी के साथ उसका उपयोग न किया जाए तो वह किसी चीज को बहुत अनाकर्षक और भद्दा भी बना सकता है। रंग का इस्तेमाल बहुत कम और निश्चित उद्देश्य के साथ किया जाना चाहिये। रंग द्वारा मूल पाठ और चित्रों के अङ्कों को अलग करके दिखाया जा सकता है और उन पर विशेष बल दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त रंगों से चित्र यथार्थ के अधिक अनुरूप बनाये जा सकते हैं।

जांच से पता चला है कि अगर किसी चित्र को पूरे रंगों द्वारा यथार्थ के अनुकूल न बनाना हो, तो फिर केवल एक अतिरिक्त रंग को शामिल करना ठीक नहीं रहता। हाशिये या सजावट के लिए भले ही यह अतिरिक्त रंग इस्तेमाल कर लिया जाये, पर काले-सफेद चित्रों में जहां तहाँ एक अन्य रंग मिला देने से चित्र की संचरण शक्ति दब जाती है।

अन्य अध्ययनों से पता चला है बहुत से रंगों को इस्तेमाल करने पर जितना खर्च आता है उनका उतना ही प्रभाव-पूर्ण होना आवश्यक नहीं है। अमरीका में पाठ्य पुस्तक के प्रकाशक एक रंग वाली पुस्तकें अधिकाधिक प्रकाशित कर रहे हैं और वे सफल सिद्ध हो रही हैं।

चित्र

अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि यदि किसी लेख या पुस्तक में मूल पाठ के साथ चित्र आदि हों तो वह भाव संचरण में खाली मूल पाठ से अधिक सफल होती हैं। इसका मतलब यह है कि सचित्र सामग्री से आकृष्ट होने के अतिरिक्त पाठक विचार भी अधिक ग्रहण करते हैं।

पर चित्र आकर्षक होते हैं, और जो चीज आकृष्ट करती है वह ध्यान हटा भी सकती है। अगर काफ़ी संख्या में चित्र शामिल करने हों तो मूल पाठ और चित्रों का साथ-साथ आयोजन किया जाना चाहिये ताकि दोनों का ज़्यादा से ज़्यादा लाभ उठाया जा सके। कॉमिक पुस्तक और परम्परागत पाठ्य पुस्तक के बीच का भी एक मार्ग है, और वह है मूल पाठ की उपेक्षा किये बिना भाव संचरण के माध्यम के रूप में चित्रों का पूरी तरह उपयोग करना।

यह देखा गया कि सबसे अधिक प्रभाव ऐसे चित्रों का पड़ता है जो यथार्थ के अनुरूप और स्पष्ट हों और जिनमें केवल मतलब की चीज़ें दिखाई

गई हों। मूल पाठ की तरह चित्रों में भी बिना ज़रूरत कुछ नहीं होना चाहिए। स्पष्ट रेखाचित्र जिनमें अनावश्यक चीज़ें या घिचपिच न हों, ऐसे चित्रों से ज़्यादा प्रभावशाली होते हैं, जो कलात्मक दृष्टि से श्रेष्ठ होते हुये भी एक साथ बहुत से भाव पेश करने की कोशिश करें।

चित्र जीवन के जिन अनुभवों की झलक दिखाते हैं, उनमें शोर, गंध, रंग और क्रिया है। पर यह सब काग़ज़ के एक पृष्ठ पर बहुधा केवल काले और सफेद रंगों में दिखाना होता है। अगर ये चित्र ध्यान के साथ न बनाये जाएँ और इनमें सम्भावित पाठक के अनुभव की पृष्ठभूमि का ख़्याल न किया जाये तो मूलपाठ की तरह उन्हें समझने में भी भ्राँति होने की सम्भावना है।

मिसाल के तौर पर, लैटिन अमरीका में किये गये प्रयोगों में नदियों और समुद्र से दूर रहने वाले ग्रामवासियों ने बजरों के चित्र देखकर उन्हें समझने में ग़लती की। उनका अनुभव सीमित होने के कारण उन्होंने बजरे को सुअरों का बाड़ा समझा। ऐसे ही एक बोतल जिसे शहर के लोग तुरन्त दूध की बोतल के रूप में पहचान लेंगे बहुत से ग्रामीणों के लिए अनजानी चीज़ होगी।

पाठक की दिलचस्पी

मान लीजिये हमने सम्भावित पाठक के लिए बहुत-सी मुद्रित सामग्री उपलब्ध कर दी है जो पढ़ने में सरल है और देखने में आकर्षक। अब लोग उन प्रकाशनों को चुनेंगे जो उनके लिये सबसे ज़्यादा दिलचस्पी लिए होंगे। लोगों की दिलचस्पी के बारे में हम क्या जानते हैं?

सबसे अधिक आवश्यक यह चीजें हैं कि जिनका व्यक्ति के मूल हितों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता हो। मूल रूप से प्रत्येक व्यक्ति का जीवन निर्णयों का एक लगातार क्रम है; कुछ अल्पकालीन और अपेक्षाकृत बिना महत्व की क्रियाओं से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे हरा सूट पहना जाए या नीला, और कुछ दीर्घकालीन कार्यों से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे क्या गांव से शहर में जा बसें। जो चीज़ व्यक्ति को ये निर्णय करने में सहायता दे, उसमें उसकी दिलचस्पी पैदा होगी। अगर कोई व्यक्ति असन्तुष्ट है तो वह अपनी चिन्ता के विषय पर पढ़ना चाहेगा।

अगर किसी ऐसे विषय में दिलचस्पी पैदा करनी हो, जिसके बारे में असन्तोष न हो तो यह असन्तोष उत्पन्न करने की जरूरत होगी। मिसाल के तौर पर एक किसान अपने खेती के तरीके पर सन्तुष्ट है, क्योंकि वह किसी और तरीके की कल्पना नहीं कर सकता। शायद उसने किसी को किसी अन्य तरीके से खेती करते नहीं देखा और वह यह नहीं समझता कि खेती से अधिक

लाभ भी प्राप्त हो सकता है। ऐसे किसान को प्रदर्शन या अन्य उपायों से यह विश्वास दिलाना होगा कि खेती में सुधार की सम्भावना है, तभी उसके मन में खेती के नए तरीके सीखने के बारे में दिलचस्पी पैदा होगी।

इसका यह मतलब हुआ कि मनोरंजन को छोड़, लोग इन्हीं विषयों में दिलचस्पी लेंगे जो उनके जाने पहचाने हों। परिचित वस्तुओं और कार्यों से ही असन्तोष की उत्पत्ति होती है, जिसका आवश्यकताओं और हितों से गहरा संबंध है; और पाठक को जो सन्तोष चाहिए वह भी परिचित वस्तुओं और कार्यों से मिलता है।

एक वयस्क के सारे जीवन में मोटे तौर पर समाज हित रहते हैं: आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और सफाई, परिवार और मनोरंजन। पर यह वर्गीकरण भ्रामक भी सिद्ध हो सकता है, क्योंकि पाठक को ऐसी सूचना की ज़रूरत है जो उसकी दृष्टि में उसके लिये विशेष महत्व रखती हो।

मिसाल के तौर पर यद्यपि एक वयस्क को अपने सारे जीवन में मनोरंजन की चाह रहती है, तथापि जहां तक अलग अलग मनोरंजन कार्यों का संबंध है उसकी दिलचस्पी बदलती रहती है। हो सकता है कि युवा वयस्कों को खेलों में सक्रिय रूप से भाग लेने का शौक़ हो पर उम्र बढ़ने पर यही दिलचस्पी खेल देखने या मेज़ पर खेले जाने वाले खेलों में बदल जाए। इसी प्रकार परिवार में दिलचस्पी बच्चों और माता पिता की आयु के साथ-साथ बदलती है। इसलिए एक विषय वर्ग के भीतर भी आयु, सामाजिक तथा आर्थिक दर्जे और व्यवसाय के अनुसार पाठकों की अपनी खास दिलचस्पी के विषय अलग-अलग होंगे।

यूरोप में पाठकों की विशेष दिलचस्पी जानने के लिये अनेक अध्ययन किए गए हैं। यह ख्याल करते हुए कि पुस्तकालयों से जो पुस्तकें जितनी अधिक बार पढ़ने के लिए ली गई हों उतना ही उनमें अधिक दिलचस्पी ली जाती है, पुस्तकालयों के उपयोग की पड़ताल की गई है। यह अध्ययन पूरी तरह पाठकों की दिलचस्पी का सूचक नहीं है क्योंकि केवल विशेष वर्ग का पाठक ही अक्सर पुस्तकालयों में जाता है और वहाँ की पुस्तकों का उपयोग भी उपलब्ध सामग्री तक सीमित है। पुस्तकालयों के प्रति आंकड़ों से यह नहीं कहा जा सकता कि अगर इन्हीं पाठकों के सब प्रकार की सभी पुस्तकें उपलब्ध होतीं तो क्या वे फिर भी वही पुस्तकें पढ़ते जो उन्होंने पढ़ीं।

अन्य अध्ययनों में पाठकों से पूछ पड़ताल की गई; उनसे व्यक्तिगत रूप से पूछा गया कि वे क्या कुछ पढ़ना पसन्द करते हैं। मैंने खुद कोस्टा रीका और

मैक्सिको के गांवों में सीमित पठन-योग्यता वाले ६०० वयस्कों से पूछताछ की। इस कार्य के लिए पांच वर्गों की एक प्रश्नावली का उपयोग किया गया। इस जांच से यह पता चला कि जिन लोगों से पूछताछ की गई उनमें से अधिकतर सबसे ज्यादा मनोरंजक सामग्री, दूसरे नम्बर पर स्वास्थ्य और तीसरे नम्बर पर घर की देखभाल से सम्बद्ध पुस्तकें पसन्द करते थे। 'फसलें' शीर्षक के वर्ग की पुस्तकें कौस्टा रीका में चौथे नम्बर पर और 'लोक कथाएँ' पाँचवें नम्बर पर यानी सबसे आखिर में रहीं। मैक्सिको में चौथा और पांचवाँ नम्बर इससे उलट रहा। पाठकों से उनकी पसंद की अन्य पुस्तकों के बारे में सुझाव मांगे जाने पर पता चला कि अपनी हालत सुधारने और अपने व्यवसाय से सम्बद्ध सामग्री को वे सबसे अधिक पसंद करते हैं। कौस्टा रीका में मैक्सिको की अपेक्षा मनोरंजक सामग्री में अधिक दिलचस्पी दिखाई गई। कौस्टा रीका में जिन लोगों से पूछताछ की गई उनकी औसत शिक्षा ४.३ वर्ष और मैक्सिको में यह औसत १.८ वर्ष थी। इससे एक अस्थाई निष्कर्ष यह निकाला जा सकता है कि बहुत सीमित शिक्षा पाये हुए लोग अपनी हालत सुधारने और अपने व्यवसाय से सीधा सम्बन्ध रखने वाली सामग्री से ज़्यादा पसन्द करते हैं।

रुचियों की वर्गीकृत पड़ताल अगर सीधे सादे तरीक़े से, जिसमें बहुत कम समय और बहुत कम प्रशासनिक कुशलता की ज़रूरत हो, की जाए तो कुछ उपयोगी हो सकती है। पर ऐसे तरीक़े पाठक की विशेष दिलचस्पी जानने के लिए ज़्यादा विश्वसनीय नहीं होते। जब लोगों से उनकी दिलचस्पी के बारे में पूछा जाता है तो उन में से अधिकतर यह नहीं बता सकते कि जो कुछ पढ़ते हैं वह किस सामान्य उद्देश्य से पढ़ते हैं। जब किसी से विषय वर्ग का चुनाव करने को कहा जाता है तो भी उसके लिए कोई ठीक उत्तर देना कठिन होता है। एक किसान शायद विषय वर्ग पूछे जाने पर 'कृषि' के आगे 'हां' का निशान न लगा सके पर अगर उसे अपने पशु बीमार होते दिखाई दे रहे हों तो वह पशु रोगों से सम्बद्ध पुस्तक बड़े उत्साह के साथ पढ़ेगा। इसके विपरीत एक व्यक्ति 'कहानियों' के आगे शायद 'हां' का निशान लगा दे पर सम्भवत: एक मोटे ऐतिहासिक उपन्यास में वह बिल्कुल दिलचस्पी नहीं लेगा।

पाठकों की दिलचस्पी का सबसे सही अनुमान ऐसी सामाजिक मानवशास्त्रीय पड़तालों से हो सकता है जिनका उद्देश्य यह जानना हो कि ग्रामवासियों पर जीवन के क्या बोझ और खिंचाव पड़ रहे हैं।

पूर्व परीक्षण

यदि सम्भावित पाठक वर्ग की दिलचस्पी के विषय मालूम भी हों तो

भी अलग-अलग प्रकाशनों की संचरण क्षमता का पता लगाने के लिए पूर्व परीक्षण कर लेना ठीक रहता है। इस प्रकार के परीक्षणों से सामग्री के प्रकाशित होने से पहले उसमें सुधार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त मुद्रित सामग्री द्वारा भाव संचरण की प्रक्रिया को ज़्यादा अच्छी तरह समझने के लिए उपयोगी सूचना उपलब्ध हो सकती है।

सामग्री की संचरण क्षमता के परीक्षण की सबसे सरल विधि यह है कि उसकी मिमियोग्राफ़ प्रतियां तैयार कराई जाएं और फिर ऐसे व्यक्ति चुने जाएं जो सम्भावित पाठक वर्ग के प्रतिनिधि हों। इन व्यक्तियों को मिमियोग्राफ़ प्रतियां पढ़ने को दी जाएं। इसके बाद उनसे प्रश्न किए जा सकते हैं कि उन्होंने जो कुछ पढ़ा उसमें क्या उनकी समझ में आया और क्या याद रहा। पाठक अक्सर ग़लत याद रही बातें बताता है जिससे यह जानना सामान्यतः आसान होता है कि कहां पुस्तक के मूल पाठ में आवश्यक अंशों पर पूरी तरह ज़ोर दिया गया है, या वे स्पष्ट हैं अथवा किस स्थान पर सुधार की आवश्यकता है।

पुस्तक के शीर्षक और मुख पृष्ठ के बारे में अन्य तरीक़ों से पूर्व परीक्षण किया जा सकता है। जिन व्यक्तियों के परीक्षण के उद्देश्य से सम्भावित पाठक वर्ग के प्रतिनिधि समझा जाए, उनके सामने मुख पृष्ठ के अनेक नमूने रख दिए जाएं और कहा जाए कि जो नमूना उन्हें सबसे आकर्षक लगे उसे चुन लें। साथ ही मुख पृष्ठ को देखकर बताएं कि उनके विचार में पुस्तक किस विषय पर है और क्या वे उसे पढ़ना चाहेंगे। उत्तरों के आधार पर आवश्यक फेर बदल की जा सकती है। चेतावनी : अगर विभिन्न शीर्षकों का परीक्षण करना हो तो मुख पृष्ठ एक जैसे रखें; इसी प्रकार यदि मुख पृष्ठ के नमूने का परीक्षण करना हो तो सब पर शीर्षक एक ही रहे।

पूर्व परीक्षण की विधियां अनेक हैं और ज़्यादातर इस बात पर निर्भर करती है कि परीक्षण किस चीज़ का करना है। बर्मा अनुवाद सोसाइटी दो पुस्तिकाओं का व्यापक परीक्षण करने का आयोजन कर रही है। वे एक ही विषय पर होंगी, पर एक में कहानी का तरीक़ा अपनाया जाएगा और दूसरी में सलाह का। (ब्योरे के लिए देखिए बर्मा अनुवाद सोसाइटी की रिपोर्ट।)

मुद्रणोंपरान्त परीक्षण

पाठक की दिलचस्पी जानने का एक और तरीक़ा यह है कि मुद्रित पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों के ख़रीदारों से पूछताछ की जाए और इस प्रकार यह जानने की कोशिश की जाए कि सामग्री का कौन सा अंश पढ़ा जाता है और कौन सा नहीं, कौन से विचार याद रहते हैं और कौन से भूल जाते हैं। इस

तरह पाठकों की दिलचस्पी के बारे में कुछ प्राथमिकताएं निश्चित की जा सकती हैं ।

बर्मा अनुवाद सोसाइटी का पत्रिका विभाग एक प्रश्नावली के माध्यम से परीक्षण कर रहा है । यह प्रश्नावली पत्रिका में रखी होती है और पाठक से कहा जाता है वह 'हां' या 'नहीं' लिखकर बताये कि कौन से लेख उसे पसन्द आये और कौन से नहीं । इस कार्ड पर पता भी छपा होता है और टिकट लगाने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती । इस तरह उसे भर कर भेजने का काम बहुत आसान बना दिया गया है । इस विधि से जांच करने के लिए ज़्यादा प्रशासनिक अमले की भी ज़रूरत नहीं ।

पर यह परीक्षण एक दृष्टि से सीमित है, क्योंकि केवल वही लोग उत्तर देते हैं जो देना चाहें । चूँकि केवल थोड़े से पाठक ही कार्ड भर कर भेजने का कष्ट करते हैं इसलिए यह अनुमान किया जा सकता है कि वे पत्रिका में असाधारण दिलचस्पी लेते हैं (या, कुछ थोड़े से ऐसे पाठक भी कार्ड भर कर लौटाएंगे जिन्हें कोई ख़ास शिकायत हो ।)

दूसरे, एक और कारण से भी इस तरह का अध्ययन प्रामाणिक नहीं है : हो सकता है कार्ड भेजने वाले जिन लेखों के बारे में 'हां' या 'नहीं' के निशान लगाएं उन सबको उन्होंने पढ़ा न हो । केवल व्यापक व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर से यह मालूम किया जा सकता है कि पाठक ने कितने लेख सचमुच पढ़े हैं जिन पर उसकी राय विश्वसनीय है ।

इस तरह से डाक द्वारा पसन्द या नापसन्द जानने के बारे में तीसरी कठिनाई यह है कि सूचना का ग़लत मतलब समझा जा सकता है, क्योंकि किसी मुद्रित वस्तु को पसन्द या नापसन्द करने का कई बातों से सम्बन्ध है । मिसाल के तौर पर, लेखक के प्रति पाठक की भावना, मूल पाठ को पूरी तरह समझ कर पढ़ने की अयोग्यता, अन्तर्वस्तु का ठीक तरतीब से न होना तथा विषय से भिन्न अन्य बातें ।

विचार संचरण के किसी कार्यक्रम के दीर्घकालीन प्रभाव को केवल पाठकों के जीवन में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करके आँका जा सकता है । प्रकाशन संस्थायें या फ़र्में इस प्रकार का अध्ययन बहुत कम कर सकती हैं। हां शिक्षा दल, जिनके पास मौक़े पर जाकर काम करने वाले कर्मचारी हों, समय समय पर अपने कार्यक्रम का समूचे तौर पर मूल्यांकन कर सकते हैं, यह जानने के लिए कि शिक्षा कार्यक्रम से लोगों के विचार, दृष्टिकोण और कार्यों में क्या परिवर्तन हुए हैं । सामाजिक सर्वेक्षण एक ही बार करने का काम नहीं

है। किसी शिक्षा या विचार संचरण कार्यक्रम के शुरू के दौर में सामाजिक सर्वेक्षणों की यह निर्धारित करने के लिए ज़रूरत है कि सम्भावित पाठकों की आवश्यकताएं, दिलचस्पियां और सोचने के ढंग क्या हैं। और फिर समय समय पर उनके द्वारा यह आंकना होता है कि सामाजिक, नागरिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षमताएं बढ़ाने में कार्यक्रम किस हद तक सफल हो रहा है।

अध्याय ९

मूल शिक्षा पठन सामग्री की उपयोगिता पर प्रभाव डालने वाले तत्व

एस० स्पाल्डिंग[1]

नवसाक्षरों के लिए साहित्य प्रकाशन करने का बहुत सा काम उन धारणाओं के आधार पर किया जाता है जो इस क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के पिछले अनुभव से बनाई गई हों। प्रकाशकों का रवैया सामान्यतः व्यापारिक अनुभव पर निर्भर करता है : यदि पुस्तकें बिकती हैं तो पाठक की आवश्यकताएं पूरी हो रही हैं । शिक्षक यह ख्याल कर सकते हैं कि अगर पुस्तकें पढ़ी जाती हैं तो समझी भी जाती हैं ।

इन सब धारणाओं को अब चुनौती दी जा रही है और मुद्रित सामग्री द्वारा नवसाक्षरों में विचार संचरण के सारे प्रश्न पर ही बहुत सी सरकारें ध्यान दे रही हैं । डा० स्पाल्डिंग मूल शिक्षा पठन सामग्री के प्रभाव की जांच के क्षेत्र में विशेषज्ञ हैं । उनके अध्ययन का सारांश यहां दिया जा रहा है वह अगस्त-सितम्बर १९५२ में लैटिन अमरीका के ६ इलाक़ों में किया गया, तीन कोस्टा रीका में और तीन मैक्सिको में ।

यह ध्यान रहे कि डा० स्पाल्डिंग का अध्ययन केवल शिक्षा की दृष्टि से सामग्री के प्रभाव के बारे में है और यह लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस की कार्य-प्रणाली के अनुरूप है, जिसे अपने प्रकाशनों के विक्रय आकर्षण का ख्याल नहीं करना पड़ता । अभी ऐसे प्रकाशनों के लिए अध्ययनों की आवश्यकता है जो न केवल शिक्षा की दृष्टि से प्रभाव-

---

१. यह एक अप्रकाशित अध्ययन लेख का सारांश है जो श्री स्पालिंग ने पी. एच. डी. के लिए लिखा ।

पूर्ण हों बल्कि नवसाक्षर पाठकों में ऐसी दिलचस्पी पैदा कर सकें कि वे उत्पादन और वितरण के ख़र्च को पूरा करने वाली क़ीमतों पर उन्हें ख़रीदने को तैयार हों।

सम्पादक

अध्ययन की विधि

कौस्टा रीका और मैक्सिको में पढ़ना शुरू करने वाले लोगों द्वारा प्रदर्शित रूचियों की जांच—पूछ-ताछ पर जिन दिलचस्पियों का परिचय मिले, उनका आयु, स्त्री या पुरुष होने, शिक्षा और व्यवसाय से क्या सम्बन्ध है :

पढ़कर समझने की क्षमता का अध्ययन—पढ़ना शुरू करने वाले पाठक अलग अलग संदर्भ, शैली और बनावट वाली सामग्री को समझने में कहाँ तक सफल होते हैं, ताकि यह मालूम हो सके कि ऐसे पाठकों के लिए तैयार की गई सामग्री का प्रभाव किन बातों के आधार पर आंका जा सकता है।

चित्र परीक्षण

पढ़ना शुरू करने वाले पाठक शीर्षकों समेत या उनके बिना विभिन्न प्रकार के चित्रों को कहां तक समझते हैं, ताकि यह मालूम किया जा सके कि ऐसे पाठकों के लिये तैयार किए गए चित्रों का प्रभाव किन बातों के आधार पर जांचा जा सकता है।

अध्यापकों और विस्तार कार्य करने वालों की उन शिक्षा विधियों की पड़ताल जिन्हें वे कक्षाओं में और सामूहिक पढ़ाई के लिए पठन सामग्री का उपयोग करते समय काम में लाते हैं—इसका उद्देश्य यह जानना है कि अध्यापक द्वारा उपयोग से सामग्री के प्रभाव में क्या अन्तर पड़ सकता है।

पढ़ना शुरू करने वालों के लिए सबसे उपयोगी सामग्री के बारे में अध्यापकों के विचारों का सर्वेक्षण यह जानने के लिए कि अध्यापक पाठकों की योग्यता और दिलचस्पी का कहां तक सही अन्दाज़ा लगा सकते हैं।

परीक्षित सामग्री

पुस्तिकाएं लैटिन अमरीकी मूल शिक्षा प्रेस ने छापी थीं। इनमें दो नागरिक शास्त्र, चार स्वास्थ्य, दो मनोरंजन और तीन आर्थिक-सामाजिक पुस्तिका मालाओं में से थीं। ६१८ पाठकों से पूछ-पड़ताल की गई, ३४२ कौस्टा रीका में और २७६ मैक्सिको में।

इन पाठकों ने कक्षा में एक पुस्तिका पढ़कर जिस प्रश्नावली के उत्तर भेजे, उसका पहला भाग नीचे दिया जाता है। फ़ार्म को भरने का तरीक़ा समझाने में अध्यापकों ने कुछ सहायता दी।

प्रिय पाठक,

यह पुस्तिका आपके लिए लिखी गई है। हमें आशा है कि आपको इससे लाभ होगा। हम चाहते हैं हमारी पुस्तिकाओं का आपके मित्रों को भी लाभ हो। आप अगर हमें बताएं कि आपको यह पुस्तिका कैसी लगी तो हमें बड़ी सहायता मिलेगी। नीचे के हर एक प्रश्न के आगे जो चक्कर हैं, उनमें से जो बातें ठीक लगें उस पर बहुत थोड़ा नहीं का निशान लगा दें।

० ० ०

पुस्तिका जो कुछ बताती है क्या आप वह जानना चाहते हैं?

क्या आपने समझा कि पुस्तिका क्या कहती है?

बहुत ० थोड़ा ० नहीं ०

क्या आपको तस्वीरें अच्छी लगीं?

बहुत ० थोड़ी ० नहीं ०

आप किन बातों के बारे में पढ़ना चाहेंगे?

मैं पढ़ना चाहूँगा :

सेहत का ध्यान रखना
अच्छी फ़सलें उगाना
घर को सुधारना
लोक कहानियां
इतिहास (कहानियां)

....
....
....

परिणामों पर विचार

दोनों देशों में पाठकों की पसन्द का क्रम इस प्रकार रहा :

कौस्टा रीका : १. इतिहास (कहानियां) २. स्वास्थ्य; ३. गृह; ४. फ़सलें; ५. लोक-कथाएं।

मैक्सिको : १. इतिहास (कहानियां); २. स्वास्थ्य; ३. गृह; ४, लोक कथाएं; ५. फसलें।

'फ़सलों' को बहुत नीचा दर्जा मिलने का कारण यह था कि जिन लोगों से पूछ पड़ताल की गई एक तो उनमें स्त्रियाँ अधिक थीं और दूसरे मैक्सिको में ऐसे लोगों में किसानों की संख्या कम थी। स्त्रियों के उत्तरों के विश्लेषण से पता चला कि उनमें से २४ प्रतिशत स्वास्थ्य, २४ प्रतिशत गृह, २० प्रतिशत

इतिहास, १७ प्रतिशत लोक-कथाएं और १४ प्रतिशत फ़सलों पर पुस्तकें पसन्द करती हैं।

व्यक्तिगत या परिवार के स्वास्थ्य और कल्याण की इच्छा स्त्रियों में और व्यावसायिक उन्नति की आकांक्षा पुरुषों में साहित्य पठन के सबसे महत्व-पूर्ण उद्देश्य पाए गए, विशेष कर ऐसे लोगों में जिनकी शिक्षा बहुत सीमित थी। ज़्यादा पढ़े लोगों में मनोरंजक साहित्य को पसन्द करने की अपेक्षाकृत अधिक प्रवृत्ति देखी गई।

सामग्री को समझने की व्यक्तिगत क्षमता

विधि

१. पाठक ऊंची आवाज़ से पुस्तिका पढ़ता है और अध्यापक उन शब्दों को लिख लेता है जिन्हें पहचानने में कठिनाई होती है।

२. तब पाठक से यह बताने को कहा जाता है कि कहानी में जो पात्र, स्थान और घटनाएं आते हैं उनके बारे में उसे क्या याद रहा। जितनी बातें याद रही हों और सही हों उनकी तालिका बना ली जाती है।

३. पुस्तिका में दी गई मूल सूचना के बारे में निश्चित प्रश्न पूछे जाते हैं।

४. शब्दावली के बारे में एक सरल परीक्षा ली जाती है और जिन शब्दों को पहचानने में कठिनाई हो उन्हें सूची में दर्ज कर लिया जाता है।

यह जानने के लिए कि पाठकों को मूल पाठ समझने और याद रखने में चित्र किस हद तक सहायता देते हैं विशेष रूप से तैयार कराई गई पुस्तकों पर से परीक्षा ली गई। इनमें आधी पुस्तकों में चित्र थे और आधी में नहीं।

यह देखते हुए कि ऐसे व्यक्तिगत परीक्षणों में बहुत ज़्यादा समय लगता है, केवल १०२ परीक्षण किए गए। कुछ हालतों में तो एक पुस्तक के सचित्र मूल पाठ के लिए एक व्यक्ति की और बिना चित्र मूल पाठ के लिए भी एक ही व्यक्ति की परीक्षा ली गई। इसलिए इन परीक्षणों से बहुत मोटे निष्कर्ष ही निकाले जा सकते हैं। यह निष्कर्ष नीचे के सारांश में दिए जाते हैं।

सारांश और निष्कर्ष

सामान्य

सामग्री को समझने की व्यक्तिगत क्षमता के परीक्षणों से मुख्य सामान्य निष्कर्ष ये निकाले गए :

१. लैटिन अमरीका में पढ़ाई शुरू कर रहे वयस्क पाठक के लिए पुस्तिकाएं सचित्र होनी चाहिएं । ११ में से ८ पुस्तिकाओं के पाठक बिना चित्र पुस्तिका की अपेक्षा सचित्र पुस्तिका की बातों को ज़्यादा याद रख सके ।

२. चित्र यथार्थानुकूल होने चाहिएं । तीन पुस्तिकाओं के बिना चित्र और सचित्र रूपों के बारे में परिणाम एक जैसे रहे । इनमें से दो ऐसी थीं जिनके चित्र यथार्थ के अनुरूप नहीं थे ।

३. चित्र के पसन्द किए जाने और पाठक को मूल पाठ समझने में सहायता देने की क्षमता में कोई सम्बन्ध नहीं । पाठक का यह कहना कि उसे कोई चित्र अच्छा लगा इस बात का सही सूचक नहीं कि वह चित्र विचार संचरण में कहां तक सफल है ।

४. पठनीयता सूची में ऊंचा दर्जा रखने वाली पुस्तिकाएं विचारों के याद रखने के मामले में बहुत नीचे दर्जे पर रहीं । याद रखने की परीक्षणों के परिणामों से पता चलता है कि ६० प्वाइंट से अधिक पठनीयता वाली पुस्तिकाएं लैटिन अमरीका में पढ़ना शुरू कर रहे पाठकों के लिए बहुत कठिन रहीं ।

५. यदि सामग्री की बनावट और छपाई ऐसी हो कि उसे आसानी से पढ़ा जा सके पर उसमें बहुत से विचार हों तो पढ़ना शुरू कर रहे वयस्य पाठकों के लिए वह कठिन हो सकती है । विचारों की संख्या कम से कम रखी जाए, तभी प्रभाव ज़्यादा से ज़्यादा होगा ।

६. बहुत ज़्यादा ब्यौरा देना भ्रामक हो सकता है, क्योंकि नौसिखिया पाठक अक्सर प्रत्येक विचार का तुलनात्मक महत्व नहीं समझ सकता । प्रवृत्ति यह होती है कि सभी विचारों को एक जैसा महत्वपूर्ण समझा जाए । इसलिए बहुत ज़्यादा ब्यौरा देने से पुस्तिका के मूल अंशों का महत्व दब जाता है ।

७. शिक्षा के उद्देश्य से जो प्रश्न शामिल किए जाएं वे ध्यान के साथ तैयार किए जाने चाहिएं । परीक्षित सामग्री के बहुत से प्रश्न अस्पष्ट थे, जिनके परस्पर विरोधी सही उत्तर मिल सकते थे ।

८. पाठक की पृष्ठिभूमि का सामग्री को समझने की क्षमता पर इस प्रकार असर पड़ा : स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा अधिक क्षमता पाई गई; किसानों और कारीगरों में बिना कारीगरी का काम करने वाले मज़दूरों से अधिक क्षमता देखी गई, आयु के आधार

पर जिन पाठक वर्गों में ऐसे लोग काफ़ी थे जिनकी उत्तरों के परिणामों को प्रामाणिक समझा जा सके, उनमें २५ से ऊपर का आयु-वर्ग २५ से नीचे के आयु-वर्ग से कुछ बढ़ कर रहा; शून्य से दो वर्ष तक स्कूल में शिक्षा पाए हुए पाठकों की अपेक्षा दो से चार वर्ष तक ऐसी शिक्षा पाए हुए पाठकों के औसत अंक अधिक रहे; पाँच या अधिक वर्ष तक शिक्षा पाए हुए पाठकों ने दो से चार वर्ष शिक्षा वाले लोगों से अधिक अंक प्राप्त नहीं किए।

प्रभाव-पूर्ण चित्र

चित्रों के बारे में भी उन्हीं बातों का ध्यान रखना चाहिए जिनका पठन सामग्री के बारे में रखना ज़रूरी है। वे सादा, सजीव, जन-जीवन से सम्बद्ध और पाठक की पृष्ठभूमि के अनुकूल होने चाहिएं, तभी वे आसानी से समझ में आ सकेंगे। जिस भाव को चित्र की सहायता से समझाना है वह ऐसा होना चाहिए कि उसके बारे में चित्र बनाना आवश्यक हो। चित्र इसलिए भी आवश्यक है कि भाव महत्वपूर्ण है और इसलिए भी कि भाव नया है जिसे पाठक के लिए स्पष्ट करना है।

चित्रों के बारे में पहले के अनुसन्धान कार्य और रंगों के बारे में बच्चों और वयस्कों की पसन्द का अध्ययन करना चाहिए। नौसिखिए पाठक अक्सर किसी भी तरह के चित्रों से परिचित नहीं होते और उन्हें चित्रों में दिखाई गई वस्तुओं का वास्तविक वस्तुओं से सम्बन्ध स्थापित करने में कठिनाई होती है। आँख की गति के बारे में अनुसन्धान के लिए चित्र का सबसे महत्वपूर्ण अंश सामान्यतः मध्य में या बाएं कोने पर रखा जाना चाहिए।

जाँच के दो उद्देश्य हैं : अलग-अलग व्यक्ति चित्रों का जो मतलब समझते हैं उसकी तुलना करना, ताकि यह पता चल सके कि चित्र की अन्तर्वस्तु, शैली, रंग और अन्य तत्वों का क्या असर पड़ता है; शीर्षक के साथ और बिना शीर्षक एक जैसे चित्रों के प्रभाव की तुलना करना, ताकि शीर्षक के असर का अन्दाज़ा हो सके। ९८ लोगों से १२ में से एक पुस्तिका के चित्रों के बारे में पूछ-पड़ताल की गई। तीन प्रकार के चित्रों की जांच की गई : (क) वुडकट, (ख) शैलीबद्ध, (ग) यथार्थानुकूल रेखाचित्र।

इस जाँच से ये निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

१. चित्रों से पुस्तिकाओं के समझने में सहायता मिलती है। (कुछ पुस्तिकाओं के परीक्षण में सचित्र पुस्तिका पढ़ने वाले पाठक बिना

चित्र पुस्तिका के पाठकों की अपेक्षा औसत से १३.६ प्रतिशत अधिक सूचना याद रख सके।)

२. वुडकट और शैलीबद्ध चित्रों की अपेक्षा यथार्थनुकूल चित्र ज़्यादा पसन्द किए गए ।

३. चित्र सम्भावित पाठक के पिछले अनुभवों के अनुरूप होने चाहिएं। (जांच के दौरान पाठकों में अपरिचित वस्तुओं को जानी पहचानी चीज़ों जैसा समझने की प्रवृत्ति पाई गई । मिसाल के तौर पर "एब्राहम लिंकन" पुस्तिका में वाशिंगटन की कैपीटल इमारत को राजमहल या गिर्जाघर समझा गया । नदी में चलने वाले एक बजरे के चित्र को, जिस पर सुअर लदे हुए थे, सुअरो का ख़्याल किया गया। पूर्ण रूप से अपरिचित वस्तुओं पर प्रायः ध्यान ही नहीं दिया गया।)

४. चित्र में फालतू चीज़ें होने से दर्शक भ्रम में पड़ जाता है। चित्र द्वारा जिस विचार का संचरण करना हो उस से सम्बन्ध रखने वाली आवश्यक चीज़ें ही दिखाई जानी चाहिए (नौसिखिए पाठक ज़रूरी और ग़ैर-ज़रूरी में भेद नहीं कर सके और चित्रों के सभी अंशों का कुछ-कुछ मतलब लगाते रहें ।)

५. एक रंग चित्रों में अगर यह रंग उनमें दिखाई गई वस्तुओं के सामान्य रंग से भिन्न हो तो इससे भ्रम होता है । (हरे रंग की आग, हरे चूज़ों आदि से दर्शक चक्कर में पड़ गए।)

६. भौतिक परिस्थितियों पर विशेष बल देने से ही इन्हें समझाया जा सकेगा। ग़रीबी, गन्दगी या बीमारी जैसी हालतों को यदि बहुत बढ़ा चढ़ा कर न दिखाया जाए तो प्रायः चित्र का ठीक मतलब समझ में नहीं आएगा। (बहुधा गन्दे घरों को, जहाँ बहुत से लोग एक साथ रहते दिखाए गये थे 'सामान्य परिस्थितियों के अनुकूल' समझा गया।)

७. आयु में अन्तर दिखाने के लिए भी (जैसे बच्चों, बूढ़ों के चित्र) इसी तरह से विशेष बल दिया जाए ।

८. अनजानी चीज़ों को जानी पहचानी निशानियों से पहचाना जा सकता है, जैसे दूध के डिब्बे और गाय दूध और पानी में अन्तर दिखा सकती हैं, रस्सी और बाल्टी से कुएं का पता चलता है, इत्यादि ।

९. शीर्षकों से चित्र का सही मतलब जानने में सहायता मिलती है ।

(कभी-कभी शीर्षकों से भ्रांति भी उत्पन्न होती है; कई बार पाठक को सम्बोधित करने वाले शब्द को चित्र में दिखाये गए पात्रों की बातचीत का अंश समझा गया।)

पुस्तिकाओं का उपयोग और अध्यापकों की टिप्पणियाँ

सर्वेक्षण के अन्तर्गत कौस्टा रीका के २९ और मैक्सिको के ३३ अध्यापकों से पूछताछ की गई। इन अध्यापकों से दो प्रकार की सूचना प्राप्त की गई: (क) वयस्क शिक्षा कक्षाओं और विस्तार दलों में पुस्तिकाओं के अध्यापन की विधि, और (ख) पुस्तिकाओं के बारे में अध्यापकों की प्रतिक्रिया और उनमें सुधार करने के लिए उनके सुझाव।

अध्यापकों से पूछा गया : (क) पुस्तिका कैसे पढ़ी गई (ऊँची आवाज़ में, चुपचाप, अध्यापक द्वारा); (ख) पठन के पहले, दौरान और पश्चात् किस प्रकार की बहस हुई; (ग) पठन से पहले और पठन और बहस के दौरान कक्षा ने कितनी दिलचस्पी दिखाई; (घ) पठन पर प्रभाव डालने वाली भौतिक परिस्थितियां क्या हैं ?

कौस्टा रीका में सामान्यतः कक्षाओं में पुस्तिका चुपचाप पढ़ी गई और बाद में कक्षा द्वारा उठाए गए प्रश्नों पर बहस हुई। मैक्सिको में ऊंची आवाज़ से पढ़ने और फिर अध्यापक द्वारा प्रश्न किए जाने का तरीका ज़्यादा पसन्द किया गया।

यह देखा गया कि बहुत कम अध्यापक पढ़ाई और बहस के बारे में पुस्तिका में दी गई सलाह पर चले, यद्यपि अधिकतर अध्यापक ऐसी सलाह शामिल किए जाने के पक्ष में थे।

प्रश्नावली में अध्यापकों से इन इन बातों पर उत्तर मांगे गए : जिन पाठकों के साथ अध्यापक ने काम किया उनकी पसन्द के विषय; प्रत्येक पुस्तिका के अन्त में दी गई शब्द सूची; पुस्तिका में दिए जाने वाले प्रश्न; पुस्तिका में किस प्रकार के अभ्यास शामिल किए जाएं; पुस्तिका की भूमिका और अध्यापक के लिए दी जाने वाली हिदायतें; चित्रों की शैली और रंग; पुस्तिका की लम्बाई; पाठक पुस्तिका को किस हद तक समझते हैं; टाइप का साईज़; अध्यापन चार्ट; समझने की क्षमता के व्यक्तिगत परीक्षण; उनके इलाक़े में पठन सामग्री के सम्बन्ध में कार्य जारी रखने की आवश्यकता; पाठकों द्वारा दिखाई गई दिलचस्पी; पुस्तिका में आवश्यक परिवर्तन।

पाठकों की दिलचस्पी और समझने की क्षमता के बारे में प्रश्नों के अध्यापकों की ओर से जो उत्तर मिले वे पाठकों से सीधी पूछ पड़ताल करके

प्राप्त किए गए उत्तरों से काफ़ी हद तक मेल खाते थे । इसका एक मतलब यह हुआ कि पाठकों की दिलचस्पी और योग्यता के बारे में अध्यापकों की राय को काफ़ी सही माना जा सकता है।

लगभग सभी अध्यापक शब्द सूचियाँ शामिल किए जाने के पक्ष में थे। यह सुझाव दिया गया कि शब्द सूचियां सचित्र होनी चाहिएं, और शब्दों की व्याख्या उसी पृष्ठ पर हो जानी चाहिए जिस पर उसे प्रयुक्त किया गया हो। अधिकतर अध्यापकों ने पुस्तिका के अन्त में दिए गए प्रश्नों को उपयोगी और आवश्यक पाया।

कुछ अध्यापकों का सुझाव था कि अधूरे वाक्यों या विचारों को पूरा करने के अभ्यास होने चाहिए। कुछ का विचार था कि लेखन अभ्यास शामिल करने से अध्यापकों को पढ़ने के साथ साथ लिखना सिखाने में भी सहायता मिलेगी। कुछ का मत था कि प्रश्नों का समुदाय की समस्याओं से और निश्चित सम्बन्ध होना चाहिए।

यह विचार प्रकट किया गया कि पुस्तिका में अन्त में अध्यापक के उपयोग के लिए दी गई सामग्री से पाठक के चक्कर में पड़ने का डर है। अध्यापक के लिए व्याख्यात्मक सामग्री कम से कम होनी चाहिए; व्यौरवार सूचना या तो अलग प्रकाशन द्वारा दी जाए या पुस्तिका का अध्यापकों के लिए विशेष संस्करण छापा जाए।

चित्रों के बारे में अध्यापकों की टिप्पणियाँ, कुल मिला कर, उपरोक्त अध्ययन के निष्कर्षों की पुष्टि करती थीं।

दो पुस्तिकाएं, 'सां मार्तीन' और 'एब्राहम लिंकन' प्राथमिक स्तर के लिए आम तौर पर बहुत ज़्यादा लम्बी समझी गईं। यह भी अनुभव किया गया कि दो अन्य पुस्तिकाएं परामर्श खंडों के कारण बहुत लम्बी और कठिन हो गई हैं।

विषय प्रस्तुत करने के ढंग के बारे में आम तौर पर काफ़ी उत्साह दिखाया गया, पर परामर्श खंडों और प्रश्नावलियों का टाईप बहुत छोटा बताया गया।

अध्यापकों के विचार में प्रत्येक व्यक्तिगत परीक्षण पर बहुत समय लगा, इसलिए काफ़ी सूचना नहीं दी जा सकी।

पठन सामग्री के मूल्यांकन के बारे में इस जाँच से निम्नलिखित सामान्य निष्कर्ष निकाले गए :

कौस्टा रीका और मैक्सिको में पढ़ाई शुरू कर रहे पाठकों के लिए

अक्सर बहुत कम अन्य पठन सामग्री उपलब्ध है जिसके साथ वे प्रकाशनों की तुलना कर सकें। इसलिए उन्होंने जो कुछ पढ़ा उसमें दिलचस्पी लेने के बारे में उनके विचार जरूर ही विश्वसनीय नहीं हैं। ऐसे ही सामग्री को समझने की क्षमता के बारे में भी उनका अपना अन्दाज़ा ग़लत हो सकता है।

कठिनाई के स्तर निश्चित करने का शायद सबसे अच्छा तरीक़ा यह है कि सीधी सादी बातचीत से, जिसमें लिखने की ज़रूरत न पड़े, पाठक की समझने की क्षमता का अन्दाज़ा लगाया जाए। पर यदि कार्याविधि का मान निर्धारण और निष्कर्षों को तालिकाबद्ध करना है तो इस प्रकार पूछताछ द्वारा जाँच पर अपेक्षाकृत अधिक समय लगेगा और अच्छें प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता होगी।

अध्यापक और विस्तार कार्य करने वाले लोग, जिनका पाठकों के साथ निरन्तर सम्पर्क रहता है, आम तौर पर सामग्री का विश्वसनीय मूल्यकांन कर सकते हैं।

शिक्षकों को शब्द सूचियाँ बनाने के बारे में और आगे अध्ययन करना चाहिए, जिससे शिक्षाप्रद विचारों के संचरण के लिए आवश्यक और निश्चित विषयों से सम्बद्ध शब्द शामिल किए जा सकें। यह पता लगाने के लिए भी खोज़ की ज़रूरत है कि सीमित नियमित शिक्षा पाए हुए लोग किस हद तक अमूर्त बातों को समझने और विचारों को ग्रहण करने की क्षमता रखते हैं।

अध्याय १०

ग्रामवासियों की पुस्तकों के चित्र समझने की क्षमता आंकने का एक प्रयोग[1]

ऐसे सब लोगों को जो नवसाक्षरों के लिए पुस्तकें तैयार करने का काम कर रहे हों, चित्रों की समस्या का सामना करना पड़ता है। ये लोग या तो विदेशों से आए हुए विशेषज्ञ होते हैं या उन लोगों से जिनके बीच काम कर रहे हों कहीं अधिक शिक्षित होते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि पूर्वाग्रहों को छोड़कर विभिन्न प्रकार के चित्रों के प्रभाव का अध्ययन करने की कोशिश की जाए। मैसूर में किए गए इस प्रयोग में खोज दल ने अपने आपको पूर्वाग्रहों से मुक्त करने का पूरा प्रयत्न किया और एक कार्यविधि निकाली। दुर्भाग्य की बात है कि इन लोगों के पास बहुत कम समय था, क्योंकि जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है, उन्होंने अनुभव किया कि कार्यकर्ताओं के लिए पहले ग्रामवासियों की दिलचस्पी और विश्वास का पात्र बनना ज़रूरी होता है; इस तरह की परिस्थितियों में काम करने वाले लोग जानते हैं कि एक दम से जाँच शुरू कर देने से या तो कोई नतीजा नहीं निकलता या निष्कर्ष विश्वसनीय नहीं होते, क्योंकि अचम्भा, भ्रान्ति और सन्देह के स्थान पर जांच में विश्वास और विषय में दिलचस्पी पैदा करने के लिये काफ़ी समय नहीं मिलता। सम्पादक

प्रारम्भिक विचार

मई में बम्बई के एक प्रसिद्ध चित्रकार श्री हेब्बर साक्षरता दल की प्रवेशिका १ और २ के लिए चित्र बनाने के सिलसिले में दल के साथ काम कर रहे थे।

पहली प्रवेशिका में केवल १९९ शब्द आते हैं। चित्रकार को कुछ वाक्यों

१. यह प्रयोग मैसूर में मूल शिक्षा के लिए दल प्रशिक्षण योजना के अधीन किया गया।

पर, जिनमें कोई प्रक्रिया नहीं थी, चित्र बनाने में कठिनाई होना स्वाभाविक था। शिक्षा की विधि यह थी कि नए अक्षर केवल नए शब्द-वाक्य समूह में आते थे। इसलिए यह पता लगाने की आवश्यकता अनुभव की गई कि ग्रामवासी चित्रकार द्वारा बनाए गए चित्रों को किस हद तक समझते थे। इस खोज की आवश्यकता पर चित्रकार स्वयं भी सहमत था। खोज दल के सदस्यों ने फ़रवरी में यह अनुभव किया था कि जो ग्रामवासी वयस्क शिक्षा परिषद् की कक्षाओं में पढ़ने आए उन्हें विचार ग्रहण परीक्षणों को चित्रों के कारण समझाने में कठिनाई हुई। इसके अतिरिक्त चित्रकार काले-सफ़ेद के साथ एक रंग और इस्तेमाल करना चाहता था और वह रंगों के बारे में ग्रामवासियों की रुचि और पसन्द जानना चाहता था। इस बात पर शंका थी कि किसी एक रंग को समान रूप से पसंद किया जाता है। पर अमरीकी राष्ट्र संगठन द्वारा प्रकाशित एक साक्षरता संबंधी रिपोर्ट के अनुसार लैटिन अमरीका में खोज करके यह निष्कर्ष निकाला गया था कि अतिरिक्त रंग मिलाने से चित्र को समझने में बाधा पड़ती है।[1]

प्रयोग की तैयारी

परीक्षण किन पर किया जाए

नए प्रयोग के बारे में पहला प्रश्न यह उठता था कि इसे कहां किया जाए ?

पहले यह ख्याल था कि दल के मुख्य कार्यालय के पास ही कोई गांव इस कार्य के लिए उपयुक्त रहेगा। इसलिए दल प्रारम्भिक प्रयोग के लिए एक गांव गया। उसके पास दो काले सफ़ेद चित्र थे और वैसे ही दो चित्र नारंगी रंग वाले थे। दल छः व्यक्तियों से भेंट करने में सफल रहा, पर उसने देखा कि गांव में और प्रयोग करने के लिए व्यक्तिगत भेंट का प्रबन्ध करना बहुत कठिन होगा।

वह शुरू बरसात का मौसम था और ग्रामवासी सुबह से शाम तक खेतों में काम करते थे। एक ही उपाय था : दल एक ऐसे गांव में जाए जहां वह चार-पांच दिन रह सके, ताकि जब भी कोई ग्रामवासी प्रश्नों के उत्तर देने के लिए समय निकाल सके, दल वहाँ उपस्थित हो।

पाँच मई को दल एक अन्य गाँव में गया। इस गांव का एक ख़ास फ़ायदा यह था कि वहाँ कोई दो महीने तक एक विस्तृत मूल सर्वेक्षण हो चुका था और प्रयोग के लिए प्रतिनिधि ग्रामीण चुनना आसान था।

---

१. देखिए अध्याय—६

चित्रों का चुनाव

श्री हैब्बर ने पहले यह कहा था कि केवल वही चित्र दिखाए जाए जिनमें उन्हें किसी वाक्य का चित्रण करने में कठिनाई हुई हो। पर उनके साथ विचार-विनिमय के दौरान उनसे कहा गया कि एक अकेले चित्र को पहचानना चित्रों की एक क्रमबद्ध लड़ी को समझने से, विशेषकर जब इस लड़ी के चित्रों पर शीर्षक भी हों, सर्वथा भिन्न है। इस पर वे सहमत हो गए कि चित्रों की एक लड़ी का भी परीक्षण किया जाए।

चित्रों की लड़ी के प्रयोग में श्री हैब्बर के १३ चित्र चुने गए। यह जानने के लिए कि रंग से चित्र को समझने में बाधा पड़ती है या सहायता मिलती है, आठ अन्य चित्र भी चुने गए। यह लड़ी के चार काले-सफ़ेद चित्रों जैसे ही थे, अन्तर केवल इतना था कि इन में नारंगी या हरा रंग और शामिल कर दिया गया था। यह पता लगाने के लिए कि ग्रामवासी चित्रकारी की दो अलग अलग शैलियों में से किसे ज़्यादा पसन्द करते हैं एक स्थानीय कलाकार श्री गुरु के भी दो चित्र परीक्षण में शामिल किये गए। श्री गुरु सामान्यतः मैसूर की वयस्क शिक्षा परिषद् के लिए काम करते हैं। उनके चित्र यथार्थानुकूल और फ़ोटो चित्रों की तरह होते हैं। श्री गुरु के जो दो चित्र चुने गए उनमें उन्हीं वाक्यों को चित्रित किया गया था जिन्हें श्री हैब्बर ने किया था। उद्देश्य यह था कि क्या ग्रामवासी फ़ोटो चित्रों जैसे चित्र पसन्द करते हैं या श्री हैब्बर की कलात्मक शैली को अच्छा समझते हैं।

आदेश

प्रयोग के लिए हिदायतें तैयार करते समय यह ख्याल रखना था कि ग्रामवासियों को जो चित्र दिखाये जायेंगे, बाद में उनके साथ शीर्षक भी छापे जायेंगे। इसलिए प्रयोग को दो भागों में विभाजित किया गया : पहले भाग का सम्बन्ध अलग अलग चित्रों का मूल्यांकन करने से था, जिसमें दर्शकों के रंग और शैली की पसन्द का अनुमान भी शामिल था, और दूसरों का सम्बन्ध चित्रों के क्रमबद्ध प्रभाव को आंकने से था।

भाग १ : अलग अलग चित्रों का मूल्यांकन। (क) काले सफ़ेद चित्रों के लिए : पहले प्रत्येक चित्र बिना कुछ कहे दिखाया गया; अगर देखने वाले ने कोई राय ज़ाहिर न की तो उससे पूछा गया, 'इस चित्र से क्या पता चलता है ?', उत्तर लिख लिया गया। (इस विधि से उन लोगों को, जिनसे पूछ पड़ताल की गई, चित्रों से पहचान हो गई और यह प्रयोग के दूसरे भाग के लिए एक प्रकार की भूमिका सिद्ध हुई।) (ख) हरे और नारंगी रंग के

चित्रों के लिए : अगर काले सफ़ेद चित्र दिखाने पर कोई सही उत्तर न मिला तो वही चित्र रंगों में दिखाए गए (पहले नारंगी और फिर हरा); तब रंग वाले चित्रों को काले सफेद चित्रों के साथ रखकर पूछा गया, 'आपको कौन सा चित्र सबसे अच्छा लगा' ? (ग) स्थानीय चित्रकार के चित्रों के लिए : अगर श्री हैब्बर के काले सफ़ेद चित्र के साथ दिखाया गया, और फिर पूछा गया, 'आपको कौन सा चित्र सबसे अच्छा लगा ?'

भाग २ : क्रमबद्ध चित्रों का मूल्यांकन । कहानी सिलसिलेवार शीर्षकों सहित सुनाई गई और जिन लोगों में पूछ पड़ताल की गई उनमें से प्रत्येक के सामने चित्रों की पूरी लड़ी १०,९,५,६,१,२,४,१२,१३,७,८,११, क्रम से रखी गई । इस प्रकार जिन चित्रों को पहचानने में ज़्यादा कठिनाई हुई थी उन्हें दूसरों के साथ मिला दिया गया । फिर पूछा गया, 'कृपया बताइये कि मैंने अभी अभी आपको कहानी सुनाई है उसके कौन से वाक्य की कौन सी तस्वीर है ?' अगर चित्रों को ढूंढ़ने में बहुत ज़्यादा देर लगी या गलत चित्र चुने गये तो कहानी दोबारा सुनाई गई । जितनी बार जरूरी हुआ, कहानी सुनाई गई ।

समस्या यह थी कि बुद्धि तत्व बहुत ज़्यादा प्रबल न रहे; इसलिए ग्रामवासियों से चित्रों की कहानी के अनुसार क्रम से रखने के लिए नहीं कहा गया (जैसा कि आमतौर पर इस प्रकार के परीक्षणों में किया जाता है), बल्कि केवल यही कहा गया कि उन्हें जो वाक्य याद हों उनका चित्रण करने वाला चित्र उठा लें । इसी कारण से परीक्षण दल ने बार बार कहानी सुनाने का निर्णय किया ।

विश्लेषण

इस सीमित प्रयोग का कोई व्यापक विश्लेषण करना उचित नहीं होगा, इसलिए प्रयोग के दोनों भागों के केवल अधिक स्पष्ट परिणामों का ही उल्लेख किया जाता है ।

भाग १ में, (क) तीन काले सफ़ेद चित्रों का ग्रामवासियों ने ठीक मतलब नहीं बताया । इन तीनों में सूखा पोखर और बंजर भूमि दिखाई गई थी । (ख) इस एक गाँव में जिन लोगों से पूछ पड़ताल की गई उनके उत्तरों से यह पता नहीं चल सका कि रंग चित्र को समझने में सहायक है या बाधक, क्योंकि रंग वाले चित्रों को काले सफ़ेद रूप में पहले ही समझ लिया गया था । यह परिणाम पहले गाँव के प्रारम्भिक प्रयोग के नतीजे से भिन्न था । वहाँ जिन छः व्यक्तियों से पूछ पड़ताल की गई थी, उनमें से चार ने काले सफ़ेद चित्रों

की अपेक्षा रंग वाले चित्रों का मतलब ज़्यादा सही समझा था। रंगों की पसन्द के बारे में प्रश्न का सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिल सका क्योंकि पूछ पड़ताल बहुत कम लोगों से की गई। कुछ ने नारंगी रंग वाले चित्र पसन्द किए और कुछ ने हरे रंग वाले। कारण : 'यह ज़्यादा अच्छा लगता है', जो बहुत संतोषजनक नहीं है। यह भी निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता कि बहुत से लोगों से पूछ पड़ताल करने से समस्या हल हो सकती थी। (ग) शैली के मामले में अधिकतर लोगों के श्री गुरू के चित्रों की अपेक्षा श्री हैब्बर के चित्रों को ज़्यादा पसन्द किया। परीक्षण दल का ख़्याल था कि गाँवों के लोग यथार्थानुकूल चित्रों को ज्यादा पसन्द करेंगे क्योंकि गावों में हर घर में फोटो चित्र या देवी देवताओं के ऐसे ही चित्र होते हैं। इसलिए यह परिणाम से आश्चर्य हुआ।

परीक्षण के भाग २ में चित्रों के साथ कहानी सुनाए जाने के कारण उनका मतलब ज़्यादा अच्छी तरह समझा गया, तो भी भाग १ (क) में उल्लिखित तीनों चित्रों के बारे में फिर कोई ठीक उत्तर नहीं मिले।

पूछ पड़ताल बहुत थोड़े लोगों से किये जाने के कारण मूल्यांकन बहुत सीमित रहा। फिर भी दल चित्रकार के दो सिफ़ारिशें कर सका :

१. पोखर और बंजर भूमि दिखाने वाले तीनों चित्रों में परिवर्तन किया जाए, और उन्हें ज़्यादा यथार्थानुकूल बनाया जाए।
२. पहले दो शीर्षकों के चित्र बदले जाएँ। पहले में एक 'गरीब गाँव' और दूसरे में 'बहुत गरीब गाँव' दिखाया गया था। पहले में केवल घर दिखाए गए थे और दूसरे में फटे पुराने कपड़े पहने काम करते हुए लोग भी थे। प्रयोग के भाग २ में ग्रामवासियों ने पहले चित्र के शीर्षक के साथ दूसरे को सम्बन्ध किया और कारण यह बताया कि अगर किसी गाँव में ज़्यादा लोग रहते हैं और सब काम करते हैं तो गाँव ज़्यादा समृद्ध होगा।

निष्कर्ष और सुझाव

जाहिर है कि परीक्षण दल ने सब लोगों से समान परिस्थितियों में पूछ पड़ताल करने का यत्न किया, पर जैसा कि पहले बताया जा चुका है वर्षा के मौसम में किसी ऐसे ग्रामीण का मिलना कठिन था जो वास्तव में सहयोग करना चाहता हो। इसलिए दल को घर घर जाकर ऐसे लोगों की खोज करनी पड़ी जो प्रश्नों के उत्तर देने को तैयार हों। ऊँची जाति के लोगों के मामले में तो इस काम में सफलता मिली, पर नीची जाति में ऐसा सम्भव न हो

सका। इसका कारण यह था कि ग्रामवासियों के साथ बातचीत करने वाले दल का जो कन्नड़ भाषी विद्यार्थी था वह ब्राह्मण था। अगर वह अछूतों के घर में जाता तो उसे ऊँची जाति में फिर स्वीकार किए जाने में कठिनाई होती। इसलिए दल को लोगों से स्कूल की इमारत में आने को कहना पड़ा।

स्त्रियों के साथ बातचीत से विभिन्न प्रकार के अनुभव हुए। पहले दल एक ऐसे घर में गया जहां एक १८ वर्षीय अविवाहित लड़की रहती थी। उसका भाई उसका संरक्षक था। उसने उसे किसी पुरुष विद्यार्थी के पास तक खड़े होने की मनाही कर दी, और परीक्षण दल चुपचाप उस घर से चला आया। एक अन्य घर में गृहवासी ने अपनी पत्नी को बातचीत से मना कर दिया और साक्षरता दल की महिला अध्यापिका की सहायता लेनी पड़ी। जब यह अध्यापिका आई तो स्थिति एक दम बदल गई और सारे गाँव की स्त्रियों को सहयोग करने की अनुमति मिल गई। पहले पहल स्त्रियाँ लजाती रहीं और यह कहती रहीं, 'मैं तो केवल औरत हूँ, मैं अपढ़ हूँ, मैं आपके प्रश्नों का उत्तर कैसे दूँगी ?' पर जब दल ने उन्हें यक़ीन दिला दिया कि वे भी मर्दों की तरह उत्तर देने के योग्य हैं तो उनकी झिझक दूर हो गई और वे सहयोग के लिए तैयार हो गईं।

दल के सदस्यों को ग्रामवासियों ने बताया कि यदि वे एक सप्ताह पहले से गाँव में ठहरे होते या सप्ताह में रोज़ाना आते रहते तो वे ज़्यादा लोगों से भेंट कर सकते थे और गड़बड़ भी कम होती। गांव वालों के लिए दल से परिचित होना और दल के लिए उनका निजी दैनिक कार्यक्रम जानना ज़रूरी था।

कार्यविधि के बारे में

ऐसा जान पड़ता है कि प्रयोग को दो भागों में बांटना लाभकारी रहा। लोगों को अलग से चित्रों से परिचित होने के कारण बहुत सहायता मिली और बाद में जब उनसे वाक्यों के अनुसार चित्र ढूंढने को कहा गया तो उन्होंने ज़्यादा दिलचस्पी ली।

रंग की पसन्द का पता लगाने और यह देखने के लिये कि रंग से चित्र को समझने में आसानी होती है या कठिनाई, अलग अलग प्रयोग करना शायद ज़्यादा ठीक रहेगा। अच्छा यह रहेगा कि जिस इलाक़े के लिए पुस्तक प्रकाशित करनी हो वहां चार-पांच गांवों में १५-२० वर्गीकृत ग्रामीणों से पूछ पड़ताल की जाए। ऐसे ग्रामीणों की संख्या में चित्रों के विषय और ग्रामीणों के अनुभव के अनुसार फेर बदल भी की जा सकती है। इस प्रकार के अध्ययन के लिये निम्नांकित सुझाव दिये जाते हैं :

१. पुस्तकों के चित्रों को समझने के परीक्षण के लिए १२ चित्रों की एक लड़ी चुनी जाये। यह संख्या पर्याप्त है और इससे उत्तर देने वाले को बहुत कठिन प्रयास नहीं करना पड़ता। भाग १ (क) और भाग २ के अधीन दी गई हिदायतों पर अमल किया जा सकता है। पूछ पड़ताल के लिए लोगों का चुनाव करने में पहले से उनके बौद्धिक स्तर का अनुमान लगा लेना ठीक रहेगा।

२. रंग की पसन्द का अन्दाज़ा करने के लिए भी १२ चित्रों की लड़ी चाहिये, क्योंकि रंगीन चित्र के विषय का रंग की पसन्द पर असर पड़ सकता है। तब कहानी सुनाकर साथ ही चित्र भी दिखाये जा सकते हैं और यह बताने को कहा जा सकता है कि चित्रों की लड़ी में हरा, नारंगी आदि कौन-सा रंग पसन्द आया और क्यों ?

३. यह जानने के लिये कि रंग चित्र को समझाने में सहायक है या बाधक, काले सफ़ेद चित्रों की दो-तीन लड़ियाँ और वैसे ही रंग वाले चित्रों की लड़ियां ली जाएँ, जिन में अलग अलग विषयों को चित्रित किया गया हो। इन चित्रों का पहले इस बात के लिए परीक्षण हो चुकना चाहिए कि उनमें कोई चित्र ऐसा तो नहीं जिसका मतलब बताने में ग्रामीणों को कठिनाई हुई हो। ये चित्र कहानी के बाद बिना क्रम के दिखाये जाएं, पर दिखाने का क्रम समान हो। अगर कोई व्यक्ति किसी काले सफ़ेद चित्र का ठीक मतलब न बता सके तो उसे रंगीन चित्र दिखाया जाये। इससे पता चल सकेगा कि रंग से चित्र को समझने में सहायता मिलती है या नहीं। इसी प्रयोग को उल्टा करके, यानी रंगीन चित्र पहले दिखा कर, यह पता चल सकता है कि रंग से समझने में बाधा पड़ती है या नहीं।

४. विभिन्न शैलियों को समझने के बारे में भी उपरोक्त ढंग से प्रयोग किया जा सकता है। तीन चार अलग अलग शैलियों के १२ चित्रों की लड़ी के प्रयोग लिये उपयुक्त रहेगी।

अध्याय ११

शब्दावृत्ति गणना के बारे में कुछ विचार

रूपर्ट ईस्ट[1]

शब्दावृत्ति गणना के महत्व को अब सब जगह स्वीकार किया जाता है। बल्कि यह भी कहा जाता है कि इसके बिना नव-साक्षरों के लिए सन्तोषजनक सामग्री तैयार ही नहीं हो सकती। कुछ परिस्थितियों में और कुछ उद्देश्यों के लिए इस गणना के महत्व से इनकार नहीं किया जा सकता। पर किसी व्यवस्था के एकाधिकार को पूर्ण रूप से स्वीकार करने से पहले यह विचार कर लेना ठीक रहता है कि उसका उपयोग किन सीमाओं तक किया जा सकता है।

सबसे पहले यह जांच कर लेना ज़रूरी है कि सामग्री किन परिस्थितियों में तैयार की जानी है और उसका उद्देश्य क्या है। अगर आपका वास्ता एक ऐसी भाषा से है जिसका साहित्य अपना निश्चित स्थान बना चुका है और उद्देश्य केवल यह है कि आपका विद्यार्थी उसे पढ़े, चाहे उस साहित्य का सामान्य जन-भाषा से कोई सम्बन्ध हो या नहीं, तो यह स्पष्ट है कि इस व्यवस्था के पक्ष में सब कुछ कहा जा सकता है। अनेक भाषाओं में, लाखों प्रचलित शब्दों के आधार पर ब्यौरेवार सूचियां बनाई जा चुकी हैं, जैसे सबसे ज़्यादा प्रयोग में आने वाले पहले १०० शब्दों की, इसके बाद के १,००० अन्य शब्दों की इत्यादि सूचियां उपलब्ध हैं। इससे लेखक पाठकों को ठीक ठीक स्तरबद्ध कर सकता है और योजनानुसार थोड़ा थोड़ा करके विद्यार्थी को सारे साहित्य के क्षेत्र से परिचित करा सकता है।

दूसरी ओर यदि उद्देश्य वयस्कों को उनकी बोलचाल की भाषा में पढ़ना सिखाना है, विशेष कर ऐसी हालत में जब भाषा केवल बोलचाल में काम आती

१. डा० रूपर्ट ईस्ट नवसाक्षरों के लिए पठन सामग्री के बारे में यूनेस्को के सलाहकार हैं।

हो या उसका लिखित रूप बोलचाल के रूप से भिन्न हो, तो पहले से मौजूद साहित्य के आधार पर बनाई गई किसी शब्द सूची का कोई लाभ नहीं। चूंकि साहित्य बोलचाल की भाषा की शब्दावृत्ति गणना के आधार पर नहीं रचा गया इसलिए जरूरी नहीं कि उसमें निरक्षर वयस्क के सबसे अधिक जाने पहचाने शब्द हों। ऐसी दशा में मुख्य उद्देश्य उसे पहले से मौजूद साहित्य पढ़ने के योग्य बनाना नहीं बल्कि ऐसा साहित्य भी तैयार करना है जो वह पढ़े, और यह साहित्य ऐसी भाषा में तैयार करना है जो बोलता और जानता हो। अगर यह लक्ष्य है तो नवसाक्षर वयस्कों की पठन सामग्री के लिए केवल बोलचाल में आने वाले शब्दों की आवृत्ति की गणना के आधार पर शब्द सूची बनानी चाहिए।

लेकिन बोलचाल की भाषा की वास्तविक शब्द गणना बहुत कठिन काम है। इसे वैज्ञानिक ढंग से करने के लिए यह जरूरी है कि विभिन्न प्रकार के लोगों की अनेक विषयों पर और कई तरह की परिस्थितियों में स्वाभाविक बातचीत के बहुत से रिकार्ड तैयार किए जाएं। ऐसा न करने का मतलब मुख्य रूप से कल्पना के सहारे काम करना होगा। डा० लाबैक ने इन दोनों के बीच का एक रास्ता सुझाया है। उनका तरीक़ा यह है कि मिशनरियों तथा अन्य विदेशियों द्वारा तैयार की गई शब्दों की सूचियां इकट्ठी की जाएं और फिर उन्हें १० निरक्षकों के एक मंडल के सामने रखा जाए। इनमें अलग अलग आयु के स्त्री व पुरुष होने चाहिएं। फिर यह जानने के लिए कि प्रत्येक शब्द को वे कहां तक समझते हैं उनके वोट ले लिए जाएं और इन वोटों के आधार पर सूची बनाई जाए।

सन् १९५३ में गोल्ड कोस्ट की 'त्वी' भाषा की शब्दावृत्ति गणना करने के लिए इस विधि का प्रयोग किया गया था। पहले एक सूची उपलब्ध लिखित सामग्री के शब्द चुन कर बनाई गई। फिर उसे दो भाषा विशेषज्ञों को सौंप दिया गया, जिन्होंने प्रदेश में निरक्षर लोगों की बोलचाल के शब्दों के बारे में अपने अनुभव के आधार पर उसमें संशोधन किया और उसका विस्तार किया। तब उसे उपरोक्त ढंग से निरक्षरों के मंडल के सामने रखा गया।

पर चाहे कितने ध्यान के साथ काम किया जाए और अन्य दृष्टियों से परिणाम कितने भी उपयोगी हों, यह सब वास्तविक मौखिक शब्द गणना की परिभाषा पर पूरा नहीं उतरता। शब्दावृत्ति गणना का उद्देश्य ऐसी सूची तैयार करना बताया जाता है जिससे शब्दावली पर नियन्त्रण किया जाए, जो इसके बिना लेखक या सम्पादक की पसन्द और इच्छा पर निर्भर करती है। यदि प्रारम्भिक शब्द सूची लिखित सामग्री में तैयार की गई हो तो उस सामग्री

में स्वयं लेखक के मन चाहे शब्दों का प्रयोग हुआ है।

दूसरे, यह कहा जा सकता है कि जो भाषा साहित्य की बजाय केवल बोलचाल की हो उसमें सबसे अधिक प्रयोग में आने वाले शब्दों में ज़्यादा घर और घर के आस पास बोले जाते हैं। यदि, जैसा कि अक्सर होता है, शब्द सूची किसी विदेशी विशेषज्ञ द्वारा बनाई या संशोधित की जाए, या उसी भाषा के बोलने वाले किसी बहुत पढ़े लिखे व्यक्ति द्वारा यह काम किया जाए, तो यह घरेलू बोलचाल के शब्द शायद सूची में आएंगे ही नहीं। विदेशी विशेषज्ञ के मामले में ऐसा इसलिए होगा कि चाहे उसे भाषा का कितना भी व्यापक ज्ञान क्यों न हो, ऐसे शब्द सामान्यतः वह सबसे आख़िर में सीखता है; जब वह पारिवारिक जीवन में पूरी तरह घुल मिल जाता है तभी इनका महत्व उसकी समझ में आता है। उसी भाषा के बोलने वाले पढ़े लिखे व्यक्ति के मामले में यह स्थिति इसलिये उत्पन्न होगी कि वह बहुत समय से साधारण अपढ़ लोगों की बोल-चाल के घेरे से निकल चुका होगा।

अन्ततः, मण्डल के वोटों से शब्द चयन करने के तरीके पर फिर यह आपत्ति उठाई जा सकती है कि सूची भी व्यक्तिगत निर्णय के आधार पर बनाई गई है। यहां यह सूची लेखक और सम्पादक की बजाय भाषा विशेषज्ञों और निरक्षर मंडल के निर्णय और पसन्द से तैयार हुई। इस विधि का उप-योग करने में एक और व्यावहारिक कठिनाई यह है कि इस प्रकार के जन समाज में से चुने गए निरक्षर लोगों की स्वतन्त्र राय जानने के लिए प्रत्येक के साथ अलग अलग भेंट करनी होगी, अन्यथा वे एक दूसरे के विचारों से प्रभावित होंगे; खासकर स्त्रियों और छोटी आयु के लोगों के लिए मर्दों और बड़े-बूढ़ों से भिन्न मत देना अस्वाभाविक होगा।

सामान्य उपयोग के लिए मूल शब्दावली निर्धारित करने में एक समस्या यह भी सामने आती है कि समुदाय के विभिन्न वर्गों में स्त्री और पुरुष तथा अलग अलग आयु के लोग एक दूसरे से भिन्न शब्द बोलते हैं। अविकसित समुदायों में ऐसा विशेष रूप से देखने में आता है। एक मिसाल लीजिए अफ्रीका के एक आदिम कृषक क़बीले की भाषा में वहां के मुख्य खाद्य पदार्थ रतालू की अलग अलग शक्लों और क़िस्मों के अस्सी नाम हैं। इनमें कई नाम आम प्रयोग में आते हैं, पर केवल स्त्रियों की बोलचाल में; पुरुषों का इस विषय से इतना अधिक सम्बन्ध नहीं और वे केवल थोड़े से नाम जानते हैं। दूसरी ओर, पुरुषों की दिलचस्पी की चीज़ों और कार्यों, जैसे शिकार, औज़ारों, दस्त-कारियों, खेलों, परम्पराओं, इत्यादि के बारे में पुरुषों की शब्दावली स्त्रियों की

अपेक्षा बहुत अधिक विस्तृत है। बूढ़ों और युवकों के बारे में भी यही बात कही जा सकती है। यह कहा जा सकता है कि मूल शब्दावली निश्चित करने के लिए समान शब्द ढूंढ़ने में कठिनाई नहीं होनी चाहिये। निःसन्देह पहले कोई पांच सौ शब्दों के बारे में यह बात सही है, पर इससे आगे कठिनाइयाँ पैदा होना अनिवार्य है।

इस बात का पूरा ध्यान रहना चाहिये कि जिस इलाक़े में शब्द सूची का प्रयोग किया जाए वह उसके लिये उपयुक्त हो। आम तौर पर ऐसे अविकसित प्रदेशों में निरक्षरता सबसे अधिक होती है जहां संचार तथा यातायात व्यवस्था बहुत ख़राब और अपर्याप्त हो, पास पड़ौस के इलाक़ों के लोगों का आपस में सम्पर्क न हो और कुएँ के मेंढ़क की प्रवृत्ति पाई जाती हो। ऐसा होने से प्रदेश बहुत सी उप-भाषाओं ने बँट जाता है या यदि काफ़ी बड़े इलाक़े में मूल भाषा समान भी हो तो भी एक ही चीज़ के बहुत से स्थानीय नाम होते हैं। एक अनोखी पर महत्वपूर्ण बात यह है कि एक से दूसरे समुदाय या वर्ग में जो शब्द सामान्यतः सबसे अधिक भिन्न होते हैं वे दैनिक उपयोग की सबसे ज़्यादा साधारण चीज़ों के नाम होते हैं। अतः वे प्रायः सदा ही प्रत्येक शब्द सूची में सबसे ऊपर और प्राथमिक पुस्तकों के पहले पृष्ठों में होते हैं। ऐसे शब्द फलों, घरेलू जानवरों, खाने पीने की चीज़ों, औज़ारों, बर्तनों, साधारण कपड़ों आदि के नाम होते हैं। याद रखिए कि ऐसे शब्दों के लिखने में जरा सी चूक का इन से कम प्रयोग में आने वाले शब्दों की अपेक्षा बहुत बुरा असर पड़ेगा। उनके उपयोग में थोड़ा सा अन्तर बहुत भौंडा और हास्यास्पद मालूम पड़ेगा। ऐसे आदमी के बारे में आप क्या सोचेंगे जो आपको आपकी अपनी भाषा में कुछ सिखाने पढ़ाने चला हो और यह भी न जानता हो कि 'केला' किसे कहते हैं ?

कई सूचियों में विचित्र अनमेल बातें होने की सम्भावना है। हो सकता है किसी सूची में सप्ताह के किसी एक दिन या किसी एक महीने का नाम तो सबसे ज़्यादा उपयोग में आने वाले शब्दों में हो पर अन्य दिनों या महीनों के नाम न हों। अगर सूची पूर्ण रूप से मौखिक या लिखित शब्दों की आवृत्ति गणना के आधार पर बनाई गई हो और बहुत ही व्यापक न हो, तो ऐसा होना अनिवार्य है। इससे केवल यह ज़ाहिर होता है कि जितने शब्दों की गणना की गई वे काफ़ी नहीं थे। पर यद्यपि इस चीज़ का बेतुकापन स्पष्ट है, और ऐसी ग़लती को छुपाने के लिये सूची में आवश्यक फेर बदल की जा सकती है, फिर भी बाक़ी परिणामों के सही होने पर सन्देह उत्पन्न होता है। अगर 'बुधवार'

तो हो पर 'वृहस्पतिवार' का कहीं पता न चले तो हम कैसे पूरे निश्चय के साथ कह सकते हैं कि एक ही वर्ग का एक शब्द दूसरे शब्द की अपेक्षा सूची में रखे जाने का ज़्यादा अधिकारी है ?

इस विधि के पक्ष में यह कहा जा सकता है, कि (यद्यपि इसके समर्थक इस विचार से सहमत नहीं जान पड़ते, कि मूल सूची सबसे ज़्यादा उपयोग में आने वाले सभी शब्दों को शामिल करने के लिए नहीं है बल्कि उसमें केवल कुछ चुने हुये शब्द होते हैं जो प्राथमिक पुस्तकें तैयार करने के लिये काफ़ी हों, और उनका मुख्य उद्देश्य असाधारण शब्दों को हटाना है । इस आधार पर काम करना ज़्यादा सरल जान पड़ता है । पर यह भी सन्तोषजनक नहीं है क्योंकि शब्दों को चुनने और हटाने की कठिनाइयां तो ज्यों की त्यों बनी रहीं ?

इसी प्रश्न को अन्य दृष्टिकोण से देखिये । यह सन्देह उठ सकता है कि क्या आम बोलचाल में किसी शब्द की आवृत्ति वास्तव में लिखित रूप में उसकी पठनीयता का सबसे उचित आधार हो सकता है ? इस तरह की शब्द सूची और एक विदेशी भाषा सिखाने के लिये बनाई गई सूची में भेद करना आवश्यक है । विदेशी भाषा के मामले में यह माना जा सकता है कि पाठक का बोलचाल के शब्दों का ज्ञान बहुत सीमित है, पर किसी नवसाक्षर के लिये उसकी अपनी भाषा में तैयार की गई सामग्री की बात अलग है । उसकी बोलचाल की शब्दावली पहले से ही बहुत व्यापक है, मूल शब्दों का किसी भी सूची से बहुत अधिक व्यापक । अब प्रश्न यह उठता है कि शब्दावृत्ति गणना के आधार पर जो शब्द मूल सूची में नहीं आ सके, पर जिससे पाठक समान रूप से परिचित है चाहे कई कारणों से उन्हें कम बार इस्तेमाल करता है, क्यों वे ज़रूर ही लिखित रूप में उसके लिये ज़्यादा कठिन होंगे ?

यह ठीक है कि प्रवेशिका और प्राथमिक पाठशाला में सीमित शब्दावली का उपयोग आवश्यक है, ताकि सीखने वाला थोड़ा थोड़ा करके शब्दों को पहचानने और एक दम ही इतनी ज़्यादा बातें उनके सामने न आ जाएं कि वह उन्हें ग्रहण ही न कर सके । पर निश्चय ही इस उद्देश्य के लिए शब्दावली का चुनाव बोलचाल में शब्दों की आवृत्ति से नहीं बल्कि किसी अन्य आधार पर होना चाहिए । मिसाल के तौर पर यह आधार शब्द की लम्बाई, साथ साथ आने वाले व्यंजनों की संख्या, अर्थ की स्पष्टता और शिक्षा की विधि हो सकते हैं ।

जब आप वयस्कों को उनकी मातृ भाषा में पढ़ा रहे हों और शब्दों के हिज्जे (वर्ण विवृत्ति) ध्वनि के अनुसार न हों तो निःसन्देह प्रारम्भिक शिक्षा

से आगे भी शब्दावली को सीमित रखना उचित होगा, और उसे नियमित रूप से थोड़ा थोड़ा करके बढ़ाना ठीक रहेगा। इसका कारण यह है कि पढ़ने वाला एक ख़ास सीमा तक प्रत्येक नया शब्द अलग से सीखता है। नस्तालीक़ जैसी लिपियों में यही बात लागू होती है क्योंकि इनका पठन वर्णो या मात्राओं की बजाए शब्दों से सीखा जाता है। पर ध्वनि के अनुसार चलने वाली लिपियों में, जैसे स्पेनिश या एशिया तथा अफ्रीका की बहुत सी भाषाओं की लिपियाँ हैं, ऐसा करना इतना आवश्वक नहीं है।

यह बात आम तौर पर अनुभव नहीं की जाती कि भौतिक संस्कृति की दृष्टि से निम्न स्तर के लोगों की साधारण शब्दावली कितनी व्यापक होती है। एक बार यह कहा गया था—और इस बात को अक्सर दुहराया जाता है—कि यूरोपीय किसान जिस शब्दावली का प्रयोग करते हैं उसमें केवल कुछ सौ शब्द हैं। यूरोपीय किसान के मामले में चाहे यह सही हो या न हो (और देखने में यह बात बहुत सम्भव नहीं जान पड़ती), पर अफ्रीका के कुछ भागों में रहने वाले आदिम क़बीलों के बारे में यह निश्चित रूप से ग़लत है। बल्कि स्थिति प्रायः इससे सर्वथा विपरीत है। आदिम भाषाओं में दैनिक उपयोग के शब्दों का बहुत बड़ा भंडार होता है। यह ठीक है कि इन भाषाओं में वैज्ञानिक तथा भाववाचक शब्दों, भावनाओं तथा मूल्यों को सूक्ष्मता के साथ अभिव्यक्त करने वाले विशेषताओं इत्यादि की कमी होती है, पर ये शब्द वैसे भी किसी मूल सूची में आने के नहीं हैं।

अन्ततः, भाषा के सबसे ज़्यादा जाने पहचाने शब्दों में से बहुत से ऐसे होंगे जो पहले कुछ हज़ार शब्दों की आवृत्ति गणना के आधार पर बनाई गई सूची में नहीं आएंगे, हालाँकि उन्हें समुदाय का हर सदस्य जानता और चाहता होगा। ये शब्द वे हैं जो लोकोक्तियों, पहेलियों, कहावतों, गीतों आदि में केवल ख़ास संदर्भ में प्रयुक्त होते हैं। ऐसे शब्द प्राथमिक पठन सामग्री के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं, क्योंकि उनकी जानी पहचानी ध्वनि पाठक के लिए मधुर होती है। क्या इन्हें केवल इसलिए इस्तेमाल न किया जाए कि वे शब्दावृत्ति गणना के आधार पर बनाई गई एक मनमानी सूची में नहीं आते?

व्यावहारिक पथ प्रदर्शन के लिए उपरोक्त शर्तों को ध्यान में रखते हुए शब्द सूचियां अवश्य बनें और जरूरत पड़ने पर शब्दावृत्ति गणना के आधार पर ही बनें, पर उन्हें सावधानी के साथ और कोई कट्टर रवैया अपनाये बिना इस्तेमाल किया जाए। और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ऐसी सूचियाँ लेखक के सेवक की तरह हों, स्वामी नहीं॥

भाग-५

कुछ निष्कर्ष तथा सिफ़ारिशें

अध्याय १२

विशेषज्ञों के यूनेस्को प्रादेशिक सम्मेलन[1] की रिपोर्ट

भूमिका

यूनेस्को के आठवें आम सम्मेलन में पास किए गए एक प्रस्ताव के परिपालन के लिए प्रधान निर्देशक ने १९५५-५६ के समय में चार देशों—बर्मा, लंका, भारत और पाकिस्तान—में नए पुस्तकालयों के लिए पठन सामग्री उपलब्ध कराने की योजना पर कार्रवाई करने का निर्णय किया।

इन देशों की सरकारों को सिखलाई के लिए बज़ीफ़े पेश किए गए और इस प्रदेश में संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा अध्ययन और प्रयोग के वास्ते प्रबन्ध किए गए। कार्यक्रम को ज़्यादा प्रभाव पूर्ण बनाने और उसे सार्वजनिक तथा अन्य संस्थाओं द्वारा किए जा रहे प्रयत्नों के साथ समन्वित करने के लिए, तथा भावी कार्यक्रम का ब्यौरा तैयार करने में सहायता देने के उद्देश्य से प्रधान निर्देशक ने विशेषज्ञों का एक सम्मेलन बुलाया। सम्मेलन को उन्हें यह सलाह देनी थी कि यूनेस्को योजना को भविष्य में कैसे चलाया जाए और वे इस बारे में सम्बद्ध सदस्य देशों की सरकारों से क्या सिफ़ारिशें करें।

प्रदेश की आवश्यकताएं

सारे प्रदेश में ऐसी सरल पठन सामग्री की ज़रूरत है जिसे ध्यान के साथ लिखा और तैयार किया गया हो। सामग्री उद्दिष्ट पाठकों की पठन योग्यताओं और रुचियों के अनुरूप होनी चाहिए। सम्मेलन का विचार था कि इस पठन सामग्री का उद्देश्य जनता के आर्थिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाना होना चाहिए। इस प्रदेश के देशों ने अपनी जनता के सर्वतोमुखी विकास के लिए राष्ट्रीय योजनाएं बनाई हैं और उन पर अमल कर रहे हैं। इन देशों के अधिकतर लोग अपढ़ या नवसाक्षर हैं। किसी देश के नव-

---

१. मरी, पश्चिम पाकिस्तान. में ११ से १८ जून १९५६ तक हुआ।

साक्षरों के लिए जितने ध्यान के साथ पठन सामग्री तैयार की जाएगी उतना ही अधिक वह देश की सांस्कृतिक उन्नति, अच्छी नागरिकता के विकास, शिल्प-कलाओं में सुधार और लोगों द्वारा अपने ख़ाली समय का सदुपयोग करने में सहायक होगी ।

सम्मेलन इस बारे में एक मत था कि प्राथमिक पाठमालाओं से लेकर साधारण लोकप्रिय साहित्य तक सब प्रकार की पठन सामग्री के सुधार और विस्तार की बहुत आवश्यकता है । अपेक्षाकृत नए ढंग का साहित्य तैयार किया जाना चाहिए; ऐसे साहित्य के उत्पादन की अधिकतर समस्याओं के बारे में इस प्रदेश में यथोचित कार्रवाई नहीं की गई है । बहुत सी बातों के बारे में मूल अनुसन्धान तथा प्रयोग की आवश्यकता है, जिससे सबसे अधिक प्रभावशाली तरीक़ों का निर्धारण किया जा सके । अधिकांश सामग्री प्रत्येक देश, प्रदेश या भाषा वर्ग के अनुकूल बनानी होगी ।

सम्मेलन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि ऐसी सामग्री के पाठकों की संख्या में तेज़ी के साथ वृद्धि हो रही है और उसकी बढ़ती हुई मांग को पूरा करना होगा । सम्मेलन का यह दृढ़ विचार था कि अब समय आ गया है जब यूनेस्को और राष्ट्रीय सरकारों को इस पठन सामग्री की तैयारी में योग देने के लिए जम कर ज़ोरदार प्रयत्न करना होगा। सम्मेलन की राय में पहले से काम कर रहे लोग या संस्थाएं इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए काफ़ी नहीं हैं; इस कमी को पूरा करने के वास्ते विशेष कार्यक्रमों और उपायों की ज़रूरत है।

सम्मेलन के विचार में इस प्रकार की अधिकाधिक पठन सामग्री तैयार करने के लिए इन इन चीज़ों की मुख्य रूप से आवश्यकता है : (क) पठन सामग्री से सम्बद्ध अनुसन्धान, उसकी तैयारी और वितरण के लिए विशेषज्ञ प्रशिक्षण; (ख) तैयारी, उत्पादन तथा वितरण से सम्बद्ध अनेक विषयों पर अनुसन्धान; (ग) अनुभव और सूचना का आदान प्रदान; (घ) पुस्तक खरीदने और पढ़ने की आदत का विकास करने के लिए अभिकरणों की स्थापना (ङ) प्रवर्धन और वितरण के उपायों और साधनों का सुधार और विस्तार; (च) सरकार, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा प्रकाशकों में अधिक सहयोग और उनके कार्य में अधिक समन्वय; (छ) लेखकों के लिए प्रोत्साहन; (ज) पठन सामग्री तैयार करने वाले अभिकरणों का प्रोत्साहन; (झ) नवसाक्षरों के पढ़ने की सामग्री छापने के लिए विदेशों से क़ाग़ज़, छपाई का सामान और मशीनें आदि मंगाने पर से प्रतिबन्ध और कर सम्बन्धी बाधाओं को दूर करना;

(ञ) डाक तथा रेल भाड़े की दरें घटाना, ताकि कम ख़र्च पर दूर दूर तक के इलाक़ों में सामग्री का वितरण हो सके।

आवश्यकताओं की पूर्ति के आवश्यक उपाय

प्रशिक्षण

सम्मेलन का विचार था कि इन कर्मचारियों का समुचित प्रशिक्षण मूल रूप से आवश्यक है—

लेखक—न केवल लेखकों को खोजना ज़रूरी है बल्कि उन्हें सरल पठन सामग्री की तैयारी के लिए आवश्यक बातों का प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए।

सम्पादक—नवसाक्षरों की विशेष समस्याओं से सम्बद्ध कार्यों और पत्रिका सम्पादन का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। प्रदेश में सुयोग्य ग्राम सम्पादकों की बहुत आवश्यकता है। लेखक आम तौर पर अनुभवहीन हैं और उन्हें सम्पादकों की सहायता की ज़रूरत है। इन सम्पादकों का काम लेखकों के साथ मुसव्विदे की तैयारी के बारे में विचार विनिमय करना, अन्तर्वस्तु का क्रम निश्चित करना, चित्रों के चुनाव में सहायता देना और अन्त में मुसव्विदे के मुद्रण के लिए उसका सम्पादन करना है।

पुस्तकों का डिज़ाइन बनाने वाले : पुस्तकें ख़रीदने और पढ़ने की आदत में बढ़ावा देने का एक तरीक़ा यह है कि अच्छी शक्ल सूरत की किताबें छापी जाएँ। पुस्तकों के डिज़ाइन बनाने वाले का यह काम है कि वे लेखक द्वारा तैयार किए गए मुसव्बिदे को प्रभाव पूर्ण और आकर्षक रूप में पेश करे और इसके साथ ही पुस्तक का आयोजन ऐसे ढंग से करे कि उसकी लागत सम्भावित पाठकों की क्रय शक्ति के अनुकूल क़ीमत से बढ़ने न पाए।

पुस्तकों के चित्र बनाने वाले : नवसाक्षरों के लिए तैयार की जाने वाली बहुत सी सामग्री के लिए चित्रों की आवश्यकता होती है। इन चित्रों को प्रभाव पूर्ण बनाने के लिए उनके आयोजन और तैयारी पर बहुत ध्यान देना ज़रूरी है। चित्र बनाने वालों को लेखक के इरादे, पुस्तक में प्रयुक्त अध्यापन विधि, सम्भावित पाठक वर्ग और मुद्रण के तरीके का ज्ञान होना चाहिए और इन सब को ध्यान में रख कर चित्र तैयार करने चाहिए।

उत्पादन विशेषज्ञ : उत्पादन आयोजन, प्रकाशन तथा नियोजित संगठन, परिव्यय निर्धारण तथा अन्य वित्तीय अनुमानों के लिए उत्पादन प्रबन्धक के काम का पठन सामग्री के प्रकाशन में विशेष महत्व है। वह कम से कम और अधिक से अधिक कुशलता के आधार पर प्रशासन का संगठन करने के योग्य होना चाहिए। आम तौर पर देखा गया है कि प्रदेश के मुद्रणालयों में आधुनिक

और बढ़िया मुद्रण यन्त्र तो मौजूद होते हैं पर प्रबन्ध, परिव्यय निर्धारण विधियों और वित्तीय अनुमान लगाने की कुशल व्यवस्था का अभाव रहता है। ज़्यादा इसी वजह से इस समय प्रदेश में तैयार हो रही पठन सामग्री के दाम अधिक होते हैं और छपाई आदि घटिया।

प्रकाशक : प्रशासन, नीति, मुख्य निर्धारण, विक्रय अनुसंधान, प्रवर्धन, वितरण और बिक्री के लिए। प्रकाशकों के प्रशिक्षण की अब तक बहुत कम कोशिश की गई है। ऐसे प्रशिक्षण कोर्स का आयोजन किया जाना चाहिए जिस से प्रकाशन उद्योग के लिए कुशल प्रबन्धक मिल सकें।

पुस्तक विक्रेता : व्यापारिक वितरण व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए अच्छे और कुशल पुस्तक विक्रेताओं की बहुत ज़रूरत है। प्रदेश की विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विक्रेताओं के प्रशिक्षण की सुविधाएँ उपलब्ध की जानी चाहिएं।

पुस्तकालय प्रबन्धक : ग्रामीण पुस्तकालय के प्रबन्धका को लोगों में पुस्तकें खरीदने और पढ़ने की आदत का विकास करने में भी सहायता देनी चाहिए। इस कार्य के लिए पुस्तकालय प्रबन्धकों के लिए थोड़े समय के प्रशिक्षण कोर्सों का आयोजन किया जाना चाहिए।

अनुसंधान कार्यकर्त्ता : निम्नांकित अनुसंधान कार्य के लिए कर्मचारियों के आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।

अनुसंधान

सम्मेलन का विचार था कि पठन सामग्री के उत्पादन से सम्बद्ध समस्याओं के निर्धारण और स्पष्टीकरण के लिए मूल और व्यावहारिक अनुसंधान की निश्चित रूप से आवश्यकता है। जिन क्षेत्रों में मुख्य रूप से काफी और निरन्तर अनुसन्धान की ज़रूरत है, वे हैं : (क) पठन सामग्री की तैयारी (साक्षरता शिक्षण सामग्री और सरल शिक्षा सामग्री, दोनों की); (ख) उत्पादन; (ग) साक्षरता अध्यापन के काम आने वाली तथा साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई की सामग्री, और सीमित योग्यता वाले वयस्कों के काम की सरल शिक्षा सामग्री का उपयोग; (घ) वितरण और विक्रय; (ङ) पढ़ने की आदत का विकास।

आदान प्रदान सेवा और राष्ट्रीय अभिकरणों का संगठन

राष्ट्रीय और प्रादेशिक दोनों स्तरों का आदान प्रदान सेवाओं की ज़रूरत है, जिनके द्वारा लेखकों, प्रकाशकों, अनुसंधानकर्त्ताओं और पठन सामग्री के उत्पादन से संबद्ध संस्थाओं के मतलब की सूचना प्राप्त की जा सके और भेजी जा सके।

सम्मेलन का विचार था कि प्रदेश की सरकारें पुस्तकें ख़रीदने और पढ़ने की आदत का विकास करने में योग देने के लिए बिना नफ़े के काम करने वाली ग़ैर-सरकारी संस्थाओं की स्थापना में सहायता दें, जो लेखक सभाओं, प्रकाशकों, पुस्तकालय प्रबन्धकों, पुस्तक विक्रेताओं तथा सामान्य जनता के सहयोग से निम्नलिखित कार्य करें। जनता को उपलब्ध पुस्तकों के बारे में सूचित करना और पुस्तकों के पठन और उपयोग में बढ़ावा देना; किसी विशेष विषय की पुस्तकों में दिलचस्पी पैदा करना और जनता के जिस वर्ग का उनसे सम्बन्ध हो उसका उनकी ओर ध्यान दिलाना; निश्चित विषयों के सम्बन्ध में आंकड़े इकट्ठे करना; लोगों की रुचियों और आवश्यकताओं का पता लगाना; पुस्तक उत्पादन का स्तर ऊँचा उठाया; सभी वर्गों के लोगों की पुस्तकों में दिलचस्पी बढ़ाना और अच्छी बुरी पुस्तकों की पहचान पैदा करना; उपलब्ध और दुर्लभ पुस्तकों की प्रदर्शनियों का आयोजन करना; पुस्तक सूचियाँ, पाठकों के लिए दिग्दर्शन पुस्तिकाएँ और देश में छपने वाली पुस्तकों की विवरण सहित अन्य व्यापक सूचियाँ प्रकाशित करना; बालक पाठकों तथा उनका मार्गदर्शन करने वाले अध्यापकों और संरक्षकों की सहायता के लिए विषय सूचियाँ तैयार करना; ऐसे सब लोगों को जिन्हें पुस्तक सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हो, सूचना और शिक्षण देना तथा अन्य हर प्रकार की सहायता करना; जिन लोगों ने अभी तक अपने जीवन में पुस्तकों का महत्व न जाना हो उन्हें जागृत करना; नई उठने वाली पीढ़ी को कामिक पुस्तकों के आदी बनने या फिल्मों को मनोरंजन का एकमात्र आधार बनाने से रोकने में संरक्षकों और अध्यापकों के साथ मिल कर काम करना; पुस्तकों से सम्बन्ध रखने वाले रेडियो कार्यक्रमों में भाग लेना; पाठ्य पुस्तकों का स्तर गिराने के विरुद्ध जनमत तैयार करना और पुस्तकालय सुविधाओं की कमी की ओर ध्यान आकृष्ट करना; इधर उधर भेजने के लिए आवश्यक सूचियाँ तैयार रखने, प्रदर्शनियों के लिए पुस्तकों के बारे में सूचना सामग्री छापने तथा प्रकाशक-प्रकाशक, प्रकाशक-सरकार, एवं प्रकाशक-सरकार-जनता के बीच सूचना के आदान प्रदान में बढ़ावा देने के उद्देश्यों से अन्य केन्द्रीय तथा स्थानीय संगठनों के साथ निकट सम्पर्क रखना।

प्रवर्धन और वितरण की विधियों और साधनों का सुधार और विस्तार

सम्मेलन का मत था कि सरकारों, स्वयंसेवकों तथा प्रकाशकों को प्रवर्धन, वितरण तथा विक्रय की समस्याओं में सक्रिय रूप से दिलचस्पी लेनी चाहिए।

प्रवर्धन : सरकारें अनेक उपायों से पठन सामग्री के प्रवर्धन में योग दे सकती हैं, जैसे पुरस्कार देना, जो पुस्तकें राष्ट्र के लिए हितकारी समझी जाएं उनके संस्करण का कुछ अंश स्वयं ख़रीद लेना, जो पुस्तकें व्यापारिक आधार पर छापने से औसत पाठक की क्रय शक्ति के अनुकूल दामों पर न बिक सकती हों उनके लिए अनुदान देना, और लेखकों तथा प्रकाशकों के मार्गदर्शन के लिये आवश्यक तथा वाँछनीय सामग्री के विषयों और शीर्षकों की वर्गीकृत सूचियाँ छापना। यूनेस्को कापीराइट (कृतिस्वाम्य) या अनुवाद के अधिकार के बारे में समझौता करवा कर पठन सामग्री का उत्पादन बढ़ाने में योग दे सकती है। स्वयंसेवी संस्थायें प्रकाशक और पुस्तक विक्रेता कार्यशील व्यावसायिक तथा व्यापारिक संस्थायें स्थापित करके, राष्ट्रीय, स्थानीय तथा चलती फिरती प्रदर्शनियाँ आयोजित करके, प्रतियोगिताओं तथा पुरस्कारों द्वारा पुस्तक उत्पादन के स्तर को ऊंचा उठाने में प्रोत्साहन देकर और पुस्तक क्लबों का संगठन करके सहायता दे सकते हैं।

वितरण

सम्मेलन ने यह स्वीकार किया कि सरकारी संस्थाओं और ग़ैर-सरकारी तथा स्वयंसेवी अभिकरणों के वितरण के तरीकों में अन्तर होना अनिवार्य है। पर किसी वितरण व्यवस्था ने प्रभावकारी होने की एक ही कसौटी है : क्या पठन सामग्री उद्दिष्ट पाठकों तक पहुँचती है ?

इस प्रदेश में सरकारी वितरण व्यवस्था को ग़ैर-सरकारी तथा स्वयंसेवी अभिकरणों के मुक़ाबले में सामान्यतः यह फ़ायदा है कि वह सरकारी साधनों का उपयोग कर सकती है। कभी कभी पठन सामग्री के वितरण का काम करने वाले सरकारी विभागों के मार्ग में विशेष जानकारी की कमी और समुचित वितरण व्यवस्था न होने के कारण बाधा उत्पन्न होती है। इससे अक्सर काम में देर लगती है। सम्मेलन इस परिणाम पर पहुँचा कि सरकारी वितरण व्यवस्थाओं को और अधिक प्रभावशाली बनाने के उपायों की जाँच की जानी चाहिए इस जाँच के अन्तर्गत वितरण कर्मचारियों का प्रशिक्षण, वितरण साघन केन्द्रीय वितरण व्यवस्था की वाँछनीयता आदि समस्यायें आएंगी।

अभी तक इस प्रदेश के किसी भी देश में कोई एकीकृत पुस्तकालय सेवा नहीं है। यूनेस्को को चाहिये कि वह राष्ट्रीय पुस्तकालय सेवाओं की स्थापना में सदस्य देशों को सहायता दे, क्योंकि ऐसी सेवाओं से वितरण कार्य में बहुत सुविधा रहती है।

यद्यपि अनेक प्रकाशनों की सम्भावित पाठक संख्या अब भी बहुत बड़ी

है पर प्रदेश में छपने वाले औसत संस्करण बहुत छोटे होते है। इससे क़ीमत इतनी बढ़ जाती है कि बहुत से सम्भावित पाठक नहीं दे सकते। इसके अतिरिक्त इन प्रकाशनों का वितरण अधिकतर प्रकाशक संस्था के आस पास के थोड़े से इलाक़े तक सीमित रहता है। इसका कारण कारगर प्रवर्धन तथा विक्रय विधियों और समुचित वितरण सुविधाओं की कमी है।

सम्मेलन की राय थी कि इस स्थिति को सुधारने के लिये अनेक प्रकार से कार्रवाई की जा सकती है। एक, जैसा कि प्रशिक्षण सम्बन्धी खण्ड में कहा गया है, वितरण और विक्रय कर्मचारियों को अधिक अच्छा प्रशिक्षण दिया जाये। दो, यद्यपि व्यापक वितरण व्यवस्थाएं स्थापित करना व्यक्तिगत रूप से अधिकतर प्रकाशकों की क्षमता के बाहर है, फिर भी इस बात पर विचार किया जा सकता है कि सहकारिता के आधार पर ऐसी व्यवस्थाएं संगठित करना, जिनमें प्रदेश भर में महत्वपूर्ण स्थानों पर थोक बिक्री के अनेक केन्द्र बनाना भी शामिल हो, कहां तक सम्भव होगा। सम्मेलन ने सुझाव दिया कि राष्ट्रीय सरकारें ऐसीं जांच का आयोजन करें जिससे निर्णय किया जा सके कि इस प्रकार की वितरण व्यवस्थाओं का विकास कैसे हो सकता है। तीन, पुस्तकों की अधिक दुकानें खोली जानी चाहिएं और जहाँ ऐसा न हो सके वहां बिसाती आदि की दुकानों में पुस्तकों के प्रदर्शन और विक्रय में बढ़ावा दिया जाना चाहिये। और चार, चूंकि प्रकाशक के लिये अक्सर यह निर्णय करना कठिन होता है कि उसे किसी पुस्तक विक्रेता के साथ उधार का लेन देन करना चाहिए या नहीं, इसलिये प्रकाशक संगठनों का लेन देन सम्बन्धी मानक निश्चित करने के लिये पुस्तक विक्रेता संस्थाओं के साथ सहयोग करना चाहिए।

प्रकाशनों के लिए पूंजी का प्रबन्ध

अक्सर पुस्तक प्रकाशन व्यवसाय को बैंकों आदि से रुपया उधार लेने में कठिनाई होती है। आम तौर पर कहा जाता है कि क़र्ज़े के लिये मुद्रित सामग्री पर्याप्त जमानत नहीं है। यह एक गम्भीर समस्या है, विशेष कर ऐसी हालत में जबकि प्रदेश में कई नई प्रकाशन फर्में हैं, जिनके पास काफ़ी वित्तीय साधन नहीं हैं। सम्मेलन का मत था कि अगर प्रकाशक की विशेष हैसियत और ज़िम्मेदारियों को देखते हुए अधिक ऋण सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकें तो पठन सामग्री के प्रकाशन में बहुत बढ़ावा मिलेगा।

सम्मेलन के मतानुसार ऐसी सुविधाओं की सम्भावनाएं इस प्रकार हैं: प्रकाशक ऋण सहकारिता समितियां बना सकते हैं जो अपने सदस्यों को आवश्यकता होने पर रुपया उधार दें; सरकार राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं

को सहयोग से ऋण कोष स्थापित कर सकती है, जिनमें से सहायता के अधिकारी प्रकाशकों को रुपया दिया जा सके।

सरकारी स्वयंसेवो संस्थाओं तथा प्रशासकों में अधिक सहयोग और कार्य समन्वय

सम्मेलन का विचार था नवसाक्षरों के लिये पठत सामग्री की वर्तमान भारी कमी को देखते हुए यह आवश्यक जान पड़ता है कि सरकारें, ग़ैर सरकारी संस्थाएं तथा प्रकाशक, सभी पठन सामग्री के उत्पादन के क्षेत्र में अपना कार्य न केवल जारी रखें बल्कि ऐसा विस्तार करें।

प्रस्तुत रिपोर्ट के अन्य भागों में प्रशिक्षण, प्रवर्धन और वितरण की समस्याओं का उल्लेख किया गया है और उनका विवेचन किया गया है। ये समस्याएं सभी साहित्य उत्पादन संस्थाओं के लिए बिल्कुल एक जैसी तो नहीं पर उन सबको इनका सामना अवश्य करना पड़ता है। यह आवश्यक है कि कुशलता और खर्च की कमी दोनों दृष्टिकोणों से इन सब अभिकरणों के बीच सहयोग तथा कार्य समन्वय बढ़ाया जाए।

ऐसे सहयोग और समन्वय के लिए सबसे पहली ज़रूरत इस बात की है कि प्रत्येक अभिकरण दूसरे की समस्याओं तथा आवश्यकताओं को ज़्यादा अच्छी तरह समझने की कोशिश करे। इसका आरम्भ ऐसे प्रशिक्षण केन्द्रों द्वारा, जहां सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी प्रशिक्षार्थी साथ साथ शिक्षण लें, सम्पर्क निकायों की स्थापना से और ऐसी गोष्ठियों तथा वर्कशापों का आयोजन करके जिनमें सभी वर्ग सम्मिलित हों और अपनी समस्याओं तथा आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति एवं तुलना कर सकें, किया जा सकता है।

पठन सामग्री की तैयारी, उत्पादन, वितरण तथा विक्रय के काम करने वाले सरकारी अभिकरणों में इन क्षेत्रों के विशेषज्ञ होने चाहिए। इस बात की पूरी कोशिश की जानी चाहिए कि ये अभिकरण तथा कार्यालय ज़्यादा से ज़्यादा कारगर ढंग से काम करें और इन्हें व्यापारिक आधार पर चलाया जाए, कम से कम जिस हद तक ऐसा करना उनके विशेष लक्ष्यों और कार्यों की पूर्ति में बाधक न हो।

प्रदेश में अधिकतर प्रकाशकों को अपना काम कारगर तरीक़े से करने के लिए स्वयं अपनी सरकारों तथा बाहरी संस्थाओं से बहुत अधिक सहायता की ज़रूरत पड़ती है। यदि अन्तिम उद्देश्य केवल वर्तमान आवश्यकताओं को ही पूरा करना नहीं है बल्कि ज़िम्मेदार, गतिशील तथा स्वालंबी पुस्तक उद्योग की स्थापना करना है तो यह बात और भी सही है।

लेखकों के लिए प्रोत्साहन

सम्मेलन इस बात पर सहमत था कि अधिक पठन सामग्री तैयार करने के लिए लेखकों को बढ़ावा दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है। लेखकों के प्रशिक्षण के बारे में कुछ सुझाव ऊपर दिए जा चुके हैं। इनके अतिरिक्त सम्मेलन ने निम्नांकित सुझाव भी दिए :

यूनेस्को प्रदेश में लेखकों की रायल्टी तथा अन्य अधिकारों के बारे में जांच में योग दे। इस अध्ययन का उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रतिभाशाली लेखकों के लिए समुचित आजीविका तथा उनके रचनात्मक कार्य के लिए पर्याप्त वित्तीय लाभ सुनिश्चित किया जा सके। इस प्रकार के सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप ऐसी निश्चित नीतियां निर्धारित हो जानी जाहिएं जो लेखकों तथा प्रकाशकों दोनों को स्वीकार हों।

व्यावसायिक संगठन बनाने में प्रोत्साहन दिया जाए

अधिकतर लेखकों को काम खुद ढूंढना या करना पड़ता है और उनके लिए कोई आर्थिक सुरक्षा नहीं है। उनकी सहायता के लिए बिना नफ़े के काम करने वाली एक संस्था स्थापित करके और बुढ़ापे में मदद देने के लिए एक कोष बनाकर, जिसमें लेखक और प्रकाशक दोनों अंशदान दें, स्थिति को सुधारा जा सकता है।

यूनेस्को प्रदेश में लेखकों के लिए पुरस्कारों का आयोजन करके सबसे अधिक कारगर सहायता दे सकती है।

स्वयंसेवी संस्थाओं के लिए प्रोत्साहन

सम्मेलन ने अनुभव किया कि प्रदेश की वर्तमान परिस्थितियों में स्वयंसेवी संस्थाएं नवसाक्षरों के लिए साहित्य उत्पादन के कार्य में महत्वपूर्ण योग दे सकती हैं। इन संस्थाओं को शोध और उत्पादन के कार्यक्रम पूरे करने के लिये विशेषज्ञों के परामर्श, अनुसन्धान की सुविधाओं, वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण सुविधाओं और वज़ीफ़ों आदि की आवश्यकता है।

अन्तिम सिफ़ारिशें

सम्मेलन ने यह स्वीकार किया कि इस क्षेत्र में कोई कार्रवाई करना प्रत्येक देश के विकास स्तर, सामुदायिक सुधार तथा उन्नति के कार्यक्रमों और उपलब्ध सुविधाओं पर निर्भर है। कुछ हालतों में पहले स्थानीय स्तर पर और कुछ में राष्ट्रीय स्तर पर काम शुरू करना आवश्यक हैं। कुछ अन्य हालतों में प्रादेशिक स्तर पर कार्रवाई करना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी रह सकता है।

सम्मेलन की पहली मुख्य सिफ़ारिश यह थी कि उपरोक्त बहुत सी आवश्यकताओं की पूर्ति और कार्रवाइयों के लिए सबसे अच्छा उपाय अनुसंधान सेवा और प्रशिक्षण केन्द्रों का संगठन करना है। ये संगठन पहले से काम कर रहे संस्थानों से कई प्रकार से भिन्न होंगे : (क) वे मुख्य रूप से प्रबन्धकों और विशेषज्ञों को प्रशिक्षित करेंगे जो आवश्यकताओं के खंड में उल्लिखित नए प्रकार के साहित्य का उत्पादन करने वाले अभिकरणों में काम करेंगे; (ख) प्रशिक्षण कार्यक्रम में इलाक़े की आवश्यकताओं पर विशेषरूप से ध्यान दिया जायेगा और प्रशिक्षार्थियों को इस योग्य बनाया जाएगा कि वे अपने संगठनों में लौटकर प्रबन्धकों के या उनके नीचे के पद संभाल सकें, अपने अधीन नए विभागों की व्यवस्था चला सकें और कम से कम कुछ हद तक अपने अमले को प्रशिक्षण दे सकें;

(ग) ये केन्द्र केवल प्रशिक्षण संस्थान ही नहीं होंगे बल्कि सेवा संगठनों के रूप में भी कार्य करेंगे—वे सूचना प्राप्त करेंगे और भेजेंगे और ऐसी सामान्य सेवाओं की व्यवस्था करेंगे जो अब केवल औद्योगिक दृष्टि से बहुत उन्नत देशों में ही प्राप्य हैं।

इन केन्द्रों में उपलब्ध सुविधाएं सरकार और पठन सामग्री के उत्पादन का काम करने वाले ग़ैर-सरकारी तथा स्वयंसेवी अभिकरणों, दोनों को प्राप्त हो सकेंगी। यूनेस्को को यह सुझाव दिया गया कि वह प्रदेश की सरकारों से अपनी संस्थाओं, स्वयंसेवी अभिकरणों तथा प्रकाशकों को ज़्यादा से ज़्यादा व्यापक आधर पर वज़ीफ़े आदि देने को कहे। सम्मेलन यह अनुभव करता था कि इस प्रकार के केन्द्र एक दिन में ही नहीं स्थापित किए जा सकते। वास्तव में किसी केन्द्र के संगठन, पाठ्यक्रम तथा कार्यों का ठीक से अध्ययन और निर्धारण करने से पहले उसकी स्थापना कर देना भी ज़ोखिम की बात है। पहले सर्वेक्षण तथा खोज करनी होगी जिसके पश्चात् सुयोग्य कर्मचारियों का चुनाव, और फिर प्रदेश के स्थायी अभिकरणों के रूप में केन्द्रों की स्थापना की जा सकेगी।

केन्द्रों का प्रशिक्षण कार्यक्रम निर्धारित करते समय इन बातों का ख़्याल रखना चाहिए : (क) प्रशिक्षार्थियों का शिक्षा स्तर और प्रदेश की विशेष परिस्थितियां; (ख) कार्यक्रम में इतनी लचक हो कि इलाके की आवश्यकता के अनुसार कम या अधिक विशेष प्रशिक्षण दिया जा सके—प्रशिक्षार्थियों को यह सुविधा मिलनी चाहिए कि वे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार चाहें तो किसी एक प्रकार का प्रशिक्षण लें और चाहें तो कई कार्यों के बारे में मिला जुला कोर्स ले लें। सम्मेलन ने अस्थायी रूप से सुझाव दिया कि प्रशिक्षण कोर्स के अनुसार कोई प्रशिक्षार्थी अधिक से अधिक दो वर्ष तक केन्द्र में प्रशिक्षण प्राप्त करे।

सम्मेलन का मत था कि प्रशिक्षण कार्यक्रम को, जिसमें कक्षा तथा वर्कशाप दोनों विधियों का शिक्षण शामिल हो, ठीक तरह से पूरा करने के लिए तथा नवसाक्षरों की ज़रूरत के साहित्य के प्रबर्धन से सम्बद्ध अन्य कार्यों और सेवाओं को कारगर तरीके से चलाने के वास्ते केन्द्र में निम्नलिखित सुविधाएं होनी चाहिएं :

अनुसंधान शाखा, जो केन्द्र का एक अंग हो। यह शाखा विशेषज्ञ प्रशिक्षण तथा पठन सामग्री उत्पादन से सम्बद्ध तत्वों की जांच करे। वह विभिन्न प्रकार की पठन सामग्री के नमूने तैयार करने में उत्पादन शाखा तथा प्रायोगिक मुद्रणालय को सहायता दे। वह प्रदेश में उपयुक्त सामान, उपकरणों तथा विधियों के परीक्षण और लागत कम करने तथा कम ख़र्च पर पठन सामग्री तैयार करने के उपायों की जाँच में योग दे।

प्रशिक्षण शाखा तथा वर्कशाप, प्रस्तावित प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा करने के लिए।

उत्पादन शाखा, जिसमें एक प्रायोगिक मुद्रण संयन्त्र भी हो। यह शाखा नमूने की सामग्री की तैयारी तथा प्रशिक्षण और अनुसंधान में सहायता दे।

सूचना प्रसार साखा, जो सूचना इकट्ठी करके उसे उसमें दिलचस्पी रखने वाले सभी अभिकरणों तथा व्यक्तियों को भेजे।

एक पत्रिका (जिसका नीचे उल्लेख किया गया है)।

उपरोक्त सुविधाएं उपलब्ध करने के अतिरिक्त केन्द्र को ये कार्य भी करने चाहिए : (क) वह प्रदेश में नवसाक्षरों के लिए पठन सामग्री उत्पादन का काम करने वाली सभी संस्थाओं तथा अभिकरणों से सहयोग करे; (ख) पठन सामग्री के उत्पादन से सम्बद्ध समस्याओं के बारे में वर्कशापों की व्यवस्था करे; (ग) गोष्ठियों तथा 'रीफ्रेशर' कोर्सों का आयोजन करे; (ड) पठन सामग्री के उत्पादन के बारे में एक पत्रिका प्रकाशित करे।

यूनेस्को को चाहिए कि प्रदेश में उपरोक्त ढंग के राष्ट्रीय केन्द्रों की स्थापना के लिए जो राष्ट्रीय सरकारें सहायता चाहें, और स्वयं आवश्यक सुविधाएं देने के लिये तैयार हों, उन्हें वह सहायता दे। स्वयं यूनेस्को प्रदेश की सरकारों के साथ एक प्रादेशिक केन्द्र[1] अथवा सेवा की स्थापना के बारे में बातचीत करे जो प्रदेश की समान आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। इसके अतिरिक्त यूनेस्को प्रदेश के अधिकारियों के साथ इन बातों पर विचार विनिमय करे: (क) पठन सामग्री के उत्पादन के लिए आवश्यक सामान और मशीनों आदि

(१) ऐसा एक केन्द्र बाद में कराची में स्थापित किया गया।

के आयात से सम्बद्ध कठिनाइयों को कम करना; (ख) शिक्षा की पठन सामग्री पर डाक टिकट और रेल भाड़े में कमी करना।

यूनेस्को का कार्यक्रम

सम्मेलन ने इस क्षेत्र में यूनेस्को के कार्यों, और प्रस्तावित कार्यक्रमों की रूप रेखा पर विचार किया और इस नतीजे पर पहुँचा कि इस संस्था को अपना कार्य निम्नलिखित कार्यवाइयों पर केन्द्रित करना चाहिए : प्रशिक्षण की व्यवस्था करना, सर्वेक्षण और अनुसंधान करना, सूचना के आदान प्रदान की सेवा उपलब्ध करना, और आदर्श पठन सामग्री के उत्पादन में योग देने के लिए प्रदेश में विभिन्न अभिकरणों के साथ ठेके करना। उपरोक्त प्रस्तावित कार्रवाइयों के अन्तर्गत यूनेस्को द्वारा अपने कार्य का इस आधार पर विस्तार करने के उपाय सुझाये गए हैं।

परिशिष्ट

अनुसंधान सम्बन्धी ऐसी समस्यायों की सूची जिनका स्थानीय, राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक स्तरों पर अध्ययन किया जा सकता है

रिपोर्ट में अनुसंधान के जिन मुख्य क्षेत्रों का उल्लेख किया गया है नीचे उन की व्यौरेवार सूची दी जाती है। ये ऐसे विषय हैं जिनके आधार पर प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय-स्थानीय स्तरों पर अनुसंधान कार्य किया जा सकता है। इस सूची में सभी विषय आ गये हैं, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, हां इससे यह पता चल सकता है कि किस प्रकार का अनुसंधान कार्य किया जाए या उसमें प्रोत्साहन दिया जाए।

अनुसन्धान के बारे में हमारी धारणा व्यापक है। कुछ प्रकार के अध्ययन मूल और सैद्धान्तिक महत्व के होंगे, जैसे शब्दावृत्ति गणना, पठनीयता अध्ययन इत्यादि, अन्य व्यावहारिक होंगे, जैसे विक्रय खोज, सामग्री का परीक्षण, कार्यक्रम मूल्यांकन इत्यादि।

पठन सामग्री की तैयारी

साक्षरता शिक्षा सामग्री

वाक्य रचना : साक्षरता शिक्षा सामग्री में विभिन्न प्रकार की रचना के वाक्य क्रम से लाने की अलग अलग विधियों की तुलनात्मक उपयोगिता का अध्ययन।

शब्दावली। कम से कम तीन प्रकार के शब्दावली अध्ययन की आवश्यकता है :

(क) लिखित भाषा की शब्दावृत्ति गणना; (ख) बोलचाल की भाषा के बारे में अध्ययन; और (ग) लोगों में जाकर सामान्य और विशेष शब्द

सूचियों का परीक्षण, यह पता लगाने के लिए कि कौन से शब्द वे जानते हैं और कौन से नहीं।

लिपि। कुछ भाषाओं में कई प्रकार के वर्ण होते हैं जिनके प्रयोग का आधार निश्चित करने के लिए खोज की ज़रूरत है।

विभिन्न अध्यापन विधियाँ तथा उनका लोगों पर असर और लोगों द्वारा उनकी स्वीकृति।

साक्षरता कक्षा में पढ़ने वालों की पठन आवश्यकताएं और रूचियाँ। हमें लोगों के साक्षरता कक्षाओं में शामिल होने के उद्देश्यों का सहानुभूति के साथ अध्ययन करना चाहिए ताकि पठन सामग्री से उनकी आकांक्षाओं की पूर्ति हो सके।

पढ़ना सिखाने की विभिन्न विधियाँ। इसके लिए इनके प्रायोगिक उपयोग की आवश्यकता होगी : (क) नियन्त्रित कक्षाएँ; (ख) नियन्त्रित विधियां जिन से जल्दी ही अन्तर का पता चल सके, और (ग) होशियारी के साथ की गई उपलब्धि परीक्षाएँ, जिन से ज्ञान प्राप्ति के अन्तर को आंका जा सके।

स्तर निर्धारण सिद्धान्त। इनके लिए पठन सामग्री में शब्द, वाक्य रचना, विचार और पात्र शामिल करने और उन्हें सीमित करने तथा विभिन्न प्रकार के टाइप के उपयोग के बारे में तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता है।

चित्रों का उपयोग। चित्रों के विभिन्न अनुपातों के साथ सामग्री के प्रभाव में क्या अन्तर होता है ? किस शैली के चित्रों को नवसाक्षर सबसे अधिक अच्छी तरह समझते हैं ?

साक्षरता के मानकों की परिभाषा और निर्धारण। क्या राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक दोनों स्तरों पर कोई मानक निश्चित किये जा सकते हैं ?

सीमित पठन योग्यता वाले वयस्कों के लिए सरल शिक्षा सामग्री

विभिन्न वर्गों के पाठकों की दिलचस्पी, आवश्यकताएँ और योग्यतायें। यहां पुस्तकालयों की पुस्तकों के उपयोग तथा पुस्तक विक्रय के बारे में अध्ययन की आवश्यकता है और विभिन्न प्रकार की अन्तर्वस्तु, अभिन्यास, टाइप, सामान्य आकृति, कागज़, और जिल्द, शैली आदि के बारे में लोगों की प्रतिक्रिया जानने और यह पता लगाने के लिये कि वे सामग्री को किस हद तक समझते हैं प्रायोगिक क्षेत्रों में नियन्त्रित परीक्षणों की ज़रूरत है। समुदायों की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के अध्ययन से भी यह पता लगाने में आसानी होगी कि लोगों के दैनिक जीवन के अनुसार उनकी विशेष दिलचस्पी किन चीज़ों में है।

पठनीयता, शब्दावली, तथा मूल पाठ को सरल बनाना। इनके लिए

ऐसे तत्वों का अध्ययन किया जाना चाहिये जिनके कारण विभिन्न भाषाओं में पठन कठिनाई उत्पन्न होती है और ऐसे उपायों की जाँच की जानी चाहिए जिनसे भाव ग्रहण क्षमता के विभिन्न स्तरों के अनुरूप सामग्री को सरल बनाया जा सके। यदि हो सके तो पठनीयता सूत्र निर्धारित किए जाएँ।

सामग्री को समझने और उसमें दिलचस्पी पैदा करने में सहायता देने में चित्रों की उपयोगिता। क्या चित्रों के बारे में पृष्ठों के आधार पर कोई अनुपात निर्धारित किया जा सकता है? क्या शैली और अन्तर्वस्तु की दृष्टि से कोई ऐसे निश्चित तत्व हैं जिन से नवसाक्षरों के लिये चित्र आकर्षक और समझ में आने के योग्य बनते हैं?

परीक्षण तथा सम्पादकीय मूल्यांकन के सिद्धाँत और विधियां—इनमें प्रकाशन से पहले और बाद दोनों प्रकार के परीक्षण शामिल हैं (जैसे पाठक अध्ययन, लोगों में जाकर सर्वेक्षण करना और सम्पादकीय मानक सूचियाँ इत्यादि)।

उत्पादन एकांश और सरकार के सामुदायिक विकास कार्य संगठनों (कृषि सुधार, स्वास्थ्य तथा स्वच्छता, नागरिकता, कुटीर उद्योग आदि) में कारगर सहयोग। क्या परामर्श समितियाँ काम करती हैं और क्या उनके सदस्य अनुभव करते हैं कि उनसे काफी हद तक सलाह मशवरा किया जाता है? क्या सम्पादकों को सम्पादकीय कार्यविधियों के अतिरिक्त मूल शिक्षा का भी सामान्य प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये?

उत्पादन

विभिन्न उद्देश्य के लिये अलग अलग क़िस्म के काग़ज़ का उपयोग। पायदारी; अच्छी छपाई पर प्रभाव; लागत; विभिन्न मशीनों तथा मुद्रण विधियों में प्रयुक्त किये जाने की क्षमता; जिल्द में बांधने के लिए कहां तक ठीक रहता है।

जिल्द। विभिन्न प्रकार की जिल्दों की मज़बूती; लागत; पाठक पर पुस्तक का प्रभाव डालने में उसकी उपयोगिता; स्थानीय साधनों से आवश्यक सामान की उपलब्धि।

मुद्रण यन्त्र तथा सामग्री। विभिन्न प्रकार की मशीनों की पायदारी; अलग अलग तरह के जलवायु में विभिन्न मशीनों की कार्य कुशलता; विभिन्न प्रकार के जलवायु में तथा अलग अलग क़िस्म के काग़ज़ पर विभिन्न तरह की स्याही का उपयोग; जिल्द बांधने, ब्लाक बनाने और कम्पोज़ करने की विभिन्न मशीनों की कार्य कुशलता तथा उपयोगिता।

परिव्यय निर्धारण, लेखा तथा अनुमान । मुद्रक किन विधियों से ये कार्य करते हैं, किन्तु सुधारों की आवश्यकता है और उनके लिए क्या उद्देश्य सामने रखे जायें : क्या ऐसे सीधे सादे तरीक़े हैं जिन्हें सीमित अमले वाले छोटे मुद्रणालयों में अपनाया जा सके ?

साक्षरता शिक्षा, साक्षरता प्राप्ति के बाद की पढ़ाई तथा सीमित पठन योग्यता वाले वयस्कों के पठन के लिए सरल सामग्री का मौक़े पर प्रयोग

साक्षरता शिक्षा सामग्री

लोगों में साक्षरता कक्षाओं में आने और रहने और बाद में आगे पढ़ाई जारी रखने की इच्छा उत्पन्न करना । इसके लिए नियंत्रित अध्ययन करने होंगे जिनसे लोगों को साक्षरता कक्षाओं में लाने और रखने की इच्छा जगाने तथा आगे पढ़ते रहने में प्रोत्साहन देने की विभिन्न विधियों के प्रभाव और उपयोगिता का पता चल सके ।

लोगों से साक्षरता अध्यापक की सेवाएँ और शिक्षा कार्यक्रम स्वीकार कराने से सम्बद्ध सामाजिक-मनोवैज्ञानिक तत्व । शिक्षा सामग्री; अध्यापक तथा उसकी अध्यापन विधि; कक्षा परिस्थितियाँ, जिनमें कक्षा का स्थान, सीटों का क्रम, रोशनी का प्रबन्ध, कक्षा का समय तथा उपलब्ध सामान आदि तत्व आते हैं ।

समय समय पर शिक्षा सामग्री तथा अध्यापन विधियों का मूल्यांकन । इसमें अच्छे अध्यापन के मानक निर्धारित करना शामिल है, जिनके आधार पर सामग्री और विधियों को आंका जा सके ।

कक्षा में विद्यार्थियों के रवैये, योग्यता और कुशलता का अनुमान लगाने के लिये सरल परीक्षा विधियों का विकास ।

साक्षरता अध्यापन को अन्य विकास कार्यों के साथ सम्बद्ध करना । इसमें विभिन्न कार्यक्रमों में सहयोग की विधियों की तुलनात्मक उपयोगिता का अध्ययन शामिल है ।

साक्षरता कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये अन्तिम परीक्षाओं का निर्धारण ।

वितरण और विक्रय

मुफ़्त बाँटना

सामग्री को स्थानीय स्तर तक ले जाने की कारगर व्यवस्था । इसमें यह अध्ययन भी शामिल है कि मुफ्त बाँट के मार्ग में क्या बाधायें आती हैं ।

स्थानीय स्तर पर पहुँचने के बाद सामग्री के उपयोग में प्रोत्साहन की व्यवस्था। इसमें इस बारे में अध्ययन शामिल है कि स्थानीय स्तर पर पहुँचने के उपरांत सामग्री का क्या बनता है; क्या वह अलमारी में बन्द रहती है या कुशलता के साथ उपयोग में लाई जाती है।

लोगों में बांटने या पुस्तकालयों के लिये भेजे गये प्रकाशनों के सबसे अच्छे उपयोग के बारे में स्थानीय प्रशासकों तथा पुस्तकालय प्रबन्धकों के दिग्दर्शन के वास्ते प्रकाशित पुस्तिकायें तथा अन्य सामग्री। इस सम्बन्ध में यह अध्ययन करने की आवश्यकता है कि किस प्रकार की दिग्दर्शन सामग्री छापी जाए।

विक्रय

विक्रय अनुसन्धान। यह जानने के लिए कि प्रत्येक प्रकार की पुस्तक और प्रत्येक स्तर की सामग्री की कितनी बिक्री होने की सम्भावना है।

मूल्य का बिक्री पर प्रभाव। आर्थिक तत्व पठन में कहां तक बाधक है?

सामग्री की सामान्य आकृति का बिक्री पर प्रभाव। इसमें नियन्त्रित परिस्थितियों में ऐसे प्रायोगिक अध्ययन शामिल करना है जिनसे पता चल सके कि एक ही प्रकार की सामग्री के दो संस्करणों में से कौन सा अधिक बिकता है?

विभिन्न प्रकार की विक्रय व्यवस्थाओं का बिक्री पर असर। क्या 'बेचो या लौटा दो' व्यवस्था से स्थानीय बिक्री बढ़ती है? क्या कमीशन की कोई ऐसी न्यूनतम दर है जो विक्रेताओं को पुस्तक विक्रय में प्रोत्साहित करने के लिए दी जानी चाहिये? क्या दूर दूर तक फैले हुए उप-केन्द्र होने चाहिएं ताकि पुस्तकों के स्टाक परचून बिक्री के स्थानों से निकट रहें।

मोटर गाड़ियों पर से परचून बिक्री करने या उनके द्वारा केवल स्थानीय विक्रेताओं को माल पहुँचाने के तरीक़ों की तुलनात्मक उपयोगिता। क्या केवल परचून बिक्री से गाड़ियों की लागत और खर्च वसूल हो सकता है? अगर उनसे केवल स्थानीय विक्रेताओं को माल पहुंचाया जाये तो क्या इससे डाक द्वारा भेजने के मुकाबले में ज़्यादा लाभ रहता है?

डाक और रेल के भाड़े का पुस्तकों की क़ीमतों और बिक्री पर असर।

कार्यक्रम प्रवर्धन, पुस्तकमाला प्रवर्धन, और पुस्तक प्रवर्धन तथा प्रत्येक उद्देश्य के लिए भिन्न प्रकार की प्रवर्धन सामग्री की तुलनात्मक उपयोगिता।

स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं की रैक, पोस्टर, छोटे इश्तिहार आदि विक्रय सहायक वस्तुयें देने का बिक्री पर प्रभाव।

पढ़ने की आदतों को बढ़ावा देना

लोग क्यों नहीं पढ़ते : पुस्तकों का न मिलना; क़ीमत, दिलचस्पी की कमी; पढ़ने योग्य पुस्तकों का अभाव; आर्थिक सामाजिक दर्जा।

विभिन्न प्रकार की गतिविधयों (जैसे पुस्तक क्लबों, पठन कक्षों, पुस्तकालयों, प्रदर्शनियों पुस्तक सप्ताहों, पुरस्कारों आदि) की पढ़ने की आदत डालने में तुलनात्मक उपयोगिता।

जन-सम्पर्क साधनों का पढ़ने की आदतों के विकास पर प्रभाव।

Association's Publications

		Rs. nP.
1.	Liquidation of Illiteracy	2.00
2.	Community Centres	2.50
3.	Preparation of Literature for Neo-Literates	3.50
4.	Training of Social Education Workers	3.50
5.	Organisation of Recreational and Cultural Activities in Social Education	2.50
6.	Libraries in Social Education	3.50
7.	Social Education in Rural Reconstruction	1.00
8.	Workers' Education	2.50
9.	Social Education in Urban Areas	1.50
10.	Organisation and Administration of Social Education	1.50
11.	Community Organisation in Social Education	2 00
12.	Democratic Decentralization in Social Education	3.00
13.	Methods and Techniques of Workers' Education	3.00
14.	Report of the International Conference on Adult Education	3.00
15.	Development Work Among Rural Women	1.00
16.	Directory of Agencies engaged in Recreational and Cultural Activities in South East Asia	10.00
17.	Place of Recreation in Social Education	1.50
18.	Human Value in Adult Education	1.00
19.	Adult Education in Community Development	1.50
20.	Social Education and the Second Five Year Plan	0.75
21.	Social Education in Changing Society	1.25
22.	Social Education in Delhi—A Research Study	6.00
23.	India Adult Education Association "What it is and What it does"	1.00
24.	Reading Material for Neo-literates	2.50
25.	History of Adult Education in India during the British Period—Sohan Singh	3.50

26.	The Highways and Byeways of Adult Education in Russia—Sohan Singh	1.50
27.	Social Education : Ten years in Retrospect—S. C. Dutta	0.50
28.	Development Work among Rural Women	1.25
29.	Adult Education in Rural Areas—Abstracts	0.35
30.	Training in Adult Education—Abstracts	0.35
31.	Community Action—Abstracts	0.35
32.	Community Organisation in Adult Education—Abstracts	1.00
33.	On to Eternity—Ed.S. C. Dutta	5.00
34.	Group Discussion—M. C. Nanavatty	3.75
35.	The Alphabet for Progress—Mushtaq Ahmed	0.60
36.	Celluloid in Indian Society—H.S. Bhola	2.00
37.	New Dimension in Social Education—S.C. Dutta	2.00
१.	समाज शिक्षा की समस्यायें और उनके हल	१.५०
२.	नवशिक्षित प्रौढ़ों के लिए साहित्य का निर्माण	१.५०
३.	नवसाक्षरों के लिए पत्रिकायें	२.००
४.	जनता कालेज की व्यवस्था और कार्य	०.५०
५.	प्रौढ़-शिक्षा (आधुनिक विचारधारायें व प्रयोग)	२.००
६.	आधारभूत शिक्षा (निरूपण और कार्यक्रम)	१.६५
७.	समाज शिक्षा में मनोरंजन व सांस्कृतिक कार्य	०.७५
८.	सामुदायिक विकास में प्रौढ़-शिक्षा	०.५०
९.	सहकारी समितियां और आधारभूत शिक्षा	२.५०
१०.	प्रौढ़ और आधारभूत शिक्षा के लिए पुस्तकालय	२.५०
११.	प्रौढ़-शिक्षा में सामाजिक और राजनीतिक उत्तरदायित्व	२.५०
१२.	ग्रामीण महिलाएँ और विकास कार्य	०.५०
१३.	स्त्रियों की नागरिक शिक्षा	२.००
१४.	ऋषिकेष सेमीनार की रिपोर्ट	१.००
१५.	लोक नाटक	३.००
१६.	मज़दूर-शिक्षा प्रणालियाँ और तकनीके	०.७५

प्रकाशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
१७-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली

सीरीज नं० ६१
मूल्य ५ रुपये
सन् १९६२

मुद्रक
नया हिन्दुस्तान प्रेस
चांदनी चौक, दिल्ली